कुपात्रो को दान न देवे सुपात्रो को देवे.

ACCEPTED HERE

Scan & Pay Using PhonePe App

आपके दान की हमे अत्यंत आवश्यकता हे.

अथ त्रयोदश-समुल्लासारम्भः

अनुभूमिका (३)

जो यह बाइबल का मत है, वह केवल ईसाइयों का है सो नहीं, किन्तु इसमें यहूदी आदि भी गृहीत होते हैं।[1] जो यहाँ १३ तेरहवें समुल्लास में ईसाईमत के विषय में लिखा है, इसका यही अभिप्राय है कि आजकल बाइबल के मत में ईसाई मुख्य हो रहे हैं, और यहूदी आदि गौण हैं। मुख्य के ग्रहण से गौण का ग्रहण हो जाता है। इससे यहूदियों का भी ग्रहण समझ लीजिये।

इनका जो विषय यहाँ लिखा है, सो केवल बाइबल में से कि जिसको ईसाई और यहूदी आदि सब मानते हैं। और इसी पुस्तक को अपने धर्म का मूल कारण समझते हैं। इस पुस्तक के भाषान्तर बहुत से हुए हैं, जो कि इनके मत में बड़े-बड़े पादरी हैं, उन्होंने किये हैं। उनमें से देवनागरी वा संस्कृत[2]

जिस प्रकार गौतम बुद्ध की मृत्यु के अनन्तर उनके उपदेशों के संकलन से बौद्धमत के मान्य ग्रन्थ त्रिपिटकों की रचना हुई, मुहम्मदसाहब पर खुदा की तरफ से नाजिल आयतों के संग्रह को कुरान का नाम दिया गया और गुरुनानक की मृत्यु के बाद कालान्तर में उनके तथा अन्यान्य सन्तों के वचनों को एकत्र सम्पादित करके गुरुग्रन्थसाहब का निर्माण हुआ, उसी प्रकार ईसामसीह तथा उनके प्रमुख शिष्यों के उपदेशों तथा प्रमुख घटनाओं एवं कथानकों को संगृहीत कर बाइबल की रचना हुई। प्राचीन हिब्रू तथा ग्रीक भाषाओं से परिचित कुछ लोगों को छोड़कर संसार के सभी लोग पुराने तथा नये अहदनामों (Old and New Testaments) को अनुवादों में ही पढ़ सकते हैं। पहले पुराने अहदनामे (Old Testament) का हिब्रू से ग्रीक में अनुवाद हुआ, तदनन्तर हिब्रू और ग्रीक का लेटिन में अनुवाद हुआ और अन्ततः लेटिन से अंग्रेज़ी में पूरा अनुवाद हुआ। परन्तु जैसे-जैसे समय बीतता गया, अन्य भाषाओं में सीधे मूल हिब्रू तथा ग्रीक से अनुवाद होने लगा। कालान्तर में मूल भाषाओं में अधिक पुरानी प्रतियाँ उपलब्ध होने लगीं और उनका अध्ययन होने लगा। इसके आगे का विवरण हम यहाँ 'Book of Knowledge' से अविकल रूप में उद्धृत कर प्रस्तुत कर रहे हैं—

"At the beginning of the seventeenth century, it was felt that the best scholarship of Britain should be brought together to make a translation as correct, and as fitly worded as possible. So 47 scholars revised the whole Bible afresh, and it was published in 1611 as the Authorised Version. This translation was based on earlier English translations. A Bible called the Bishop's Bible was taken as the foundation. It had been published in 1568. But that was a revision of another Bible, the Great Bible, published in 1539, and the Great Bible had been a revision of an earlier Bible Known as Matthew's Bible. That, again, had been made up

---

१. बाइबल के दो भाग हैं—पुराना नियम (पुराना धर्मशास्त्र) और नया नियम (नया धर्मशास्त्र)। यहूदी पुराने नियम को ही मानते हैं।

२. नीलकण्ठ शास्त्री ने ईसाईमत ग्रहण करके बाइबल का संस्कृत-भाषान्तर किया था।

भाषान्तर देखकर मुझको बाइबल में बहुत-सी शंका हुई हैं। उनमें से कुछ थोड़ी-सी इस १३ तेरहवें समुल्लास में सबके विचारार्थ लिखी हैं।

यह लेख केवल सत्य की वृद्धि और असत्य के ह्रास होने के लिए है, न कि किसी को दु:ख देने वा हानि करने, अथवा मिथ्या दोष लगाने के अर्थ हो। इसका अभिप्राय उत्तर लेख में सब कोई समझ लेंगे कि यह पुस्तक कैसा है, और इनका मत भी कैसा है?

इस लेख से यही प्रयोजन है कि सब मनुष्यमात्र को देखना सुनना लिखना आदि करना सहज होगा। और पक्षी-प्रतिपक्षी होके विचार कर ईसाईमत का आन्दोलन सब कोई कर सकेंगे।

---

from translations by William Tyndale and Miles Coverdale. Really, Tyndale's Bible, supplemented by a Bible by Coverdale, was the far off translation which, revised again and again, made the broad foundation for the Authorised Version. But the 47 translators went back, in all their work to comparisons with the Hebrew and Greek in which the scriptures had originally been written. Also, they had been by them the Roman Catholic translation known as the Rheims Version.

The Authorised Version of 1611 was almost uniwersally used by British Protestants for 270 years; but toward the close of this period it was felt that men had now much more knowledge of Hebrew and Greek than the 47 translators who produced the fine Authorised Version. They also had many more ancient manuscripts from which to seevre the best forms of the original text by comparisons. Translations of parts of the Bible were appearing from time to time showing that the Authorised Version did not always express the true meaning of the ancient languages. In short, knowledge had increased, and another revision was necessary to use that knowledge and free the old translation from errors. Accordingly in 1870, preparations began for forming two companies of learned men, one, to revise the Old Testament of the Authorised Version, and the other to revise the New Testament. A Revised Version was published, the New Testament in 1881 and the whole Bible in 1885." (Page 6858).

अब तो बड़े-बड़े पादरी तथा बुद्धिजीवी मानने लगे हैं कि बाइबल के विविध और छोटे-बड़े ग्रन्थों की रचना एवं संकलन भिन्न-भिन्न कालों में हुई है। बाइबल का वर्त्तमानस्वरूप बहुत पुराना नहीं है। पादरी जे० टी० सदरलैण्ड ने अपनी पुस्तक 'Origin and Character of the Bible' के पृष्ठ ५४ से ५७ तक बाइबल के विविध भागों की रचना का समय दर्शाया है। उसमें से एकाध उद्धरण यहाँ निदर्शनार्थ प्रस्तुत है—

(क) Old Testament Canon, Virtual final settlement of, by the Jews at the Synod at Jamnia 90-100 A. D. अर्थात् जमनिया में साइनोड (धर्मसम्मेलन) में ओल्ड टैस्टामैंट संहिता का वास्तविक अन्तिम निर्धारण ९०-१०० ईसवी में हुआ।

(ख) Bible Canon, A Council of African Bishops (not a universal Council), held at Hippo, agreed upon a Canon, which included all the books of our present Protestant Bible, plus the Wisdom of Solomon, Ecclesiasticus, Tobit, Judith and two books of Maccabees 393 A. D. अर्थात् ३९३ ई० में हिप्पो नामक स्थान पर अफ्रीकन बिशपों की एक सम्मिलनी (जो सार्वभौम सम्मिलनी नहीं थी) एक संहिता पर सहमत हुई, जिसमें हमारी वर्त्तमान प्रोटेस्टेंट बाइबल के सब भाग तथा सुलेमान का ज्ञान एक्लिज़िएस्टिकस, टोबिट, जूडिथ और मैक्काबीस के दो भाग भी सम्मिलित हैं।

इससे एक यह प्रयोजन सिद्ध होगा कि मनुष्यों को धर्मविषयक ज्ञान बढ़कर यथायोग्य सत्याऽसत्य मत और कर्त्तव्याऽर्त्तव्य कर्मसम्बन्धी विषय विदित होकर सत्य और कर्त्तव्य कर्म का स्वीकार, असत्य और अकर्त्तव्यकर्म का परित्याग करना सहजता से हो सकेगा।

सब मनुष्यों को उचित है कि सब के मतविषयक पुस्तकों को देख समझकर कुछ सम्मति वा असम्मति देवें वा लिखें, नहीं तो सुना करें। क्योंकि जैसे पढ़ने से 'पण्डित' होता है, वैसे सुनने से 'बहुश्रुत' होता है। यदि श्रोता दूसरे को नहीं समझा सके, तथापि आप स्वयं तो समझ ही जाता है। जो कोई पक्षपातरूपयानारूढ़ होके देखते हैं, उनको न अपने और न पराये गुण-दोष विदित हो सकते हैं।

(ग) A Council held at Carthage reaffirmed the list & its predecessor 397 A D. अर्थात् ३९७ ई० में कार्थेज में हुई एक सम्मिलनी ने अपने पूर्ववर्त्ती की सूची को सम्पुष्ट किया।

(घ) Vulgate (Authorised Bible of the Catholic Chirch), translation into Latin, largely by Jerome 383-404 A. D. अर्थात् वुल्गेट (कैथोलिक चर्च की प्रामाणिक बाइबल) ३८३-४०४ ईसवी में लैटिन में, अधिकतर जेरोम से अनूदित।

(ङ) Division of the Bible into our present chapters, shortly before 1228 A. D. अर्थात् १२२८ ई० से थोड़ा पहले हमारे वर्त्तमान अध्यायों में विभाजन।

(च) Canon of the Bible established for the Roman Catholic church by the Council of Trent 1545-46. अर्थात् १५४५-४६ में ट्रंट की सम्मिलनी में रोमन कैथोलिक चर्च के लिए बाइबल की संहिता का निर्धारण।

(छ) Division of the Bible into its present verses 1555 A. D. अर्थात् बाइबल का वर्त्तमान आयतों में विभाजन १५५५ में हुआ।

(ज) Authorised Version of the Bible in English (King James) 1611. A. D. अर्थात् राजा जेम्सवाला अंग्रेजी में प्रामाणिक संस्करण १६११ ई० में हुआ।

(झ) The American Standard Revised Version 1901 A. D अर्थात् अमरीकी आदर्श (प्रामाणिक) संशोधित संस्करण १९०१ में हुआ।

इन उद्धरणों से स्पष्ट सिद्ध होता है कि रोमन कैथोलिक तथा प्रोटेस्टेंट सम्प्रदायों की बाइबलों में पर्याप्त अन्तर है। और अफ्रीकी बिशपों की बाइबल इन दोनों से भिन्न है। बाइबल में समय-समय पर काट-छाँट की जाती रही है। रोमन कैथोलिक चर्च की बाइबल को अन्तिमरूप १५४५-४६ ई० में दिया गया। बाइबल का अध्यायों में विभाजन सन् १२२८ ई० में और आयतों में वर्गीकरण १५५५ में किया गया। इस प्रकार हम देखते हैं कि इससे पूर्व बाइबल में न अध्यायों का विभाग था और न आयतों का, केवल दण्डक पाठ था। अमरीकी संस्करण तो इङ्गलैण्ड के संस्करण से सर्वथा भिन्न है। इतने परिवर्त्तनों के बाद वर्त्तमान रूप में आनेवाली पुस्तक को न ईश्वरप्रदत्त ज्ञान माना जा सकता है और न ईसा द्वारा उपदिष्ट संकलन।

आरम्भ में बाइबल को पवित्र ग्रन्थ नहीं माना जाता था। इसके विभिन्न भागों पर विभिन्न कालखण्डों में पवित्रता की मोहर लगती रही। पादरी सदरलैण्ड अपनी उपर्युक्त पुस्तक के पृष्ठ ९-१० पर लिखते हैं—

"As regards our Old Testament, the idea of sacredness was attached first to the peutateuch, or the 'Five Books of Moses' or the 'Law' as it was called. And the sacredness of

मनुष्य का आत्मा यथायोग्य सत्याऽसत्य के निर्णय करने का सामर्थ्य रखता है। जितना अपना पठित वा श्रुत है, उतना निश्चय कर सकता है, यदि एक मतवाले दूसरे मतवाले के विषयों को जानें। और अन्य मतवाले के विषय को न जानें, तो यथावत् संवाद नहीं हो सकता। किन्तु अज्ञानी होने से किसी भ्रमरूप बाड़े में घिर जाते हैं।

---

even this seems to have been something very shadowy and intangible for a long time. The part of the old Testament called by the Jews. 'The prophets' came next to be regarded as sacred, while all that part then known as the 'writings' and including such books as the 'psalms' and 'proverbs' and 'Job', which are generally held today in higher esteem than any other of the old 'Testament' books, did not come to be regarded as really sacred much befor the time of Jesus. Indeed at the time of Jesus, all this part of the 'Old Testament was ranked much lower in authority than the rest."

अर्थात् ओल्डटेस्टामेंट के सम्बन्ध में हमारी पवित्रता की भावना पहले-पहल 'पेटाट्यूख' अथवा मूसा के पाँच ग्रन्थ अथवा 'धर्मनियम' के साथ जैसाकि उसे कहा जाता था, संबद्ध की गई और इसकी पवित्रता भी बहुत समय तक कुछ बहुत ही धुँधली और अस्पष्ट-सी रही। इसके बाद ओल्ड टेस्टामेंट का वह भाग, जिसे यहूदी 'प्राफेट' कहते हैं, पवित्र समझा जाने लगा। इसके विपरीत वह समस्त भाग जिसे 'राइटिंग्स' कहा जाता है और जिसमें 'साम' 'प्रावर्ब' तथा 'याकूब' जो सामान्यत: ओल्ड टेस्टामेंट के किन्हीं दूसरे भागों से कहीं अधिक सम्मान के पात्र हो रहे हैं, ईसा के समय से बहुत पहले तक वास्तव में पवित्र नहीं माना गया था। वस्तुत: ईसा के समय में ओल्ड टेस्टामेंट का यह सब भाग, प्रामाणिक की दृष्टि से, शेष से बहुत नीचे समझा जाता था।

"As to the New Testament, certain Epistles seem to have come to be regarded as sacred, or authoritative, considerably earlier than the 'Gospels' or the 'Acts'. But for a long time—perhaps for the better part of the two centuries—none of the 'New Testement' writings were booked upon by the Christian Church as standing upon the same high level with the 'Old Testament'. And at least three or four centuries passed away before it was finally decided just which particular ones, of the large number of writings produced within a century or two after the death of Jesus, should be included in the New Testament Canon—that is to say, should be regarded as possessing Divine Authority".

अर्थात् न्यू टेस्टामेंट के विषय में, कुछ 'एपिस्सल', 'इंजीलों' तथा 'एक्ट्स' की अपेक्षा अत्यधिक पहले पवित्र तथा प्रामाणिक माने गये प्रतीत होते हैं। किन्तु अधिक समय के लिए—दो सौ वर्षों से अधिक समय के लिए—न्यू टेस्टामेंट के किसी भी लेख को ईसाई चर्च द्वारा, ओल्ड टेस्टामेंट के समान उच्च स्तर का नहीं माना जाता रहा। और तीन-चार शतियों के बीतने पर यह अन्तिम निर्णय लिया जा सका कि ईसा की मृत्यु के बाद एक-दो शतियों में जो ग्रन्थ लिखे गये हैं, उनमें से कौन-कौन से लेख न्यू टेस्टामेंट में सम्मिलित किये जायें और दैवी अधिकार सम्पन्न समझे जायें।

आज तो अधिकतर ईसाई ओल्ड टेस्टामेंट को ईसाई मत का धर्मग्रन्थ मानने में भी संकोच करने लगे हैं। पादरी मदरलैंड आदि को इसमें अनेक दोष दीखने लगे हैं। हमें यह सब कर प्रसन्नता होती है कि ग्रन्थकार की भावना के अनुरूप अब लोग धर्म के क्षेत्र में 'बाबावाक्यं प्रमाणम्' के दुराग्रह

ऐसा न हो, इसलिये इस ग्रन्थ में प्रचरित सब मतों का विषय थोड़ा-थोड़ा लिखा है। इतने ही से शेष-विषयों में अनुमान कर सकता है कि वे सच्चे हैं, वा झूंठे ?

को त्यागकर युक्ति तथा तर्क का प्रयोग करने लगे है। तदनुसार पादरी सदरलैंड ने अपनी उक्त पुस्तक में पृष्ठ २७५ पर लिखा है—"This is seen in the fact that all Christian people today, whether orthodox or heterodox, reject such of its teachings as those about slavery, polygamy and the putting to death of witches. . " अर्थात् यह इस बात में देखा जा सकता है कि सभी ईसाई, चाहे वे कट्टर हों अथवा उदार, आज बाइबल की दासता, बहुविवाह तथा जादूगरनियों को मार डालने सम्बन्धी शिक्षाओं को मानने के लिए तैयार नहीं हैं। वस्तुत: आज वे लोग अपने मत को युक्तियुक्त बनाने के लिए अपनी पुरानी धारणाओं को त्यागते जा रहे हैं। यह स्पष्टत: ग्रन्थकार की विजय है।

हम भविष्यवाणी में विश्वास नहीं करते, किन्तु ईसाई तो करते हैं। उनकी जानकारी के लिए हम बाइबल की एक महत्त्वपूर्ण भविष्यवाणी यहाँ उद्धृत करते हैं—

"The people were waiting expectantly and were all wondering in their hearts if John might possibly be the Christ ? John answered them all, "I baptise you with water. But one more powerful than I will come, the thougs of whose sandals I am not worthy to untie. He will baptise you with fire."—Bible, Luke, 3-15-17

अर्थात्—जब लोग आस देखते थे और सब अपने मन में योहन (John) के विषय में सोचते थे कि हो न हो, यही ख्रीष्ट है। तब योहन (जॉन) ने सबको उत्तर दिया कि मैं तो तुम्हें जल से बपतिस्मा देता हूँ, परन्तु मुझसे कहीं अधिक शक्तिवाला एक आनेवाला है, जिसके जूतों के बंध (तसमे) खोलने योग्य भी मैं नहीं हूँ। वह तुम्हें अग्नि से बपतिस्मा देगा।

और अग्नि से बपतिस्मा देनेवाला वह दयानन्द के रूप में अवतरित हुआ। अब तक वह लाखों लोगों को अग्निहोत्र के द्वारा सनातन वैदिक धर्म की दीक्षा दे चुका है।

इस समुल्लास में जो भी समीक्षा है, वह प्रोटेस्टेंटसम्प्रदायाभिमत बाइबल की है। यह रोमन कैथोलिक सम्प्रदाय में मान्य बाइबल से कुछ भिन्न है। इनमें अनेक बातों में परस्पर विरोध है। जैसे—प्रोटेस्टेंट मूर्त्तिपूजा के विरोधी हैं, रोमन कैथोलिक लोग धूमधाम से मूर्त्तिपूजा करते हैं। रोमन कैथोलिक मत के पादरी को आजन्म अविवाहित रहना पड़ता है, प्रोटेस्टेंट ऐसा नहीं मानते। रोमन कैथोलिक मत में विवाह-विच्छेद (तलाक़) की अनुमति नहीं है, प्रोटेस्टेंट मतानुयायी विशेष परिस्थिति में तलाक दे सकते हैं। रोमन कैथोलिक लोग पोप को ईसा का प्रतिनिधि मानते हैं, प्रोटेस्टेंट पोप की सत्ता को स्वीकार नहीं करते। वस्तुत: मार्टिन लूथर के पोप की सत्ता तथा रोमन कैथोलिक मत में मान्य अन्ध-विश्वासों के विरुद्ध विद्रोह के परिणामस्वरूप ही प्रोटेस्टेंट मत का जन्म हुआ था। स्वामी दयानन्द को भारत का मार्टिन लूथर अथवा मार्टिन लूथर को यूरोप का दयानन्द कहा जा सकता है।

प्रोटेस्टेंटों की बाइबल की अपेक्षा कैथोलिकों की बाइबल में कुछ पुस्तकें अधिक हैं। (यह हम पहले कह चुके हैं कि बाइबल विविध पुस्तकों का संकलन है, उसे ईसामसीह की कृति नहीं माना जा सकता)। नेहेमियाह (Nehemiah or Nehemias) के पश्चात् कैथोलिक बाइबल में 'Book of Tobias' तथा 'Book of Judith' दो और पुस्तकें हैं, प्रोटेस्टेंट बाइबल में ये नहीं हैं। इसी प्रकार कैथोलिक बाइबल में 'Song of Songs' (प्रोटेस्टेंट में Song Solomon = सुलेमान का गीत) के पश्चात् 'Book of Wisdom' तथा 'Book of Ecclisiasticus' दो पुस्तकें हैं, प्रोटेस्टेंट बाइबल में ये दोनों भी नहीं है। 'Malachi' (कै०

जो-जो सर्वमान्य सत्य विषय हैं, वे तो सब में एक-से हैं। झगड़ा झूंठे विषयों में होता है। अथवा एक सच्चा और दूसरा झूंठा हो, तो भी कुछ थोड़ा-सा विवाद चलता है। यदि वादी-प्रतिवादी सत्याऽसत्य निश्चय के लिये वाद-प्रतिवाद करें, तो अवश्य निश्चय हो जाय।

अब मैं इस १३वें समुल्लास में ईसाईमत-विषयक थोड़ा-सा लिखकर सब के सम्मुख स्थापित करता हूँ। विचारिये कि कैसा है ?

अलमतिलेखेन विचक्षणवरेषु ॥

□□

Malachias) के पश्चात् 'The First Book of Machabees' तथा 'The second Book of Machabees' दो पुस्तकें प्रोटेस्टेंट बाइबल में नहीं है। 'Lamentation' (विलाप) के पश्चात् कैथोलिक बाइबल में 'The Prophecy of Baruch' है, प्रोटेस्टेंट में नहीं है। तात्पर्य यह है कि प्रोटेस्टेंट बाइबल में सात पुस्तकें कम हैं। रोमन कैथोलिक तथा प्रोटेस्टेंट दोनों ओल्ड टेस्टामेंट को ईश्वरप्रदत्त (Reveeled) कहते हैं। फिर ईश्वरीय वचन में यह काट-छाँट क्यों ? इतना ही नहीं, कैथोलिक बाइबल में जो 'Second Book of Kings' है, प्रोटेस्टेंट में वह 'Second Book of Samuel' है। एक में जो First Book है, दूसरी में वह Second या Fourth Book है। इस प्रकार दोनों में अनेक प्रकार के भेद हैं। यह भेद कदाचित् इसलिए भी हो सकता है कि कैथोलिकों की अंग्रेजी बाइबल लैटिन भाषा से अनूदित है, वहाँ प्रोटेस्टेंटों की बाइबल मूल इब्रानी (Hebrene) तथा ग्रीक भाषाओं से अनूदित है। स्मरण रहे कि बाइबल का ओल्ड टेस्टामेंट (पुराना सुसमाचार=पुराना अहदनामा) मूलतः इब्रानी में लिखा गया था और न्यू टेस्टामेंट (सुसमाचार) मूलतः ग्रीक में लिखा गया था। जहाँ तक हमारी जानकारी है, कैथोलिकों द्वारा किये गये बाइबल दो अंग्रेजी भाषान्तर हैं। अनुवादकों के नाम पर एक का नाम Knox Version है और दूसरे का नाम Douai Version है। प्रचलित अनुवाद अनेक स्थानों पर मूल के विरुद्ध हैं। उदाहरणार्थ—सृष्टि-रचना करते हुए जब परमेश्वर थक गया तो परमेश्वर ने आराम किया। इस विषय में Genesis (उत्पत्ति) के दूसरे अध्याय की दूसरी आयत में लिखा है—"By the seventh day God came to an end of making" (अर्थात् सातवें दिन परमात्मा रचना समाप्त कर चुका)। इस पर टिप्पणी में लिखा है—"For by the seventh day the Septuagint Greek has 'on the sixth day' (अर्थात् 'सातवें दिन के पास' के स्थान में ग्रीक में 'छठे दिन के पास' है)। यह सब लिखने का हमारा प्रयोजन यह दिखलाना है कि बाइबल के भिन्न-भिन्न कालों में भिन्न-भिन्न व्यक्तियों द्वारा लिखे जाने के कारण उसमें विसंगतियों तथा परस्पर विरोधी तथ्यों (?) की इतनी भरमार है कि उसके कारण बाइबल कोई ईश्वरीय तथा प्रामाणिक नहीं माना जा सकता।

बाइबल की समीक्षा लिखते समय ग्रन्थकार के सामने बाइबल का प्रयाग से १७७८-१७८० में मुद्रित संस्करण था। और हमारे (भाष्यकार के) पास इस समय सन् १८६६ में बाइबल सोसायटी द्वारा प्रकाशित तथा इलाहाबाद मिशन प्रेस में मुद्रित संस्करण है।

❖❖

अथ त्रयोदश-समुल्लासारम्भः

अथ कृश्चीनमतविषयं व्याख्यास्यामः[1]

अब इसके आगे ईसाइयों के मत-विषय में लिखते हैं। जिससे सबको विदित हो जाय कि इनका मत निर्दोष और इनकी बाइबल पुस्तक ईश्वरकृत है वा नहीं ? प्रथम बाइबल के तौरेत का विषय लिखा जाता है—

[ईसाई मतानुसार आकाश और पृथिवी की रचना]

१—आरम्भ में ईश्वर ने आकाश और पृथिवी को सृजा ॥ और पृथिवी बेडौल[2] और सूनी थी, और गहिराव पर अंधियारा था। और ईश्वर का आत्मा जल के ऊपर डोलता था[3] ॥ तौरेत उत्पत्ति पुस्तक पर्व १। आयत १, २ ॥

[बाइबल के सृष्टि-सम्बन्धी मत की आलोचना]

समीक्षक—आरम्भ किसको कहते हो ?

ईसाई—सृष्टि के प्रथमोत्पत्ति को ?

समीक्षक—क्या यही सृष्टि प्रथम हुई ? इसके पूर्व कभी नहीं हुई थी ?

ईसाई—हम नहीं जानते हुई थी वा नहीं, ईश्वर जाने।

१—तुलना करें—'तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशः सम्भूतः अद्भ्यः पृथिवी' (तैत्तिरीय० २।१)। उसी ब्रह्म से आकाश उत्पन्न हुआ पृथिवी हुई। 'आसीदिदं तमोभूतम्' (मनु० १।५)। 'तम आसीत्तमसा गूढमग्रे' (ऋ० १०।१२९।३)।

सृष्टि प्रवाह से अनादि—सत् से असत् और असत् से सत् नहीं होता। संसार का अस्तित्व प्रत्यक्ष है—वह सत् है तो 'नासतो विद्यते भावः' के सिद्धान्त के अनुसार वह पहले भी रहा होगा और आगे भी रहेगा। सृष्टि से पूर्व प्रलय और प्रलय से पूर्व सृष्टि तथा सृष्टि के बाद प्रलय और प्रलय के बाद सृष्टि का क्रम अनवरत चला आता है। इस क्रम का न कभी आदि था और न अन्त होगा। इसलिए यह सृष्टि प्रथम बार नहीं हुई।

---

१. सं० ३ से ३३ तक 'समीक्षिष्यामः' परिवर्तित पाठ मिलता है।

२. बाइबल के उत्तरवर्ती हिन्दी अनुवादों में बहुत सुधार किया गया है। तथा 'बेडौल' के स्थान पर 'सुनसान' पाठ मिलता है, 'और पृथिवी सूनी और सुनसान पड़ी थी।' द्र०— सन् १९१२ में मिशन प्रेस इलाहाबाद में छपा संस्करण। ऐसे ही अन्यत्र भी बहुत पाठ बदला गया है।

३. मूसा मिश्रदेश से निकाला गया। मिश्रदेश में पहले वेद का प्रचार था। मिश्र के विद्वान् वैदिक ज्ञान के अनुसार जानते थे कि हिरण्यगर्भ अथवा महदण्ड आपः में सरकता (= गति करता) था। शतपथब्राह्मण ११।१।६।१, २ में यही सत्य लिखा है कि आपः में हिरण्याण्ड परिप्लवन करता था। इस गूढ़ वैज्ञानिक तथ्य को न समझकर अज्ञानवश बाइबल में हिरण्याण्ड को ईश्वर मानकर संसार को अज्ञान में धकेला है। मूल वैदिक विचार का बाइबल में बहुधा विकृत रूप दीखता है। भ० द०

समीक्षक— जब नहीं जानते तो, इस पुस्तक पर विश्वास क्यों किया ? कि जिससे सन्देह का निवारण नहीं हो सकता। और इसी के भरोसे लोगों को उपदेश कर इस सन्देह के भरे हुए मत में क्यों फसाते हो ? और निःसन्देह सर्वशंकानिवारक वेदमत का स्वीकार क्यों नहीं करते ? जब तुम ईश्वर की सृष्टि का हाल नहीं जानते, तो ईश्वर को कैसे जानते होगे ?

आकाश किसको मानते हो ?

ईसाई—पोल और ऊपर को।

[जब आकाश नहीं सृजा था, तब ईश्वरादि कहाँ रहते थे ?]

समीक्षक—पोल की उत्पत्ति किस प्रकार हुई ? क्योंकि यह विभु पदार्थ और अतिसूक्ष्म है, और ऊपर-नीचे एक-सा है। जब आकाश नहीं सृजा था, तब पोल और अवकाश था वा नहीं ? जो नहीं था, तो ईश्वर जगत् का कारण और जीव कहाँ रहते थे ? विना आकाश के कोई पदार्थ स्थित नहीं हो सकता। इसलिये तुम्हारी बाइबल का कथन युक्त नहीं।

[ईश्वर की सृष्टि को बेडौल बताना भूल है]

ईश्वर बेडौल, उसका ज्ञान कर्म बेडौल होता है वा सब डौलवाला ?

ईसाई—डौलवाला होता है।

समीक्षक—तो यहाँ ईश्वर की बनाई पृथिवी बेडौल थी, ऐसा क्यों लिखा ?

ईसाई—बेडौल का अर्थ यह है कि ऊँची-नीची थी, बराबर नहीं थी ?

समीक्षक—फिर बराबर किसने की ? और क्या अब भी ऊँची-नीची नहीं है ? इसलिये ईश्वर का काम बेडौल नहीं हो सकता, क्योंकि वह सर्वज्ञ है। उसके काम में न भूल न चूक कभी हो सकती है। और बाइबल में ईश्वर की सृष्टि बेडौल लिखी, इसलिये यह पुस्तक ईश्वरकृत नहीं हो सकता।

[व्यापक ईश्वर सनाई पर्वत वा चौथे आसमान पर कैसे ?]

समीक्षक—ईश्वर का आत्मा क्या पदार्थ है ?

ईसाई—चेतन।

समीक्षक—वह साकार है वा निराकार ? तथा व्यापक है वा एकदेशी ?

आकाश की उत्पत्ति—आकाश की उत्पत्ति नहीं होती। वह विभु एवं नित्य है। इसलिए जब 'आकाशः सम्भूतः' कहा जाता है तो उसका अभिप्राय इतना ही होता है कि परमेश्वर और प्रकृति से आकाश अर्थात् जो कारणरूप द्रव्य सर्वत्र फैला हुआ था, उसको इकट्ठा करने से आकाश उत्पन्न-सा दीखता है। सामान्यजन जिसे आकाश समझते हैं, वह आकाश न होकर दूर तक फैले हुए पृथिवी, जल तथा अग्नि के त्रसरेणुओं का संघातमात्र है।

जिसे बाइबल का रचयिता बेडौल ऊँची-नीची कहता है, उसी से निर्मित सौन्दर्य को देखने लोग दिल्ली की समतल भूमि को छोड़कर शिमला, मसूरी और कश्मीर जाते हैं। नीचे खड़े होकर ऊपर का दृश्य देखने के लिए लालायित होते हैं और पहुँचकर नीचे दूर तक फैले समतल मैदान को देख-देखकर आनन्दविभोर होते हैं। निराकार पदार्थ के जल पर डोलने का प्रश्न ही नहीं उठता। डोलने का अर्थ है गति करना। गति एकदेशी में होती है, जब वह एक स्थान से दूसरे स्थान में जाना चाहता है। सर्वव्यापी परमेश्वर के डोलने=गति करने का प्रश्न ही नहीं उठता।

ईसाई—निराकार चेतन और व्यापक है। परन्तु किसी एक 'सनाई पर्वत' 'चौथा आसमान' आदि स्थानों में विशेष करके रहता है।

[सर्वव्यापक ईश्वर का जल पर डोलना नहीं हो सकता]

समीक्षक—जो निराकार है, तो उसको किसने देखा ? और व्यापक का जल पर डोलना कभी नहीं हो सकता। भला जब ईश्वर का आत्मा जल पर डोलता था, तब ईश्वर कहाँ था ? इससे यही सिद्ध होता है कि ईश्वर का शरीर कहीं अन्यत्र स्थित होगा। अथवा अपने कुछ आत्मा के एक टुकड़े को जल पर डुलाया होगा। जो ऐसा है, तो विभु और सर्वज्ञ कभी नहीं हो सकता। जो विभु नहीं, तो जगत् की रचना धारण पालन, और जीवों के कर्मों की व्यवस्था, वा प्रलय कभी नहीं कर सकता। क्योंकि जिस पदार्थ का स्वरूप एकदेशी है, उसके गुण कर्म स्वभाव भी एकदेशी होते हैं। जो ऐसा है तो वह ईश्वर नहीं हो सकता। क्योंकि ईश्वर सर्वव्यापक, अनन्तगुण-कर्म-स्वभावयुक्त, सच्चिदानन्दस्वरूप, नित्यशुद्ध-बुद्ध-मुक्तस्वभाव, अनादि-अनन्तादि लक्षणयुक्त वेदों में कहा है। उसीको मानो, तभी तुह्मारा कल्याण होगा, अन्यथा नहीं ॥१॥

[ईसाई मतानुसार सूर्यादि की उत्पत्ति]

२—और ईश्वर ने कहा कि उजियाला होवे, और उजियाला हो गया ॥ और ईश्वर ने उजियाले को देखा कि अच्छा है ॥—तौरेत उत्पत्ति० पर्व १। आ० ३, ४॥

[जड़ उजियाले ने ईश्वर की बात कैसे सुनली ?]

समीक्षक—क्या ईश्वर की बात जड़रूप उजियाले ने सुन ली ? जो सुनी हो तो इस समय भी सूर्य्य, दीप और अग्नि का प्रकाश हमारी तुह्मारी बात क्यों नहीं सुनता ? प्रकाश जड़ होता है, वह कभी किसी की बात नहीं सुन सकता।

क्या जब ईश्वर ने उजियाले को देखा, तभी जाना कि उजियाला अच्छा है ? पहिले नहीं जानता था ? जो जानता होता, तो देखकर अच्छा क्यों कहता ? जो नहीं जानता था, तो वह ईश्वर ही नहीं। इसीलिये तुह्मारी बाइबल ईश्वरोक्त, और उसमें कहा हुआ ईश्वर सर्वज्ञ नहीं है ॥२॥

[पानियों के मध्य आकाश बनाकर उन्हें विभक्त करना]

३—और ईश्वर ने कहा कि पानियों के मध्य में आकाश होवे। और पानियों को पानियों से विभाग करे॥ तब ईश्वर ने आकाश को बनाया। और आकाश के नीचे के पानियों को आकाश के

२—वक्ता और श्रोता का समकालीन होना आवश्यक है। उजियाले को परमेश्वर ने आदेश दिया, इस कथन से स्पष्ट है कि उजियाला वहाँ पहले से उपस्थित था। तब 'उजियाला हो गया,' यह कथन निरर्थक है। फिर, कुछ कहने की आवश्यकता अपने से भिन्न के लिए होती है। कोई अपने-आपको कुछ कहने के लिए वाणी का प्रयोग नहीं करता। परमेश्वर तो 'तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः' (यजु० ४०।५) प्रत्येक पदार्थ के भीतर भी है और बाहर भी। उसके ईक्षणमात्र से उजियाला हो जाता है। न परमेश्वर के पास वाणी है और न उजियाले के पास कान हैं। इसलिए भी यहाँ किसी के कहने-सुनने का अवसर नहीं है, जो आनन्दस्वरूप है, सर्वज्ञ है तथा सृष्टि का रचयिता है, वह किसी वस्तु को देखकर 'अच्छा है' नहीं कहेगा।

३—आकाश के उत्पन्न होने की बात पहली आयत में कही जा चुकी है। यहाँ 'ईश्वर ने आकाश को बनाया' कहना पुनरुक्ति है, जो ईश्वरीयज्ञान में नहीं होनी चाहिए। आकाश सर्वव्यापक है।

ऊपर के पानियों से विभाग किया। और ऐसा हो गया ॥ और ईश्वर ने आकाश को स्वर्ग कहा। और सांझ और बिहान दूसरा दिन हुआ ॥—तौरेत उत्पत्ति० पर्व १। आ० ६-८ ॥

[विना आकाश के जल कहाँ और कैसे रहा ?]

समीक्षक—क्या आकाश और जल ने भी ईश्वर की बात सुन ली ? और जो जल के बीच में आकाश न होता, तो जल रहता ही कहाँ ? प्रथम आयत में आकाश को सृजा था, पुनः आकाश का बनाना व्यर्थ हुआ।

[आकाश सर्वव्यापक है, फिर स्वर्ग ऊपर कैसे ?]

जो आकाश को स्वर्ग कहा, तो वह सर्वव्यापक है, इसलिये सर्वत्र स्वर्ग हुआ। फिर ऊपर को स्वर्ग है, यह कहना व्यर्थ है। जब सूर्य्य उत्पन्न ही नहीं हुआ था, तो पुनः दिन और रात कहाँ से हो गई ? ऐसी ही असम्भव बातें आगे की आयतों में भरी हैं ॥३॥

[आदम की ईश्वर के स्वरूप में उत्पत्ति]

४—तब ईश्वर ने कहा कि-हम आदम को अपने स्वरूप में अपने समान बनावें ॥ तब ईश्वर ने आदम को अपने स्वरूप में उत्पन्न किया। उसने उसे ईश्वर के स्वरूप में उत्पन्न किया। उसने उन्हें नर और नारी बनाया ॥ और ईश्वर ने उन्हें आशीष दिया ॥

—तौरेत उत्पत्ति० पर्व १। आ० २६-२८ ॥

[ईश्वर से उत्पत्ति हुई, तो आदम ईश्वर-सदृश क्यों न हुआ ?]

समीक्षक—यदि आदम को ईश्वर ने अपने स्वरूप में बनाया, तो ईश्वर का स्वरूप पवित्र ज्ञानस्वरूप आनन्दमय आदि लक्षणयुक्त है, उसके सदृश आदम क्यों नहीं हुआ ? जो नहीं हुआ, तो

पदार्थमात्र उसी में रहते हैं। यदि आकाश स्वर्ग का पर्यायवाची है तो प्राणिमात्र स्वर्गस्थ हैं। वस्तुतः स्वर्ग सुख का अपरनाम है, वह किसी स्थानविशेष का नाम नहीं है।

उपर्युक्त तीनों आयतों का अर्थ बदल दिया गया है। आजकल इस प्रकार अनुवाद मिलता है—"फिर परमेश्वर ने कहा, जल के बीच एक ऐसा अन्तर हो कि जल के दो भाग हो जायें। तब परमेश्वर ने एक अन्तर करके उसके नीचे के जल और उसके ऊपर के जल को अलग-अलग किया और वैसा ही हो गया। और परमेश्वर ने उस अन्तर को आकाश कहा। तथा साँझ हुई, फिर भोर हुआ। इस प्रकार दूसरा दिन हुआ।" पुराने अनुवाद में कहा है—'और ईश्वर ने आकाश को स्वर्ग कहा।' इस पर ग्रन्थकार ने आपत्ति की तो उससे बचने के लिए नया अनुवाद किया—'और परमेश्वर ने आकाश को स्वर्ग कहा।' फिर भी ग्रन्थकार का आक्षेप वैसा ही बना रहा।

४—आजकल 'आदम' के स्थान पर 'मनुष्य' कर दिया गया है और 'उसने उन्हें नर और नारी बनाया' के स्थान में 'नर और नारी करके उसने मनुष्यों की सृष्टि की' पाठ कर दिया है।

'कारणगुणपूर्वकः कार्यगुणो दृष्टः' वैशेषिकदर्शन (२।१।२४) के इस सूत्र के अनुसार उपादान कारण के गुण-कर्म-स्वभाव तत्त्वतः उसके कार्य में अवश्य रहते हैं। परस्पर विलक्षण वस्तुओं में कार्य-कारण सम्बन्ध नहीं हो सकता। हार आदि को मिट्टी का और घड़े आदि को सोने का परिणाम या विकार नहीं माना जा सकता, क्योंकि मिट्टी से बनी चीज़ मिट्टी जैसी और सोने से बनी चीज़ सोने जैसी होती है। यदि आदम (मनुष्य) को ईश्वर ने अपने स्वरूप में उत्पन्न किया होता (God made man in

उसके स्वरूप में नहीं बना। और आदम को उत्पन्न किया, तो ईश्वर ने अपने स्वरूप ही को उत्पत्तिवाला किया, पुनः वह अनित्य क्यों नहीं ?

[ईसाई मतानुसार ईश्वर के विना कोई वस्तु न था]

और आदम को उत्पन्न कहां से किया ?

ईसाई—मट्टी से बनाया।

समीक्षक—मट्टी कहां से बनाई ?

ईसाई—अपनी कुदरत अर्थात् सामर्थ्य से।

समीक्षक—ईश्वर का सामर्थ्य अनादि है, वा नवीन ?

ईसाई—अनादि है।

समीक्षक—जब अनादि है, तो जगत् का कारण सनातन हुआ। फिर अभाव से भाव क्यों मानते हो ?

ईसाई—सृष्टि के पूर्व ईश्वर के विना कोई वस्तु नहीं था ?

[जगत् का कारण कुछ नहीं था, तो सृष्टि कहां से बनी ?]

समीक्षक—जो नहीं था, तो यह जगत् कहां से बना ? और ईश्वर का सामर्थ्य द्रव्य है वा गुण ? जो द्रव्य है, तो ईश्वर से भिन्न दूसरा पदार्थ था।[1] और जो गुण है, तो गुण से द्रव्य कभी नहीं बन सकता। जैसे रूप से अग्नि और रस से जल नहीं बन सकता। और जो ईश्वर से जगत् बना होता, तो ईश्वर के सदृश गुण-कर्म-स्वभाववाला होता। उसके गुण-कर्म-स्वभाव के सदृश न होने से यही निश्चय है कि ईश्वर से नहीं बना। किन्तु जगत् के कारण अर्थात् परमाणु आदि नामवाले जड़ से बना है।

जैसी कि जगत् की उत्पत्ति वेदादिशास्त्रों में लिखी है, वैसी ही मान लो, जिससे ईश्वर जगत् को बनाता है। जो आदम के भीतर का स्वरूप जीव, और बाहर का मनुष्य के सदृश है, तो वैसा ईश्वर का स्वरूप क्यों नहीं ? क्योंकि जब आदम ईश्वर के सदृश बना, तो ईश्वर आदम के सदृश अवश्य होना चाहिये ॥४॥

---

his own image) तो वह उसकी (ईश्वर की) भाँति निराकार, निर्विकार, अखण्ड, अनुत्पन्न, सर्वज्ञ, सर्वव्यापक तथा सर्वशक्तिमान् होता। ऐसा न होने से स्पष्ट है कि मनुष्य अपने स्वरूप में उत्पन्न है, ईश्वर के स्वरूप में नहीं। इसी प्रकार दृश्यमान जगत् का भी उपादानकारण परमेश्वर नहीं है, क्योंकि वह गुणों की दृष्टि से परमेश्वर के सदृश नहीं है। परमेश्वर सृष्टि का निमित्तकारण अवश्य है। सृष्टि से पूर्व उसके उपादानकारणरूप प्रकृति थी, जिसके सहयोग से परमेश्वर ने कार्यरूप जगत् की रचना की, परन्तु प्रलयकाल होने से उस समय वह अव्यक्त दशा में थी।

---

१ ग्रन्थकार ने अपने अनेक ग्रन्थों में सृष्टि की उत्पत्ति 'स्वसामर्थ्य' से लिखी है। (यथा—पञ्चमहायज्ञविधि, अघमर्षण-मन्त्र की व्याख्या)। इस प्रकार के लेख से यह भ्रान्ति नहीं होनी चाहिए कि ग्रन्थकार भी नवीन वेदान्तियों के समान ईश्वर से ही जगत् की उत्पत्ति मानते हैं। वास्तविकता यह है कि सामर्थ्य दो प्रकार का होता है—एक स्वगत, और दूसरा स्ववशस्थ पदार्थगत। जैसे राजा की सेना आदि का बल भी उसी का सामर्थ्य समझा जाता है। अतएव सेना द्वारा विजय प्राप्त करने पर भी राजा का ही विजय माना जाता है। प्रकृति ईश्वर से भिन्न पदार्थ होते हुए भी उसके वश में होने से उसी का सामर्थ्य कहा जाता है।

[आदम को बनाकर अदन के बाग में रखा]

५—तब परमेश्वर ईश्वर ने भूमि की धूल से आदम को बनाया। और उसके नथुनों में जीवन का श्वास फूंका, और आदम जीवता प्राण हुआ॥ और परमेश्वर ईश्वर ने 'अदन' में पूर्व की ओर एक 'बारी' लगाई। और उस आदम को, जिसे उसने बनाया था, उसमें रखा॥ और उस बारी के मध्य में जीवन का पेड़ और भले-बुरे के ज्ञान का पेड़ भूमि से उगाया॥—तौ० उ० पर्व २। आ० ७-९॥

[आदम को धूल से बनाया, तो वह ईश्वर का स्वरूप नहीं था]

समीक्षक—जब ईश्वर ने अदन में बाड़ी बनाकर उसमें आदम को रखा, तब ईश्वर नहीं जानता था कि इसको पुनः यहाँ से निकालना पड़ेगा? और जब ईश्वर ने आदम को धूली से बनाया, तो ईश्वर का स्वरूप नहीं हुआ। और जो है, तो ईश्वर भी धूली से बना होगा? जब उसके नथुनों में ईश्वर ने श्वास फूंका, तो वह श्वास ईश्वर का स्वरूप था वा भिन्न? जो भिन्न था, तो आदम ईश्वर के स्वरूप में नहीं बना। जो एक है, तो आदम और ईश्वर एक-से हुए। और जो एक-से हैं, तो आदम के सदृश जन्म-मरण वृद्धि-क्षय क्षुधा-तृषा आदि दोष ईश्वर में आये। फिर वह ईश्वर क्योंकर हो सकता है? इसलिये यह तौरेत की बात ठीक नहीं विदित होती। और यह पुस्तक भी ईश्वर-कृत नहीं है॥५॥

[आदम की पसली से नारी की रचना]

६—और परमेश्वर ईश्वर ने आदम को बड़ी नींद में डाला, और वह सो गया। तब उसने उसकी पसलियों में से एक पसली निकाली, और उसकी सन्ति[1] मांस भर दिया॥ और परमेश्वर ईश्वर ने आदम की उस पसली से एक नारी बनाई, और उसे आदम के पास लाया॥

—तौरेत उत्पत्ति० पर्व २। आ० २१, २२॥

५—यहाँ भी 'परमेश्वर ईश्वर' के स्थान में 'यहोवा परमेश्वर' यह परिवर्त्तन किया है। यदि आदम को परमेश्वर ने अपने सदृश बनाया है तो जैसे उसने आदम को मिट्टी से बनाया, वैसे ही स्वयं वह भी मिट्टी से ही बना होगा, अन्यथा दोनों में सादृश्य नहीं हो सकता। मिट्टी से बनाये गये आदम में तो परमेश्वर ने जीवन का श्वास फूंका तो मिट्टी से बनाये गये परमेश्वर में जीवन का श्वास किसने फूंका होगा? क्योंकि परमेश्वर से पूर्व अन्य कोई नहीं था। बिना सोचे-समझे आदम को बाड़ी में क्यों रक्खा? सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान् परमेश्वर ने ऐसे आदमी को बाड़ी में क्यों रक्खा, जिसे वह जानता नहीं था कि इसे एक दिन निकालना पड़ेगा। फिर आदम को तो स्वयं परमेश्वर ने ही बनाया था। उसने ऐसे व्यक्ति को सबसे पहले क्यों बनाया, जिसने अपने निर्माता की आज्ञा का उल्लंघन किया?

६—यहाँ भी अनुवाद में फेरफार किया गया है। 'उस पसली से' के स्थान में 'उस पसली की' करके उसके आगे 'जो उसने आदम में से निकाली थी' ये शब्द बढ़ा दिये हैं। विभिन्न योनियों में प्राणियों की उत्पत्ति के लिए सृष्टि के आदि में परमेश्वर ने अमैथुनी सृष्टि में, जैसे जोड़े बनाये थे, वे साँचों के रूप में थे। तदनन्तर सजातीय प्रजनन का नियम चालू हो गया और साँचों में ढल-ढलकर नित नये शरीर बनने लगे। ये सब साँचों के अनुरूप ही बन रहे हैं। पुरुषों के शरीरों की बनावट आदम के शरीर जैसी और स्त्रियों के शरीर की बनावट हौवा (Eve) जैसी होनी चाहिए। यदि आदि मानव आदम=Adam (आदिम) के शरीर से एक पसली निकाल ली गई होती तो उसके बाद उत्पन्न होनेवाले सभी पुरुषों के

---

१. सन्ति-सन्ती, ये संभवतः 'सन्धि' के वाचक हैं। जहाँ से पसली निकाली गई, उसकी सन्धि में मांस भर दिया।

[स्त्री को धूली से न बनाकर, हड्डी से क्यों बनाया ?]

समीक्षक—जो ईश्वर ने आदम को धूली से बनाया, तो उसकी स्त्री को धूली से क्यों नहीं बनाया ? और जो नारी को हड्डी से बनाया, तो आदम को हड्डी से क्यों नहीं बनाया ? और जैसे नर से निकलने से नारी नाम हुआ, तो नारी से नर नाम भी होना चाहिये। और उनमें परस्पर प्रेम भी रहे। जैसे स्त्री के साथ पुरुष प्रेम करे, वैसे पुरुष के साथ स्त्री भी प्रेम करे।

[पसली से नारी बनी, तो मनुष्यों में एक पसली कम क्यों नहीं ?]

देखो विद्वान् लोगो ! ईश्वर की कैसी 'पदार्थविद्या' अर्थात् 'फिलासफी' चलकती है ? जो आदम की एक पसली निकालकर नारी बनाई, तो सब मनुष्यों की एक पसली कम क्यों नहीं होती ? और स्त्री के शरीर में एक पसली होनी चाहिये। क्योंकि वह एक पसली से बनी हुई है। क्या जिस सामग्री से जगत् बनाया, उस सामग्री से स्त्री का शरीर नहीं बन सकता था ? इसलिये यह बाइबल का सृष्टिक्रम सृष्टिविद्या से विरुद्ध है ॥६॥

[शैतान ने आदम और उसकी स्त्री को बहकाया; तीनों को शाप]

७—अब सर्प्प भूमि के हर एक पशु से, जिसे परमेश्वर ने बनाया था, धूर्त्त था। और उसने स्त्री से कहा—क्या निश्चय ईश्वर ने कहा है कि तुम इस बारी के हर एक पेड़ से फल न खाना[1] ॥ और स्त्री ने सर्प्प से कहा कि हम तो इस बारी के पेड़ों का फल खाते हैं ॥ परन्तु उस पेड़ का फल, जो बारी के बीच में है, ईश्वर ने कहा कि तुम उसे न खाना और न छूना, न हो कि मर जाओ ॥

तब सर्प्प ने स्त्री से कहा कि—तुम निश्चय न मरोगे ॥ क्योंकि ईश्वर जानता है कि जिस दिन तुम उसे खाओगे तुम्हारी आँखें खुल जायेंगी। और तुम भले और बुरे की पहिचान में ईश्वर के समान हो जाओगे ॥ और जब स्त्री ने देखा वह पेड़ खाने में सुस्वाद और दृष्टि में सुन्दर और बुद्धि देने के योग्य है, तो उसके फल में से लिया और खाया[2]। और अपने पति को भी दिया और उसने खाया ॥ तब उन दोनों की आँखें खुल गईं, और वे जान गये कि हम नङ्गे हैं। सो उन्होंने गूलर[3] के पत्तों को मिलाके सिया, और अपने लिये ओढ़ना बनाया ॥

शरीरों में एक पसली कम होनी चाहिए थी। इसी प्रकार यदि प्रथम नारी (हौवा=Eve) की उत्पत्ति एक पसली से हुई होती तो आज तक उत्पन्न सभी नारियों के शरीरों में एक ही पसली रही चली आती। इससे स्पष्ट है कि आदम के शरीर से एक पसली निकाले जाने और उसी से नारी की उत्पत्ति होने की बाइबल की बात सर्वथा मिथ्या है। फिर आदम को नींद में डालकर उसकी पसली निकाल लेना क्या चौर्य कर्म नहीं है ?

७—इस आयत के अर्थों में भी परिवर्त्तन किया गया है। उदाहरणार्थ—१. 'ओढ़ना बनाया' के स्थान में 'लंगोट बनाये' किया है। २. 'साग-पात' के स्थान में 'उपज' शब्द कर दिया है। यह परिवर्त्तन समीक्षा में ग्रन्थकार के इस आक्षेप को हटाने के लिए किया गया है—'और जब शाक-पात खाना

---

१. इलाहाबाद की छपी बाइबल में यह वाक्य इस प्रकार है—'तुम इस बारी के किसी वृक्ष का फल न खाना।'

२. इलाहाबाद संस्करण का पाठ इस प्रकार है— 'तब उसने उसमें से तोड़कर खाया।'

३. इलाहाबाद संस्करण में 'अंजीर' पाठ है।

तब परमेश्वर ईश्वर ने सर्प से कहा कि जो तूने यह किया है, इस कारण तू सारे ढोर और हर एक वन के पशुन से अधिक स्रापित होगा। तू अपने पेट के बल चलेगा, और अपने जीवनभर धूल खाया करेगा ॥

और मैं तुझमें और स्त्री में और तेरे वंश और उसके वंश में वैर डालूंगा। वह तेरे शिर को कुचलेगा, और तू उसकी एड़ी को काटेगा ॥ और उसने स्त्री को कहा कि—मैं तेरी पीड़ा और गर्भधारण को बहुत बढ़ाऊँगा। तू पीड़ा से बालक जनेगी। और तेरी इच्छा तेरे पति पर होगी, और वह तुझ पर प्रभुता करेगा ॥

और उसने आदम से कहा कि--तूने जो अपनी पत्नी का शब्द माना है, और जिस पेड़ का फल मैंने तुझे खाने से वर्जा था, तूने खाया है, इस कारण भूमि तेरे लिये स्रापित है। अपने जीवनभर तू उसे पीड़ा के साथ खायेगा ॥ और कह काँटे और ऊँटकटारे तेरे लिये उगायेगी, और तू खेत का साग-पात खायेगा ॥—तौरेत उत्पत्ति०, पर्व ३। आ० १-७, १४-१८ ॥

[विना पूर्व अपराध के शैतान को दुष्ट क्यों बनाया ?]

समीक्षक— जो ईसाइयों का ईश्वर सर्वज्ञ होता, तो इस धूर्त सर्प्प अर्थात् शैतान को क्यों बनाता ? और जो बनाया, तो वही ईश्वर अपराध का भागी है। क्योंकि जो वह उसको दुष्ट न बनाता, तो वह दुष्टता क्यों करता ? और वह पूर्वजन्म नहीं मानता, तो विना अपराध उसको पापी क्यों बनाया ? और सच पूँछो तो वह सर्प्प नहीं था, किन्तु मनुष्य था। क्योंकि जो मनुष्य न होता, तो मनुष्य की भाषा क्योंकर बोल सकता ?

[झूठे को शैतान कहते हैं, सत्यवादी को नहीं]

और जो आप झूंठा और दूसरे को झूंठ में चलावे, उसको 'शैतान' कहना चाहिये। सो यहाँ शैतान सत्यवादी, और इससे उसने उस स्त्री को नहीं बहकाया, किन्तु सच कहा। और ईश्वर ने आदम और हव्वा से झूंठ कहा कि इसके खाने से तुम मर जाओगे। जब वह पेड़ ज्ञानदाता और अमर करने वाला था, तो उसके फल खाने से क्यों वर्जा ? और जो वर्जा तो वह ईश्वर झूंठा और बहकानेवाला ठहरा। क्योंकि उस वृक्ष के फल मनुष्यों को ज्ञान और सुखकारक थे, अज्ञान और मृत्युकारक नहीं।

[आजकल ज्ञानदाता वृक्ष क्यों नहीं होते ?]

जब ईश्वर ने फल खाने से वर्जा, तो उस वृक्ष की उत्पत्ति किसलिये की थी ? जो अपने लिये की, तो क्या आप अज्ञानी और मृत्युधर्मवाला था ? और जो दूसरों के लिये बनाया, तो फल खाने में अपराध कुछ भी न हुआ। और आजकल कोई भी वृक्ष ज्ञानकारक और मृत्युनिवारक देखने में नहीं आता। क्या ईश्वर ने उसका बीज भी नष्ट कर दिया ?

[विना अपराध तीनों को स्राप देना अन्याय था]

ऐसी बातों से मनुष्य छली-कपटी होता है, तो ईश्वर वैसा[1] क्यों नहीं हुआ ? क्योंकि जो कोई

सब मनुष्यों को ईश्वर के कहने से उचित हुआ तो जो उत्तर में मांस खाना बाइबल में लिखा, वह झूठा क्यों नहीं ? और जो वह सच्चा है तो यह झूठा है।'

१. अर्थात् छली-कपटी।

दूसरे से छल-कपट करेगा, वह छली-कपटी क्यों न होगा ? और जो इन तीनों को शाप दिया, वह विना अपराध से है। पुनः वह ईश्वर अन्यायकारी भी हुआ। और यह शाप ईश्वर को होना चाहिये। क्योंकि वह झूंठ बोला और उनको बहकाया।

[क्या विना पीड़ा के बच्चा पैदा हो सकता था ?]

यह 'फिलासफी' देखो, क्या विना पीड़ा के गर्भधारण और बालक का जन्म हो सकता था ? और विना श्रम के कोई अपनी जीविका कर सकता है ? क्या प्रथम कांटे आदि के वृक्ष न थे ? और जब शाक-पात खाना सब मनुष्यों को ईश्वर के कहने से उचित हुआ, तो जो उत्तर[1] में मांस खाना बाइबल में लिखा, वह झूंठा क्यों नहीं ? और जो वह सच्चा हो, तो यह झूंठा है।

[आदम निर्दोष था, फिर उसकी सन्तान अपराधी क्यों ?]

जब आदम का कुछ भी अपराध सिद्ध नहीं होता, तो ईसाई लोग सब मनुष्यों को आदम के अपराध से उसका सन्तान होने पर अपराधी क्यों कहते हैं ? भला ऐसा पुस्तक और ऐसा ईश्वर कभी बुद्धिमानों के सामने मानने योग्य हो सकता है ? ॥७॥

[आदम को अदन के बाग से निकालना]

८—और परमेश्वर ईश्वर ने कहा कि—देखो ! आदम भले-बुरे के जानने में हममें से एक की नाईं हुआ। और अब ऐसा न होवे कि वह अपना हाथ डाले और जीवन के पेड़ में से भी लेकर खावे और अमर हो जाय ॥ सो उसने आदम को निकाल दिया, और अदन की वारी की पूर्व ओर करोबीम[2] ठहराये। और चमकते हुए खड्ग को जो चारों ओर घूमता था, जिसते जीवन के पेड़ के मार्ग की रखवाली करें ॥—तौरेत उत्पत्ति० पर्व ३। आ० २२, २४ ॥

[ईसाइयों का ईश्वर कोई भ्रान्त मनुष्य था]

समीक्षक—भला ईश्वर को ऐसी ईर्ष्या और भ्रम क्यों हुआ कि ज्ञान में हमारे तुल्य हुआ। क्या यह बुरी बात हुई ? यह शङ्का ही क्यों पड़ी ? क्योंकि ईश्वर के तुल्य कभी कोई नहीं हो सकता। परन्तु इस लेख से यह भी सिद्ध हो सकता है कि वह ईश्वर नहीं था, किन्तु मनुष्यविशेष था। बाइबल में जहाँ-कहीं ईश्वर की बात आती है, वहाँ मनुष्य के तुल्य ही लिखी आती है।

८—ईश्वर तो सबसे महान् है। कोई कितना ही यत्न करे, किन्तु ईश्वर की तरह सर्वज्ञ तो तीन काल में नहीं हो सकता। ऐसा होने पर भी परमात्मा का जीवात्मा से ईर्ष्या करना और उसको बढ़ती देखकर दुःखी होना शैतान का काम है। इसके विपरीत भले-बुरे का ज्ञान प्राप्त करने में सहायक होना दैवी कार्य है। परमेश्वर को चाहिए कि इस दैवी कार्य को करनेवाले को पुरस्कृत करे, न कि धरती पर सदा रेंगते रहने का शाप दे।

---

१. अर्थात् आगे।

२. बाइबल के अनुवादों में विशिष्ट संज्ञावाचक शब्दों के भिन्न-भिन्न रूप उपलब्ध होते हैं। अतः हम ऐसे नामों को रोमनलिपि में भी दे रहे हैं। करोबीम = Cherubems.

[ईर्ष्या करना, तलवार का पहरा रखना मनुष्य के काम हैं]

अब देखो, आदम के ज्ञान की बढ़ती में ईश्वर कितना दुःखी हुआ। और फिर अमरवृक्ष के फल खाने में कितनी ईर्ष्या की। और प्रथम जब उसको बारी में रक्खा, तब उसको भविष्यत् का ज्ञान नहीं था कि इसको पुनः निकालना पड़ेगा? इसलिये ईसाइयों का ईश्वर सर्वज्ञ नहीं था। और चमकते खड्ग का पहिरा रखा, यह भी मनुष्य का काम है, ईश्वर का नहीं ॥८॥

[हाबील की भेंट का आदर, काइन की नहीं]

९—और कितने दिनों के पीछे यों हुआ कि काइन[1] भूमि के फलों में से परमेश्वर के लिये भेंट लाया॥ और हाबील[2] भी अपनी झुण्ड[3] में से पहिलौठी और मोटी-मोटी भेड़ लाया। और परमेश्वर ने हाबील का और उसकी भेंट का आदर किया॥ परन्तु काइन का और उसकी भेंट का आदर न किया। इसलिये काइन अतिकुपित हुआ, और अपना मुँह फुलाया॥ तब परमेश्वर ने काइन से कहा कि तू क्यों क्रुद्ध है, और तेरा मुँह क्यों फूल गया?—तौ० उत्पत्ति० पर्व ४। आ० ३-६॥

[ईसाइयों का मांसाहारी ईश्वर लोगों से बातें भी करता था]

समीक्षक—यदि ईश्वर मांसाहारी न होता, तो भेड़ की भेंट और हाबील का सत्कार, और काइन का तथा उसकी भेंट का तिरस्कार क्यों करता? और ऐसा झगड़ा लगाने, और हाबील के मृत्यु का कारण भी ईश्वर ही हुआ। और जैसे आपस में मनुष्य लोग एक-दूसरे से बातें करते हैं, वैसी ही ईसाइयों के ईश्वर की बातें हैं। बगीचे में आना-जाना, उसका बनाना भी मनुष्यों का कर्म है। इससे विदित होता है कि यह बाइबल मनुष्यों की बनाई है, ईश्वर की नहीं॥९॥

[लोहू का भूमि से पुकारना]

१०—जब परमेश्वर ने काइन से कहा कि तेरा भाई हाबील कहाँ है? और वह बोला—मैं नहीं जानता। क्या मैं अपने भाई का रखवाला हूँ?॥ तब उसने कहा—तूने क्या किया? तेरे भाई के लोहू का शब्द भूमि से मुझे पुकारता है॥ और अब तू पृथिवी से स्रापित है॥१०॥

—तौ० उत्पत्ति० पर्व ४। आ० ९-११॥

[क्या लोहू का शब्द किसी को पुकार सकता है?]

समीक्षक—क्या ईश्वर काइन से पूँछे बिना हाबील का हाल नहीं जानता था? और लोहू का

९—फल लानेवाले कैन का तिरस्कार करने तथा मोटी भेड़ लानेवाले हाबील का सत्कार करने से स्पष्ट है कि ईसाइयों या बाइबल का परमेश्वर मांसाहारी था। स्वयं ही कैन (काइन) को अपने व्यवहार से कुपित करना और फिर उससे कुपित होने का कारण पूछना क्या ज़ख़म पर नमक छिड़कना नहीं है? यह ईश्वर के मांसाहारी होने का परिणाम था।

१०—'तेरे भाई का लोहू······पुकारता है'—वर्त्तमान अनुवाद में यह वाक्य इस प्रकार बना दिया है—'तेरे भाई का लोहू भूमि में से मेरी ओर चिल्लाकर मेरी दुहाई दे रहा है।' वाक्यरचना सुन्दर हो जाने पर भी समीक्षक का आक्षेप ज्यों-का-त्यों बना रहा, अपितु उसकी पुष्टि भी हो गई।

१. Cain. २. Abel.

३. सं० ५ में टिप्पणी है—'भेड़-बकरियों के झुण्ड।'

शब्द भूमि से कभी किसी को पुकार सकता है ? ये सब बातें अविद्वानों की हैं। इसीलिये यह पुस्तक न ईश्वर और न विद्वान् का बनाया हो सकता है ॥१०॥

[तीन सौ वर्ष तक ईश्वर के चलने की बात मूर्खतापूर्ण]

११—और हनूक[1] मतूसिलह[2] की उत्पत्ति के पीछे तीन सौ वर्ष लों ईश्वर के साथ-साथ चलता था ॥—तौ० उत्पत्ति० पर्व ५। आ० २२ ॥

समीक्षक—भला ईसाइयों का ईश्वर मनुष्य न होता, तो हनूक के साथ-साथ क्यों चलता ? इससे जो वेदोक्त निराकार ईश्वर है, उसीको ईसाई लोग मानें, तो उनका कल्याण होवे ॥११॥

[ईश्वर का पछताना और सृष्टि को नष्ट करना]

१२—और उनसे बेटियाँ उत्पन्न हुई ॥ तो ईश्वर के पुत्रों ने आदम की पुत्रियों को देखा कि वे सुन्दरी हैं। और उनमें से जिन्हें उन्होंने चाहा उन्हें ब्याहा ॥ और उन दिनों में पृथिवी पर दानव थे। और उसके पीछे भी जब ईश्वर के पुत्र आदम की पुत्रियों से मिले, तो उनसे बालक उत्पन्न हुए। जो बलवान् हुए, जो आगे से नामी थे ॥

और ईश्वर ने देखा कि आदम की दुष्टता पृथिवी पर बहुत हुई। और उनके मन की चिन्ता और भावना प्रतिदिन केवल बुरी होती है ॥ तब आदमी को पृथिवी पर उत्पन्न करने से परमेश्वर पछताया, और उसे अति शोक हुआ ॥ तब परमेश्वर ने कहा कि आदमी को, जिसे मैंने उत्पन्न किया, आदमी से लेके पशुन लों और रेंगवैयों को और आकाश के पक्षियों को पृथिवी पर से नष्ट करूँगा, क्योंकि उन्हें बनाने से मैं पछताता हूं ॥—तौ० उत्पत्ति० पर्व ६। आ० १, २, ४, ७॥

[जब ईश्वर के पुत्र थे, तो उसके मनुष्य होने में क्या सन्देह ?]

समीक्षक—ईसाइयों से पूंछना चाहिये कि ईश्वर के बेटे कौन हैं ? और ईश्वर की स्त्री सास-श्वसुर साला और सम्बन्धी कौन हैं ? क्योंकि अब तो आदम की बेटियों के साथ विवाह होने से ईश्वर

१२—ईसाइयों के मन्तव्य के अनुसार ईसामसीह खुदा का इकलौता बेटा था। परन्तु यहाँ 'ईश्वर के पुत्रों' में पुत्र शब्द के बहुवचनान्त होने से स्पष्ट है कि ईसाइयों के परमेश्वर के अनेक पुत्र थे। आगे आदम की पुत्रियों के अनेक होने और उनसे ईश्वर के पुत्रों का विवाह-सम्बन्ध होने से भी ईश्वर के एक नहीं, अनेक पुत्रों के होने की पुष्टि होती है। ईसाइयों के पास इसका कोई समाधान नहीं होने से ईसा के खुदा का इकलौता पुत्र (the only son) होने की मान्यता स्वतः धराशायी हो जाती है। यहाँ एक बात यह भी महत्त्व की है कि ईश्वर के सब पुत्र ही हुए और आदम=मनुष्य के सब पुत्रियाँ ही हुईं। मनुष्य को परमेश्वर ने अपने स्वरूप में (in his own image) बनाया था, उसमें इतना विकार कैसे आ गया कि उन्हें देखकर वह अपनी करनी पर पछताने लगा और उनका नाश करने पर उतारू हो गया। मनुष्यों को ही नहीं, पशु-पक्षियों तक को नष्ट करने की घोषणा कर दी। अपराधी मनुष्य थे तो निर्दोष पशु-पक्षियों को नाश करने की बात करना क्या न्याय्य माना जा सकता है ? पछताने और शोक करनेवाला परमेश्वर नहीं हो सकता। निराकार परमेश्वर की सन्तान की कल्पना नहीं की जा सकती। कहाँ परमेश्वर और कहाँ मनुष्य ! इनमें परस्पर विवाह-सम्बन्ध भी सम्भव नहीं। इस प्रकार की मिथ्या कल्पनायें किसी ईश्वरीय पुस्तक का विषय नहीं हो सकतीं।

१. Henoch. २. Mathusala.

इनका सम्बन्धी हुआ। और जो उनसे उत्पन्न होते हैं, वे पुत्र और प्रपौत्र हुए। क्या ऐसी बात ईश्वर और ईश्वर के पुस्तक की हो सकती है ? किन्तु यह सिद्ध होता है कि उन जङ्गली मनुष्यों ने यह पुस्तक बनाया है।

[पश्चात्ताप और अज्ञानता मानव का धर्म है]

वह ईश्वर ही नहीं, जो सर्वज्ञ न हो, न भविष्यत् की बात जाने। वह जीव है। क्या जब सृष्टि की थी, तब आगे मनुष्य दुष्ट होंगे, ऐसा नहीं जानता था ? और पछताना, अतिशोकादि होना, भूल से काम करके पीछे पश्चात्ताप करना आदि ईसाइयों के ईश्वर में घट सकता है, वेदोक्त ईश्वर में नहीं। और इससे यह भी सिद्ध होता है कि ईसाइयों का ईश्वर पूर्ण विद्वान् योगी भी नहीं था। नहीं तो शान्ति और विज्ञान से अतिशोकादि से पृथक् हो सकता। भला पशु-पक्षी भी दुष्ट हो गये ?

[ईसाइयों का ईश्वर सर्वज्ञ होता, तो विषादी न होता]

यदि वह ईश्वर सर्वज्ञ होता, तो ऐसा विषादी क्यों होता ? इसलिये न यह ईश्वर, और न यह ईश्वरकृत पुस्तक हो सकता है। जैसे वेदोक्त परमेश्वर सब पाप क्लेश दुःख शोकादि से रहित 'सच्चिदानन्दस्वरूप' है, उसको ईसाई लोग मानते वा अब भी मानें, तो अपने मनुष्यजन्म को सफल कर सकें ॥१२॥

[नूह ने नाव में सब प्राणियों का एक-एक जोड़ा रक्खा]

१३—उस नाव की लम्बाई तीन सौ हाथ, और चौड़ाई पचास हाथ, और ऊँचाई तीस हाथ की होवे ॥ तू नाव में जाना, तू और तेरे बेटे और तेरी पत्नी और तेरे बेटों की पत्नियाँ तेरे साथ ॥ और सारे शरीरों में से जीवता जन्तु दो-दो अपने साथ नाव में लेना। जिसते वे तेरे साथ जीते रहें, वे नर और नारी होवें ॥

पंछी में से उसके भाँति-भाँति के, और ढोर में से उसके भाँति-भाँति के, और पृथिवी के हर एक रेंगवैये में से भाँति-भाँति के, हर एक में से दो-दो तुझ पास आवें, जिसते जीते रहें ॥ और तू अपने लिये खाने को सब सामग्री अपने पास इकट्ठा कर। वह तुह्मारे और उनके लिये भोजन होगा ॥ सो ईश्वर की सारी आज्ञा के समान नूह[1] ने किया ॥[2]—तौ० उत्पत्ति० पर्व ६। आ० १५, १८-२२॥

[नूह की उस नाव में करोड़ों जीव कैसे समा गये ?]

समीक्षक—भला कोई भी विद्वान् ऐसी विद्या से विरुद्ध असम्भव बात के वक्ता को ईश्वर मान सकता है ? क्योंकि इतनी बड़ी चौड़ी ऊँची नाव में हाथी-हथनी, ऊँट-ऊँटनी आदि क्रोड़ों जन्तु और

१३—यहाँ नये अनुवाद में 'उस नाव' का स्थान 'जहाज' ने लिया है। 'जिससे वे तेरे साथ जीते रहें' के स्थान में 'अपने साथ जीवित रखना' वाक्य आ गया है। दोनों में पर्याप्त अन्तर है। 'जिससे जीते रहें' वाक्य को 'तू उनको जीवित रक्खे' वाक्य ने हटा दिया है। 'और तू···इकट्ठा कर' का स्थान 'और भाँति-भाँति का भोजन पदार्थ जो खाया जाता है, उनको लेकर तू अपने पास इकट्ठा कर रखना' इस सुदीर्घ वाक्य ने ले लिया है। दोनों के भाव में बहुत अन्तर है।

१. Noe.

२. बाइबल की यह कहानी ब्राह्मणग्रन्थोक्त 'मनु के जल-प्लावन' की कहानी का विकृत रूप है। अत: ग्रन्थकार का आगे यह कहना कि 'जिसने यह लेख किया है, वह विद्वान् भी नहीं था' ठीक है।

उनके खाने-पीने की चीजें, वे सब कुटुम्ब के भी समा सकते हैं ? यह इसीलिये मनुष्यकृत पुस्तक है। जिसने यह लेख किया है, वह विद्वान् भी नहीं था ॥१३॥

[पशु-पक्षियों से होम, और ईश्वर का उनकी सुगन्ध सूंघना]

१४—और नूह ने परमेश्वर के लिये एक वेदी बनाई। और सारे पवित्र पशु और हर एक पवित्र पंछियों में से लिये। और होम की भेंट उस वेदी पर चढ़ाई ॥ और परमेश्वर ने सुगन्ध सूंघा, और परमेश्वर ने अपने मन में कहा कि आदमी के लिये मैं पृथिवी को फिर कभी स्राप न दूंगा। इस कारण कि आदमी के मन की भावना उसकी लड़काई से बुरी है। और जिस रीति से मैंने सारे जीवधारियों को मारा, फिर कभी न मारूँगा ॥—तौ० उत्पत्ति० पर्व ८। आ० २०, २१ ॥

[क्या ईश्वर सुगन्ध भी सूँघता है, और पछताता भी है ?]

समीक्षक—वेदी के बनाने, होम करने के लेख से यही सिद्ध होता है कि ये बातें वेदों से बाइबल में गई हैं। क्या परमेश्वर के नाक भी है कि जिससे सुगन्ध सूँघा ? क्या यह ईसाइयों का ईश्वर मनुष्यवत् अल्पज्ञ नहीं है कि कभी स्राप देता है और कभी पछताता है ? कभी कहता है स्राप न दूंगा, पहले दिया था, और फिर भी देगा। प्रथम सबको मार डाला, और अब कहता है कि कभी न मारूँगा !!! ये बातें सब लड़कपन की-सी हैं, ईश्वर की नहीं, और न किसी विद्वान् की। क्योंकि विद्वान् की भी बात और प्रतिज्ञा स्थिर होती है ॥१४॥

[नूह परिवार को पशु-पक्षी खाने का आशीर्वाद]

१५—और ईश्वर ने नूह को और उसके बेटों को आशीष दिया, और उन्हें कहा कि। हर एक जीता चलता जन्तु तुम्हारे भोजन के लिये होगा। मैंने हरी तरकारी के समान सारी वस्तु तुम्हें दिईं। केवल मांस उसके जीव अर्थात् उसके लोहू समेत मत खाना ॥—तौ० उत्पत्ति० पर्व ९। आ० १, ३, ४

[ईसाइयों का ईश्वर निर्दय होने से पापी क्यों नहीं ?]

समीक्षक—क्या एक को प्राणकष्ट देकर दूसरों को आनन्द कराने से दयाहीन ईसाइयों का ईश्वर नहीं है ? जो माता-पिता एक लड़के को मरवाकर दूसरे को खिलावें, तो महापापी नहीं हों ? इसी प्रकार यह बात है। क्योंकि ईश्वर के लिये सब प्राणी पुत्रवत् हैं। ऐसा न होने से इनका ईश्वर कसाईवत् काम करता है। और सब मनुष्यों को हिंसक भी इसीने बनाया है। इसलिये ईसाइयों का ईश्वर निर्दय होने से पापी क्यों नहीं ? ॥१५॥

[ईश्वर का डरकर नीचे उतरना, और भाषा-भंग करना]

१६—और सारी पृथिवी पर एक ही बोली और एक ही भाषा[1] थी ॥ फिर उन्होंने कहा कि

१४—यहाँ नये अनुवाद में 'परमेश्वर' का स्थान 'यहोवा' ने ले लिया है और 'सुगन्ध' से पहले 'सुखदायक' आ गया है।

१५—यहाँ मुख्य परिवर्त्तन है—'जीव' को हटाकर 'प्राण' को प्रतिष्ठित करना।

१६—चोटी स्वर्गलों—यहाँ तो अनुवाद में विचित्र लीला की गई है। 'जिसकी चोटी स्वर्गलों

---

१. यह सत्य तत्त्व आर्यों के द्वारा ही यहूदियों तक पहुँचा था। यह एक आदिभाषा वेद के आधार पर निष्पन्न अतिभाषा वा आदिभाषा थी। बाइबल का यह प्रमाण वर्तमान पाश्चात्य भाषाविदों के मिथ्या अहंकार, 'संस्कृत आदिभाषा नहीं है' का मुंह-बोलता उत्तर है। विशेष देखिये—पं० भगवद्दत्तजी 'कृत वैदिकवाङ्मय का इतिहास' भाग १, पृष्ठ १ से ४० (सं० २)।

आओ, हम एक नगर और एक गुम्मट, जिसकी चोटी स्वर्गलों पहुँचे, अपने लिये बनावें और अपना नाम करें। न हो कि हम सारी पृथिवी पर छिन्न-भिन्न हो जायें।

तब ईश्वर उस नगर और उस गुम्मट को, जिसे आदम के सन्तान बनाते थे, देखने को उतरा॥ तब परमेश्वर ने कहा कि- देखो ये लोग एक ही हैं, और उन सबकी एक ही बोली है। अब वे ऐसा-ऐसा कुछ करने लगे। सो वे जिस पर मन लगावेंगे, उससे अलग न किये जायेंगे॥

आओ हम उतरें और वहाँ उनकी भाषा को गड़बड़ावें, जिसतें एक-दूसरे की बोली न समझें॥ तब परमेश्वर ने उन्हें वहाँ से सारी पृथिवी पर छिन्न-भिन्न किया। और वे उस नगर के बनाने से अलग रहे॥—तौ० उत्पत्ति० पर्व ११। आ० १, ४-८॥

[एकभाषा-भाषियों की भाषा को बिगाड़ना शैतान से भी बुरा काम]

समीक्षक—जब सारी पृथिवी पर एक भाषा और बोली होगी, उस समय सब मनुष्यों को परस्पर अत्यन्त आनन्द प्राप्त हुआ होगा। परन्तु क्या किया जाय? यह ईसाइयों के ईर्ष्यक ईश्वर ने सबकी भाषा गड़बड़ाके सबका सत्यानाश किया। उसने यह बड़ा अपराध किया। क्या यह शैतान के काम से भी बुरा काम नहीं है? और इससे यह भी विदित होता है कि ईसाइयों का ईश्वर 'सनाई' पहाड़ आदि पर रहता था, और जीवों की उन्नति भी नहीं चाहता था। यह विना एक अविद्वान् के ईश्वर की बात, और यह ईश्वरोक्त पुस्तक क्योंकर हो सकता है?॥१६॥

[अबिरहाम का संकट में पत्नी को बहन बनाना]

१७—तब उसने अपनी पत्नी सरी[1] से कहा कि—देख, मैं जानता हूँ कि तू देखने में सुन्दर स्त्री है॥ इसलिये यों होगा कि जब मिश्री तुझे देखें, तब वे कहेंगे कि यह उसकी पत्नी है। और मुझे मार डालेंगे, परन्तु तुझे जीती रखेंगे॥ तू कहियो कि मैं उसकी बहिन हूँ, जिसतें तेरे कारण मेरा भला होय, और मेरा प्राण तेरे हेतु से जीता रहे॥—तौ० उत्पत्ति० पर्व १२। आ० ११-१३॥

[जिनके ऐसे पैगम्बर हों, उनका कल्याण कैसे हो?]

समीक्षक—अब देखिये, जो अविरहाम[2] बड़ा पैगम्बर ईसाई और मुसलमानों का बजता है, और उसके कर्म मिथ्याभाषणादि बुरे हैं। भला जिनके ऐसे पैगम्बर हों, उनको विद्या वा कल्याण का मार्ग कैसे मिल सके?॥१७॥

[ईश्वर का खतनः करने का कठोर आदेश]

१८—और ईश्वर ने अविरहाम से कहा कि- तू और तेरे पीछे तेरा वंश, उनकी पीढ़ियों में मेरे नियम को माने॥ तुम मेरा नियम जो मुझमें और तुममें और तेरे पीछे तेरे वंश से है, जिसे तुम

पहुँचे' के स्थान में 'जिसकी चोटी आकाश में बातें करे' कर दिया है। 'न हो कि हम सारी पृथिवी पर छिन्न-भिन्न हो जायें' के स्थान में 'ऐसा न हो कि हमें सारी पृथिवी पर फैलना पड़े' कर दिया गया है। दोनों में आकाश-पाताल का अन्तर है। छिन्न-भिन्न होना विपत्ति का सूचक है और फैलना सम्पत्ति का, एक दुःखद है तो दूसरा सुखद है। 'ईश्वर' का स्थान 'यहोवा' ने हथिया लिया है।

१७—'सरी' नये अनुवाद में 'सारै' बन गई है।

१८—नये अनुवाद में 'अविरहाम' कहीं 'अब्राम' बन गया है तो कहीं 'इब्राहीम।'

१. Sarai. २. Abraham.

मानोगे सो यह है कि—तुममें से हर एक पुरुष का खतनः किया जाय। और तुम अपने शरीर की खलड़ी काटो, और वह मेरे और तुह्मारे मध्य में नियम का चिह्न होगा॥ और तुह्मारी पीढ़ियों में हर एक आठ दिन के पुरुष का खतनः किया जाय। जो घर में उत्पन्न होय अथवा जो किसी परदेशी से, जो तेरे वंश का न हो, रूपै से मोल लिया जाय॥

जो तेरे घर में उत्पन्न हुआ हो, और जो तेरे रूपै से मोल लिया गया हो, अवश्य उसका खतनः किया जाय। और मेरा नियम तुह्मारे मांस में सर्वदा नियम के लिये होगा॥ और जो अखतनः बालक जिसकी खलड़ी का खतनः न हुआ हो, सो प्राणी अपने लोग से कट जाय कि उसने मेरा नियम तोड़ा है॥ —तौ० उत्पत्ति० पर्व १७। आ० ९-१४॥

[खतनः ईश्वर को इष्ट था, तो वह चमड़ी क्यों बनाई ?]

समीक्षक—अब देखिये ईश्वर की अन्यथा आज्ञा कि जो यह खतनः करना ईश्वर को इष्ट होता, तो उस चमड़े को आदिसृष्टि में बनाता ही नहीं। और जो यह बनाया है, वह रक्षार्थ है, जैसा आंख के ऊपर का चमड़ा। क्योंकि वह गुप्त स्थान अति कोमल है। जो उस पर चमड़ा न हो, तो एक कीड़ी के भी काटने और थोड़ी-सी चोट लगने से बहुत-सा दुःख होवे। और वह लघुशङ्का के पश्चात् कुछ मूत्रांश कपड़ों में न लगे, इत्यादि बातों के लिये है। इसका काटना बुरा है।

[ईसाई इस आज्ञा को अब क्यों नहीं मानते ?]

और अब ईसाई लोग इस आज्ञा को क्यों नहीं पालन करते ? यह आज्ञा सदा के लिये है। इसके न करने से ईसा की गवाही जो कि 'व्यवस्था के पुस्तक का एक विन्दु भी झूंठा नहीं है' मिथ्या हो गई। इसका सोच-विचार ईसाई कुछ भी नहीं करते॥१८॥

[अबिरहाम से बातें कर ईश्वर का ऊपर जाना]

१९—तब उससे बात करने से रह गया। और अबिरहाम के पास से ईश्वर ऊपर जाता रहा॥ —तौ० उत्पत्ति० पर्व १७। आ० २२॥

[इनका ईश्वर कोई इन्द्रजाली पुरुषवत् था]

समीक्षक—इससे यह सिद्ध होता है कि ईश्वर मनुष्य वा पक्षिवत् था, जो ऊपर से नीचे और नीचे से ऊपर आता-जाता रहता था। यह कोई इन्द्रजाली पुरुषवत् विदित होता है॥१९॥

'व्यवस्था के पुस्तक'—"क्योंकि मैं तुमसे सच कहता हूँ कि जबलों आकाश व पृथिवी टल न जायें तबलों व्यवस्था से एक मात्रा अथवा एक विन्दु बिना पूरा हुए नहीं टलेगा" (मती ५।१८)। ग्रन्थकार इस आयत की ओर संकेत करके कह रहे हैं कि खतना की व्यवस्था त्याग कर ईसाइयों ने केवल पुराने धर्मनियम (Old Testament) के विरुद्ध ही नहीं किया, प्रत्युत ईसा का वचन भी मिथ्या कर दिया।

१९—"तब परमेश्वर ने इब्राहीम से बातें बन्द कर दी और उसके पास से ऊपर चढ़ गया" यह नये अनुवाद का रूप है। अनुवाद प्रायः बदलता रहा है, किसी समय वह ऐसा था—"जब ईश्वर अबरिहाम से बातें कर चुका तो ऊपर चला गया।"

[ईश्वर ने रोटी मक्खन और बछड़े का मांस खाया]

२०—फिर ईश्वर उसे ममरे के बलूतों में दिखाई दिया। और वह दिन को घाम के समय में अपने तम्बू के द्वार पर बैठा था ॥ और उसने अपनी आँखें उठाईं, और देखा कि तीन मनुष्य उसके पास खड़े हैं। और उन्हें देखके वह तम्बू के द्वार पर से उनकी भेंट को दौड़ा, और भूमि-लों दण्डवत् किई ॥ और कहा—हे मेरे स्वामि! यदि मैंने अब आपकी दृष्टि में अनुग्रह पाया है, तो मैं आपकी बिनती करता हूँ कि अपने दास के पास से चले न जाइये ॥ इच्छा होय तो थोड़ा जल लाया जाय। और अपने चरण धोइये, और पेड़ तले विश्राम कीजिये ॥ और मैं एक कौर रोटी लाऊँ, और आप तृप्त हूजिये ॥ उसके पीछे आगे बढ़िये, क्योंकि आप इसीलिये अपने दास के पास आये हैं। तब वे बोले कि—जैसा तूने कहा वैसा कर ॥

और अबिरहाम तम्बू में सरः[1] पास उतावली से गया। और उसे कहा कि फुरती कर, और तीन नपुआ चोखा पिसान लेके गूंध और उसके फुलके पका ॥ और अबिरहाम झुण्ड की ओर दौड़ा गया, और एक अच्छा कोमल बछड़ा लेके दास को दिया। और उसने भी उसे सिद्ध करने में चटक किया ॥ और उसने मक्खन और दूध और वह बछड़ा, जो पकाया था, लिया, और उसके आगे धरा। और आप उनके पास पेड़ तले खड़ा रहा, और उन्होंने खाया ॥ —तौ० उत्पत्ति० पर्व १८। आ० १-८ ॥

[यह ईश्वर जंगली लोगों की मण्डली का कोई सरदार था]

समीक्षक—अब देखिये, सज्जन लोगो! जिनका ईश्वर बछड़े का मांस खावे, उसके उपासक गाय-बछड़े आदि पशुओं को क्यों छोड़ें? जिसको कुछ दया नहीं, और मांस के खाने में आतुर रहै, वह विना हिंसक मनुष्य के, ईश्वर कभी हो सकता है?

और ईश्वर के साथ दो मनुष्य न जाने कौन थे? इससे विदित होता है कि जङ्गली मनुष्यों की एक मण्डली थी। उनका जो प्रधान मनुष्य था, उसका नाम बाइबल में ईश्वर रखा होगा। इन्हीं बातों से बुद्धिमान् लोग इनके पुस्तक को ईश्वरकृत नहीं मान सकते। और न ऐसे को ईश्वर मानने योग्य समझते हैं ॥२०॥

[ईश्वर का स्त्रियों के समान ताना मारना]

२१—और परमेश्वर ने अबिरहाम से कहा कि सरः क्यों यह कहके मुस्कुराई कि जो मैं बुढ़िया हूँ, सचमुच बालक जनूँगी ॥ क्या परमेश्वर के लिये कोई बात असाध्य है? ॥

—तौ० उत्पत्ति० पर्व १८। आ० १३, १४ ॥

समीक्षक—अब देखिये कि क्या-क्या ईसाइयों के ईश्वर की लीला, कि जो लड़के वा स्त्रियों के समान चिढ़ता और ताना मारता है!!! ॥२१॥

[ईश्वर का क्रुद्ध हो नगरों पर आग बरसाना]

२२—तब परमेश्वर ने सदूम और अमूरः[2] पर गन्धक और आग अपनी ओर से वर्षाया ॥ और उन नगरों को, और सारे चौगान को, और नगरों के सारे निवासियों को, और जो कुछ भूमि पर उगता था, उलट दिया ॥ —तौ० उत्पत्ति० पर्व १९। आ० २४, २५ ॥

---

१. Sara.
२. Gomorrha.

[निरपराधों को कष्ट देना अन्याय है]

समीक्षक—अब यह भी लीला बाइबल के ईश्वर की देखिये, कि जिसको बालक आदि पर भी कुछ दया न आई। क्या वे सब ही अपराधी थे, जो सबको भूमि उलटाके दबा मारा? यह बात न्याय दया और विवेक से विरुद्ध है। जिनका ईश्वर ऐसा काम करे, उनके उपासक क्यों न करें?[1] ॥२२॥

[लूत का अपनी पुत्रियों से संभोग करना]

२३—आओ हम अपने पिता को दाखरस पिलावें। और हम उसके साथ शयन करें कि हम अपने पिता से वंश जुगावें[2] ॥ तब उन्होंने उस रात अपने पिता को दाखरस पिलाया। और पहिलोठी[3] गई, और अपने पिता के साथ शयन किया ॥ हम उसे आज रात भी दाखरस पिलावें, तू जाके शयन कर ॥ सो लूत[4] की दोनों बेटियाँ अपने पिता से गर्भिणी हुई ॥

—तौ० उत्पत्ति० पर्व १९। आ० ३२-३४, ३६ ॥

[शराब के नशे में ऐसे ही कुकर्म होते हैं]

समीक्षक—देखिये, पिता-पुत्री भी जिस मद्यपान के नशे में कुकर्म करने से न बच सके, ऐसे दुष्ट मद्य को जो ईसाई आदि पीते हैं, उनकी बुराई का क्या पारावार है? इसलिये सज्जन लोगों को मद्य के पीने का नाम भी न लेना चाहिये ॥२३॥

२३—नये अनुवाद में 'दाखरस' के स्थान में 'दाखमधु' कर दिया है। अंग्रेज़ी में यहाँ 'Wine' शब्द है, जिसका अर्थ शराब या मद्य है। इस आयत की ग्रन्थकार की समीक्षा ने ईसाइयों को साहित्यिक सदाचार से गिरा दिया है। इस समीक्षा से बचने के लिए अनुवाद में इस प्रकार विकार किया है—"सो यहोवा ने, जैसा कहा था वैसा ही सारा की सुधी लेके, उसके साथ अपने वचन के अनुसार किया। सो सारा को इब्राहीम से गर्भवती होकर, उसके बुढ़ापे में, उसी नियुक्त समय पर जो परमेश्वर ने उससे ठहराया था, एक पुत्र हुआ।" इस नये अनुवाद में सारा (सरः) का इब्राहीम से गर्भवती होना बतलाया है। यह अशुद्ध है, क्योंकि अंग्रेज़ी बाइबल में लिखा है—'And the Lord visited Sarah as he had said, and the Lord did to Sarah as he had spoken 2. For Sarah conceived and bare Abrah a son in his old age, at the set time of which God had spoken to him.' उर्दू बाइबल में इसका अनुवाद इस प्रकार है—'और खुदावन्द (परमेश्वर) ने, जैसा उसने फ़रमाया था, सारा पर नजर की और उसने अपने वायदा के मुताबिक सारा से किया। सो सारा हामिला गर्भवती हुई और इब्राहीम के लिए उसके बुढ़ापे में उसी मुअय्यन (नियत) वक्त पर जिसका ज़िक्र खुदा ने उससे किया था, उसके एक बेटा पैदा हुआ।' अंग्रेज़ी और उर्दू में सारा का इब्राहीम से गर्भवती होना किसी भी प्रकार सिद्ध नहीं होता। इस सबसे तो वही सिद्ध होता है, जो ग्रन्थकार ने लिखा है।

---

१. सन् '४५ में जापान पर परमाणु बम द्वारा लाखों निरपराध बालक स्त्री और वृद्धों की हत्या ईसाईमतानुयायी अमेरिका ने की। यह सम्भवतः इसी शिक्षा का फल है। अमेरिका यही ताण्डव २१ वर्ष तक वियेतनाम में करता रहा। और अब (१९९१ ई० में) इराक पर अमरीका और उसके लंगोटियों ने वही ताण्डव नृत्य किया।

२. अर्थात् चलावें। सं० ५ में यही पाठ बना दिया है।

३. अर्थात् प्रथम उत्पन्न बड़ी पुत्री।

४. Lot.

[परमेश्वर से सरः का गर्भिणी होना]

२४—और अपने कहने के समान परमेश्वर ने सरः से भेंट किया। और अपने वचन के समान परमेश्वर ने सरः के विषय में किया ॥ और सरः गर्भिणी हुई ॥

—तौ० उत्पत्ति० पर्व २१। आ० १, २ ॥

[ईसाइयों का ईश्वर परस्त्रीगमन भी करता था]

समीक्षक—अब विचारिये कि सरः से भेंट कर गर्भवती की, यह काम कैसे हुआ ? क्या विना परमेश्वर और सरः के तीसरा कोई गर्भस्थापन का कारण दीखता है ? ऐसा प्रतीत होता है कि सरः परमेश्वर की कृपा से गर्भवती हुई !!! ॥२४॥

[हाजिरः को घर से निकलवाना]

२५—तब अबिरहाम ने बड़े तड़के उठके रोटी और एक पखाल में जल लिया, और हाजिरः[1] के कन्धे पर धर दिया। और लड़के को भी उसे सौंपके उसे विदा किया॥ उसने उस लड़के को एक झाड़ी के तले डाल दिया ॥ और वह उसके सन्मुख बैठके चिल्ला-चिल्ला रोई ॥ तब ईश्वर ने उस बालक का शब्द सुना ॥—तौ० उत्पत्ति० पर्व २१। आ० १४-१७ ॥

[बाइबल में साधारण लोगों की बातें भरी हैं]

समीक्षक—अब देखिये ईसाइयों के ईश्वर की लीला, कि प्रथम तो सरः का पक्षपात करके हाजिरः को वहाँ से निकलवा दी और चिल्ला-चिल्ला रोई हाजिरः, और शब्द सुना लड़के का। यह कैसी अद्भुत बात है ? यह ऐसा हुआ होगा कि ईश्वर को भ्रम हुआ होगा कि यह बालक ही रोता है। भला यह ईश्वर और ईश्वर की पुस्तक की बात कभी हो सकती है ? विना साधारण मनुष्य के वचन के इस पुस्तक में थोड़ी-सी बात सत्य के, सब असार भरा है ॥२५॥

[ईश्वर का अबिरहाम से बेटे की बलि माँगना]

२६—और इन बातों के पीछे यों हुआ कि ईश्वर ने अबिरहाम की परीक्षा किई ॥ और उसे कहा—'हे अबिरहाम ! तू अपने बेटे को, अपने इकलौठे इजहाक[2] को जिसे तू प्यार करता है, ले उसे होम की भेंट के लिये चढ़ा' ॥ और अपने बेटे इजहाक[2] को बाँधके उसे वेदी में लकड़ियों पर धरा ॥

और अबिरहाम ने छुरी लेके अपने बेटे को घात करने के लिये हाथ बढ़ाया ॥ तब परमेश्वर के दूत ने स्वर्ग पर उसे पुकारा कि अबिरहाम अबिरहाम ॥ अपना हाथ लड़के पर मत बढ़ा, उसे कुछ मत कर। क्योंकि अब मैं जानता हूँ कि तू ईश्वर से डरता है ॥

—तौ० उत्पत्ति० पर्व २२। आ० १, २, ६-१२ ॥

---

२५. नये अनुवाद में 'पखाल' के स्थान में 'पानी से भरी चमड़े की थैली (मशक़)' करके स्पष्ट कर दिया है। 'उस बालक का शब्द सुना' के स्थान में 'लड़के की सुनी' कर दिया है। यह सब ग्रन्थकार की समीक्षा का फल है।

२६. होम की भेंट—इससे स्पष्टतः सिद्ध है कि ईसाइयों का अभिमत खुदा नर-मांस खाता था। अन्यथा इब्राहीम से अपने इकलौते बेटे इसहाक की बलि क्यों माँगता ?

१. Agar.   २. Isaac.

[क्यों न अपनी सर्वज्ञता से उसकी भक्ति को जाना ?]

समीक्षक—अब स्पष्ट हो गया कि यह बाइबल का ईश्वर अल्पज्ञ है, सर्वज्ञ नहीं। और अबिरहाम भी एक भोला मनुष्य था, नहीं तो ऐसी चेष्टा क्यों करता ? और जो बाइबल का ईश्वर सर्वज्ञ होता, तो उसकी भविष्यत् श्रद्धा को भी सर्वज्ञता से जान लेता। इससे निश्चित होता है कि ईसाइयों का ईश्वर सर्वज्ञ नहीं ॥२६॥

[मृतकों को गाड़ने का आदेश]

२७—सो आप हमारी समाधिन में से चुनके एक में अपने मृतक को गाड़िये, जिसतें आप अपने मतक को गाड़ें ॥ —तौ० उत्पत्ति० पर्व २३। आ० ६

[मुर्दों को गाड़ने में अनेक दोष हैं]

समीक्षक—मुर्दों के गाड़ने से संसार की बड़ी हानि होती है। क्योंकि वह सड़के वायु को दुर्गन्धमय कर रोग फैला देता है।

प्रश्न—देखो, जिससे प्रीति हो, उसको जलाना अच्छी बात नहीं। और गाड़ना जैसाकि उसको सुला देना है। इसलिए गाड़ना अच्छा है।

उत्तर—जो मृतक से प्रीति करते हो, तो अपने घर में क्यों नहीं रखते ? और गाड़ते भी क्यों हो ? जिस जीवात्मा से प्रीति थी, वह निकल गया, अब दुर्गन्धमय मट्टी से क्या प्रीति ? और जो प्रीति करते हो, तो उसको पृथिवी में क्यों गाड़ते हो ? क्योंकि किसी से कोई कहे कि तुझको भूमि में गाड़ देवें, तो वह सुनकर प्रसन्न कभी नहीं होता। उसके मुख आँख और शरीर पर धूल पत्थर ईंट चूना डालना, छाती पर पत्थर रखना कौनसी प्रीति का काम है ?

---

२७. मृतक को गाड़ना—नये अनुवाद में इसे संक्षिप्त कर दिया है—'सो हमारी कब्रों में से जिसको तू चाहे उसमें अपने मुर्दे को गाड़।'

यह शरीर जिन तत्त्वों से बना है, वे हैं—पृथिवी, जल, अग्नि और वायु। विश्व भर के लोग मृतक को इन्हीं तत्त्वों में से किसी एक को भेंट करते हैं। जो लोग गाड़ते हैं वे पृथिवी को, जो जल में प्रवाहित करते हैं वे जल को, जो दाह कर्म करते हैं वे अग्नि को और जो खुले में छोड़ देते हैं वे वायु को भेंट करते हैं। ये चारों तत्त्व मृत शरीर को आत्मसात् कर सृष्टि-तत्त्वों को अणुकृत कर देते है। इस सबका परिणाम यह होता है कि मृत देह का कुछ नहीं बचता। इसलिए किसी के मरने को 'पञ्चत्वं गतः' कह दिया जाता है। सोचने की बात है कि इन सबमें वैज्ञानिक विधि कौन-सी है ?

कोई समय था जब यूरोप में सर्वत्र रोम का आधिपत्य था। उस समय रोमन राज्य में मुर्दों को जलाते थे, गाड़ते नहीं थे। रोमन लोगों की देखा-देखी यूरोप में भी मुर्दों को जलाया जाता था। रोमन लोगों ने जलाने की विधि ग्रीक लोगों से सीखी थी। ग्रीस पर किसी समय भारतीय विचारधारा का प्रभाव था। पाइथागोरस, जो ग्रीक दार्शनिक था, भारत आया था। प्लेटो की विचारधारा में तो भारत का प्रभाव स्पष्ट दीखता है। भारत से ग्रीस, ग्रीस से रोम और रोम से समूचे यूरोप में मुर्दों को जलाने की विधि सर्वत्र फैली। इसके बाद जब ईसाईयत का प्रचार हुआ और सृष्टि की समाप्ति (प्रलय) के दिन हर व्यक्ति के सशरीर उठ खड़े होने (Resurrection) के विचार ने जन्म लिया, तब चर्च की ओर से इसका विरोध हुआ। चर्च का कहना था कि यदि शव को जला दिया गया तो जब आखिरी

और सन्दूक में डालके गाड़ने से बहुत दुर्गन्ध होकर पृथिवी मे निकल, वायु को बिगाड़कर दारुण रोगोत्पत्ति करता है। दूसरा एक मुर्दे के लिये कम-से-कम ६ हाथ लम्बी और ४ हाथ चौड़ी भूमि चाहिये। इसी हिसाब से सौ हजार वा लाख अथवा क्रोड़ों मनुष्यों के लिये कितनी भूमि व्यर्थ रुक जाती है। न वह खेत, न बगीचा, और न बसने के काम की रहती है। इसलिये सबसे बुरा गाड़ना है।

उससे कुछ थोड़ा बुरा जल में डालना। क्योंकि उसको जलजन्तु उसी समय चीर-फाड़के खा लेते हैं। परन्तु जो कुछ हाड़ वा मल जल में रहेगा, वह सड़कर जगत् को दु:खदायक होगा।

उससे कुछ एक थोड़ा बुरा जङ्गल में छोड़ना है। क्योंकि उसको मांसाहारी पशु-पक्षी लूंच खायेंगे। तथापि जो उसके हाड़ की मज्जा और मल सड़कर जितना दुर्गन्ध करेगा, उतना जगत् का अनुपकार होगा। और जो जलाना है वह सर्वोत्तम है। क्योंकि उसके सब पदार्थ अणु होकर वायु में उड़ जायेंगे।

[विधिपूर्वक मुर्दे को जलाना सर्वोत्तम है]

प्रश्न—जलाने से भी दुर्गन्ध होता है।

उत्तर—जो अविधि से जलावें, तो थोड़ा-सा होता है। परन्तु गाड़ने आदि से बहुत कम होता है।

और जो विधिपूर्वक, जैसाकि वेद[1] में लिखा है—मुर्दे के तीन हाथ गहरी, साढ़े तीन हाथ चौड़ी, पाँच हाथ लम्बी, तले में डेढ़ बीता अर्थात् चढ़ा उतार[2] वेदी खोदकर, शरीर के बराबर घी, उसमें एक सेर में रत्तीभर कस्तूरी, मासाभर केसर डाल, न्यून-से-न्यून आध मन चन्दन, अधिक चाहें जितना ले। अगर तगर कपूर आदि और पलाश आदि की लकड़ियों को वेदी में जमा, उस पर मुर्दा रखके, पुन: चारों ओर ऊपर वेदी के मुख से एक-एक बीता तक लकड़ियाँ भरके उस घी की आहुति देकर जलाना चाहिए। उस प्रकार से दाह करें, तो कुछ भी दुर्गन्ध न हो।

दिन (Doomsday) हर व्यक्ति के पाप-पुण्य का लेखा-जोखा होकर स्वर्ग-नरक का निर्धारण होगा, तब शरीर के भस्म हो जाने पर स्वर्ग नरक में कैसे भेजा जा सकेगा? ईसाइयत के प्रचार के कारण धीरे-धीरे शवदाह की विधि का परित्याग कर शव को गाड़ने का रिवाज जोर पकड़ता गया। सन् १८७३ में वायना में एक प्रदर्शनी हुई, जिसमें मृतदेह को जलाने की एक भट्टी दिखलाई गई थी, जो इटली में कहीं-कहीं मुर्दों को जलाने के काम आती थी। इंगलैंड की महारानी विक्टोरिया का सर्जन सर हैनरी थाम्पसन इस भट्टी को देखकर बड़ा प्रभावित हुआ। परिणामस्वरूप उसने शवदाह के विचार को मूर्त्त रूप देने के लिए एक संस्था बनाई, जिसका नाम था—'Cremation—The treatment of the body after Death.' उस समय के अनेक वैज्ञानिकों, कलाविदों तथा बुद्धिजीवियों ने सर थाम्पसन के विचारों के साथ अपनी सहमति प्रकट की। इन लोगों ने मिलकर १३ जनवरी १८७४ को जिस 'क्रिमेशन सोसायटी आफ़ इंगलैंड' की स्थापना की, उसके घोषणापत्र में कहा गया था—

"The promoters disapprove the present system of burying the dead and wish to substitute some method which would rapidly resolve the body into its component elements by a process which could not offend the living and would render the remains perfectly innocuous."

---

१. 'विरोधे त्वनपेक्षं स्यादसति ह्यनुमानम्' (मी० १।३।२) अर्थात् 'श्रौत गृह्य धर्मसूत्रोक्त विधि यदि वेद से विरुद्ध हो, तो उसकी अपेक्षा न करे=प्रमाण न माने। विरोध न होने पर उसकी वेदानुकूलता का अनुमान करना चाहिए' इस वचन के अनुसार आश्वलायन (४।१।६-१०) आदि गृह्यसूत्रों में कही गई अन्त्येष्टिविधि (द्र०—ग्रन्थकार कृत संस्कार-विधि पृष्ठ ३१०-३१२) का ही निर्देश यहाँ 'वेद में लिखा है' शब्दों से किया है, ऐसा जानना चाहिए।

२. चढ़ा उतार खोदकर अर्थात शिर की ओर कुछ ऊँचा और पैर की ओर कुछ नीचा रहे, इस प्रकार खोदकर।

किन्तु इसी का नाम अन्त्येष्टि, नरमेध, पुरुषमेध यज्ञ हैं। और जो दरिद्र हो तो बीस सेर से कम घी चिता में न डाले। चाहे वह भीख माँगने वा जातिवाले के देने अथवा राज से मिलने से प्राप्त हो। परन्तु उसी प्रकार दाह करे। और जो घृतादि किसी प्रकार न मिल सके, तथापि गाड़ने आदि से केवल लकड़ी से भी मृतक का जलाना उत्तम है। क्योंकि एक विश्वाभर भूमि में अथवा एक वेदी में लाखों क्रोड़ों मृतक जल सकते हैं। भूमि भी गाड़ने के समान अधिक नहीं बिगड़ती। और कबर के देखने से भय भी होता है। इससे गाड़ना आदि सर्वथा निषिद्ध है ॥२७॥

[ईश्वर का अबिरहाम की अगुवाई करना]

२८—परमेश्वर मेरे स्वामी अबिरहाम का ईश्वर धन्य है, जिसने मेरे स्वामी को अपनी दया और अपनी सच्चाई विना न छोड़ा। मार्ग में परमेश्वर ने मेरे स्वामी के भाइयों के घर की ओर मेरी अगुवाई किई ॥ —तौ० उत्पत्ति० पर्व २४। आ० २७

[ईश्वर अब क्यों बातें और अगुवाई नहीं करता ?]

समीक्षक—क्या वह अबिरहाम ही का ईश्वर था ? और जैसे आजकल बिगारी वा अगुवे लोग अगुवाई अर्थात् आगे-आगे चलकर मार्ग दिखलाते हैं, वैसे ईश्वर ने भी किया। तो आजकल मार्ग क्यों नहीं दिखलाता ? और मनुष्यों से बातें क्यों नहीं करता ? इसलिए ऐसी बातें ईश्वर वा ईश्वर के पुस्तक की कभी नहीं हो सकतीं, किन्तु जङ्गली मनुष्यों की हैं ॥२८॥

[भाटों की पोथीवत् इसमअऐल बेटों के नाम गिनाना]

२९—इसमअऐल[1] के बेटों के नाम ये हैं—इसमअऐल का पहिलौठा नबीत[2] और कीदार[3] और अदबिएल[4] और मिबसाम[5] ॥ और मिसमाअ[6] और दूमः[7] और मस्सा[8] ॥ हदर[9] और तैमा[10], इतूर[11], नफीस[12] और किदम[13] ॥ —तौ० उत्पत्ति० पर्व २५। आ० १३-१५

अर्थात् इस संस्था के संस्थापक मुर्दे गाड़ने की प्रचलित रीति का अनुमोदन नहीं करते और चाहते हैं कि इसकी जगह कोई ऐसी विधि अपनाई जाये, जिसमे शरीर शीघ्र-से-शीघ्र अपने घटक तत्त्वों में विलीन हो जाये और जिस रीति से जीवित व्यक्तियों को आघात न पहुँचे और मृत शरीर सर्वथा दोषरहित हो जाये।

शवदाह से ईसाइत के पुनरुत्थान (Resurrection) के सिद्धान्त की हानि होती थी, इसलिए चर्च की ओर से विरोध होना ही था, सो हुआ। १८८३ में डाक्टर विलियम प्राइस ने अपने मृत बच्चे का दाह कर्म करना चाहा तो उस पर मुक़दमा चलाया गया। अन्त में अदालत ने फैसला दिया कि शव-दाह अवैधानिक नहीं है। सन् १९०२ में इंगलैंड में पहले-पहल 'शवदाह विधेयक' 'Cremation Act' पास हुआ। धीरे-धीरे लोग इस विधि को अपनाते जा रहे हैं। इस विषय में अधिक जानकारी पाने के इच्छुक हमारी पुस्तक 'अध्यात्म-मीमांसा' (पृ० २५४-२६४) देखें।

२८. ग्रन्थकार की समीक्षा को हल्का करने के लिए नया अनुवाद इस प्रकार कर दिया है—'धन्य है, मेरे स्वामी इब्राहीम का परमेश्वर यहोवा कि उसने अपनी करुणा और सचाई को मेरे स्वामी पर से हटा नहीं लिया—यहोवा ने मुझे ठीक मार्ग पर चलाकर मेरे स्वामी को भाई बन्धुओं के घर पहुँचा दिया है।'

---

१. Ismael. २. Nabajoth ३. Cedar. ४. Adbeel. ५. Mabsam. ६. Masma. ७. Duma. ८. Massa. ९. Hadar. १० Thema. ११. Jethur १२. Naphis. १३. Cedma.

समीक्षक—यह इसमअऐल अबिरहाम से उसकी हाजिर: दासी का पुत्र हुआ था ॥२६॥

[याकूब का छल-कपट से आशीर्वाद लेना]

३०—मैं तेरे पिता की रुचि के समान उनके मांस का[1] स्वादित भोजन बनाऊँगी। और तू अपने पिता के पास ले जाइयो, जिसतें वह खाय और अपने मरने से आगे तुझे आशीष देवे॥ और रिबक:[2] ने अपने घर में से अपने जेठे बेटे एसौ[3] का अच्छा पहिरावा लिया और अपने छोटे बेटे यअकूब को पहिनाया॥ और बकरी के मेम्नों का चमड़ा उसके हाथों और गले की चिकनाई[4] पर लपेटा॥ तब यअकूब[5] अपने पिता से बोला कि मैं आपका पहिलौठा एसौ हूँ। आपके कहने के समान मैंने किया है। उठ बैठिये, और मेरे अहेर के मांस में से खाइये, जिसतें आपका प्राण मुझे आशीष दे॥

—तौ० उत्पत्ति० पर्व २७। आ० ६, १०, १५, १६, १६

[छल कपट करनेवाले भी पैगम्बर बने]

समीक्षक—देखिये, ऐसे झूंठ कपट से आशीर्वाद लेके पश्चात् सिद्ध और पैगम्बर बनते हैं। क्या यह आश्चर्य की बात नहीं है? और ऐसे ईसाइयों के अगुवा हुए हैं। पुन: इनके मत की गड़बड़ में क्या न्यूनता हो?॥३०॥

[पत्थर का खंभा खड़ा कर ईश्वर का घर बनाना]

३१—और यअकूब बिहान को तड़के उठा, और उस पत्थर को जिसे उसने अपना उसीसा[6] किया था, खम्बा खड़ा किया। और उसपर तेल डाला[7]॥ और उस स्थान का नाम बैतएल[8] रक्खा॥ और यह पत्थर जो मैंने खम्भा खड़ा किया ईश्वर का घर होगा॥

—तौ० उत्पत्ति० पर्व २८। आ० १८, १६, २२

---

३० इस समीक्षा को समझने के लिए पूर्ववृत्त को जानना आवश्यक है, जो इसी २७वें पर्व में वर्णित है। उसका सार-संक्षेप इस प्रकार है—'इसहाक बूढ़ा हो गया और नेत्रों से दिखाई देना भी बन्द हो गया। तब एक दिन उसने अपने ज्येष्ठ पुत्र एसावर (एसौ) को बुलाकर कहा—'बेटा! तुम मेरे लिए हिरण का मांस पकाकर लाओ, उसे खाकर मैं मरने से पहले तुझे आशीर्वाद देता जाऊँ।' इसहाक के दूसरे पुत्र याकूब की माता ने यह बात सुन ली। उसने अपने पुत्र याकूब से कहा—'तू शीघ्र बकरी के दो बच्चे ला और मैं तुझे भोजन बना देती हूँ। तू पिता के पास जाकर कहना कि मैं आपका ज्येष्ठ पुत्र एसाव (एसौ) हूँ, आपके आदेशानुसार आपके लिए भोजन लाया हूँ।' याकूब ने कहा—'मेरा भाई एसौ रोमोंवाला है और मैं रोमरहित हूँ। वह टटोलकर पहचान लेगा।' तब माता ने याकूब को एसाव के कपड़े पहना कर और नंगे अंगों को ढककर तैयार किया और वह अपने पिता के पास गया। इस प्रकार याकूब ने पिता का आशीर्वाद पाया।"

---

१. उनके मांस का अर्थात् बकरी के मेम्नों के मांस का।
२. Rebecca.
३. Esau.
४. अर्थात् चिकने गले पर। हाथों और गले को देखकर उसका पिता पहचान न ले, इसलिए उन पर चमड़ा लपेटा।
५. Jacob.
६. उसीसा=सिरहाना।
७. सं० २ में 'ढाला' पाठ है।
८. Bethel.

[क्या 'बयतलमुकद्दस' ही ईश्वर का घर था ?]

समीक्षक—अब देखिये जङ्गलियों के काम। इन्होंने पत्थर पूजे और पुजवाये। और इसको मुसलमान लोग 'बयतलमुकद्दस' कहते हैं। क्या यही पत्थर ईश्वर का घर, और उसी पत्थरमात्र में ईश्वर रहता था ? वाह-वाह जी !! क्या कहना है ? ईसाई लोगो ! महाबुतपरस्त तो तुम्हीं हो ॥३१॥

[ईश्वर ने राखिल की कोख खोली]

३२—और ईश्वर ने राखिल[1] को स्मरण किया, और ईश्वर ने उसकी सुनी, और उसकी कोख को खोला ॥ और वह गर्भिणी हुई और बेटा जनी। और बोली कि—ईश्वर ने मेरी निन्दा दूर किई ॥ —तौ० उत्पत्ति० पर्व ३०। आ० २२, २३

[क्या ईश्वर के पास डाक्टरी के भी औजार थे ?]

समीक्षक—वाह ईसाइयों के ईश्वर ! क्या बड़ा डाक्तर है ? स्त्रियों की कोख को खोलने को कौन-से शस्त्र वा औषध थे, जिनसे खोली ? ये सब बातें अन्धाधुन्ध की हैं ॥३२॥

[लाबन को ईश्वर का स्वप्न में मिलना]

३३—परन्तु ईश्वर आरामी[2] लाबन[3] कने[4] स्वप्न में रात को आया। और उसे कहा कि चौकस रह, तू यअकूब को भला-बुरा मत कहना ॥ क्योंकि तू अपने पिता के घर का निपट अभिलाषी है। तूने किसलिये मेरे देवों को चुराया है ? —तौ० उत्पत्ति० पर्व ३१। आ० २४, ३०

[अब ईश्वर स्वप्न वा जाग्रत् में किसी को क्यों नहीं मिलता ?]

समीक्षक—यह हम नमूना लिखते हैं। हजारों मनुष्यों को स्वप्न में आया, बातें किईं। जाग्रत् में साक्षात् मिला, खाया, पिया, आया, गया आदि बाइबल में लिखा है। परन्तु अब न जाने वह है, वा नहीं ? क्योंकि अब किसी को स्वप्न वा जाग्रत् में भी ईश्वर नहीं मिलता। और यह भी विदित हुआ कि ये जङ्गली लोग पाषाणादि मूर्त्तियों को देव मानकर पूजते थे। परन्तु ईसाइयों का ईश्वर भी पत्थर ही को देव मानता है। नहीं तो देवों का चुराना कैसे घटे ? ॥३३॥

[याकूब ने ईश्वर की सेना को देखा]

३४—और यअकूब अपने मार्ग चला गया, और ईश्वर के दूत उसे आ मिले ॥ और यअकूब ने उन्हें देखके कहा कि यह ईश्वर की सेना है ॥ —तौ० उत्पत्ति०, पर्व ३२। आ० १, २

---

३३. किसी-न-किसी रूप में ईसाई और मुसलमान दोनों ही मूर्त्तिपूजक हैं। और इस आयत के अनुसार वे मूर्त्तिपूजक ही नहीं, मूर्त्तिचोर भी हैं।

---

१. Rachel.

२. सं० २ से ३३ तक यही पाठ है। सं० ३४, ३५ में बदलकर 'आरामी' बनाया गया। आरामी=आराम करनेवाला =सोनेवाला।

३. Laban.

४. कने=समीप में।

[ईश्वर को सेना रखने की क्या आवश्यकता थी ?]

समीक्षक—अब ईसाइयों के ईश्वर के मनुष्य होने में कुछ भी सन्देह नहीं रहा। क्योंकि वह सेना भी रखता है। जब सेना हुई, तब शस्त्र भी होंगे। और जहाँ-तहाँ चढ़ाई करके लड़ाई भी करता होगा। नहीं तो सेना रखने का क्या प्रयोजन है ? ॥३४॥

[ईश्वर के साथ याकूब का मल्लयुद्ध]

३५—और यअकूब अकेला रह गया, और वहाँ पौ फटे लों एक जन उससे मल्लयुद्ध करता रहा ॥ और जब उसने देखा कि वह उसपर प्रबल न हुआ, तो उसकी जाँघ को भीतर से छुआ ॥ तब यअकूब के जाँघ की नस उसके सङ्ग मल्लयुद्ध करने में चढ़ गई ॥ तब वह बोला कि मुझे जाने दे, क्योंकि पौ फटती है। और वह बोला—मैं तुझे जाने न देऊंगा, जब लों तू मुझे आशीष न देवे ॥

तब उसने उसे कहा कि तेरा नाम क्या है ? और वह बोला कि यअकूब। तब उसने कहा कि तेरा नाम आगे को यअकूब न होगा, परन्तु इसरायेल[1]। क्योंकि तूने ईश्वर के आगे और मनुष्यों के आगे राजा की नाईं मल्लयुद्ध किया और जीता ॥ तब यअकूब ने यह कहिके उससे पूँछा कि अपना नाम बताइये। और वह बोला कि तू मेरा नाम क्यों पूँछता है ? और उसने उसे वहाँ आशीष दिया ॥

और यअकूब ने उस स्थान का नाम फनूएल[2] रक्खा ॥ क्योंकि मैंने ईश्वर को प्रत्यक्ष देखा और मेरा प्राण बचा है ॥ और जब वह फनूएल से पार चला, तो सूर्य की ज्योति उस पर पड़ी। और वह अपनी जाँघ से लँगड़ाता था ॥ इसलिये इसरायेल के वंश उस जाँघ की नस को जो चढ़ गई थी, आज लों नहीं खाते। क्योंकि उसने यअकूब के जाँघ की नस को जो चढ़ गई थी, छुआ था ॥

—तौ० उत्पत्ति० पर्व ३२। आ० २४-३२

[मल्लयुद्ध करनेवाले के मनुष्य होने में क्या सन्देह ?]

समीक्षक—जब ईसाइयों का ईश्वर अखाड़मल्ल है, तभी तो सरः और राखल पर पुत्र होने की कृपा की। भला यह कभी ईश्वर हो सकता है ? और देखो लीला कि एक जना नाम पूँछे, तो दूसरा अपना नाम ही न बतलावे।

---

३५. 'उस पर प्रबल'=याकूब पर प्रबल। इसरायल=ईश्वर से युद्ध करनेवाला (नये अनुवाद में)। 'फ़नूएल' नये अनुवाद में 'पनिएल' है। इस पर टिप्पणी है—अर्थात् ईश्वर का सखा। 'इसलिए इसरायेल के वंश ...'। नये अनुवाद में यह वाक्य इस प्रकार है—'इस्राएली जो पशुओं की जाँघ की जोड़ वाले जंघानस को आज के दिन तक नहीं खाते, इसका कारण यही है कि उस पुरुष ने याकूब की जाँघ के जोड़ में जंघानस को छुआ था।' पुराने अनुवाद पर एक आपत्ति थी कि कदाचित् यह नरमांस-भक्षण की ओर संकेत है। इस आपत्ति को टालने के लिए 'पशुओं की जाँघ की जोड़वाले' शब्द जोड़े गये हैं। किन्तु इस जोड़-तोड़ ने तो एक और बेढंगी बेजोड़ बात उत्पन्न कर दी है कि इस कार्यकारणभाव को कैसे संगत समझा जाये। चढ़ी तो मनुष्य की जाँघनस और खाने में वर्जित हो गई पशु की जाँघनस। यह तर्क समझ में नहीं आया।

---

१. Israel.

२. Phanuel.

[अपने भक्त की जांघ क्यों न ठीक की ?]

और ईश्वर ने उसकी नाड़ी को चढ़ा तो दी और जोता गया, परन्तु जो डाक्तर होता, तो जांघ की नाड़ी को अच्छी भी करता। और ऐसे ईश्वर की भक्ति से, जैसा की यअकूब लँगड़ाता रहा, तो अन्य भक्त भी लँगड़ाते होंगे। जब ईश्वर को प्रत्यक्ष देखा और मल्लयुद्ध किया, यह बात विना शरीरवाले के कैसे हो सकती है ? यह केवल लड़कपन की लीला है ॥३५॥

[क्या ईश्वर के मुँह भी है ?]

३६[1]—ईश्वर का मुंह देखा ॥ —तौ० उत्पत्ति० पर्व ३३। आ० १०

समीक्षक—जब ईश्वर के मुँह है, तो और भी सब अवयव होंगे। और वह जन्म-मरणवाला भी होगा ॥३६॥

[नियोग की बात न मानने पर ओनान को मारा]

३७—और यहूदाह[2] का पहिलौठा एर[3] परमेश्वर की दृष्टि में दुष्ट था, सो परमेश्वर ने उसे मार डाला ॥ तब यहूदाह ने ओनान[4] को कहा कि अपने भाई की पत्नी के पास जा, और उससे ब्याह कर अपने भाई के लिये वंश चला ॥ और ओनान ने जाना कि यह वंश मेरा न होगा। और यों हुआ कि जब वह अपने भाई की पत्नी के पास गया, तो वीर्य्य को भूमि पर गिरा दिया ॥ और उसका वह कार्य्य परमेश्वर की दृष्टि में बुरा था, इसलिये उसने उसे भी मार डाला ॥

—तौ० उत्पत्ति० पर्व ३८। आ० ७-१०

[नियोग की प्रथा पहले से ही चली आ रही है]

समीक्षक—अब देख लीजिये, ये मनुष्यों के काम हैं कि ईश्वर के ? जब उसके साथ नियोग हुआ, तो उसको क्यों मार डाला ? उसकी बुद्धि शुद्ध क्यों न करदी ? और वेदोक्त नियोग भी प्रथम सर्वत्र चलता था। वह निश्चय हुआ कि नियोग की बातें सब देशों में चलती थीं ॥३७॥

---

३७. यहाँ 'अपने भाई की पत्नी के पास जाने, उससे ब्याह करने और भाई का वंश चलाने' की बात कही गई है। यदि केवल भाई के पत्नी के पास जाने और उससे विवाह करने की बात कही गई होती तो इसे पुनर्विवाहपरक आयत माना जा सकता था। परन्तु यहाँ तो 'भाई का वंश चलाने' और ओनान के 'यह वंश मेरा न होगा' यह कहने से यह आयत स्पष्टतः नियोगपरक सिद्ध होती है। परन्तु ओनान के अपने भाई की पत्नी के पास जाकर भी वीर्य को भूमि पर गिरा देने से प्रतीत होता है कि ओनान इससे सहमत नहीं था और इस अपराध के कारण ओनान को मार दिया गया। फिर भी इतना तो प्रमाणित होता है कि नियोग की सार्वदेशिक तथा सार्वकालिक प्रथा को ईसाई मत में मान्यता प्राप्त है।

यहाँ नये अनुवाद में 'ब्याह कर' के स्थान में 'देवर का धर्म पूरा करके' पाठ है।

---

१. यह समीक्ष्य और समीक्षांश सं० २ से ३३ तक नहीं है। छूटा हुआ यह पाठ सं० ३४ में जोड़ा गया है।
२. Juda.
३. Her.
४. Onan.

तौरेत यात्रा[1] की पुस्तक

[मूसा का एक मिश्री को मार डरकर भागना]

३८—जब मूसा[2] सयाना हुआ, और अपने भाइयों में से एक इबरानी[3] को देखा कि मिश्री उसे मार रहा है ॥ तब उसने इधर-उधर दृष्टि किई, देखा कि कोई नहीं। तब उसने उस मिश्री को मार डाला, और बाद में उसे छिपा दिया ॥ जब वह दूसरे दिन बाहर गया, तो देखा दो इबरानी[3] आपस में झगड़ रहे हैं। तब उसने उस अंधेरी[4] को कहा कि तू अपने परोसी को क्यों मारता है ? ॥ तब उसने कहा कि किसने तुझे हम पर अध्यक्ष अथवा न्यायी ठहराया ? क्या तू चाहता है कि जिस रीति से तूने मिश्री को मार डाला, मुझे भी मार डाले ॥ तब मूसा डरा, और भाग निकला ॥

—तौ० यात्रा० पर्व २। आ० ११-१५ ॥

[मूसा आदि विद्याहीन और लड़ाकू लोग थे]

समीक्षक—अब देखिये, जो बाइबल का मुख्य सिद्धकर्त्ता मत का आचार्य मूसा कि जिसका चरित्र क्रोधादि दुर्गुणों से युक्त, मनुष्य की हत्या करनेवाला, और चोरवत् राजदण्ड से बचनेहारा, अर्थात् जब बात को छिपाता था तो झूँठ बोलनेवाला भी अवश्य होगा। ऐसे को भी जो ईश्वर मिला, वह पैगम्बर बना, उसने यहूदी आदि का मत चलाया। वह भी मूसा ही के सदृश हुआ। इसलिये ईसाइयों के जो मूल पुरुष हुए हैं, वे सब मूसा आदि से ले करके जङ्गली अवस्था में थे, विद्याऽवस्था में नहीं, इत्यादि ॥३७॥

[पवित्र स्थान पर जूता उतार कर आने का आदेश]

३९[5]—जब परमेश्वर ने देखा कि वह देखने को एक अलंग[6] फिरा, तो ईश्वर ने झाड़ी के मध्य

नियोगपरक प्रकरण को हम यहाँ बाइबल की 'New International version' से अविकल रूप में उद्धृत कर रहे हैं—"Then said to Onan (his younger son), 'Lie with your (elder) brother's wife and fulfil your duty to her as a brother-in-law to produce offspring for your brother.' But Onan new that the offspring would not be his; so whenever he lay with his brother's wife, he spilled his semen on the ground to keep from producing offspring for his brother. What he did was wicked in the Lord's sight; so he put him to death."

यह स्पष्टतः नियोग का विधान है। 'गिरा दिया' के स्थान में 'गिराकर नाश किया' पाठ है।

तौरेत-यात्रा की पुस्तक

३८. 'यात्रा की पुस्तक' ने 'निर्गमन नाम पुस्तक' नाम धारण कर लिया है। अंग्रेजी में EXODUS है, उसका पर्यायवाची 'निर्गमन' अधिक उपयुक्त है।

नये अनुवाद में 'सयाना' के स्थान में 'जवान' है। 'अंधेरी' के स्थान में 'अपराधी' आया है।

---

१. Exodus. २. Moses. ३. Hebrew. ४. अन्धेरी=अन्धेर करनेवाला=अपराधी।

५. यह तथा अगला ४० संख्या का समीक्ष्य तथा समीक्षारूप अंश सं० २ से ३३ तक नहीं है। मूल हस्तलेख के एक पृष्ठ पर लिखा गया यह अंश छपने से रह गया। श्री पं० महेन्द्र शास्त्रीजी ने अपने वैदिक यन्त्रालय के संशोधनकाल में सं० २४वें या २५वें के मुद्रणकाल में इस छूटे हुए पत्रे को उपलब्ध किया था, परन्तु उस समय किसी कारण से नहीं छप सका। यह ३४वें सं० में प्रथम बार छपा है।

६. अर्थात् एक ओर मुड़ा।

में से उसे पुकारके कहा कि—हे मूसा हे मूसा ! तब वह बोला—मैं यहाँ हूँ ॥ तब उसने कहा कि इधर पास मत आ । अपने पाओं से जूता उतार, क्योंकि यह स्थान जिस पर तू खड़ा है पवित्र भूमि है ॥

—तौ० यात्रा० पर्व ३ । आ० ४-५

[फिर ईसाई पवित्र स्थान पर जूता क्यों ले जाते हैं ?]

समीक्षक—देखिये, ऐसे मनुष्य, जो कि मनुष्य को मारके वालू में गाड़नेवाले, से इनके ईश्वर की मित्रता, और उसको पैगम्बर मानते हैं । और देखो, जब तुह्मारे ईश्वर ने मूसा से कहा कि पवित्र स्थान में जूती न ले जानी चाहिये, तुम ईसाई इस आज्ञा से विरुद्ध क्यों चलते हो ?

प्रश्न—हम जूती के स्थान पर टोपी उतार लेते हैं ।

उत्तर—यह दूसरा अपराध तुमने किया । क्योंकि टोपी उतारना न ईश्वर ने कहा, न तुह्मारे पुस्तक में लिखा है । और उतारने योग्य को नहीं उतारते, जो नहीं उतारना चाहिये उसको उतारते हो, यह दोनों प्रकार तुह्मारे पुस्तक से विरुद्ध हैं ।

प्रश्न—हमारे यूरोप देश में शीत अधिक है, इसलिये हम लोग जूती नहीं उतारते ।

उत्तर—क्या शिर में शीत नहीं लगता ? जो यही है तो जब यूरोप देश में जाओ, तब ऐसा ही करना । परन्तु जब हमारे घर में वा बिछौने में आया करो, तब तो जूती उतार दिया करो । और जो न उतारोगे, तो तुम अपने बाइबल पुस्तक के विरुद्ध चलते हो । ऐसा तुमको न करना चाहिये ॥३९॥

[ईश्वर ने मूसा को जादू का खेल दिखाया]

४०—तब परमेश्वर ने उसे कहा कि तेरे हाथ में यह क्या है ? और वह बोला कि छड़ी ॥ तब उसने कहा कि उसे भूमि पर डाल दे । और उसने उसे भूमि पर डाल दिया । और वह सर्प बन गई, और मूसा उसके आगे से भागा ॥ तब परमेश्वर ने मूसा से कहा कि—अपना हाथ बढ़ा, और उसकी पूंछ पकड़ ले । तब उसने अपना हाथ बढ़ाया, और उसे पकड़ लिया । और वह उसके हाथ में छड़ी हो गई ॥

तब परमेश्वर ने उसे कहा कि फिर तू अपना हाथ अपनी गोद में कर । और उसने अपना हाथ अपनी गोद में किया । जब उसने उसे निकाला, तो देखा कि उसका हाथ हिम के समान कोढ़ी था ॥ और उसने कहा कि —'अपना हाथ फिर अपनी गोद में कर' । उसने फिर अपने हाथ को अपनी गोद में किया और अपनी गोद से उसे निकाला तो देखा कि जैसी उसकी सारी देह थी वह वैसा फिर हो गया ॥ तू नील नदी का पानी लेके सूखी पर डालियो । और वह जल जो तू नदी से निकालेगा, सो सूखी पर लोहू हो जायगा ॥

—तौ० यात्रा० पर्व ४ । आ० २-४, ६, ७, ९

[जादूगरी के खेल दिखाना क्या ईश्वर का काम है ?]

समीक्षक—अब देखिये, कैसे बाजीगर का खेल, खिलाड़ी ईश्वर, उसका सेवक मूसा, और इन बातों के माननेहारे कैसे हैं ? क्या आजकल बाजीगर लोग इससे कम करामात करते हैं ? यह ईश्वर क्या यह तो बड़ा खिलाड़ी है । इन बातों को विद्वान् क्योंकर मानेंगे ?

और हर एक बार 'मैं परमेश्वर हूँ और अबिरहाम इजहाक और याकूब का ईश्वर हूँ' इत्यादि हर एक से अपने मुख से अपनी प्रशंसा करता फिरता है । यह बात उत्तम जन की नहीं हो सकती, किन्तु दम्भी मनुष्य की हो सकती है ॥४०॥

[खून की छाप देख ईश्वर का भक्तों के घरों को पहचानना]

४१—और फसह[1] का मेम्ना मारो ॥ और एक मूठी जूफा[2] लेओ, और उसे उस लोहू में, जो बासन में है बोरके ऊपर की चौखट के और द्वार की दोनों ओर उससे छापो। और तुममें से कोई बिहान लों अपने घर के द्वार से बाहर न जावे ॥ क्योंकि परमेश्वर मिश्र के मारने के लिये आरपार जायगा। और जब वह ऊपर की चौखट पर और द्वार की दोनों ओर लोहू को देखे, तब परमेश्वर द्वार से बीत[3] जायगा। और नाशक[4] तुम्हारे घरों में न जाने देगा कि मारें ॥

—तौ० यात्रा० पर्व १२। आ० २१-२३

[क्या ईश्वर विना छाप के घरों को न पहचानता ?]

समीक्षक—भला यह जो टोने-टामन करनेवाले के समान है, वह ईश्वर सर्वज्ञ कभी हो सकता है ? जब लोहू का छापा देखे, तभी इसरायेल कुल का घर जाने, अन्यथा नहीं। यह काम क्षुद्र-बुद्धिवाले मनुष्य के सदृश है। इससे यह विदित होता है कि ये बातें किसी जङ्गली मनुष्य की लिखी हैं ॥४१॥

[परमेश्वर द्वारा आधी रात में मिश्रियों की हत्या]

४२—और यों हुआ कि परमेश्वर ने आधी रात को मिश्र के देश में सारे पहिलौठे को फिराऊन[5] के पहिलौठे से लेके जो अपने सिंहासन पर बैठता था, उस बन्धुआ के पहिलौठे लों, जो वन्दी-गृह में था, पशुन के पहिलौठे समेत नाश किये ॥ और रात को फिराऊन उठा, वह और उसके सब सेवक और सारे मिश्री उठे। और मिश्र में बड़ा विलाप था। क्योंकि कोई घर न रहा जिसमें एक न मरा ॥

—तौ० या० प० १२। आ० २९, ३०

---

४२. नये अनुवाद में 'वन्दीगृह में था' के स्थान में 'गड्ढे में पड़े हुए बंधुए' कर दिया है। अंग्रेज़ी की बाइबलों में 'Dungeon' शब्द का प्रयोग है। 'The large type concise english dictionary' में इनके अर्थ दिये हैं—'The innermost and strongest tower of a castle, a dungeon, a close prison, a deep, dark place of confinement' अर्थात् दुर्ग की सबसे अभ्यन्तरीय तथा दृढतम अटारी, बुर्जी, काल-कोठरी, बन्द वन्दीगृह, जेल का अंधेरा घुप स्थान। इन अर्थों में गड्ढा कहीं नहीं दिया है। यही अर्थ ब्रिटिश एण्ड फारन बाइबल सोसायटी द्वारा १९५४ में प्रकाशित 'The Bible Authorised version' तथा आक्स-फ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस द्वारा प्रकाशित संस्करण में दिया है, जिस पर लिखा है—'Appointed to be read in Churches.'

ऐसे क्रूर ईश्वर और उसके भक्तों से दया की आशा कैसे की जा सकती है ? यह झाँकी है मूसा नामक उस व्यक्ति के चरित्र की, जिसने पैगम्बर के रूप में यहूदी मत की स्थापना की।

---

१. फसह=लांघन-पर्व (द्र०—१९१९ की इलाहाबाद की छपी बाइबल)। सं० ३४ में यहाँ कोष्ठक में जो पाठ बढ़ा दिया है, वह अनावश्यक है।

२. Hyssop. (A plant the twigs of which were used for sprinking in jewish rites.)

३. अर्थात् निकल जायगा।

४. अर्थात् हिंसक।

Pharao.

[निरपराधों की हत्या करना ईश्वर का काम नहीं]

समीक्षक—वाह ! अच्छा, आधी रात को डाकू के समान निर्दयी होकर ईसाइयों के ईश्वर ने लड़केवाले वृद्ध और पशु तक भी विना अपराध मार दिये, और कुछ भी दया न आई। और मिश्र में बड़ा विलाप होता रहा, तो भी ईसाइयों के ईश्वर के चित्त से निष्ठुरता नष्ट न हुई। ऐसा काम ईश्वर का तो क्या किन्तु किसी साधारण मनुष्य के भी करने का नहीं है। यह आश्चर्य नहीं, क्योंकि लिखा है—"मांसाहारिणः कुतो दया।" जब ईसाइयों का ईश्वर मांसाहारी है, तो उसको दया करने से क्या काम है ? ॥४२॥

[परमेश्वर का इसरायेल के लिये युद्ध करना]

४३—परमेश्वर तुह्मारे लिये युद्ध करेगा ॥ इसरायेल के सन्तान से कह कि वे आगे बढ़ें ॥ परन्तु तू अपनी छड़ी उठा और समुद्र पर अपना हाथ बढ़ा, और उसे दो भाग कर। और इसरायेल के सन्तान समुद्र के बीचोंबीच से सूखी भूमि में होकर चले जायेंगे ॥

—तौ० या० प० १४। आ० १४-१६

[ईश्वर इसरायेल की सहायता अब क्यों नहीं करता ?]

समीक्षक—क्योंजी ! आगे तो ईश्वर भेड़ों के पीछे गड़रिये के समान इसरायेल कुल के पीछे-पीछे डोला करता था, अब न जाने कहाँ अन्तर्धान हो गया ? नहीं तो समुद्र के बीच में से चारों ओर की रेलगाड़ियों की सड़क बनवा लेते। जिससे सब संसार का उपकार होता। और नाव आदि बनाने का श्रम छूट जाता। परन्तु क्या किया जाय ? ईसाइयों का ईश्वर न जाने कहाँ छिप रहा है ? इत्यादि बहुत-सी मूसा के साथ असम्भव लीला बाइबल के ईश्वर ने की है। परन्तु यह विदित हुआ कि जैसा ईसाइयों का ईश्वर है, वैसे ही उसके सेवक, और ऐसी ही उसकी बनाई पुस्तक है। ऐसी पुस्तक और ऐसा ईश्वर हम लोगों से दूर रहै, तभी अच्छा है ॥४३॥

[परमेश्वर का चौथी पीढ़ी तक वैर निकालना]

४४—क्योंकि मैं परमेश्वर तेरा ईश्वर ज्वलित[1] सर्वशक्तिमान् हूँ। पितरों के अपराध का दण्ड उनके पुत्रों को, जो मेरा वैर रखते हैं, उनकी तीसरी और चौथी पीढ़ी लों देवैया हूँ ॥

—तौ० या० प० २०। आ० ५

---

४३. नये अनुवाद में 'परमेश्वर…करेगा' इस वाक्य को 'यहोवा आप ही…युद्ध करेगा' कर दिया गया है। इसी प्रकार 'उसे दो भाग कर' के स्थान में 'वह दो भाग हो जायेगा' कर दिया गया है। दोनों का अन्तर स्पष्ट है।

४४. 'ज्वलित सर्वशक्तिमान्' के स्थान में 'जलन रखनेवाला (Jealous) ईश्वर' हो गया है। जिनका ईश्वर जलन (ईर्ष्या-द्वेष) करनेवाला हो, वे स्वयं कैसे होंगे, यह बताने की बात नहीं। जो ईश्वर व्यक्तिगत द्वेष के कारण, बदला (Revenge) लेने की भावना से, तीसरी चौथी पीढ़ी तक निरपराधों को दण्ड देगा, उसके राज्य में अन्याय-अत्याचार से पीड़ित प्रजा कैसे सुखी रह सकती है ? और 'जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी। सो नृप अवसि नरक अधिकारी' ऐसा राजा भी सदा सुखी नहीं रहता।

1. Jealous.

[पिता के अपराध से चार पीढ़ी तक दण्ड देना अन्याय है]

समीक्षक—भला यह किस घर का न्याय है कि जो पिता के अपराध से चार पीढ़ी तक दण्ड देना अच्छा समझना। क्या अच्छे पिता के दुष्ट और दुष्ट के अच्छे सन्तान नहीं होते? जो ऐसा है, तो चौथी पीढ़ी तक दण्ड कैसे दे सकेगा? और जो पाँचवीं पीढ़ी से आगे दुष्ट होगा, उसको दण्ड न दे सकेगा? विना अपराध किसी को दण्ड देना अन्यायकारी की बात है ॥४४॥

[रविवार ईश्वर का विश्राम का दिन]

४५—विश्राम के दिन को उसे पवित्र रखने के लिये स्मरण कर॥ छः दिन लों तू परिश्रम कर॥ और सातवाँ दिन परमेश्वर तेरे ईश्वर का विश्राम है। परमेश्वर ने विश्राम दिन को आशीष दी॥ —तौ० या० प० २०। आ० ८-११

[रविवार में क्या विशेषता थी, जो उसे पवित्र माना?]

समीक्षक—क्या रविवार एक ही पवित्र, और छः दिन अपवित्र हैं? और क्या परमेश्वर ने छः दिन तक बड़ा परिश्रम किया था कि जिससे थकके सातवें दिन सो गया? और जो रविवार को आशीर्वाद दिया, तो सोमवार आदि छः दिनों को क्या दिया, अर्थात् शाप दिया होगा? ऐसा काम विद्वान् का भी नहीं हो सकता, तो ईश्वर का क्योंकर हो सकता है? भला रविवार में क्या गुण था, और सोमवार

बाइबल की दण्डव्यवस्था कितनी घिनौनी है, इसका अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि उसके अनुसार न केवल 'करे कोई भरे कोई' को ठीक माना गया है, प्रत्युत ईश्वर के सामर्थ्य का प्रदर्शन करने हेतु सर्वथा निरपराध व्यक्ति को भी दण्ड देना निर्दोष माना गया है। उदाहरणार्थ—

(१) योहन्ना (जान ४) में लिखा है—"It is true that one sows and someone else reaps. 'I sent you to reap where you didnt' sow; others did the work, and you received the harvest." यह बिल्कुल ठीक है कि एक बोता है और दूसरा उसका उपभोग करता है।

(२) एक दिन ईसामसीह जा रहे थे। उन्हें रास्ते में एक व्यक्ति मिला, जो जन्म से अन्धा था। उनके शिष्यों ने पूछा—"Master, why was this man born blind? Was it the result of his own sins or those of his parents?" यह व्यक्ति जन्मान्ध क्यों पैदा हुआ। यह उसके अपने पापों का परिणाम है या उसके माता-पिता के पापों का?

"Neither", Jesus answered. "But to demonstrate the power of God." अर्थात् इसमें न इस आदमी का दोष है और न इसके माता-पिता का। यह तो परमेश्वर की शक्ति दिखाने के लिए किया गया है। अपनी शक्ति का प्रदर्शन करने के लिए किसी निरपराध व्यक्ति को जन्मान्ध कर देने जैसा जघन्य अपराध करने में ईसाइयों के ईश्वर को संकोच नहीं होता। 'कर्तुमकर्तुमन्यथाकर्तुम्' मात्र अपने इस सामर्थ्य का प्रदर्शन करने के लिए किसी हत्यारे को छोड़ देने और किसी भी निर्दोष व्यक्ति को फाँसी का दण्ड देनेवाले न्यायाधीश को क्या 'न्यायकारी' कहा जा सकेगा?

४५. इससे पहली आयतों में कहा है—"छः दिनलों तू परिश्रम कर और अपना समस्त कार्य कर। परन्तु सातवाँ दिन परमेश्वर के विश्राम का है, उसमें तू कुछ कार्य न करेगा, न तू न तेरा पुत्र न तेरी पुत्री न तेरा दास न तेरी दासी न तेरे पशु न तेरा पाहुन, जो तेरे फाटकों के भीतर हैं, क्योंकि परमेश्वर ने छः दिन में स्वर्ग और पृथिवी और समुद्र और सब कुछ जो उनमें है, बनाया और सातवें

आदि ने क्या दोष किया था कि जिससे एक को पवित्र कहा तथा वर दिया, और अन्यों को ऐसे ही अपवित्र कर दिये ? ॥४५॥

[पड़ोसी की वस्तु का लालच न करो]

४६—अपने परोसी पर झूठी साक्षी मत दे ॥ अपने परोसी की स्त्री और उसके दास उसकी दासी और उसके बैल और उसके गदहे और किसी वस्तु का, जो तेरे परोसी की है, लालच मत कर ॥

—तौ० या० प० २० । आ० १६, १७

[क्या परदेशी के माल को हजम कर लें ?]

समीक्षक—वाह ! तभी तो ईसाई लोग परदेशियों के माल पर ऐसे झुकते हैं कि जानो प्यासा जल पर, भूखा अन्न पर। जैसी यह केवल मतलबसिन्धु और पक्षपात की बात है, ऐसा ही ईसाइयों का ईश्वर अवश्य होगा। यदि कोई कहे कि हम सब मनुष्यमात्र को परोसी मानते हैं, तो सिवाय मनुष्यों के अन्य कौन स्त्री और दास दासीवाले हैं कि जिनको अपरोसी गिनें ? इसलिये ये बातें स्वार्थी मनुष्यों की हैं, ईश्वर की नहीं[1] ॥४६॥[2]

[मनुष्य के हत्यारे को अवश्य दण्ड मिले]

४७—जो कोई किसी मनुष्य को मारे और वह मर जाय, वह निश्चय घात किया जाय ॥ और वह मनुष्य घात में न लगा हो, परन्तु ईश्वर ने उसके हाथ में सौंप दिया हो, तब मैं तुझे भागने का स्थान बता दूंगा ॥

—तौ० या० प० २१ । आ० १२, १३

दिन विश्राम किया। इस कारण परमेश्वर ने विश्राम दिन को आशीष दी और उसे पवित्र ठहराया।" मनुष्य का सामर्थ्य सीमित है, इसलिए वह काम करते-करते थक जाता है, परन्तु परमेश्वर की तो 'स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया च'। थकावट शरीर का विकार है। जिसमें थकावट आयेगी उसमें बुढ़ापा, रोग और अन्ततः मृत्यु भी अवश्यम्भावी है। इसलिए ईश्वर में थकावट आने और इस कारण उसे विश्राम की आवश्यकता की कल्पना करना मूर्खता है। काल का सोम, मंगल आदि दिनों में विभाजन मनुष्य ने अपनी सुविधा के लिए कर रक्खा है, जैसे दिन का घण्टों, मिनटों और सैकण्डों में। इनमें पवित्रता-अपवित्रता की कल्पना करना व्यर्थ है।

४६. ग्रन्थकार की समीक्षा के कारण अपने दोष को निरस्त करने के लिए नये अनुवाद में 'पड़ौसी' का स्थान 'किसी' ने ले लिया है। परन्तु अंग्रेज़ी में सर्वत्र Neighbour बना रहने से ग्रन्थकार का आक्षेप ज्यों-का-त्यों बना हुआ है। (You shall not give false testimony against your neighbour; You shall not covet your neighbour's house; You shall not covet your neighbour's wife, or his manservant or maidservant.) इसके विपरीत वेद अनादि काल से कहता चला आया है—'मा गृधः कस्य स्विद्धनम्' (यजुः० ४०।१) किसी के भी धन को ललचाई आँखों से मत देख।

---

१. इस समीक्षा में 'परोसी पर झूठी साक्षी मत दे' अंश की समीक्षा नहीं है। उसे इस प्रकार समझें—'परोसी पर झूठी साक्षी न देवे तो क्या दूसरों पर झूठी साक्षी दे सकता है ? झूठ बोलना सब अवस्था में बुरा है'।

२. यहाँ से आगे एक समीक्ष्य और समीक्षा का जो अंश सं० २ से ३३ तक छपता रहा है, यह 'गिनती की पुस्तक' का होने से यहाँ अस्थान में था। सं० ३४ में उसे आगे समीक्ष्यांश ५७ पर यथास्थान छापा है।

[मनुष्य-हत्या के दोषी मूसा को दण्ड क्यों न दिया ?]

समीक्षक--जो यह ईश्वर का न्याय सच्चा है, तो मूसा एक आदमी को मार गाड़कर भाग गया था, उसको यह दण्ड क्यों न हुआ ? जो कहो ईश्वर ने मूसा को मारने के निमित्त सौंपा था, तो ईश्वर पक्षपाती हुआ। क्योंकि उस मूसा का राजा से न्याय क्यों न होने दिया ? ॥४७॥

[परमेश्वर के लिये बैल की बलि]

४८—और कुशल का बलिदान बैलों से परमेश्वर के लिये चढ़ाया ॥ और मूसा ने आधा लोहू लेके पात्रों में रक्खा और आधा लोहू वेदी पर छिड़का। और मूसा ने उस लोहू को लेके लोगों पर छिड़का, और कहा कि यह लोहू उस नियम का है, जिसे परमेश्वर ने इन बातों के कारण तुम्हारे साथ किया है। और परमेश्वर ने मूसा से कहा कि पहाड़ पर मुझ[1] पास आ, और वहाँ रह। और मैं तुझे पत्थर की पटियाँ और व्यवस्था और आज्ञा जो मैंने लिखी है, दूँगा।—तौ० या० प० २४। आ० ५, ६, ८, १२

[बैल की बलि लेना, वेदी पर लोहू छिड़कना जंगलीपन है]

समीक्षक—अब देखिये, ये सब जङ्गली लोगों की बातें हैं, वा नहीं ? और परमेश्वर बैलों का बलिदान लेता, और वेदी पर लोहू छिड़कना, यह कैसी जङ्गलीपन और असभ्यता की बात है ? जब ईसाइयों का खुदा भी बैलों का बलिदान लेवे, तो उसके भक्त बैल गाय के बलिदान की प्रसादी से पेट क्यों न भरें ? और जगत् की हानि क्यों न करें ?

[क्या ईश्वर को स्याही कलम कागज का भी ज्ञान न था ?]

ऐसी-ऐसी बुरी बातें बाइबल में भरी हैं। इसी के कुसंस्कारों से वेदों में भी ऐसा झूँठा दोष लगाना चाहते हैं। परन्तु वेदों में ऐसी बातों का नाम भी नहीं। और यह भी निश्चय हुआ कि ईसाइयों का ईश्वर एक पहाड़ी मनुष्य था, पहाड़ पर रहता था। जब वह खुदा स्याही लेखनी कागज नहीं बनाना जानता, और न उसको प्राप्त था, इसीलिए पत्थर की पटियों पर लिख-लिख देता था। और इन्हीं जङ्गलियों के सामने ईश्वर भी बन बैठा था ॥४८॥

---

४८. **वेदों में ऐसी बातें**—यह ठीक है कि पाश्चात्य विद्वानों ने भारतीय न होते हुए भी संस्कृत साहित्य में, विशेषतः वैदिक वाङ्मय में, अनुकरणीय उद्योग किया, परन्तु जातीय पक्षपात तथा शास्त्र-विषय में गहरा ज्ञान न होने के कारण वे वैदिक साहित्य को उसके यथार्थ स्वरूप में प्रस्तुत न कर सके। वस्तुतः उनका उद्देश्य ही भारतीयों में अपने धर्म, साहित्य, संस्कृति, सभ्यता, इतिहास और परम्पराओं के प्रति अश्रद्धा और घृणा पैदा करके भारत में ब्रिटिश शासन की जड़ जमाना था। यूरोपीय समाज भारत को ईसाई बनाने में प्राणपण से जुटा हुआ था, क्योंकि ब्रिटेन के लोग समझते थे कि भारत में ब्रिटिश शासन को स्थायित्व प्रदान करने के लिए भारतीयों को ईसाई बनाना आवश्यक है। भारतीय स्वाधीनता के प्रथम युद्ध की समाप्ति के दो वर्ष बाद इंगलैण्ड के तत्कालीन प्रधानमन्त्री लार्ड पामर्स्टन ने घोषणा की थी—"It is not only our duty but in our own interest to promote the diffusion of Christianity as far as possible throughout the length and breadth of India." (Christianity and Government of India by Mahew, p. 194) अर्थात् हमारा यह कर्त्तव्य ही नहीं, अपितु हमारा अपना हित इसी में है कि भारत-भर में ईसाइयत का प्रचार-प्रसार हो।

---

१. अर्थात् मेरे पास।

इससे पूर्व ईस्ट इंडिया कम्पनी के बोर्ड आफ डायरेक्टर्स के चेयरमैन मिस्टर मेंगल्स ने ब्रिटिश पार्लियामेण्ट में कहा था—"Providence has entrusted the extensive empire of India to England in order that the banner of Christ should wave triumphant from one end of India to the other. Everyone must exert all his strength that there may be no dilatoriness on any account in continuing in the country the grand work of making all Indians Christians."

अर्थात्—विधाता ने भारत का विशाल साम्राज्य इंगलैंड के हाथों में इसलिए सौंपा है कि वह ईसामसीह का झण्डा इस देश के एक कोने से लेकर दूसरे तक लहराये। प्रत्येक ईसाई का कर्तव्य है कि वह समस्त भारतीयों को ईसाई बनाने के महान् कार्य में पूरी शक्ति के साथ जुट जाये।

बम्बई के गवर्नर लार्ड री ने सन् १८७६ में ईसाई मिशनरियों के शिष्टमण्डल को प्रिंस आफ वेल्स के सामने प्रस्तुत करते हुए कहा था—"They are doing in India than all those civilians, soldiers, judges and governors your Highness has met." अर्थात् जितना काम आपके सिपाही, जज गवर्नर और दूसरे अफसर कर रहे हैं, उससे कहीं अधिक ये मिशनरी कर रहे हैं।

लार्ड मेकाले के मार्गदर्शन में वेदों पर पहली चोट करते हुए मैक्समूलर ने लिखा था—"That the Vedas are full of childish, silly and monstrous conceptions, who would deny" (India : what can teach us ? P. 57) अर्थात् वेद, बचकाना, मूर्खतापूर्ण, राक्षसवत् विकराल तथा नितान्त असंगत बातों से भरे हैं—इससे कौन इनकार कर सकता है ?

मद्रास क्रिश्चियन सोसायटी की ओर से प्रकाशित 'Vedic Hinduism' में मैक्समूलर के निम्न शब्दों में भी उनके मन की भावना व्यक्त होती है—"I must remind you again that the vedas contain a great deal of what is childish and foolish." अर्थात्—एक बार फिर मैं याद दिलाता हूँ कि वेदों में बहुत-सी बचकाना और मूर्खतापूर्ण बातें भरी पड़ी हैं।

कुछ भिन्न शब्दों में यही बात मैक्समूलर ने 'Chips from a german workshop' (Ed. 1866, P. 27) में लिखी है—"A large number of Vedic hymns are childish in the extreme, tedious, low and commonplace" अर्थात् वैदिक सूक्तों की एक बड़ी संख्या बिल्कुल बचकानी, जटिल, निकृष्ट और अत्यन्त साधारण है।

वेद वास्तव में ऐसे ही हैं—यह सिद्ध करने के लिए मैक्समूलर ने वेदों का भाष्य किया। वेद के अनुसन्धान और अनुवाद कार्य में लगने का क्या उद्देश्य था, यह उन्होंने अपनी पत्नी के नाम लिखे एक पत्र में स्पष्ट कर दिया—

"This edition of mine and the translation of the Veda will, hereafter, tell to a great extent of the fate of India. It is the root of their religion and to show them what the root is, I feel sure, is the only way of uprooting all that has sprung from it during the last three thousand years." (Life and Letters of Frederick Mexmuller, Vol. I, Ch. XV, P. 34.)

अर्थात्—मेरा यह संस्करण और वेद का अनुवाद भारत के भाग्य को दूर तक प्रभावित करेगा। यह उनके धर्म का मूल है और उन्हें यह दिखा देना कि यह मूल कैसा है, गत तीन हजार वर्षों में इससे उत्पन्न होनेवाली सब बातों को उखाड़ फेंकने का एकमात्र उपाय है।

भारत सचिव के नाम १६ दिसम्बर १८६८ को लिखे अपने पत्र में मैक्समूलर ने लिखा—"The ancient religion of India is doomed. Now if Christianity does not step in, whose fault will it be ?" (Ibid. Vol. I, P. 378).

[परमेश्वर का मूसा से प्रपञ्च करना]

४६—और बोला कि तू मेरा रूप नहीं देख सकता। क्योंकि मुझे देखके कोई मनुष्य न जियेगा। और परमेश्वर ने कहा कि—'देख एक स्थान मेरे पास है, और तू उस टीले पर खड़ा रह। और यों होगा कि जब मेरा विभव[1] चलके निकलेगा, तो मैं तुझे पहाड़ के दरार में रक्खूंगा। और जब लों जा निकलूं, तुझे अपने हाथ से ढापूंगा। और अपना हाथ उठा लूंगा, और तू मेरा पीछा देखेगा, परन्तु मेरा रूप दिखाई न देगा'। —तौ० या० पर्व० ३३। आ० २०-२३

[मूसा को प्रपञ्च दिखा कोई व्यक्ति ईश्वर बन बैठा]

समीक्षक—अब देखिये! ईसाइयों का ईश्वर केवल मनुष्यवत् शरीरधारी। और मूसा से कैसा प्रपञ्च रचके आप स्वयं ईश्वर बन गया। जो पीछा देखेगा रूप न देखेगा, तो हाथ से उसको ढाँप भी दिया न होगा। जब खुदा ने अपने हाथ से मूसा को ढाँपा होगा, तब क्या उसके हाथ का रूप उसने न देखा होगा? ॥४६॥

लैव्य व्यवस्था की पुस्तक[2], तौ०

[परमेश्वर का मूसा के द्वारा बैल की भेंट माँगना]

५०—और परमेश्वर ने मूसा को बुलाया, और मण्डली के तम्बू में से यह वचन उसे कहा कि—इसराइल के सन्तान में से बोल, और उन्हें कह—'यदि कोई तुममें से परमेश्वर के लिए भेंट लावे, तो तुम ढोर में से अर्थात् गाय बैल और भेड़ बकरी में से अपनी भेंट लाओ।

—तौ० लैव्य व्यवस्था की पुस्तक, प० १। आ० १, २

मोनियर विलियम्स, मैक्डानल, विण्टरनिट्ज़, विल्सन, कीथ, ग्रीफिथ आदि सभी पाश्चात्य विद्वानों ने मैक्समूलर के स्वर में स्वर मिलाया। यह 'खिसियानी बिल्ली खम्भा नोचने' वाली बात थी। बाइबल की बेहूदा बातों की ग्रन्थकार की समीक्षा का उत्तर देने में असमर्थ होकर उन्होंने वेदों पर भी ऐसी बातें आरोपित करने का प्रयास किया, जिनका नाम भी उनमें नहीं था। ऐसे में यदि ग्रन्थकार का प्रादुर्भाव न हुआ होता और सत्यार्थप्रकाश की रचना न हुई होती तो मैक्समूलर आदि का स्वप्न साकार होने की सम्भावना हो सकती थी।

४६. ग्रन्थकार की आलोचना के पश्चात् नये अनुवाद में सुन्दर परिवर्त्तन किया गया है। 'रूप' के स्थान में 'मुख' शब्द कर दिया गया है। किन्तु एक वज्रतुल्य आपत्ति तो बनी रही अर्थात् परमेश्वर का मुख देखने से किसी की मृत्यु क्यों हो? सन् १९३९ में हैदराबाद सत्याग्रह के दिनों में हम (भाष्यकार) गुलबर्गा जेल में कैद थे। एक दिन हमारी खिड़की आदि सब इस प्रकार बन्द कर दिये गये कि हमें बाहर का कोई व्यक्ति न देख सके। कारण पूछने पर पता लगा कि आज निज़ाम हैदराबाद जेल देखने आ रहे हैं। जिस कैदी पर उनकी नजर पड़ जाती है, उसे छोड़ दिया जाता है। परमेश्वर का मुंह देखकर किसी की मृत्यु होना अनहोनी बात होगी।

५०. लैव्य व्यवस्था की पुस्तक=The Book of Leviticus— नये अनुवाद में 'लय' का स्थान 'लैव्य' ने ले लिया है। 'मण्डली के तम्बू'=Tent of the meeting (मिलाप वाला तम्बू)। 'यदि कोई ···जावे' इस वाक्य के स्थान में 'यदि कोई मनुष्य यहोवा के लिए पशु का चढ़ावा चढ़ावे' हो गया है।

---

१. अर्थात् तेज की झलक।

२. लैव्य व्यवस्था की पुस्तक=The book of leviticus.

[ईसाइयों का ईश्वर निश्चय ही मांसाहारी था]

समीक्षक—अब विचारिये, ईसाइयों का परमेश्वर गाय बैल आदि की भेंट लेनेवाला, जोकि अपने लिए बलिदान कराने के लिए उपदेश करता है। वह बैल गाय आदि पशुओं के लहू मांस का भूखा प्यासा है वा नहीं ? इसीसे वह अहिंसक और ईश्वरकोटि में गिना कभी नहीं जा सकता, किन्तु मांसाहारी प्रपञ्ची मनुष्य के सदृश है ॥५०॥

[पशुओं को यज्ञवेदी में भूनकर खाना]

५१—और वह उस बैल को परमेश्वर के आगे बलि करे। और हारून[1] के बेटे याजक[2] लोहू को निकट लावें। और लोहू को यज्ञवेदी के चारों ओर, जो मण्डली के तम्बू के द्वार पर है, छिड़कें ॥ तब वह उस भेंट के बलिदान की खाल निकाले, और उसे टुकड़ा-टुकड़ा करे ॥ और हारून के बेटे याजक यज्ञवेदी पर आग रक्खें, और उस पर लकड़ी चुनें ॥ और हारून के बेटे याजक उसके टुकड़ों को और शिर और चिकनाई को उन लकड़ियों पर, जो यज्ञवेदी की आग पर हैं, विधि से धरें ॥ जिसते बलिदान की भेंट होवे, जो आग से परमेश्वर के सुगन्ध के लिये भेंट किया गया ॥

—तौ० लै० व्यवस्था की पुस्तक प० १। आ० ५-६ ॥

[जो ईश्वर बैल आदि की बलि मांगे, वह पापी है]

समीक्षक—तनिक विचारिये कि बैल को परमेश्वर के आगे उसके भक्त मारें और वह मरवावे, और लोहू को चारों ओर छिड़कें, अग्नि में होम करें, ईश्वर सुगन्ध लेवे, भला यह कसाई के घर से कुछ कमती लीला है ? इसी से न बाइबल ईश्वरकृत, और न वह जङ्गली मनुष्य के सदृश लीलाधारी ईश्वर हो सकता है ॥५१॥

[बछिया के बलिदान से पाप की निवृत्ति]

५२—फिर परमेश्वर मूसा से यह कहके बोला ॥ यदि वह अभिषेक किया हुआ याजक लोगों के पाप के समान पाप करे, तो वह अपने पाप के कारण, जो उसने किया है, अपने पाप की भेंट के लिये

---

५१. नये अनुवाद में 'बैल' के स्थान में "बछड़ा' हो गया है। अन्तिम वाक्य इस प्रकार हो गया है—'कि वह होमबलि यहोवा के लिए सुखदायक सुगन्धवाला हवन करे।' अंग्रेजी में यह अधिक स्पष्ट है—"He is to slaughter the young bull before the Lord and then Aaron's sons the priest shall bring the blood and sprinkle it against the altar on all sides of the entrance to the Tent of meeting. He is to skin the burnt offering and cut it into pieces and the priest shall arrange wood on the fire. Then Aaron's sons, the priests shall arrange the pieces, including the head and the fat on the burning fire, that is, on the altar. It is a burnt offering, an offering made by fire, an aroma pleasing to the Lord." सचमुच इस प्रकार का बीभत्स कृत्य करनेवाला परमेश्वर तो क्या, कोई सभ्य पुरुष भी नहीं हो सकता। ग्रन्थकार का बाइबल को जंगलियों की पुस्तक कहना कितना सटीक है।

५२. पाप का प्रायश्चित्त और अधिक पाप करने से होता है, इस प्रकार का विधान जंगली लोग ही कर सकते हैं, न ईश्वर और न सभ्य मनुष्य।

---

१. Aaron. २. Priests.

निसखोट[1] एक बछिया परमेश्वर के लिये लावे ।। और बछिया के शिर पर अपना हाथ रक्खे, और बछिया को परमेश्वर के आगे बलि करे ।। —तौ० लै० व्य० प० ४। आ० १, ३, ४

[पापों को छुड़ाने के निकृष्टतम प्रायश्चित्त]

समीक्षक—अब देखिये पापों के छुड़ाने के प्रायश्चित्त ! स्वयं पाप करे, गाय आदि उत्तम पशुओं की हत्या करे, और परमेश्वर करवावे। धन्य हैं ईसाई लोग ! जो ऐसी बातों के करने-करानेहारे को भी ईश्वर मानकर अपनी मुक्ति आदि की आशा करते हैं !!! ।।५२।।

[बकरी के बच्चे की भेंट से भी पापों की निवृत्ति]

५३—जब कोई अध्यक्ष पाप करे।। तब वह बकरी का निसखोट नर मेम्ना अपनी भेंट के लिये लावे ।। और उसे परमेश्वर के आगे बलि करे, यह पाप की भेंट है ।।

[फिर तो अध्यक्षादि पाप करने से क्यों डरेंगे ?]

समीक्षक—वाहजी वाह ! यदि ऐसा है, तो इनके अध्यक्ष अर्थात् न्यायाधीश तथा सेनापति आदि पाप करने से क्यों डरते होंगे ? आप तो यथेष्ट पाप करें, और प्रायश्चित्त के बदले में गाय बछिया बकरे आदि के प्राण लेवें। तभी तो ईसाई लोग किसी पशु वा पक्षी के प्राण लेने में शङ्कित नहीं होते।

सुनो ईसाई लोगो ! अब तो इस जङ्गली मत को छोड़के सुसभ्य धर्ममय वेदमत को स्वीकार करो कि जिससे तुह्मारा कल्याण हो ।।५३।।

[भेड़ न मिले, तो कबूतर के दो बच्चे ही सही]

५४—और यदि उसे भेड़ लाने की पूँजी न हो, तो वह अपने किए हुए अपराध के लिये दो पिड़ुकियाँ[2] और कपोत के दो बच्चे परमेश्वर के लिये लावे ।। और उसका शिर उसके गले के पास से मरोड़ डाले, परन्तु अलग न करे।। उसके किए हुए पाप का प्रायश्चित्त करे। और उसके लिये क्षमा किया जायगा ।।

[यदि निर्धन हो, तो कुछ आटा ही ले आवे]

पर यदि उसे दो पिड़ुकियाँ और कपोत के दो बच्चे लाने की पूँजी न हो, तो सेर भर चोखा

---

५३. यहाँ पाप की भेंट के स्थान में नये अनुवाद में 'पापबलि' हो गया है। अंग्रेजी में यहाँ इस प्रकार पाठ है—"When he is made aware of the sin he commited, he must bring as his offering a male goat without defect. He is to lay his hand on the goat's head and slaughter it".

अर्थात्—पाप करनेवाले का प्रायश्चित्त एक निष्पाप प्राणी की जान लेकर होना ऐसा है जैसे किसी चोर को यह दण्ड देना कि वह किसी भले मानस के घर में चोरी करे।

५४. जब तक एक पाप करने के प्रायश्चित्त रूप दूसरा पाप न करे तब तक परमेश्वर क्षमा नहीं करता, ऐसा विचित्र न्याय करनेवाले परमेश्वर के राज्य में हिंसा ही परम धर्म माना गया है। ईसाइयों का परमेश्वर किसी बूचड़खाने का संचालक प्रतीत होता है।

---

१. निसखोट=निर्दोष=Without blemish.

२. Turtles or dove.

पिसान का दशवाँ हिस्सा[1] पाप की भेंट के लिये लावे*, उस पर तेल न डाले ॥ और वह क्षमा किया जायगा ॥
—तौ० लै० प० ५ । आ० ७, ८, १०, ११, १३

[पाप के द्वारा पाप से छुटकारा नहीं मिल सकता]

समीक्षक—अब सुनिये, ईसाइयों में पाप करने से न कोई धनाढ्य डरता होगा और न दरिद्र=गरीब। क्योंकि इनके ईश्वर ने पापों का प्रायश्चित्त करना सहज कर रखा है। एक यह बात ईसाइयों की बाइबल में बड़ी अद्भुत है कि विना कष्ट किए पाप[2] से पाप छूट जाय। क्योंकि एक तो पाप किया, और दूसरे जीवों की हिंसा कीं और खूब आनन्द से मांस खाया, और पाप भी छूट गया।

[जहाँ ऐसे उपदेश हों, वहाँ दया का क्या काम ?]

भला कपोत के बच्चे का गला मरोड़ने से वह बहुत देर तक तड़फता होगा, तब भी ईसाइयों को दया नहीं आती। दया क्योंकर आवे ? इनके ईश्वर का उपदेश ही हिंसा करने का है। और जब सब पापों का ऐसा प्रायश्चित्त है, तो ईसा के विश्वास से पाप छूट जाता है, यह बड़ा आडम्बर क्यों करते हैं ? ॥५४॥

[बलि-पशु की खाल वा भोजन याजक का]

५५—सो उसी बलिदान की खाल उसी याजक की होगी, जिसने उसे चढ़ाया ॥ और समस्त भोजन की भेंट जो तन्दूर में पकाई जावे, और सब जो कड़ाही में अथवा तवे पर, सो उसी याजक की होगी ॥
—तौ० लै० प० ७ । आ० ८, ९

[ईसाई-पुजारी देवी के भोपों से भी बढ़ गये]

समीक्षक—हम जानते थे कि यहाँ देवी के भोपे[3] और मन्दिरों के पुजारियों की पोपलीला विचित्र है। परन्तु ईसाइयों के ईश्वर और उनके पुजारियों की पोपलीला इससे सहस्रगुणी बढ़कर है। क्योंकि चाम के दाम और भोजन के पदार्थ खाने को आवें। फिर ईसाइयों ने खूब मौज उड़ाई होगी, और अब भी उड़ाते होंगे।

[ईश्वर की दृष्टि में सब प्राणी पुत्रवत् हैं]

भला कोई मनुष्य एक लड़के को मरवावे, और दूसरे लड़के को उसका मांस खिलावे, ऐसा कभी हो सकता है ? वैसे ही ईश्वर के सब मनुष्य और पशु-पक्षी आदि सब जीव पुत्रवत् हैं। परमेश्वर ऐसा

* इस ईश्वर को धन्य है कि जिसने बछड़ा भेड़ी और बकरी का बच्चा कपोत और पिसान (=आटे) तक लेने का नियम किया। अद्भुत बात तो यह है कि कपोत के बच्चे 'गरदन मरोड़वाके' लेता था, अर्थात् गर्दन तोड़ने का परिश्रम भी न करना पड़े। इन सब बातों के देखने से विदित होता है कि जंगलियों में कोई चतुर पुरुष था, वह पहाड़ पर जा बैठा और अपने को ईश्वर प्रसिद्ध किया। जंगली अज्ञानी थे, उन्होंने उसी को ईश्वर स्वीकार कर लिया। अपनी युक्तियों से वह पहाड़ पर ही खाने के लिए पशु-पक्षी और अन्नादि मँगा लिया करता था, और मौज करता था। उसके दूत फरिश्ते का काम किया करते थे। सज्जन लोग विचारें कि कहाँ तो बाइबल में बछड़ा भेड़ी बकरी का बच्चा कपोत और 'अच्छे' पिसान का खानेवाला ईश्वर, और कहाँ सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, अजन्मा, निराकार, सर्वशक्तिमान् और न्यायकारी इत्यादि उत्तम गुणयुक्त वेदोक्त ईश्वर ? द० स०

१. The tenth part of an ephi of flour.
२. अर्थात् पाप=पशु-हिंसा के द्वारा स्वकृत पाप छूट जाये।
३. अर्थात् पुजारी। यह राजस्थानी भाषा का शब्द है।

काम कभी नहीं कर सकता। इसी से यह बाइबल ईश्वरकृत, और इसमें लिखा ईश्वर और इसके मानने-वाले धर्मज्ञ कभी नहीं हो सकते। ऐसी ही सब बातें 'लैव्य व्यवस्था' आदि पुस्तकों में भरी हैं, कहाँ तक गिनावें ? ॥५५॥

गिनती की[1] पुस्तक

[गदही की ईश्वर के दूत बलआम से बातचीत]

५६—सो गदही[2] ने परमेश्वर के दूत को अपने हाथ में तलवार खेंचे हुए मार्ग में खड़ा देखा। तब गदही मार्ग से अलग खेत में फिर गई। उसे मार्ग में फिरने के लिये बलआम[3] ने गदही को लाठी से मारा ॥ तब परमेश्वर ने गदही का मुंह खोला। और उसने बलआम से कहा कि मैंने तेरा क्या किया है कि तूने मुझे अब तीन बार मारा ॥ —तौ० गि० प० २२। आ० २३, २८

[अब ईसाई-पादरियों तक को भी दूत क्यों नहीं दीखते ?]

समीक्षक—प्रथम तो गदहे तक ईश्वर के दूतों को देखते थे, और आजकल विशप पादरी आदि श्रेष्ठ वा अश्रेष्ठ मनुष्यों को भी खुदा वा उसके दूत नहीं दीखते हैं। क्या आजकल परमेश्वर और उसके दूत हैं वा नहीं ? यदि हैं तो क्या बड़ी नींद में सोते हैं ? वा रोगी अथवा अन्य भूगोल में चले गये ? वा किसी अन्य धन्धे में लग गये ? वा अब ईसाइयों से रुष्ट हो गये ? अथवा मर गये ? विदित नहीं होता कि क्या हुआ ? अनुमान तो ऐसा होता है कि जो अब नहीं हैं, नहीं दीखते, तो तब भी नहीं थे और न दीखते होंगे। किन्तु ये केवल मनमाने गपोड़े उड़ाये हैं ॥५६॥

[सबको मार कुमारियों को अपने लिये जीवित रखना]

५७—[4]सो अब लड़कों में से हर एक बेटे को और हर एक स्त्री को, जो पुरुष से संयुक्त हुई हो, प्राण से मारो ॥ परन्तु वे बेटियाँ, जो पुरुष से संयुक्त नहीं हुई हैं, उन्हें अपने लिये जीती रक्खो ॥ —तौ० गिनती० प० ३१। आ० १७, १८

[यह मूसा हिंसक और विषयी व्यक्ति था]

समीक्षक—वाह जी ! मूसा पैगम्बर और तुम्हारा ईश्वर धन्य है ! कि जो स्त्री बालक वृद्ध और पशु आदि की हत्या करने से भी अलग न रहे। और इससे स्पष्ट निश्चित होता है कि मूसा विषयी था। क्योंकि जो विषयी न होता, तो अक्षतयोनि अर्थात् पुरुषों से समागम न की हुई कन्याओं को अपने लिये क्यों मँगवाता ? वा उनको ऐसी निर्दय वा विषयीपन की आज्ञा क्यों देता ? ॥५७॥

---

५६ नये अनुवाद में नबूज़रदान (Nebuzaradan) को 'जल्लादों का प्रधान' कहा गया है और 'जो निज सेना का प्रधान अध्यक्ष था' का लोप कर दिया गया है।

---

१. Numbers.
२. She-ass.
३. Balaam.
४. यह आयत और इसका समीक्ष्यमाण अंश सं० २ से ३३ तक पूर्व अस्थान में छपता आ रहा था। उसे यहाँ पर यथा-स्थान रख दिया है। सं० ३४ में भी ऐसा ही किया है।

समुएल[1] की दूसरी पुस्तक

[शरणार्थियों की भाँति ईश्वर का तम्बू में रहना]

५८—और उसी रात ऐसा हुआ कि परमेश्वर का वचन यह कहके नातन[2] को पहुँचा ॥ कि जा और मेरे सेवक दाऊद[3] से कहा कि परमेश्वर यों कहता है कि मेरे निवास के लिये तू एक घर बनावेगा। क्योंकि जब से इसराएल के सन्तान को मिश्र से निकाल लाया, मैंने तो आज के दिन लों घर में वास न किया। परन्तु तम्बू में और डेरे में फिरा किया ॥—तौ० समुएल की दूसरी पु०, प० ७। आ० ४-६

[तम्बू में ईश्वर नहीं, मनुष्य ही रह सकता है]

समीक्षक—अब कुछ सन्देह न रहा कि ईसाइयों का ईश्वर मनुष्यवत् देहधारी है। और उलहना देता है कि मैंने बहुत परिश्रम किया, इधर-उधर डोलता फिरा। अब दाऊद घर बनादे, तो उसमें आराम करूं। क्यों ईसाइयों को ऐसे ईश्वर और ऐसे पुस्तक को मानने में लज्जा नहीं आती ? परन्तु क्या करें, बिचारे फस ही गये। अब निकलने के लिये बड़ा पुरुषार्थ करना उचित है ॥५८॥

राजाओं की पुस्तक (२)

[परमेश्वर के घर और यरूसलम का विनाश]

५९—और बाबुल[4] के राजा नबूखुदनजर[5] के राज्य के उन्नीसवें बरष के पाँचवें मास सातवीं तिथि में बाबुल के राजा का एक सेवक नबूसरअद्दान[6], जो निज सेना का प्रधान अध्यक्ष था, यरूसलम[7] में आया ॥ और उसने परमेश्वर का मन्दिर और राजा का भुवन[8] और यरूसलम के सारे घर और हर

---

५८. ईसाइयों का परमेश्वर डेरे तम्बुओं में रह-रहकर दिन काट रहा है। आज तक उसे अपने रहने के लिए घर नहीं मिला। घर बनाने के लिए अपने सेवक दाऊद को कहने का भी उसका साहस नहीं, इसलिए अत्यन्त विनम्र शब्दों में, मानो गिड़गिड़ा कर प्रश्नात्मक वाक्य के द्वारा अपने सेवक दाऊद को कहलवा रहा है कि 'क्या तू मेरे रहने के लिये एक घर बना देगा ?' (Tell him, I have been moving from place to place with a tent as my dwelling. Are you the one to build me a house to dwell in ?) निश्चय ही ईसाइयों का परमेश्वर मनुष्य है और वह भी अत्यन्त असहाय। कहने को ईसाई भी ईश्वर को निराकार और सर्वव्यापी मानते हैं, पर जिसे अपने रहने के लिए मकान चाहिए, वह निश्चय ही साकार तथा एकदेशी है। और एकदेशी होने के कारण वह न सर्वव्यापक हो सकता है, न सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान्। इसलिए उसे पैगम्बरों आदि से काम लेना पड़ता है।

५९. ईश्वर की तुलना में बिल्कुल तुच्छ नबूसरअद्दान ने सारे यरूसलम, यहाँ तक कि परमेश्वर के घर तक को धूल में मिला दिया और तथोक्त सर्वशक्तिमान् ईश्वर बैठा देखता रहा। ऐसा नपुंसक परमेश्वर इतने विशाल ब्रह्माण्ड की व्यवस्था कैसे कर सकता है ? जो अपने घर को न बचा सका, वह अपनी प्रजा की रक्षा कैसे करेगा ? ऐसी ईश्वर की स्तुति-प्रार्थना-उपासना करने से क्या लाभ ?

---

१. Samuel. २. Nathan. ३. David.
४. Babylon. ५. Nabuchodonosor. ६. Nabuzardan.
७. Jerusalem.
८. सं० ८ से ३५ तक 'भवन' पाठ है। संस्कृतभाषा में भवनविशेष के लिये 'भुवन' शब्द भी प्रयुक्त होता है।

एक बडे घर को जला दिया। और कसदियों[1] की सारी सेना ने जो उस निज सेना के अध्यक्ष के साथ थी, यरूसलम की भीतों को चारों ओर से ढा दिया।—तौ० रा० पु० २, प० २५। आ० ८-१०

[जो ईश्वर अपना घर भी न बचा सका, वह क्या ईश्वर ?]

समीक्षक— क्या किया जाय, ईसाइयों के ईश्वर ने तो अपने आराम के लिए दाऊद आदि से घर बनवाया था। उसमें आराम करता होगा, परन्तु नबूसरअद्दान ने ईश्वर के घर को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। और ईश्वर वा उसके दूतों की सेना कुछ भी न कर सकी।

प्रथम तो इनका ईश्वर बड़ी लड़ाइयाँ मारता था और विजयी होता था, परन्तु अब अपना घर जला तुड़वा बैठा, न जाने चुपचाप क्यों बैठा रहा ? और न जाने उसके दूत किधर भाग गये ? ऐसे समय पर कोई भी काम न आया। और ईश्वर का पराक्रम भी न जाने कहाँ उड़ गया ? यदि यह बात सच्ची हो, तो जो-जो विजय की बातें प्रथम लिखीं सो-सो अब व्यर्थ हो गईं। क्या मिश्र के लड़का लड़कियों के मारने में ही शूरवीर बना था ? अब शूरवीरों के सामने चुपचाप हो बैठा। यह तो ईसाइयों के ईश्वर ने अपनी निन्दा और अप्रतिष्ठा करा ली। ऐसे ही हजारों इस पुस्तक में निकम्मी कहानियाँ भरी हैं ॥५९॥

जबूर का दूसरा भाग

काल के समाचार की पहली पुस्तक[2]

[मरी भेजकर ७० सहस्र पुरुषों को मारना]

६०—सो परमेश्वर मेरे ईश्वर ने इसराएल पर मरी[3] भेजी। और इसराएल में से सत्तर सहस्र पुरुष गिर गये ॥ —जबूर० २ काल० पहली पु०, प० २१। आ० १४

[अपने ही भक्तों को मारना ईश्वर का काम नहीं]

समीक्षक– अब देखिये ! इसराएल के ईसाइयों के ईश्वर की लीला। जिस इसराएल कुल को बहुत से वर दिये थे, और रात-दिन जिनके पालन में डोलता था, अब झट क्रोधित होकर मरी डालके सत्तर सहस्र मनुष्यों को मार डाला। जो यह किसी कवि ने लिखा है, सत्य है कि—

'क्षणे रुष्टः क्षणे तुष्टो रुष्टस्तुष्टः क्षणे क्षणे।
अव्यवस्थितचित्तस्य प्रसादोऽपि भयङ्करः ॥'[4]

---

६०. "The Lord sent a plague on Israel, and seventy thousand men of Israel fell dead. And God sent an angel to destroy Jerusalem. But as the angel was doing so, the Lord saw it and was grieved because of the calamity." पहले इज़रायल के नाश के लिए स्वयं प्लेग भेजना और फिर यरूसलम के नाश के लिए फ़रिश्ता भेजना और यह सब देखकर दुःखी होना। क्या ऐसा परमेश्वर संसार पर शासन करने और प्रजा की भक्ति पाने का अधिकारी हो सकता है। पागलखाना ही उसके लिए एकमात्र उपयुक्त स्थान है।

---

१. Chaldees. २. The first book of Paralipomenon. ३. मरी = प्लेग।
४. द्र०—सुभाषितरत्नभाण्डागार, प्रकरण ३, सामान्यनीति, श्लोक १७४ में 'क्वचिद् रुष्टः क्वचित्तुष्टः' पाठभेद से उद्धृत।

जैसे कोई मनुष्य क्षण में प्रसन्न, क्षण में अप्रसन्न होता है, अर्थात् क्षण-क्षण में प्रसन्न-अप्रसन्न होवे, उसकी प्रसन्नता भी भयदायक होती है, वैसी लीला ईसाइयों के ईश्वर की है ॥६०॥

ऐयूब की पुस्तक[1]

[शैतान से ऐयूब के प्राणों की भिक्षा माँगना]

६१—और एक दिन ऐसा हुआ कि परमेश्वर के आगे ईश्वर के पुत्र आ खड़े हुए। और शैतान भी उनके मध्य में परमेश्वर के आगे आ खड़ा हुआ ॥ और परमेश्वर ने शैतान से कहा कि तू कहाँ से आता है ? तब शैतान ने उत्तर देके परमेश्वर से कहा कि पृथिवी पर घूमते और इधर-उधर से फिरते चला आता हूँ ॥

तब परमेश्वर ने शैतान से पूँछा कि तूने मेरे दास ऐयूब को जाँचा है कि उसके समान पृथिवी में कोई नहीं है। वह सिद्ध और खरा जन ईश्वर से डरता और पाप से अलग रहता है। और अबलों अपनी सच्चाई को धर रक्खा है। और तूने मुझे उसे अकारण नाश करने को उभारा है ॥

तब शैतान ने उत्तर देके परमेश्वर से कहा कि—'चाम के लिये चाम। हाँ जो मनुष्य का है, सो अपने प्राण के लिए देगा ॥ परन्तु अब अपना हाथ बढ़ा, और उसके हाड़-मांस को छू। तब वह निःसन्देह तुझे तेरे सामने त्यागेगा ॥

तब परमेश्वर ने शैतान से कहा कि—'देख, वह तेरे हाथ में है, केवल उसके प्राण को बचा' ॥ तब शैतान परमेश्वर के आगे से चला गया। और ऐयूब को शिर से तलवे लों बुरे फोड़ों से मारा ॥

—जबूर ऐयूब, प० २। आ० १-७

[जो शैतान से भक्तों को नहीं बचा सका, वह क्या ईश्वर ?]

समीक्षक—अब देखिये ईसाइयों के ईश्वर का सामर्थ्य, कि शैतान उसके सामने उसके भक्तों को दुःख देता है। न शैतान को दण्ड, न अपने भक्तों को बचा सकता है। और न दूतों में से कोई उसका

---

६१. नये अनुवाद में कई परिवर्त्तन किये गये हैं। 'New International Version' में टिप्पणी में 'Angels' का अर्थ 'The sons of God' और 'Satan' का अर्थ 'Accuser' लिखा है। इसके अतिरिक्त 'तब यह निस्सन्देह तुझे तेरे सामने त्यागेगा' के स्थान में 'तब वह तेरे मुँह पर तेरी निन्दा करेगा' आ गया है। 'बुरे फोड़ों से मारा' के स्थान में 'बड़े-बड़े फोड़ों से पीड़ित किया' कर दिया गया है। 'हाँ, जो मनुष्य का है सो अपने प्राण के लिए देगा' इस वाक्य को 'परन्तु प्राण के बदले मनुष्य अपना सब कुछ दे देता है' बना दिया गया है। यह सब ग्रन्थकार की आलोचना का प्रभाव है। इसलाम और ईसाइयत में शैतान सर्वत्र खुदा से अधिक शक्तिशाली है।

परमेश्वर के यह पूछने पर 'तू कहाँ से आता है ?' शैतान के 'पृथ्वी पर घूमते और इधर-उधर से फिरते चला आता हूँ' इस उत्तर से पौराणिकों के नारदमुनि का स्मरण हो आता है। परन्तु जहाँ भगवान् के सामने नारद प्रायः अत्यन्त शिष्ट तथा विनम्र होते हैं, वहाँ शैतान का अक्खड़पन ज्यों-का-त्यों बना रहता है। इसीलिये भगवान् के 'देख, वह (ऐयूब) तेरे हाथ में है, केवल उसके प्राण को बचा' इस अनुरोध का सकारात्मक उत्तर दिये बिना शैतान बड़े उपेक्षा भाव का प्रदर्शन करते चला जाता है।

---

१. The book of job.

सामना कर सकता है। एक शैतान ने सबको भयभीत कर रक्खा है। और ईसाइयों का ईश्वर भी सर्वज्ञ नहीं है। और जो सर्वज्ञ होता, तो ऐयूब की परीक्षा शैतान से क्यों कराता ? ॥६१॥

उपदेश की पुस्तक

[बुद्धि की वृद्धि से शोक की वृद्धि]

६२—हाँ, मेरे अन्त:करण ने बुद्धि और ज्ञान बहुत देखा है ॥ और मैंने बुद्धि और बौड़ाहपन और मूढ़ता जानने को मन लगाया। मैंने जान लिया कि यह भी मन का झंझट है। क्योंकि अधिक बुद्धि में बड़ा शोक है। और जो ज्ञान में बढ़ता है, सो दु:ख में बढ़ता है ॥

[बुद्धिवृद्धि में शोक वा दु:ख मानना मूर्खता है]

समीक्षक—अब देखिये, जो बुद्धि और ज्ञान पर्यायवाची हैं, उनको दो मानते हैं। और बुद्धि-वृद्धि में शोक और दु:ख मानना विना अविद्वानों के ऐसा लेख कौन कर सकता है ? इसलिए यह बाइबल ईश्वर की बनाई तो क्या, किसी विद्वान् की भी बनाई नहीं है ॥६२॥

यह थोड़ा-सा तौरेत जबूर के विषय में लिखा है। इसके आगे कुछ मत्तीरचित आदि इञ्जील के विषय में लिखा जाता है, कि जिसको ईसाई लोग बहुत प्रमाणभूत मानते हैं। जिसका नाम इञ्जील[1] रखा है। उसकी परीक्षा थोड़ी-सी लिखते हैं, कि यह कैसी है ?

और परमेश्वर के अनुरोध को धता बताकर ऐयूब को बड़े-बड़े फोड़ों से पीड़ित करके चला जाता है। परमेश्वर असहाय हो देखता रह जाता है। 'तूने मुझे उसे अकारण नाश करने को उभारा है' से प्रतीत होता है कि शैतान में परमेश्वर को अकारण किसी के नाश के लिए उभारने का सामर्थ्य है और परमेश्वर में शैतान को झिड़कने तक का साहस नहीं है।

६२. यहाँ अनुवाद स्पष्ट नहीं है। हम यहाँ अंग्रेज़ी का मूल पाठ दे रहे हैं—

I have experienced much of wisdom and knowledge. Then I applied myself to the understanding of wisdom, and also of madness and folly, but I learned that this, too, is chasing after the wind.

For with much wisdom comes much sorrow;
the more knowledge, the more grief. (Ecclesiatics)

अज्ञानी होना या मन्दबुद्धि होना एक बात है, पर ज्ञान की निन्दा और उसके कारण शोक और दु:ख का होना कहना ऐसी बात है कि उसका विवेचन करना भी उपहासास्पद होगा। समस्त दु:खों का कारण अज्ञान या अविद्या है और उनसे छुटकारा पाने का साधन ज्ञान या विद्या है। इसके विपरीत कहने या लिखनेवाला ईश्वर और विद्वान् तो क्या सामान्य व्यावहारिक बुद्धिवाला मनुष्य भी नहीं हो सकता।

---

१. इसे 'नया नियम' भी कहा जाता है। पुराने नियम का सम्बन्ध विशेषकर यहूदियों के साथ है। यहूदी 'नये नियम' को नहीं मानते।

मत्ती[1] रचित इञ्जील

[यीशु खीष्ट की कुमारी मरियम से उत्पत्ति]

६३—यीशु खीष्ट का जन्म इस रीति से हुआ। उसकी माता मरियम[2] की यूसफ[3] से मँगनी हुई थी। पर उनके इकट्ठे होने के पहले ही वह देख पड़ी कि पवित्र आत्मा से गर्भवती है॥

देखो परमेश्वर के एक दूत ने स्वप्न में उसे दर्शन दे कहा—'हे दाऊद के सन्तान यूसफ! तू अपनी स्त्री मरियम को यहाँ लाने से मत डर। क्योंकि उसको जो गर्भ रहा है, सो पवित्र आत्मा से है'॥

—इं० मत्ती० पर्व १। आ० १८, २०

[कुमारी से पुत्रोत्पत्ति सृष्टि-नियम के विपरीत है]

समीक्षक—इन बातों को कोई विद्वान् नहीं मान सकता, कि जो प्रत्यक्षादि प्रमाण और सृष्टि-क्रम से विरुद्ध हैं। इन बातों का मानना मूर्ख मनुष्य जंगलियों का काम है, सभ्य विद्वानों का नहीं। भला जो परमेश्वर का नियम है, उसको कोई तोड़ सकता है? जो परमेश्वर भी नियम को उलटा-पलटा करे, तो उसकी आज्ञा को कोई न माने। और वह भी सर्वज्ञ और निर्भ्रम है।

[क्यों न सब कुमारियों के बालक ईश्वर के माने जायें]

ऐसे तो जिस-जिस कुमारिका के गर्भ रह जाय, तब सब कोई ऐसे कह सकते हैं कि इसमें गर्भ का रहना ईश्वर की ओर से है। और झूँठ-मूँठ कह दे कि परमेश्वर के दूत ने मुझको स्वप्न में कह दिया है कि यह गर्भ परमात्मा की ओर से है।

[सूर्य से कुन्ती का गर्भवती होना भी ऐसा ही पाखण्ड है]

जैसा यह असम्भव प्रपञ्च रचा है, वैसा ही सूर्य से कुन्ती का गर्भवती होना भी पुराणों में असम्भव लिखा है। ऐसी-ऐसी बातों को 'आँख के अन्धे गाँठ के पूरे' लोग मानकर भ्रमजाल में गिरते हैं। यह ऐसी बात हुई होगी कि किसी पुरुष के साथ समागम होने से गर्भवती मरियम हुई होगी। उसने वा किसी दूसरे ने ऐसी असम्भव बात उड़ा दी होगी कि इसमें गर्भ ईश्वर की ओर से है॥६३॥

---

६३. सोलहवीं शताब्दी के अन्त में जर्मनी के मार्टन लूथर के प्रचार से लोगों की आँखें खुलीं। कालान्तर में सुधार (Reformation) की लहर इङ्गलैंड में भी जा पहुँची। भारत के पौराणिकों की तरह रोमन कैथोलिकों का यह विश्वास था कि ईश्वर सर्वशक्तिमान् है, इसलिए वह जो चाहे कर सकता है। इस पर इङ्गलैंड के Anslem नामक एक पादरी ने पूछा—

(१) Can God restore virginity to a prostitute? अर्थात् क्या परमेश्वर वेश्या को कुँवारी बना सकता है?

(२) Can God construct a triangle whose two sides together should fall shorter than the third? अर्थात् क्या परमेश्वर एक ऐसी तिकोन (त्रिभुज) बना सकता है, जिसकी दो भुजायें मिलकर तीसरी से छोटी हों?

निश्चय ही इन प्रश्नों का उत्तर सकारात्मक (affirmative) नहीं हो सकता। स्पष्ट है कि प्रकृति के नियमों को तोड़ना परमेश्वर के सामर्थ्य से बाहर है।

---

१. Matthew. २. Mary. ३. Joseph.

[यीशु की परीक्षा; उसका ४० दिन भूखा रहना]

६४—तब आत्मा यीशु को जंगल में ले गया कि शैतान से उसकी परीक्षा की जाय ।। वह चालीस दिन और चालीस रात उपवास करके पीछे भूखा हुआ ।। तब परीक्षा करनेहारे ने कहा कि जो तू ईश्वर का पुत्र है, तो कहदे कि ये पत्थर रोटियाँ बन जावें ।। —इं० मत्ती० पर्व० ४। आ० १-३

[ईश्वर ने शैतान से ईसा की परीक्षा क्यों कराई ?]

समीक्षक—इससे स्पष्ट सिद्ध होता है कि ईसाइयों का ईश्वर सर्वज्ञ नहीं। क्योंकि जो सर्वज्ञ होता, तो उसकी परीक्षा शैतान से क्यों कराता ? स्वयं जान लेता। भला किसी ईसाई को आजकल चालीस रात चालीस दिन भूखा रखें, तो कभी बच सकेगा ?

और इससे यह भी सिद्ध हुआ कि न वह ईश्वर का बेटा, और न कुछ उसमें करामात अर्थात् सिद्धि थी। नहीं तो शैतान के सामने पत्थर को रोटियाँ क्यों न बना देता ? और आप भूखा क्यों रहता। और सिद्धान्त यह है कि जो परमेश्वर ने पत्थर बनाये हैं, उनको रोटी कोई भी नहीं बना सकता। और ईश्वर भी पूर्वकृत नियम को उलटा नहीं कर सकता। क्योंकि वह सर्वज्ञ, और उसके सब काम बिना भूल-चूक के हैं ।।६४।।

[मछुवों को मनुष्यों के मछुवे बनाने का प्रलोभन]

६५—उसने उनसे कहा—'मेरे पीछे आओ। मैं तुमको मनुष्यों के मछुवे बनाऊँगा' ।। वे तुरन्त जालों को छोड़के उसके पीछे हो लिए ।। —इं० मत्ती० प० ४। आ० १९, २०

[इसीसे ईसाई गरीबों को अपने जाल में फँसाते हैं]

समीक्षक—विदित होता है कि इसी पाप, अर्थात् जो तौरेत[1] में दश आज्ञाओं में लिखा है कि—'सन्तान लोग अपने माता-पिता की सेवा और मान्य करें, जिससे उनकी उमर बढ़े'। सो ईसा ने न अपने माता-पिता की सेवा की, और दूसरे को भी माता-पिता की सेवा से छुड़ाये। इसी अपराध से चिरंजीवी न रहा।

---

६४. मूल अंग्रेज़ी में जंगल के स्थान में 'Desert' (रेगिस्तान) है।

६५. मूल अंग्रेज़ी में मनुष्यों 'Fishers of men' अर्थात् मनुष्यों को फँसानेवाले हैं। सचमुच सेवा, शिक्षा आदि के नाम पर ईसा के शिष्य तरह-तरह के जाल बिछाकर अन्य मतावलम्बियों को ईसा के खेड़ की भेड़ बनाते हैं। भारत के सर्वाधिक धर्मनिरपेक्ष व्यक्ति महात्मा गांधी तथा प्रधानमन्त्री जवाहरलाल नेहरू द्वारा ईसाई पादरियों की गतिविधियों की जाँच के लिए नियुक्त नियोगी कमेटी ने इस बात को स्पष्ट स्वीकार किया है। नये अनुवाद में 'फँसानेवाले' के स्थान में 'पकड़नेवाले' कर दिया है। इस परिवर्तन से ग्रन्थकार की समीक्षा का प्रतिकार नहीं हो सकता। तौरेत की आज्ञायें निम्न प्रकार हैं—

Honour your father and your mother, so that you may live long in the land the Lord Your God is giving you; You shall not murder; You shall not commit adultery; You shall not steal; You shall not give false testimony against your neighbour; You shall not covet your

---

१. तौ यात्रा० पर्व २०, आयत १२।

और यह भी विदित हुआ कि ईसा ने मनुष्यों के फँसाने के लिये एक मत चलाया है कि जाल में मच्छी के समान मनुष्यों को स्वमत में फँसाकर अपना प्रयोजन साधें। जब ईसा ही ऐसा था, तो आजकल के पादरी लोग अपने जाल में मनुष्यों को फँसावें, तो क्या आश्चर्य है ? क्योंकि जैसे बड़ी-बड़ी और बहुत मच्छियों को जाल में फँसानेवाले की प्रतिष्ठा और जीविका अच्छी होती है, ऐसे ही जो बहुतों को अपने मत में फँसा ले, उसकी अधिक प्रतिष्ठा और जीविका होती है।

[आर्य लोग भोले लोगों को ईसाई होने से बचावें]

इसीसे ये लोग जिन्होंने वेद और शास्त्रों को न पढ़ा न सुना, उन बेचारे भोले मनुष्यों को अपने जाल में फँसाके, उनके माँ-बाप कुटुम्ब आदि से पृथक् कर देते हैं। इससे सब विद्वान् आर्यों को उचित है कि स्वयं इनके भ्रमजाल से बचकर अन्य अपने भोले भाइयों के बचाने में तत्पर रहें ॥६५॥

[ईसा का सब तरह के रोगियों को नीरोग करना]

६६—तब यीशु सारे गालील[1] देश में उनकी सभाओं में उपदेश करता हुआ, और राज्य का सुसमाचार प्रचार करता हुआ, और लोगों में हर एक रोग और हर एक व्याधि को चंगा करता हुआ, फिरा किया ॥ सब रोगियों को जो नाना प्रकार के रोगों और पीड़ाओं से दु:खी थे, और भूतग्रस्तों और मृगीवाले और अर्द्धाङ्गियों को उसके पास लाये, और उसने उन्हें चंगा किया ॥

—इं० मत्ती० प० ४। आ० २३, २४

[रोगियों को ठीक करने का प्रचार पाखण्ड है]

समीक्षक—जैसे आजकल पोपलीला निकालने,[2] मन्त्र-पुरश्चरण आशीर्वादता बीज और भस्म की चुटकी देने से भूतों को निकालना, रोगों को छुड़ाना सच्चा हो, तो वह इञ्जील की बात भी सच्ची

---

neighbour's house; You shall not covet your neighbour's wife, or his man-servant or maid-servant, his ox donkey, or anything that belongs to your neighbour.

अर्थात्—अपने माता-पिता का आदर कर, जिससे तेरी आयु उस भूमि पर, जिसे तेरा परमेश्वर तुझे देता है, अधिक होवे; हत्या मत कर; परस्त्रीगमन मत कर; चोरी मत कर; अपने पड़ौसी के विरुद्ध झूठी गवाही मत दे; अपने पड़ौसी के घर का लालच मत कर; अपने पड़ौसी की पत्नी और उसके दास-दासी और उसके बैल और उसके गधे और किसी भी वस्तु का जो तेरे पड़ौसी की है, लालच मत कर।

इस प्रकार पड़ौसियों को अपवाद करके अन्य सभी से अनाचार करने की खुली छूट दे दी है।

मच्छियों को फँसाना—कुछ समय की बात है, बड़ौदा में एक पादरी जगह-जगह खड़ा होकर भाषण देता फिरता था कि हज़रत ईसामसीह पर ईमान लाने से सब रोग दूर हो जाते हैं। एक दिन वहाँ के आर्यसमाजियों को पता चला कि उक्त पादरी साहब वहाँ के एक हस्पताल में प्रविष्ट होकर अपनी चिकित्सा करा रहे हैं। आर्यसमाजियों ने हस्पताल को घेर लिया। भीड़ एकत्र हो जाने पर उन्होंने लोगों को बताया कि यदि सचमुच ईसामसीह पर ईमान लाने से रोग दूर हो जाते हैं तो पादरी साहब

---

१. Galilee.

२. यहाँ 'पोपलीला रचनेवाला का' पाठ होना चाहिये।

होवे। इस कारण भोले मनुष्यों का भ्रम में फँसाने के लिये ये बातें हैं। जो ईसाई लोग ईसा की बातों को मानते हैं, तो यहाँ के देवी भोपों की बातें क्यों नहीं मानते ? क्योंकि वे बातें इन्हीं के सदृश हैं ॥६६॥

[जो मन में दीन हैं, उन्हें ही स्वर्ग मिलेगा]

६७—धन्य वे जो मन में दीन हैं। क्योंकि स्वर्ग का राज्य उन्हीं का है। क्योंकि मैं तुमसे सच कहता हूँ कि जब लों आकाश और पृथिवी टल न जायें, तब लों व्यवस्था से एकमात्रा अथवा एक बिन्दु बिना पूरा हुए नहीं टलेगा। इसलिए जो कोई इन अति छोटी आज्ञाओं में से एक को लोप करे, और लोगों को वैसे ही सिखावे, वह स्वर्ग के राज्य में सबसे छोटा कहावेगा।

—इं० मत्ती० प० ५। आ० ३, १८, १६

[सब दीन स्वर्ग में जायेंगे, तो वहाँ राज्याधिकारी कौन होगा ?]

समीक्षक—जो स्वर्ग एक है, तो राजा भी एक होना चाहिए। इसलिए जितने दीन हैं, वे सब स्वर्ग को जावेंगे, तो स्वर्ग में राज्य का अधिकार किसको होगा ? अर्थात् परस्पर लड़ाई-भिड़ाई करेंगे, और राज्यव्यवस्था खण्ड-बण्ड हो जायगी। और दीन के कहने से जो कंगले लोगे, तब तो ठीक नहीं। जो निरभिमानी लोगे, तो भी ठीक नहीं। क्योंकि दीन और निरभिमान का एकार्थ नहीं, किन्तु जो मन में दीन होता है, उसको सन्तोष कभी नहीं होता। इसलिए यह बात ठीक नहीं।

[स्वर्ग में सबसे छोटा गिने जाने की बात भयमात्र है]

'जब आकाश पृथिवी टल जायें, तब व्यवस्था भी टल जायगी'। ऐसी अनित्य व्यवस्था मनुष्यों की होती है, सर्वज्ञ ईश्वर की नहीं। और यह एक प्रलोभन और भयमात्र दिया है कि इन आज्ञाओं को न मानेगा, वह स्वर्ग में सबसे छोटा गिना जायगा ॥६७॥

[अपने लिये पृथिवी पर धन-संचय न करो]

६८—हमारी दिनभर की रोटी आज हमें दे। अपने लिये पृथिवी पर धन का संचय मत करो।

—इं० म० प० ६। आ० ११, १६

अपनी चिकित्सा के लिये हस्पताल में क्यों आये हैं ? उन्होंने उन पादरी साहब को पहले हस्पताल से और फिर शहर से निकालकर दम लिया। इस प्रकार के हथकण्डे अपनाकर ये लोग भोलेभाले लोगों को अपने जाल में फँसाते हैं।

नये अनुवाद में 'व्याधि' के स्थान में 'दुर्बलता' कर दिया गया है, किन्तु 'New International Version' में 'Disease' है, जिसका अर्थ रोग या व्याधि होता है।

६७. 'Blessed are the poor in spirit' हमारे विचार में मन से दीन होना ठीक नहीं है, भले ही धन-धान्य से दीन हो। जो मन से दीन होता है, वह संसार में कुछ भी नहीं कर सकता—'मन के हारे हार है मन के जीते जीत।' इसलिए वेद का माननेवाला परमेश्वर से प्रार्थना करता है—'अदीनाः स्याम शरदः शतम्' (यजुः० ३६।२४) अर्थात् हम कभी अदीन न हों।

६८. इस आयत से स्पष्ट है कि जिन लोगों पर ईसा का प्रभाव था, वे सभी अत्यन्त निम्न स्तर के लोग थे, जो दिन-भर की रोटी पाकर सन्तुष्ट हो जाना चाहते थे। वैदिक लोगों की प्रार्थना इस

[फिर ईसाई लोग क्यों धन-संचय करते हैं ?]

समीक्षक—इससे विदित होता है कि जिस समय ईसा का जन्म हुआ है, उस समय लोग जङ्गली और दरिद्र थे। तथा ईसा भी वैसा ही दरिद्र था। इसीसे तो दिनभर की रोटी की प्राप्ति के लिए ईश्वर की प्रार्थना करता और सिखलाता है। जब ऐसा है तो ईसाई लोग धन-संचय क्यों करते हैं ? उनको चाहिए कि ईसा के वचन से विरुद्ध न चलकर सब दान-पुण्य करके दीन हो जायें ॥६८॥

[यीशु को प्रभु कहनेवालों को स्वर्ग न मिलेगा]

६९—हर एक जो मुझसे 'हे प्रभु हे प्रभु' कहता है, स्वर्ग के राज्य में प्रवेश नहीं करेगा।
—इं० म० प० ७। आ० २१

[तब तो सारे पादरी नरक में जायेंगे ?]

समीक्षक—अब विचारिये, बड़े-बड़े पादरी बिशप साहेब और कृश्चीन लोग, जो यह ईसा का वचन सत्य है ऐसा समझें, तो ईसा को प्रभु अर्थात् ईश्वर कभी न कहें। यदि इस बात को न मानेंगे, तो पाप से कभी नहीं बच सकेंगे ॥६९॥

[ईसा स्वर्ग में कुकर्मियों को सहयोग न देगा]

७०—उस दिन में बहुतेरे मुझसे कहेंगे। तब मैं उनसे खोलके कहूँगा—'मैंने तुमको कभी नहीं जाना है। कुकर्म्म करनेहारे मुझसे दूर होओ' ॥ —इं० म० प० ७। आ० २२, २३

[यह केवल भोले लोगों को प्रलोभन देने की बात है]

समीक्षक—देखिये, ईसा जङ्गली मनुष्यों को विश्वास कराने के लिए स्वर्ग में न्यायाधीश बनना चाहता था। यह केवल भोले मनुष्यों को प्रलोभन देने की बात है ॥७०॥

[हाथ से छूते ही कोढ़ी का कोढ़ दूर]

७१—और देखो, एक कोढ़ी ने आ उसको प्रणाम कर कहा—'हे प्रभु ! जो आप चाहें तो मुझे शुद्ध कर सकते हैं'। यीशु ने हाथ बढ़ा उसे छूके कहा—'मैं तो चाहता हूँ शुद्ध होजा'। और उसका कोढ़ तुरन्त शुद्ध हो गया। —इं० म० प० ८। आ० २, ३

प्रकार की होती है—'धियो यो नः प्रचोदयात्'—हे प्रभु, हमारी बुद्धि को सन्मार्ग की ओर प्रेरित करो; 'अग्ने नय सुपथा राये'—हे प्रभु, हम सन्मार्ग पर चलते हुए ऐश्वर्य के स्वामी बनें। वैदिकों का स्तर बहुत ऊँचा है।

६९-७१. ये पूरी आयतें इस प्रकार हैं—"Not everyone who says to me, 'Lord, Lord, will enter the kingdom of heaven, but only he who does the will of my Father who is in heaven'''Many will say to me on that day, 'Lord, Lord, did we not prophesy in Your name, and in your name drive out demons and perform my miracles ?' Then I will tell them very plainly, 'I never knew you. Away from me, you evil doers !" अर्थात्—हरेक जो मुझसे—हे प्रभु, हे प्रभु ! कहता है, स्वर्ग के राज्य में प्रवेश नहीं करेगा, प्रत्युत एक वही जो मेरे स्वर्गवासी पिता की इच्छानुसार चलता है। उस दिन बहुत-सारे मुझसे कहेंगे—'हे प्रभु, हे प्रभु ! क्या हमने आपके नाम से

[फिर पुराणों की ऐसी ही बातें असत्य क्यों ?]

समीक्षक—ये सब बातें भोले मनुष्यों के फँसाने की हैं। क्योंकि जब ईसाई लोग इन विद्यासृष्टि-क्रमविरुद्ध बातों को सत्य मानते हैं, तो शुक्राचार्य्य धन्वन्तरि कश्यप आदि की बात, जो पुराण और महाभारत में—'अनेक दैत्यों की मरी हुई सेना को जिला दी। बृहस्पति के पुत्र कच को टुकड़ा-टुकड़ा

भविष्यद्वाक्य नहीं कहा और आपके नाम से भूत नहीं निकाले और आपके नाम से चमत्कार नहीं किये', तब मैं उनसे स्पष्ट कह दूंगा, 'मैंने तुमको कभी नहीं जाना, हे कुकर्मियों, मुझसे परे हट जाओ।'

मरों को जिलाना—महाभारत आदि पर्व अध्याय ६० में वर्णन है—त्रैलोक्य के राज्य के विषय में देवों तथा दैत्यों में संघर्ष के परिणामस्वरूप युद्ध छिड़ गया। युद्ध के लिये देवों ने बृहस्पति को अपना पुरोहित बनाया, दैत्यों ने शुक्राचार्य को। "तत्र निजघ्नुर्यान् दानवान् युधि संगतान्। तान् पुनर्जीवयामास काव्यो विद्याबलाश्रयात् ॥७॥ ततस्ते पुनरुत्थाय योधयांचक्रिरे सुरान् ॥८॥" अर्थात्—इस युद्ध में आये जिन दानवों को देव मारते थे, उनको विद्याबल के आश्रय से काव्य (कविपुत्र शुक्राचार्य) जिला देते थे। और वे उठकर फिर देवों से युद्ध करते थे।

बृहस्पति के पुत्र कच—उस देवासुर संग्राम में दैत्यों के द्वारा जो देव मारे जाते थे, बृहस्पति उनको पुनर्जीवित नहीं कर सकता था। क्योंकि वह संजीवनी विद्या नहीं जानता था। तब देवों ने परामर्श करके बृहस्पति के पुत्र कच को शुक्राचार्य के पास जाकर यह विद्या सीखने की प्रेरणा की। कच देवों की बात मानकर शुक्र के पास गया और बोला—"मैं देवगुरु बृहस्पति का पुत्र कच हूँ। आप मुझे अपना शिष्य बनाइये।" शुक्राचार्य ने उदारतापूर्वक स्वीकार कर लिया। वह गुरु की तथा गुरुपुत्री देवयानी की निष्ठापूर्वक सेवा करने लगा। वह नित्य गुरु की गौओं को वन में चराने ले जाता था। राक्षसों ने यह जानकर कि यह संजीवनी विद्या सीखने आया है, उसे मार दिया। "ततस्तु गास्तु रक्षन्तं दानवास्संशितव्रतम्। जघ्नुर्बृहस्पते रोषाद् विद्यारक्षणार्थमेव च ॥२६॥ हत्वा सालावृकेभ्यस्तं प्रायच्छँस्तिलशः कृतम् ॥३०॥" अर्थात् तब उस गोरक्षक पवित्रव्रती कच को दानवों ने बृहस्पति पर क्रोध के कारण तथा विद्या की रक्षा के लिए मार दिया और अतीव सूक्ष्म टुकड़े करके कुत्तों आदि को खिला दिया। गौओं को कच के बिना लौटा देखकर देवयानी ने पिता से कहा—पिताजी ! कच या तो मार दिया गया होगा या मर गया होगा। तब शुक्र ने कहा—'आओ' इतना शब्द कहकर मैं कच को पुनर्जीवित करता हूँ। वैशम्पायनजी कहते हैं—'ततस्संजीवनीविद्यां प्रयुज्य कचमाह्वयत् ॥३४॥' 'भित्वा-भित्त्वा शरीराणि वृकाणां च विनिष्पतत् ॥३५॥' 'आहूतः प्रादुरभवत्कचो दृष्टोऽथ विद्यया। हतोऽहमिति चाचष्ट पृष्टो भार्गवकन्यया ॥३६॥' अर्थात् जब शुक्र ने संजीवनी विद्या का प्रयोग करके कच को पुकारा, इस प्रकार पुकारा जाकर भेड़ियों के शरीरों से फाड़-फाड़कर कच बाहर निकलकर प्रकट हुआ। देवयानी के पूछने पर उसने बताया कि मैं मार दिया गया था। असुरों को ज्ञात हुआ कि कच जीवित हो गया है। तब असुरों ने 'पुनस्तं बाधयित्वाऽऽशु समुद्रेऽम्भस्यमज्जयत् ॥४२॥' फिर उसको शीघ्र मारकर समुद्र के जल में डुबो दिया। शुक्र ने फिर विद्याबल से जिला दिया। देवयानी के कहने से कच फिर वन में गया। दानवों ने उसे देख लिया—'ततस्तृतीये हत्वा तं दग्ध्वा पिष्ट्वा च चूर्णशः। प्रायच्छन् ब्राह्मणायैव सुरायामसुरास्तथा ॥४५॥' अर्थात् तब असुरों ने कच को मारकर, जलाकर और चूर्ण करके शराबी ब्राह्मण शुक्राचार्य को शराब के साथ पिला दिया। देवयानी के विलाप पर शुक्र ने संजीवनी विद्या का प्रयोग किया, किन्तु अबकी बार कच जीवित नहीं हुआ। देवयानी अतीव दुःखी हुई। पिता से पुनः अनुरोध किया। पिता ने अपनी असमर्थता जतलाई। किन्तु देवयानी ने बालहठ न छोड़ा। अब

कर जानवर और मच्छियों को खिला दिया, फिर भी शुक्राचार्य्य ने जीता कर दिया। पश्चात् कच को मारकर शुक्राचार्य्य को खिला दिया, फिर भी उसको पेट में जीता कर बाहर निकाला, आप मर गया। उसको कच ने जीता किया। कश्यप ऋषि ने मनुष्य सहित वृक्ष को तक्षक से भस्म हुए पीछे पुनः वृक्ष और मनुष्य को जिला दिया। धन्वन्तरि ने लाखों मुर्दे जिलाये। लाखों कोढ़ी आदि रोगियों को चङ्गा किया। लाखों अन्धों और बहिरों को आँख और कान दिये।'

शुक्र ने बहुत जोर से पुकारा। कच तो शुक्र के पेट में था। गुरुवचन सुनकर—'कचोऽपि राजन् स महानुभावो विद्याबलाल्लब्धमतिर्महात्मा। गुरोर्हितो विद्ययाचापहूतश्शनैर्वाक्यं जठरे व्याजहार ॥५६॥' अर्थात्—हे राजन्! महानुभाव कच भी विद्याबल से बुद्धि प्राप्त करके जो महात्मा और गुरु का प्यारा था, वह विद्या द्वारा बुलाये जाने पर धीरे से पेट में ही बोला। शुक्र ने पूछा—तुम मेरे पेट में कैसे पहुँचे? उसने असुरों की सारी लीला सुनाई। इस पर शुक्राचार्य को चिन्ता हुई कि विद्याबल से यदि उसे बाहर आने को कहते हैं तो उनकी अपनी मृत्यु होगी। तब स्वोदरस्थ कच से बोले—'तू बृहस्पति का पुत्र है, मेरी कन्या तुझ प्यार करती है, इस संजीवनी विद्या को ग्रहण कर। यदि तू कच के रूप में इन्द्र नहीं है, मेरे पेट से ब्राह्मण के विना और कोई नहीं निकल सकता। अतः तू इस विद्या को प्राप्त कर। पुत्र होकर तू मेरा रक्षा करना। तब 'गुरोः सकाशात्समवाप्य विद्यां भित्वा पार्श्वं निर्विचक्राम विप्रः। कचोऽभिरूपो दक्षिणं ब्राह्मणस्य शुक्लात्यये पौर्णमास्यामिवेन्दुः ॥६५॥ दृष्ट्वा शयानं ब्राह्मणं ब्रह्मराशिमुत्थापयामास मृतं कचोऽपि। विद्यां सिद्धां तामवाप्याभिवाद्य ततः कचस्तं गुरुमित्युवाच ॥६६॥' अर्थात् गुरु से विद्या प्राप्त करके ब्राह्मण कच ब्राह्मण शुक्राचार्य के दक्षिण पार्श्व को फोड़कर ऐसे बाहर निकला जैसे शुक्ल पक्ष के अन्त में पूर्णिमा का चन्द्रमा। कच ने भी सिद्ध विद्या प्राप्त करके उस मरे पड़े ब्रह्मराशि ब्राह्मण को खड़ा कर दिया और नमस्कार करके बोला।

तक्षक कथा—राजा परीक्षित को तक्षक नाग काटने जा रहा है। उसे मार्ग में कश्यप नामक ब्राह्मण मिलता है। तक्षक उससे पूछता है—ब्राह्मणदेव! कहाँ जा रहे हो? कश्यप ने कहा—आज सर्पदंश से परीक्षित का मरण है। मैं अपने विद्याबल से उसे पुनः जीवित करूँगा। तक्षक ने कहा—कैसे जानें कि आपमें यह सामर्थ्य है। तब कश्यप ने कहा कि परीक्षा करके देख लो! तक्षक ने वहीं एक बहुत बड़ा बड़ का वृक्ष जला दिया। 'ततः स भगवान् विद्वान् कश्यपो द्विजसत्तमः। भस्मराशिकृतं वृक्षं विद्यया समजीवयत् ॥६॥ साङ्कुरं स तं कृतवांस्ततः पर्णद्वयान्वितम्। पलाशिनं शाखिनं च तथा विटपिनं पुनः ॥१०॥' (महा० आदि० अ० ३५)। अर्थात्—तब उस ब्राह्मण श्रेष्ठ विद्वान् भगवान् कश्यप ने उस भस्मीभूत वृक्ष को विद्याबल से संजीवित कर दिया। उसको अंकुरित करके दो पत्तोंवाला, फिर पत्तों और शाखाओं से युक्त करके पूर्ण वृक्ष बना दिया।

धन्वन्तरि—"धन्वन्तरिरिति ख्यातो युवा मृत्युंजयः परः"(स्क० पु० के० खं० १३।२)अर्थात्—युवा धन्वन्तरि श्रेष्ठ मृत्युञ्जय (मृत्यु को जीतनेवाला) प्रसिद्ध है। सुश्रुत ने धन्वन्तरि से प्रार्थना की—'आयुर्वेदं मम ब्रूहि नराश्वेभरुगर्दनम्। सिद्धयोगान् सिद्धमन्त्रान् मृतसंजीवनीकरान' (अग्नि पु० २७९।२)। अर्थात् आप मुझे आयुर्वेद मनुष्यों, अश्वों, हाथियों के रोगनाशक आयुर्वेद का उपदेश कीजिए। इससे स्पष्ट सिद्ध होता है कि धन्वन्तरि मृतकों को जीवित करने की विद्या जानते थे। चरक के चिकित्सास्थान अ० १ (रसायनपाद) में अश्विनीकुमारों के विषय में लिखा है—'अश्विनौ देवभिषजौ यज्ञवाहाविति स्मृतौ। दक्षस्य हि शिरश्छिन्नं पुनस्ताभ्यां समाहितम् ॥४०॥ प्रशीर्णा दन्ताः पूष्णो नेत्रे नष्टे भगस्य च। वज्रिणश्च भुजस्तम्भस्ताभ्यामेव चिकित्सितः ।४१। चिकित्सितः शशी ताभ्यां गृहीतो राजयक्ष्मणा ॥४२।

इत्यादि कथा को मिथ्या क्यों कहते हैं ? जो उक्त बातें मिथ्या हैं, तो ईसा की बात मिथ्या क्यों नहीं ? जो दूसरे की बात को मिथ्या और अपनी झूंठी को सच्ची कहते हैं, तो हठी क्यों नहीं ? इसलिए ईसाइयों की बातें केवल हठ और लड़कों के समान हैं ॥७१॥

[तथाकथित भूतों को सूअरों में बिठाया]

७२—तब दो भूतग्रस्त मनुष्य कबरस्थान में से निकल उससे आ मिले । जो यहाँ लों अतिप्रचण्ड थे कि उस मार्ग से कोई नहीं जा सकता था । और देखो, उन्होंने चिल्लाके कहा—'हे यीशु ईश्वर के पुत्र ! आपको हमसे क्या काम ? क्या आप समय के आगे हमें पीड़ा देने को यहाँ आये हैं ?'

सो भूतों ने उससे विनती कर कहा—'जो आप हमको निकालते हैं, तो सूअरों के झुण्ड में पैठने दीजिये' । उसने उनसे कहा—जाओ । और वे निकलके सूअरों के झुण्ड में पैठे । और देखो सूअरों का सारा झुण्ड कड़ाड़े[1] पर से समुद्र में दौड़ गया, और पानी में डूब मरा ।

—इं० म० प० ८ । आ० २८, २६, ३१, ३२

[मुर्दों का कबर से निकलकर आना असम्भव है]

समीक्षक—भला यहाँ तनिक विचार करें, तो ये बातें सब झूंठी हैं । क्योंकि मरा हुआ मनुष्य कबरस्थान से कभी नहीं निकल सकता । वे किसी पर न जाते, न संवाद करते हैं । ये सब बातें अज्ञानी लोगों की हैं । जोकि महाजङ्गली हैं, वे ऐसी बातों पर विश्वास लाते हैं ।

[तथाकथित भूतों के साथ बेचारे सूअर क्यों मरवा दिये ?]

और उन सूअरों की हत्या कराई । सूअरवालों की हानि करने का पाप ईसा को हुआ होगा । और ईसाई लोग ईसा को पाप-क्षमा और पवित्र करनेवाला मानते हैं, तो उन भूतों को पवित्र क्यों न कर सका ? और सूअरवालों की हानि क्यों न भर दी ?

क्या आजकल के सुशिक्षित ईसाई अंग्रेज लोग इन गपोड़ों को भी मानते होंगे ? यदि मानते हैं, तो भ्रमजाल में पड़े हैं ॥७२॥

भार्गवश्च्यवनः कामी वृद्धः सन् विकृतिं गतः । वीतवर्णस्वरोपेतः कृतस्ताभ्यां पुनर्युवा ॥४३॥ एतैश्चान्यैश्च बहुभिः कर्मभिर्भिषगुत्तमौ । बभूवतुर्भृशं पूज्याविन्द्रादीनां महात्मनाम् ॥४४॥' अर्थात् अवियों को देववैद्य तथा यज्ञधारी कहा जाता है । दक्ष के कटे सिर को उन्होंने फिर जोड़ दिया । पूषा के टूटे दाँतों, और भग के नष्ट नेत्रों और वज्री भुजस्तम्भ को इन्होंने स्वस्थ किया । राजयक्ष्मा के रोगी शशी की इन्होंने चिकित्सा की । कामातुर, वृद्ध, विकृत भृगुपुत्र च्यवन को, जिसका रंग और स्वर बिगड़ गया था, उन्हें फिर से जवान कर दिया । इन तथा अन्य अनेक कर्मों के द्वारा अश्विनीकुमार इन्द्रादि महात्माओं के अत्यन्त पूज्य हुए । इस अन्तिम बात का स्वयं च्यवन के मुख से भी वर्णन आता है—'अन्धस्य चातिवृद्धस्य भोगहीनस्य कानने । युवाभ्यां नयने दत्ते यौवनं रूपमद्भुतम्' (देवी० ७।५।४६) । अर्थात् मुझ अन्धे, अतिवृद्ध, बनवासी, भोगहीन को तुम दोनों ने नेत्र, यौवन और अद्भुत रूप दिया है ।

७२-७३. नये अनुवाद में 'भूतग्रस्त' के स्थान में 'दुष्टात्माएँ' शब्द आ गया है । परन्तु मूल अंग्रेजी पाठ में 'Demonpossessed' है ।

---

१. अर्थात् ढलाईवाले टीले पर से ।

[एक अर्धाङ्गी का रोग दूर करना]

७३—देखो, लोग एक अर्द्धाङ्गी को, जो खटोले पर पड़ा था, उसके पास लाये। और यीशु ने उनका विश्वास देखके उस अर्द्धाङ्गी से कहा—'हे पुत्र! ढाढस कर। तेरे पाप क्षमा किये गये हैं'। मैं धर्मियों को नहीं, परन्तु पापियों को पश्चात्ताप के लिए बुलाने आया हूँ।

—इं० म० प० ९। आ० २, १३

[पाप कभी क्षमा नहीं होते; अर्धाङ्गी का ठीक होना ढोंग]

समीक्षक—यह भी बात वैसी ही असम्भव है, जैसी पूर्व लिख आये हैं। और जो पाप क्षमा करने की बात है, वह केवल भोले लोगों को प्रलोभन देकर फँसाना है। जैसे दूसरे के पीये मद्य, भाँग और अफीम खाये का नशा दूसरे को नहीं प्राप्त हो सकता, वैसे ही किसी का किया हुआ पाप किसी के पास नहीं जाता। किन्तु जो करता है, वही भोगता है। यही ईश्वर का न्याय है। यदि दूसरे का किया पाप-पुण्य दूसरे को प्राप्त होवे अथवा न्यायाधीश स्वयं ले लेवे, वा कर्त्ताओं ही को यथायोग्य फल ईश्वर न देवे, तो वह अन्यायकारी हो जावे।

देखो, धर्म ही कल्याणकारक है, ईसा वा अन्य कोई नहीं। और धर्मात्माओं के लिए ईसा आदि की कुछ आवश्यकता भी नहीं। और न पापियों के लिए, क्योंकि पाप किसी का नहीं छूट सकता॥७३॥

[बारह शिष्यों को भूतों पर अधिकार देना]

७४—यीशु ने अपने बारह शिष्यों को अपने पास बुलाके उन्हें अशुद्ध भूतों पर अधिकार दिया कि उन्हें निकालें। और हर एक रोग और हर एक व्याधि को चङ्गा करें। बोलनेहारे तो तुम नहीं हो, परन्तु तुम्हारे पिता का आत्मा तुममें बोलता है।

७०वीं आयत में कहा—'कुकर्मियों, दूर हट जाओ' (Away from me you evil doers) जिन्हें कुकर्मी कहकर दूर हट जाने के लिए कहा जा रहा है, उन्हें क्षमादान कैसा? यह तो वदतो व्याघात है। उस समय अंग्रेजों पर कटाक्ष (क्या आजकल के;······पड़े हैं) करना बड़े जीवट का काम था। यह ग्रन्थ-कार की निर्भीकता का ज्वलन्त प्रमाण है। नये अनुवाद में 'पश्चात्ताप के लिए' शब्द निकाल दिये गये हैं। अंग्रेजी में भी अब ये शब्द नहीं हैं। धर्मियों की उपेक्षा करके ईसा ने पापियों का आह्वान क्यों किया? इसका समाधान १२वीं आयत में इन शब्दों में दिया है—'It is not the healthy, but the sick who need a doctor' अर्थात् डाक्टर की आवश्यकता रोगियों को होती है, स्वस्थ लोगों को नहीं।

जो करता है, वही भोगता है कार्य-कारण सम्बन्ध की तरह यह सार्वभौम एवं सार्वकालिक नियम है। कर्म transferable नहीं होते। 'यथा धेनुसहस्रेषु वत्सो विन्दते मातरम्, तथा पूर्वकृतं कर्म कर्तारमनुगच्छति'—जिस प्रकार बछड़ा हजारों गौओं में अपनी माता को खोजकर उससे जा लगता है, उसी प्रकार किया हुआ कर्म अपने कर्ता को जा पकड़ता है। ईसामसीह सबके पापों की गठरी लेकर सूली पर चढ़ गया, यह सर्वथा मिथ्या है और लोगों को बहकाकर ईसाई धर्म की ओर प्रेरित करने का ढोंग है।

७४. **ईसा का १२ शिष्यों को उपदेश**—"Jesus called his twelve disciples to him and gave them authority to drive out evil spirits and to heal every disease and sickness. These twelve Jesus sent out with the following instructions—

Do not suppose that I have come to bring peace to the earth. I did not come to bring peace, but a sword. For I have come to turn a man against his father, a daughter against

मत समझो कि मैं पृथिवी पर मिलाप करवाने को आया हूँ। मैं मिलाप करवाने को नहीं, परन्तु खड्ग चलवाने को आया हूँ। मैं मनुष्य को उसके पिता से, और बेटी को उसकी माँ से, और पतोहू को उसकी सास से अलग करने आया हूँ। मनुष्य के घर ही के लोग उसके बैरी होंगे।

—इं० म० प० १० । आ० १, २०, ३४-३६

[भूतों का आना और विना इलाज रोग दूर होना असम्भव]

समीक्षक—ये वे ही शिष्य हैं, जिनमें से एक ३० तीस रुपये[1] के लोभ पर ईसा को पकड़ावेगा, और अन्य बदलकर अलग-अलग भागेंगे। भला, ये बात जब विद्या ही से विरुद्ध हैं कि भूतों का आना वा निकालना, विना औषध वा पथ्य के व्याधियों का छूटना सृष्टिक्रम से असम्भव है। इसलिए ऐसी-ऐसी बातों का मानना अज्ञानियों का काम है।

---

her mother, a daughter-in-law against her mother-in-law. A man's enemies will be the members of his own household." (Matthew 10)

अर्थात् ईसा ने अपने बारह शिष्यों को अपने पास बुलाकर अशुद्ध भूतों को निकालकर हर रोग और व्याधि को दूर करने का अधिकार दिया। यह मत समझो कि मैं पृथिवी पर शान्ति की स्थापना करने आया हूँ। मैं अपने साथ शान्ति नहीं, तलवार लेकर आया हूँ। मैं यहाँ भाई को भाई से, पुत्र को पिता से, पुत्री को माता से और बहू को सास से लड़ाने आया हूँ। मनुष्य के शत्रु उसके अपने परिवार के सदस्य होंगे। और तब—

"Brother will betray brother to death and a father his child, children will rebel against their parents and have them put to death." (Ibid)। भाई-भाई को धोखे से मारेगा, बाप अपने बेटे को। बच्चे अपने माता-पिता को मरवायेंगे।

यहाँ भी नये अनुवाद में disease के स्थान में infirmity करके उसका अर्थ 'व्याधि' किया है किन्तु बाइबल के अंग्रेजी संस्करणों में अभी भी disease ही मिलता है। प्रचारार्थ श्रद्धा पैदा करने के लिए तो कहते हैं कि ईसा पर ईमान लाने से सब प्रकार की आधि-व्याधि शान्त हो जाती हैं। परन्तु उन्हें स्वयं इसपर विश्वास नहीं है। यदि ऐसा होता तो अपने लिए तो हस्पताल या डाक्टरों की व्यवस्था ही न करते, दूसरों के लिए भी गिरजाघरों से ही काम बन जाता। संसार-भर में जहाँ-जहाँ ईसाई रहते हैं, वहाँ-वहाँ तो करोड़ों-अरबों रुपयों का अपव्यय न होता—न हस्पताल होते, न नर्सिंग होम और न डाक्टर आदि। न मेडिकल कालिजों की आवश्यकता होती और न दवाइयों की। ईसामसीह पर ईमान लानेवालों को पाप नहीं लगता तो अदालतों और पुलिस की क्या आवश्यकता है? ईसाइयों के हस्पतालों में प्रवेश पर रोक लग जानी चाहिए। उनका प्रवेश गिरजाघरों तक सीमित रहना चाहिए।

तीस रुपये का लोभ--तीस रुपये के बदले ईसामसीह की हत्या के षड्यन्त्र का मुखिया यहूदाह इसकरियोती (Judas Iscariot) था। इस षड्यन्त्र का पूरा वर्णन मती (Matthew) की इञ्जील के २६-२८ पर्वों में मिलता है। "This one of the twelve disciples of Jesus Christ went to the chief priests and asked—'What are you willing to give me is I hand him (Jesus) over to you?' So they counted out for him thirty silver coins. From then on Judas watched for an opportunity to hand him over". अर्थात् बारह शिष्यों में से एक-यहूदाह इसकरियोती महायाजकों से बोला—यदि मैं

---

१. द्रष्टव्य—८५ समीक्षांश। ८८ समीक्षांश भी द्रष्टव्य।

[जीव में यदि ईश्वर बोलता है, तो वही फल भोगेगा]

यदि जीव बोलनेहारे नहीं, ईश्वर बोलनेहारा है, तो जीव क्या काम करते हैं ? और सत्य वा मिथ्याभाषण का फल सुख वा दुःख को ईश्वर ही भोगता होगा ? यह भी एक मिथ्या बात है।

[लोगों में फूट डालना बुरी बात है]

और जैसा ईसा फूट कराने और लड़ाने को आया था, वही आजकल कलह लोगों में चल रहा है। यह कैसी बड़ी बुरी बात है कि फूट कराने से सर्वथा मनुष्यों को दुःख होता है। और ईसाइयों ने इसी को गुरुमन्त्र समझ लिया होगा। क्योंकि एक-दूसरे की फूट ईसा ही अच्छा मानता था, तो ये क्यों नहीं मानते होंगे ?[1] यह ईसा ही का काम होगा कि घर के लोगों के शत्रु घर के लोगों को बनाना। यह श्रेष्ठ पुरुष का काम नहीं ॥७४॥

ईसा को पकड़कर तुम्हारे हवाले कर दूँ तो इसके बदले तुम मुझे क्या दोगे ? उन्होंने उसे चाँदी के तीस सिक्के दे दिये। तब से वह ईसा को पकड़वाने के अवसर को ढूँढता रहा। ईसा को अपनी मृत्यु का आभास हो गया था। एक दिन वह प्रार्थना के बाद अपने शिष्यों से बोला—'Look, the hour is near and the son of Man is betrayed into the hands of sinners. Rise, let us go. Here comes my betrayer.' देखो, घड़ी आ पहुँची है। मनुष्य का पुत्र पापियों के हाथों में पड़नेवाला है। उठो, चलो, मुझे पकड़वानेवाला आ रहा है।···

"While he was speaking, Judas, one of the twelve arrived. With him was a large crowd armed with swords and clubs, sent by the chief priests and the elders of the people. Now the betrayer had arranged a signal with them, 'the one I kiss, is the man, arrest him. Going at once to Jesus, Judas said, 'Greetings to Rabbi' and kissed him. Jesus was arrested. Then all the disciples deserted him and fled." (Katthew 26).

अभी वह बोल ही रहा था कि यहूदाह आ पहुँचा। उसके साथ महायाजकों तथा मुखियों द्वारा भेजी हुई भीड़ थी जो तलवारों और लाठियों से लैस थी। ईसा को पकड़नेवालों को पकड़वानेवाले ने समझा दिया हुआ था कि जिसे मैं चूमूं उसको पकड़ लेना। वह तुरन्त ईसा के पास गया और बोला—'हे गुरु प्रणाम' और चूमा। जीसस पकड़ा गया। उसके शिष्य उसे छोड़कर भाग गये। फाँसी पर चढ़ते समय "Jesus cried out in a loud voice—'Eloi, Eloi, lama sabachthani'—which means, My God, my God, why have you forsaken me ?"–हे मेरे ईश्वर ! तूने मुझे क्यों त्याग दिया ? 'He cried out in a loud voice and gave up his spirit.' उपस्थित लोगों ने व्यंग किया– 'Let God rescue him now if he wants him, for he said 'I am the only son of God'. अब परमात्मा उसे बचाये यदि वह उसे प्यारा है, क्योंकि वह अपने को ईश्वर का इकलौता बेटा कहता था।

ग्रन्थकार ऋषि दयानन्द के अन्तिम शब्द थे—'हे दयामय, हे ईश्वर ! तेरी यही इच्छा है, परमात्मदेव, तेरी इच्छा पूर्ण हो। अहा ! मेरे परमेश्वर, तैंने अच्छी लीला की।' इन शब्दों का उच्चारण करते ही, ब्रह्मर्षि ने आत्मिक प्राण को ब्रह्मरन्ध्र द्वारा परमधाम जाने के लिए स्वर्गसोपान पर आरूढ़ किया और तत्पश्चात् पवनरूप प्राण को कुछ पल तक भीतर रोककर प्रणवनाद के साथ बाहर निकाल

---

१. यही कारण है कि अंग्रेज आदि पश्चिमी-देशवासी जहाँ भी गये, वहाँ सर्वत्र उस देश में बसनेवाली विभिन्न जातियों एवं वर्गों को आपस में लड़ाकर उन्होंने अपना प्रभुत्व जमाया।

[सात रोटियों से ४ सहस्र की तृप्ति]

७५—तब यीशु ने उनसे कहा—तुम्हारे पास कितनी रोटियाँ हैं ? उन्होंने कहा सात, और थोड़ी-सी छोटी मछलियाँ। तब उसने लोगों को भूमि पर बैठने की आज्ञा दी। तब उसने उन सात रोटियों को और मछलियों को लेके धन्य मानके तोड़ा, और अपने शिष्यों को दिया, और शिष्यों ने लोगों को दिया। सो सब खाके तृप्त हुए। और जो टुकड़े बचे रहे, उनके सात टोकरे भरे उठाये। जिन्होंने खाया, सो स्त्रियों और बालकों को छोड़ चार सहस्र पुरुष थे। —इं० म०, प० १५। आ० ३४-३८

[ईसा ऐसा सिद्ध था, तो भूख में गूलर क्यों खाता था ?]

समीक्षक—अब देखिये, क्या यह आजकल के झूठे सिद्धों और इन्द्रजाली आदि के समान छल की बात नहीं है ? उन रोटियों में अन्य रोटियाँ कहाँ से आ गईं ? यदि ईसा में ऐसी सिद्धियाँ होतीं, तो आप भूखा हुआ गूलर के फल खाने को क्यों भटका करता था ?[1] अपने लिए मिट्टी, पानी और पत्थर आदि से मोहनभोग रोटियाँ क्यों न बनालीं ? ये सब बातें लड़कों के खेलपन की हैं। जैसे कितने ही साधु वैरागी ऐसी छल की बातें करके भोले मनुष्यों को ठगते हैं, वैसे ही ये भी हैं ॥७५॥

[हर एक कर्मानुसार फल पावेगा]

७६—और तब वह हर एक मनुष्य को उसके कार्य के अनुसार फल देगा।

—इं० म० प० १६। आ० २७

[कर्मानुसार फल मिलेगा, तो पाप-क्षमा की बात व्यर्थ]

समीक्षक—जब कर्मानुसार फल दिया जायेगा, तो ईसाइयों का पाप-क्षमा होने का उपदेश करना व्यर्थ है। और वह सच्चा हो, तो यह झूंठा होवे। यदि कोई कहे कि क्षमा करने के योग्य क्षमा किये जाते और क्षमा न करने योग्य क्षमा नहीं किये जाते हैं, यह भी ठीक नहीं। क्योंकि सब कर्मों के फल यथायोग्य देने ही से न्याय और पूरी दया होती है ॥७६॥

दिया। न किसी तरह की उलाहना और न चीखना चिल्लाना। यह अन्तर है परमेश्वर का इकलौता बेटा होने का दम्भ करनेवाले और स्वाभाविक रूप से जन्म-जन्मान्तर में उसका आज्ञाकारी बेटा होनेवाले में—'अर्य्यस्य इमे आर्य्याः, आर्य्यः ईश्वरपुत्रः'।

७५. सात की इतनी रोटियाँ बना देना कि चार सहस्र मनुष्यों के खाने पर भी बची रह जाएँ, सर्वथा असम्भव है। यह तो अभाव से भाव की उत्पत्ति के समान है, जो किसी प्रकार सम्भव नहीं। 'मुखमस्तीति वक्तव्यं दशहस्ता हरीतकी' के सदृश है। कागज और कलम है तो जो चाहो लिख डालो। **गूलर के फल** यहाँ ग्रन्थकार का संकेत मत्तीरचित इंजील पर्व २१ आयत १८, १९ की ओर है। इसपर **संख्या ८१** में विचार किया गया है।

७६. कर्मानुसार फल देने का पाप-क्षमा करने के साथ सामंजस्य नहीं हो सकता। हत्यारे को न्यायप्रक्रिया के अनुसार कारागार में डाल देना 'कर्मानुसार फल देना' है। हत्यारे को हत्या का अपराधी घोषित करके छोड़ देना क्षमा करना है, जो कर्मानुसार फल देने का विरोधी है।

१. द्रष्टव्य—संख्या ८१ समीक्ष्यांश।

[तनिक से विश्वास से असम्भव भी सम्भव]

७७—हे अविश्वासी और हठीले लोगो ! मैं तुमसे सत्य कहता हूँ । यदि तुमको राई के एक दाने के तुल्य विश्वास हो तो तुम इस पहाड़ से जो कहोगे कि यहाँ से वहाँ चला जाय, वह चला जायगा । और कोई काम तुमसे असाध्य नहीं होगा । —इं० म० प० १७ । आ० १७, २०

[विश्वास कराकर शिष्य को क्यों न पवित्र किया !]

समीक्षक—अब जो ईसाई लोग उपदेश करते फिरते हैं कि—'आओ हमारे मत में, पाप क्षमा कराओ, मुक्ति पाओ' आदि, वह सब मिथ्या बात है । क्योंकि जो ईसा में पाप छुड़ाने विश्वास जमाने और पवित्र करने का सामर्थ्य होता, तो अपने शिष्यों के आत्माओं को निष्पाप विश्वासी पवित्र क्यों न कर देता ?[1] जो ईसा के साथ-साथ घूमते थे, जब उन्हीं को शुद्ध विश्वासी और कल्याणकारी न कर सका, तो वह मरे पर न जाने कहाँ हैं ? इस समय किसी को पवित्र नहीं कर सकेगा ।

[विश्वासरहित चेलों की बनाई इंजील प्रमाण के अयोग्य]

जब ईसा के चेले राईभर विश्वास से रहित थे, और उन्होंने यह इंजील पुस्तक बनाई है[2], तब इसका प्रमाण नहीं हो सकता । क्योंकि जो अविश्वासी अपवित्रात्मा अधर्मी मनुष्यों का लेख होता है, उस पर विश्वास करना कल्याण की इच्छा करनेवाले मनुष्यों का काम नहीं । और इसी से यह भी सिद्ध हो सकता है कि जो ईसा का यह वचन सच्चा है, तो किसी ईसाई में एक राई के दाने के समान विश्वास अर्थात् ईमान नहीं है ।

[क्या विश्वासी ईसाई किसी पहाड़ को हटा सकते हैं ?]

जो कोई कहे कि हममें पूरा वा थोड़ा विश्वास है, तो उससे कहना कि आप इस पहाड़ को मार्ग में से हठा देवें । यदि उनके हठाने से हठ जाये, तो भी पूरा विश्वास नहीं, किन्तु एक राई के दाने के बराबर है । और जो न हठा सके, तो समझो एक छींटा भी विश्वास ईमान अर्थात् धर्म का ईसाइयों में नहीं है ।

[असम्भव बात कहने से ईसा की अज्ञानता प्रकट होती है]

यदि कोई कहे कि यहाँ अभिमान आदि दोषों का नाम पहाड़ है, तो भी ठीक नहीं । क्योंकि जो ऐसा हो, तो मुरदे अन्धे कोढ़ी भूतग्रस्तों को चङ्गा करना भी आलसी अज्ञानी विषयी और भ्रान्तों को बोध करके सचेत कुशल किया होगा । जो ऐसा मानें तो भी ठीक नहीं । क्योंकि जो ऐसा होता, तो

---

७७. पर्वत जड़ एवं स्थावर है, उसमें किसी भी अवस्था में गति नहीं हो सकती । गति करना तो दूर अचेतन एवं निरिन्द्रिय होने से वह मनुष्य के आदेश को सुनने में भी असमर्थ है । संसार-भर में कोई एक तो विश्वास रखनेवाला ईसाई होगा । सरसों के दाने के बराबर नहीं, पर्वत के बराबर जिसका विश्वास हो, वह सरसों के दाने को ही आदेश देकर तनिक-सा हिलाकर दिखा दे तो उसके कथन की परीक्षा हो जाये ।

---

१. द्रष्टव्य—समीक्ष्यांश संख्या ८५ तथा ८८ । यीशु को उन्हीं के एक शिष्य ने पकड़वाया ।

२. ईसा के उपदेशों का संकलन ईसा के शिष्यों ने किया ।

स्वशिष्यों को ऐसा क्यों न कर सकता ? इसलिये असम्भव बात कहना ईसा की अज्ञानता का प्रकाश करता है।

[इस शिक्षा के युग में ईसा की क्या गणना ?]

भला जो कुछ भी ईसा में विद्या होती, तो ऐसी अटाटूट जंगलीपन की बातें क्यों कह देता ? तथापि **'यत्र देशे द्रुमो नास्ति तत्रैरण्डोऽपि द्रुमायते'**[1], जैसे जिस देश में कोई भी वृक्ष न हो, तो उस देश में एरण्ड का वृक्ष सबसे बड़ा और अच्छा गिना जाता है, वैसे महाजंगली अविद्वानों के देश में ईसा का भी होना ठीक था। पर आजकल ईसा की क्या गणना हो सकती है ? ॥७७॥

[बालक जैसा बने विना स्वर्ग नहीं]

७८—मैं तुम्हें सच कहता हूँ, जो तुम मन न फिराओ, और बालकों के समान न हो जाओ, तो स्वर्ग के राज्य में प्रवेश करने न पाओगे। —इं० म० प० १८। आ० ३

[विद्याविरुद्ध बातें बाल-बुद्धि ही मान सकते हैं]

समीक्षक—जब अपनी ही इच्छा से मन का फिराना स्वर्ग का कारण, और न फिराना नरक का कारण है, तो कोई किसी का पाप-पुण्य कभी नहीं ले सकता, ऐसा सिद्ध होता है और बालक के समान होने के लेख से यह विदित होता है कि ईसा की बातें विद्या और सृष्टिक्रम से बहुत-सी विरुद्ध थीं। और यह भी उसके मन में था कि लोग मेरी बातों को बालक के समान मान लें, पूछें-गाछें कुछ भी नहीं। आँख मीचके मान लेवें।

बहुत-से ईसाइयों की बालबुद्धिवत् चेष्टा है। नहीं तो ऐसी युक्ति विद्या से विरुद्ध बातें क्यों मानते ? और यह भी सिद्ध हुआ कि जो ईसा आप विद्याहीन बालबुद्धि न होता, तो अन्य को बालवत् बनने का उपदेश क्यों करता ? क्योंकि जो जैसा होता है, वह दूसरे को भी अपने सदृश बनाना चाहता ही है ॥७८॥

७९—मैं तुमसे सच कहता हूँ—'धनवानों को स्वर्ग के राज्य में प्रवेश करना कठिन होगा।' फिर भी मैं तुमसे कहता हूँ कि—'ईश्वर के राज्य में धनवान् के प्रवेश करने से ऊँट का सुई के नाके में से जाना सहज है।' —इं० म० प० १९। आ० २३, २४

'If curing the blind or restoring to life the dead be taken in allegorical sense, then the whole theory of Christ's being the son of God and performing miracles topples down and there remains no such thing as christianity'. (Ganga Prasad Upadhyaya).

७८. किसी का पाप-पुण्य होना—'The reference is to the Christian belief that Jesus Christ took upon himself the sins of all men and sacrificed himself as atonement for the sins of all.' (G.P. Upadhyaya).

७९. वेद का आदेश है—'शतहस्त समाहर सहस्रहस्त संकिर' सौ हाथों से कमाओ और हज़ार हाथों से बांटो। साथ ही कहा है—'अग्ने नय सुपथा राये' हे परमेश्वर ! मुझे सुपथ अर्थात् सचाई और ईमानदारी से धन की प्राप्ति कराओ। फिर कहा—'त्यक्तेन भुंजीथा:' त्याग भाव से भोग करो। 'A wise

---

१. यह सूक्ति अन्यत्र भी उद्धृत है। वहाँ 'यत्र' के स्थान में 'यस्मिन्' पाठ है।

[क्या सभी धनवान् दुष्ट होते हैं ?]

समीक्षक—इससे यह सिद्ध होता है कि ईसा दरिद्र था। धनवान् लोग उसकी प्रतिष्ठा नहीं करते होंगे। इसलिए यह लिखा होगा। परन्तु यह बात सच नहीं। क्योंकि धनाढ्यों और दरिद्रों में अच्छे-बुरे होते हैं। जो कोई अच्छा काम करे वह अच्छा, और जो बुरा करे वह बुरा फल पाता है।

[क्या ईश्वर का राज्य सर्वत्र नहीं है ?]

और इससे यह भी सिद्ध होता है कि ईसा ईश्वर का राज्य किसी एक देश में मानता था, सर्वत्र नहीं। जब ऐसा है, तो वह ईश्वर ही नहीं। जो ईश्वर है, उसका राज्य सर्वत्र है। पुनः उसमें प्रवेश करेगा वा न करेगा, यह कहना केवल अविद्या की बात है।

[ईसा के मतानुसार सब धनिक ईसाई नरकगामी होंगे]

और इससे यह भी आया कि जितने ईसाई धनाढ्य हैं, क्या वे सब नरक ही में जायेंगे ? और दरिद्र सब स्वर्ग में जायेंगे ? भला तनिक-सा विचार तो ईसामसीह करते कि जितनी सामग्री धनाढ्यों के पास होती है, उतनी दरिद्रों के पास नहीं। यदि धनाढ्य लोग विवेक से धर्ममार्ग में व्यय करें, तो दरिद्र नीच गति में पड़े रहें, और धनाढ्य उत्तम गति को प्राप्त हो सकते हैं ॥७६॥

[ईसाइयों को स्वर्ग में सिंहासन; त्याग का १०० गुणा फल]

८०—यीशु ने उनसे कहा, मैं तुमसे सच कहता हूँ कि—'नई सृष्टि में जब मनुष्य का पुत्र अपने ऐश्वर्य के सिंहासन पर बैठेगा, तब तुम भी, जो मेरे पीछे हो लिए हो, बारह सिंहासनों पर बैठके इस्राएल के बारह कुलों का न्याय करोगे।

जिस किसी ने मेरे नाम के लिये घरों वा भाइयों वा बहिनों वा पिता वा माता वा स्त्री वा लड़कों वा भूमि को त्यागा है, सो सौ गुणा पावेगा, और अनन्त जीवन का अधिकारी होगा ॥

—इं० म० प० १९। आ० २८, २९

[स्वर्ग में ईसाइयों को ही सिंहासन की बात पक्षपातपूर्ण]

समीक्षक—अब देखिये, ईसा के भीतर की लीला कि मेरे जाल से मरे पीछे भी लोग न निकल जायें। और जिसने ३०) रुपये के लोभ से अपने गुरु को पकड़ा मरवाया[1], वैसे पापी भी इसके पास सिंहासन पर बैठेंगे।

---

would desire what he can get justly, use soberly, distribute cheerfully and leave contentedly. ऐसे धनाढ्य के लिए स्वर्ग के द्वार कभी बन्द नहीं हो सकते। न स्वर्ग किसी स्थानविशेष का नाम है और न ईश्वर किसी स्थानविशेष में रहता है। सर्वव्यापी परमेश्वर का सर्वत्र राज्य है और ईश्वर की आज्ञाओं का पालन करनेवाला जहाँ भी रहता है उसके लिए वहीं स्वर्ग है। यही युक्तियुक्त विचार है। इसलिए ईसामसीह का विचार मिथ्या है।

८०. यह अंधेर नगरी के गवर्गण्ड राजा का न्याय है, जिसमें भाजी और खाजा एक ही भाव बिकते थे। इससे आगे (मत्ती की इंजील पर्व २० आयत १-१६) एक घटना में ईसा के कुछ मजदूरों से

१. द्र०—संख्या ८५ समीक्ष्यांश, तथा ८८ समीक्ष्यांश।

[इस्रायेल के कुल का न्याय क्यों न किया जायेगा ?]

और इस्रायेल के कुल का पक्षपात से न्याय ही न किया जायगा। किन्तु उनके सब गुनाह माफ और अन्य कुलों का न्याय करेंगे। अनुमान होता है, इसी से ईसाई लोग ईसाइयों का बहुत पक्षपात कर किसी गोरे ने काले को मार दिया हो, तो भी बहुधा पक्षपात से निरपराधी कर छोड़ देते हैं।[1] ऐसा ही ईसा के स्वर्ग का भी न्याय होगा।

[एक साथ ही सबका न्याय होना अन्याय है]

और इससे बड़ा दोष आता है। क्योंकि एक सृष्टि की आदि में मरा, और एक कयामत की रात के निकट मरा। एक तो आदि से अन्त तक आशा ही में पड़ा रहा कि कब न्याय होगा ? और दूसरे का उसी समय न्याय हो गया। यह कितना बड़ा अन्याय है ?

[सदा के लिये स्वर्ग-नरक की प्राप्ति भी दोषपूर्ण]

और जो नरक में जायगा, सो अनन्तकाल तक नरक भोगेगा, और जो स्वर्ग में जायगा वह सदा स्वर्ग भोगेगा, यह भी बड़ा अन्याय है। क्योंकि अन्तवाले साधन और कर्मों का फल अन्तवाला होना चाहिए।

[सबके कर्म समान नहीं, तो फल समान कैसे ?]

और तुल्य पाप वा पुण्य दो जीवों का कभी नहीं हो सकता। इसलिये तारतम्य से अधिक न्यून सुख-दुःखवाले अनेक स्वर्ग और नरक हों, तभी यथाकर्म सुख-दुःख भोग सकते हैं। सो ईसाइयों के पुस्तक में कहीं व्यवस्था नहीं। इसलिये यह पुस्तक ईश्वरकृत वा ईसा ईश्वर का बेटा कभी नहीं हो सकता।

[स्वर्ग में प्रत्येक वस्तु का सौगुणा मिलना हास्यजनक]

यह बड़े अनर्थ की बात है कि कदापि किसी के माँ-बाप सौ-सौ नहीं हो सकते[2], किन्तु एक की एक माँ और एक ही बाप होता है। अनुमान है कि मुसलमानों ने जो 'एक को ७२ स्त्रियाँ बहिश्त में मिलती हैं' लिखा है, सो यहीं से लिया होगा ॥८०॥

काम कराने की कथा है, जिसमें जितने पैसे शाम को मात्र एक घण्टा काम करनेवालों को दिये गये, उतने ही सारा दिन काम करनेवालों को दिये गये। जब सारा दिन काम करनेवालों ने इस अन्याय के विरुद्ध शिकायत की तो उत्तर मिला—'I want to give the man who was hired last the same as I gave you. Don't I have the right to do what I want with my money ?' जिस आदमी को मैंने अन्त में (सायंकाल) काम पर रक्खा था, उसे भी मैं उतना ही पारिश्रमिक देना चाहता हूँ, जितना सारा दिन काम करनेवालों को। क्या मुझे यह अधिकार नहीं है कि मैं अपने पैसे का जो चाहूँ, करूँ ? ऐसा है ईसा का न्याय। भाई-बहन, पत्नी आदि तो कितने ही हो सकतते हैं, किन्तु माता-पिता का सैकड़ों में होना असम्भव है।

---

१. अंग्रेजी राज्य के प्रारम्भिक काल में इस निर्भीकता से लिखना विशेष साहस का काम था।
२. 'जो माँ बाप को त्यागेगा, वह भी सौ गुणा पायेगा, अर्थात् सौ-सौ माँ बाप पायेगा' को समीक्षा है।

[गूलर के वृक्ष को शाप]

८१—भोर को जब वह नगर को फिर जाता था, तब उसको भूख लगी ॥ और मार्ग में एक गूलर का वृक्ष देखके वह उसके पास आया। परन्तु उसमें और कुछ न पाया सिवा पत्ते के। और उसको कहा—तुझमें फिर कभी फल न लगेंगे। इस पर गूलर का पेड़ तुरन्त सूख गया ॥

—इ० म० प० २१। आ० १८, १९

[पेड़ों तक को शाप देना क्रोध की पराकाष्ठा]

समीक्षक—सब पादरी लोग ईसाई कहते हैं कि वह बड़ा शान्त शमान्वित और क्रोधादि-दोष-रहित था। परन्तु इस बात को देखने से ज्ञात होता है कि क्रोधी और ऋतु का ज्ञानरहित ईसा था। और वह जङ्गली मनुष्यपन के स्वभावयुक्त वर्त्तता था। भला जो वृक्ष जड़ पदार्थ है, उसका क्या अपराध था कि उसको शाप दिया, और वह सूख गया? इसके शाप से तो न सूखा होगा, किन्तु कोई ऐसी ओषधि डालने से सूख गया हो, तो आश्चर्य नहीं ॥८१॥

[तारों का गिरना; आकाश की सेना का डिगना]

८२—उन दिनों क्लेश के पीछे तुरन्त सूर्य अँधियारा हो जायगा। और चाँद अपनी ज्योति न

---

८१. गुरु-शिष्य चले जा रहे थे। देखा कि एक किसान खेत में काम कर रहा था। अपने जूते उसने खेत के बाहर उतारकर रख दिये थे। शिष्य बोला—गुरुजी! मैं एक जूता कहीं छिपा देता हूँ। जब किसान काम से निवृत्त होकर एक जूता न मिलने पर दुःखी हो,इधर-उधर देखेगा तो कैसा मज़ा आवेगा! गुरुजी बोले—बेटा, इसके एक जूते में चाँदी का एक रुपया रख दो। जब यह जूते पहनने लगेगा तो पाँव में कुछ चुभता-सा लगेगा और उसमें एक रुपया देखकर प्रसन्न हो इधर-उधर देखेगा तो कैसा आनन्द आयेगा। गूलर के वृक्ष को सूखने तथा सदा के लिए फलहीन होने का शाप न देकर उसे तत्काल और सदा हरा-भरा रहकर फल देने का वरदान देता तो अपनी भी भूख शान्त हो जाती और लोगों की भूख शान्त करने का साधन बन जाता और ईसामसीह की अलौकिक शक्ति का प्रदर्शन भी हो जाता। न खाना, न खाने देना—ऐसे लोगों के विषय में भर्तृहरि कहते हैं—

एके सत्पुरुषाः परार्थघटकाः स्वार्थं परित्यज्य ये,
सामान्यास्तु परार्थमुद्यमभृतः स्वार्थाविरोधेन ये।
तेऽमी मानुषराक्षसाः परहितं स्वार्थाय निघ्नन्ति ये,
ये निघ्नन्ति निरर्थकं परहितं ते के न जानीमहे ॥ नीतिशतक ६४ ॥

संसार में वे लोग सत्पुरुष हैं, जो अपने स्वार्थ को तिलाञ्जलि देकर दूसरों की भलाई करते हैं। जो सामान्यजन हैं, वे अपने काम को न बिगाड़ते हुए दूसरों की भलाई करते हैं। वे राक्षस हैं, जो अपना कार्य सिद्ध करने के लिए दूसरों के बने-बनाये काम को बिगाड़ देते हैं। परन्तु जो लोग बिना किसी स्वार्थ के व्यर्थ ही दूसरों के हित की हानि करते हैं, वे कौन हैं, अथवा उन्हें किस नाम से पुकारा जाय, हम नहीं जानते। वे लोग निकृष्टतम हैं।

ईसामसीह इस चतुर्थ श्रेणी में आते हैं। न खायेंगे, न खाने देंगे, इस प्रयोजन से उन्होंने एक पेड़ को फलहीन हो जाने का शाप दे दिया।

८२. इलाहाबाद मिशन प्रेस द्वारा १८९६ ई० में प्रकाशित हिन्दी अनुवाद में 'आकाश की सेना' शब्द हैं। परन्तु International Bible Society द्वारा प्रकाशित बाइबल की New International

देगा, तारे आकाश से गिर पड़ेंगे। और आकाश की सेना डिग जायगा ॥
—इं० म० प० २४। आ० २९

[तारों का गिरना, और आकाश की सेना बताना अल्पज्ञता]

समीक्षक—वाह जी ईसा! तारों को किस विद्या से गिर पड़ना आपने जाना? और आकाश की सेना कौन-सी है, जो डिग जायगी? जो कभी ईसा थोड़ी भी विद्या पढ़ता, तो अवश्य जान लेता कि ये तारे सब भूगोल हैं, क्योंकर गिरेंगे? इससे विदित होता है कि ईसा बढ़ई के कुल में उत्पन्न हुआ था। सदा लकड़े चीरना छीलना काटना और जोड़ना करता रहा होगा। जब तरङ्ग उठा कि मैं भी इस जङ्गली देश में पैगम्बर हो सकूंगा, बातें करने लगा।

कितनी बातें उसके मुख से अच्छी भी निकलीं, और बहुत-सी बुरी। वहाँ के लोग जङ्गली थे, मान बैठे। जैसा आजकल यूरोप देश उन्नतियुक्त है, वैसा पूर्व होता तो इसकी सिद्धाई कुछ भी न चलती। अब कुछ विद्या हुए पश्चात् भी व्यवहार के पेच और हठ से इस पोल मत को न छोड़कर सर्वथा सत्य वेदमार्ग की ओर नहीं झुकते, यही इनमें न्यूनता है ॥८२॥

[मेरी बात कभी न टलेगी]

८३—आकाश और पृथिवी टल जायेंगे, परन्तु मेरी बातें कभी न टलेंगी ॥
—इं० म० प० २४। आ० ३५

[क्या आकाश भी कभी हिल सकता है?]

समीक्षक—यह भी बात अविद्या और मूर्खता की है। भला आकाश हिलकर कहाँ जायगा? जब आकाश अतिसूक्ष्म होने से नेत्र से दीखता नहीं, तो इसका हिलना कौन देख सकता है? और अपने मुख से अपनी बड़ाई करना अच्छे मनुष्यों का काम नहीं ॥८३॥

[वामपक्षी नरक की अनन्त आग में]

८४—तब वह उनसे, जो बाँई ओर हैं कहेगा—'हे स्रापित लोगो! मेरे पास से उस अनन्त आग में जाओ, जो शैतान और उसके दूतों के लिये, तैयार की गई है ॥'[1] —इं० म० प० २५। आ० ४१

---

version में 'आकाश की सेना' के स्थान में 'Heavenly bodies' है, जो ग्रन्थकार की समीक्षा के बाद किया हुआ संशोधन प्रतीत होता है। नये अनुवाद में 'आकाश की शक्तियाँ' कर दिया है। परन्तु इससे ग्रन्थकार का आक्षेप नहीं हट सका। प्रश्न वैसा ही बना है—'आकाश की शक्तियाँ कौन-सी हैं, जो डिग जायेंगी?'

८४. अनन्त आग भेजना—ईसा के इस क्रोध का कारण अगली आयतों को पढ़ने से मालूम होता है। वहाँ लिखा है—"You are cursed into the eternal fire, for I was hungry and you gave me nothing to eat, I was thirsty and you gave me nothing to drink, I was a stranger ond you did not invite me, I needed clothes and you did not clothe me, I was sick and in prison and you did not look after me." (Matthew, 25, 42-43) अर्थात् ईसा ने आग में जाने का दण्ड इसलिए दिया 'क्योंकि मैं भूखा था और तुम लोगों ने मुझे खाने को कुछ नहीं दिया, मैं प्यासा था और तुमने मुझे

---

१. तुलना करो—१४वां समुल्लास, समीक्ष्यांश ८।

[अपने शिष्यों को स्वर्ग और दूसरों को नरक की बात पक्षपात]

समीक्षक—भला यह कितनी बड़ी पक्षपात की बात है, जो अपने शिष्य हैं उनको स्वर्ग, और जो दूसरे हैं उनको अनन्त आग में गिराना? परन्तु जब आकाश ही न रहेगा लिखा है, तो अनन्त आग नरक बहिश्त कहाँ रहेगी?

[जो शैतान को भी वश में न कर सका, वह क्या ईश्वर?]

जो शैतान और उसके दूतों को ईश्वर न बनाता, तो इतनी नरक की तैयारी क्यों करनी पड़ती? और एक शैतान ही ईश्वर के भय से न डरा, तो वह ईश्वर ही क्या है? क्योंकि उसी का दूत होकर बागी हो गया। और ईश्वर उसको प्रथम ही पकड़कर बन्दीगृह में न डाल सका, न मार सका, पुनः उसकी ईश्वरता क्या? जिसने ईसा को भी चालीस दिन दुःख दिया, ईसा भी उसका कुछ न कर सका, तो ईश्वर का बेटा होना व्यर्थ हुआ। इसलिये ईसा ईश्वर का न बेटा, और न बाइबल का ईश्वर, ईश्वर हो सकता है ॥८४॥

[एक शिष्य ने लोभ के वश हो यीशु को पकड़वाया]

८५—तब बारह शिष्यों में से एक यहूदाह इसकरियोती[1] नाम एक शिष्य प्रधान याजकों के पास गया ॥ और कहा—'जो मैं यीशु को आप लोगों के हाथ पकड़वाऊँ, तो आप लोग मुझे क्या देंगे?' उन्होंने उसे तीस रुपये देने को ठहराया ॥ —इं० म० प० २६। आ० १४, १५

[जिससे शिष्य भी पवित्र न हुआ, वह क्या करामाती?]

समीक्षक—अब देखिये, ईसा की सब करामात और ईश्वरता यहाँ खुल गई। क्योंकि जो उसका प्रधान शिष्य था, वह भी उसके साक्षात् संग से पवित्रात्मा न हुआ, तो औरों को वह मरे पीछे पवित्रात्मा

पीने को कुछ नहीं दिया, मैं परदेसी था और तुमने मुझे अपने घर ठहरने के लिए नहीं कहा, मैं नंगा था और तुमने मुझे कपड़े नहीं पहनाये, मैं जेल में बन्दी था और बीमार था और तुमने मेरी सुधि नहीं ली।' इस पर उन लोगों ने कहा कि हमें तुम्हारे भूखे, प्यासे होने का पता ही नहीं चला। फिर भी ईसा ने उन्हें आग में झोंक दिया। यह व्यवहार था उसका, जिसे प्रेम और शान्ति का दूत या देवता कहा जाता है।

दूसरी ओर ग्रन्थकार स्वामी दयानन्द को पान में विष देनेवाले को गिरफ़्तार करके उनके सामने लाया जाता है। पकड़कर लानेवाला तहसीलदार स्वामीजी से पूछता है—इसे क्या दण्ड दिया जाय। स्वामीजी कहते हैं—'इसे छोड़ दो। मैं लोगों को कैद कराने नहीं आया, मैं तो उनके बन्धन काटने आया हूँ।' पूना में जब उनको शोभायात्रा में उन पर कीचड़ पत्थर फेंके गये और उनके एक शिष्य ने क्रोधवश डण्डा हाथ में लिया तो दयानिधान दयानन्द ने कहा—बलदेव! क्रोध किन पर? अरे! दिन-रात जिनके कल्याण की कामना करते हैं, उन पर क्रोध? दयानन्द ने अनेक बार विष खाकर भी न कभी परमात्मा को ईसामसीह की तरह उलाहना दिया, न किसी विष देनेवाले को टेढ़ी नजर से देखा।

चालीस दिन दुःख—इसकी चर्चा ६४वें समीक्ष्य में है।

८५. इस घटना का उल्लेख संख्या ७४ में हो चुका है।

---

१. Judas Iscariot.

क्या कर सकेगा ? और उसके विश्वासी लोग उसके भरोसे में कितने ठगाये जाते हैं ? क्योंकि जिसने साक्षात् सम्बन्ध में शिष्य का कुछ कल्याण न किया, वह मरे पीछे किसी का कल्याण क्या कर सकेगा ? ॥८५॥

[रोटी मेरी देह है, और पानी लोहू]

८६—जब वे खाते थे, तब यीशु ने रोटी लेके धन्यवाद किया। और उसे तोड़के शिष्यों को दिया, और कहा—लेओ खाओ, यह मेरा देह है' ॥ और उसने कटोरा लेके धन्यवाद माना, और उनको देके कहा—'तुम सब इससे पीओ ॥ क्योंकि यह मेरा लोहू अर्थात् नये नियम का लोहू है' ॥

—इं० म० प० २६। आ० २६-२८

[गुरु के मांस-लोहू में खाने-पीने की भावना जंगलीपन]

समीक्षक—भला यह ऐसी बात कोई भी सभ्य करेगा ? विना अविद्वान् जङ्गली मनुष्य के, शिष्यों से खाने की चीज को अपने मांस, और पीने की चीजों को लोहू नहीं कह सकता। और इसी बात को आजकल के ईसाई लोग 'प्रभुभोजन' कहते हैं। अर्थात् खाने-पीने की चीजों में ईसा के मांस और लोहू की भावना कर खाते-पीते हैं, यह कितनी बुरी बात है ? जिन्होंने अपने गुरु के मांस-लोहू को भी खाने-पीने की भावना से न छोड़ा, तो और को कैसे छोड़ सकते हैं ॥८६॥

[यीशु का शोक करना और उदास रहना]

८७—और वह पितर[1] को और जबदी[2] के दोनों पुत्रों को अपने संग ले गया और शोक करने और बहुत उदास होने लगा ॥ तब उसने उनसे कहा कि मेरा मन यहाँ लों अति उदास है कि मैं मरने पर हूँ ॥ और थोड़ा आगे बढ़के वह मुँह के बल गिरा। और प्रार्थना की—'हे मेरे पिता ! जो हो सके, तो यह कटोरा मेरे पास से टल जाय' ॥ —इं० म० प० २६। आ० २६। आ० ३७-३९

[ईसा की सब करामात धरी रह गई]

समीक्षक—देखो, जो वह केवल मनुष्य न होता, ईश्वर का बेटा और त्रिकालदर्शी और विद्वान् होता, तो ऐसी अयोग्य चेष्टा न करता। इससे स्पष्ट विदित होता है कि यह प्रपञ्च ईसा ने अथवा उसके

---

८६. ये तीन आयतें हैं, जो इस प्रकार हैं—'While they were eating, Jesus took bread, gave thanks and broke it, and gave it to his disciples, saying, 'Take and eat; this is my body'. Then he took the cup, gave thanks and offered it to them, saying, 'Drink from it, all of you. This is my blood of the covenant which is poured out for many for the forgiveness of sins."

'Covenant' शब्द अनेकार्थवाची है। प्रस्तुत प्रकरण में इसका अर्थ है—'Applied to engagements entered into by and with the Divine Being, as revealed in the scriptures etc. Dispensation, or exemption from any obligation, fate etc. remission. इस आयत में जो कुछ करने को कहा गया है, वह इतना बीभत्स और घृणित है कि उस पर किसी प्रकार की टिप्पणी अपेक्षित नहीं है। जो कृत्य अपने आप में बहुत बड़ा पाप है, उसके करने से पापों से छुटकारा कैसे मिल सकता है ?

१. Peter.

२. Zabedee.

चेलों ने झूंठ-मूंठ बनाया है कि वह ईश्वर का बेटा, भूत भविष्यत् का वेत्ता और पाप का क्षमा कर्त्ता है। इससे समझना चाहिए वह केवल साधारण सूधा-सच्चा अविद्वान् था। न विद्वान् न योगी न सिद्ध था ॥८७॥

[शिष्य ने यीशु को पकड़वाया; बड़ी दुर्गति हुई]

८८—वह बोलता ही था, कि देखो यहूदाह जो बारह शिष्यों में एक था, आ पहुँचा। और लोगों के प्रधान याजकों और प्राचीनों की ओर से बहुत लोग खड्ग और लाठियाँ लिये उसके सँग ॥ यीशु के पकड़वानेहारे ने उन्हें यह पता दिया था जिसको मैं चूमूं, उसको पकड़ो ॥ और वह तुरन्त यीशु पास आके बोला—'हे गुरु प्रणाम'। और उसको चूमा ॥

तब उन्होंने यीशु पर हाथ डालके उसे पकड़ा ॥ तब सब शिष्य उसे छोड़के भागे ॥ अन्त में दो झूठे साक्षी आकर बोले—'इसने कहा कि मैं ईश्वर का मन्दिर ढा सकता हूँ, उसे तीन दिन में फिर बना सकता हूँ' ॥ तब महायाजक ने खड़ा हो यीशु से कहा—'क्या तू कुछ उत्तर नहीं देता? ये लोग तेरे विरुद्ध क्या साक्षी देते हैं'? परन्तु यीशु चुप रहा। इस पर महायाजक ने उससे कहा—'मैं तुझे जीवते ईश्वर की क्रिया[1] देता हूँ, हमसे कह तू ईश्वर का पुत्र ख्रीष्ट है कि नहीं?' यीशु उससे बोला—तू तो कह चुका ॥

तब महायाजक ने अपने वस्त्र फाड़के कहा—'यह ईश्वर की निन्दा कर चुका है। अब हमें साक्षियों का और क्या प्रयोजन? देखो तुमने अभी उसके मुख से ईश्वर की निन्दा सुनी है ॥ अब क्या विचार करते हो'? तब उन्होंने उत्तर दिया, वह वध के योग्य है। तब उन्होंने उसके मुंह पर थूका, और उसे घूंसे मारे ॥ औरों ने थपेड़े मारके कहा—'हे ख्रीष्ट! हमसे भविष्यद्वाणी बोल, किसने तुझे मारा?' ॥

पितर बाहर आँगने में बैठा था। और एक दासी उस पास आके बोली—'तू भी यीशु गालीली के सङ्ग था' ॥ उसने सभों के सामने मुकरके कहा—'मैं नहीं जानता तू क्या कहती है' ॥ जब वह बाहर डेवढ़ी में गया, तो दूसरी दासी ने उसे देखके जो लोग वहाँ थे उनसे कहा—'यह भी यीशु नासरी के सङ्ग था ॥' उसने क्रिया[2] खाके फिर मुकरा कि—'मैं उस मनुष्य को नहीं जानता हूँ ॥' तब वह धिक्कार देने और क्रिया खाने लगा कि मैं उस मनुष्य को नहीं जानता हूं ॥

—इं० म० प० २६। आ० ४७-५०, ५६, ६१-७२, ७४

[अन्त समय एक भी शिष्य ने साथ न दिया]

समीक्षक—अब देख लीजिए कि जिसका इतना भी सामर्थ्य वा प्रताप नहीं था कि अपने चेले को दृढ़ विश्वास करा सके। और वे चेले चाहे प्राण भी क्यों न जाते, तो भी अपने गुरु को लोभ से न पकड़ाते, न मुकरते, न मिथ्याभाषण करते, न झूठी क्रिया खाते।

[ईसा भी अपनी कोई करामात न दिखा सका]

और ईसा भी कुछ करामाती नहीं था। जैसा तौरेत में लिखा है कि—'लूत के घर पर पाहुनों को बहुत से मारने को चढ़ आये थे, वहाँ ईश्वर के दो दूत थे, उन्होंने उन्हीं को अन्धा कर दिया।' यद्यपि वह भी बात असम्भव है, तथापि ईसा में तो इतना भी सामर्थ्य न था।

---

१. अर्थात् शपथ।

२. क्रिया=शपथ।

[इस दुर्गति से तो समाधि चढ़ा प्राण छोड़ना अच्छा था]

और आजकल कितना भड़वा[1] उसके नाम पर ईसाइयों ने बढ़ा रक्खा है। भला ऐसी दुर्दशा से मरने से आप स्वयं जूझ वा समाधि चढ़ा, अथवा किसी प्रकार से प्राण छोड़ता तो अच्छा था, परन्तु वह बुद्धि विना विद्या के कहाँ से उपस्थित हो ? ॥८८॥

वह ईसा यह भी कहता है कि—

[याजकों को स्वर्ग से १२ सेनाओं के आने की धमकी देना]

क्या तू समझता है कि मैं अभी अपने पिता से विनती नहीं कर सकता हूँ ? और वह मेरे पास स्वर्ग-दूतों की बारह सेनाओं से अधिक पहुँचा न देगा ? —इं० म० प० २६। आ० ५३

[ईश्वर की सेना पर झूठा विश्वास; सच क्यों न बोला ?]

समीक्षक—धमकाता भी जाता, अपनी और अपने पिता की बड़ाई भी करता जाता, पर कुछ भी नहीं कर सकता। देखो आश्चर्य की बात, जब महायाजक ने पूछा था कि—'ये लोग तेरे विरुद्ध साक्षी देते हैं, इसका उत्तर दे'। तो ईसा चुप रहा। यह भी ईसा ने अच्छा न किया। क्योंकि जो सच था, वह वहाँ अवश्य कह देता, तो भी अच्छा होता। ऐसी बहुत-सी अपने घमण्ड की बातें करनी उचित न थीं।

[झूठा दोष लगाकर ईसा को मारना ठीक न था]

और जिन्होंने ईसा पर झूंठ दोष लगाकर मारा, उनको भी उचित न था। क्योंकि ईसा का उस प्रकार का अपराध नहीं था, जैसा उसके विषय में उन्होंने किया। परन्तु वे भी तो जङ्गली थे। न्याय की बातों को क्या समझें ?

[झूंठमूठ अपने को ईश्वरपुत्र बताना अच्छा न था]

यदि ईसा झूंठमूठ ईश्वर का बेटा न बनता, और वे उसके साथ ऐसी बुराई न वर्त्तते, तो दोनों के लिये उत्तम काम था। परन्तु इतनी विद्या धर्म्मात्मता और न्यायशीलता कहाँ से लावें ? ॥८९॥

[यीशू पर अभियोग और उसे क्रूश पर चढ़ाना]

९०—यीशू अध्यक्ष के आगे खड़ा हुआ। और अध्यक्ष ने उससे पूछा—'क्या तू यहूदियों का राजा है' ? यीशू ने उससे कहा—'आप ही तो कहते हैं ॥ जब प्रधान याजक और प्राचीन लोग उसपर दोष लगाते थे, तब उसने कुछ उत्तर नहीं दिया ॥

तब पिलात[2] ने उससे कहा—'क्या तू नहीं सुनता कि ये लोग तेरे विरुद्ध कितनी साक्षी देते हैं' ? परन्तु उसने एक बात का भी उसको उत्तर न दिया। यहाँ लों कि अध्यक्ष ने बहुत अचम्भा किया॥

---

९०. नये अनुवाद में 'कोड़े मार के' के स्थान में 'कोड़े लगवा के' कर दिया है। पहले से ध्वनित होता है कि अध्यक्ष ने स्वयं कोड़े मारे, जबकि नये से स्पष्ट होता है कि किसी कर्मचारी आदि से लगवाये। नये अनुवाद में 'सिरके' के स्थान में 'दाखरस' है।

---

१. 'भड़वा'=व्यर्थ का दिखावा।

२. Pilate.

पिलात ने उनसे कहा—'तो मैं यीशु से जो ख्रीष्ट कहावता है, क्या करूँ' ? सभों ने उससे कहा—'वह क्रूश पर चढ़ाया जावे' ।। और यीशु को कोड़े मारके क्रूश पर चढ़ा जाने को सौंप दिया ।।

तब अध्यक्ष के योधाओं ने यीशु को अध्यक्ष भुवन में ले जाके सारी पलटन उस पास इकट्ठी की । और उन्होंने उसका वस्त्र उतारके उसे लाल बागा[1] पहिराया । और काँटों का मुकुट गूँथके उसके शिर पर रक्खा । और उसके दहिने हाथ पर नर्कट[2] दिया ।। और उसके आगे घुटने टेकके यह कहके उससे ठट्ठा किया—'हे यिहूदियों के राजा प्रणाम' ।। और उन्होंने उसपर थूका, और उस नर्कट को ले उसके शिर पर मारा ।।

जब वे उससे ठट्ठा कर चुके, तब उससे वह बागा उतारके मसी[3] का वस्त्र पहिराके, उसे क्रूश पर चढ़ाने को ले गये ।। जब वे एक स्थान पर, जो गलगथा[4] अर्थात् खोपड़ी का स्थान कहाता है, पहुँचे ।। तब उन्होंने सिरके में पित्त मिलाके उसे पीने को दिया । परन्तु उसने चीखके पीना न चाहा ।। तब उन्होंने उसे क्रूश पर चढ़ाया । और उन्होंने उसका दोषपत्र उसके शिर के ऊपर लगाया । तब दो डाकू एक दहिनी ओर और दूसरा बाईं ओर उसके सङ्ग क्रूशों पर चढ़ाये गये ।।

जो लोग उधर से आते जाते थे, उन्होंने अपने शिर हिलाके और यह कहके उसकी निन्दा की—।। 'हे मन्दिर के ढ़ाहनेहारे अपने को बचा । जो तू ईश्वर का पुत्र है, तो क्रूश पर से उतर आ' ।। इसी रीति से प्रधान याजकों ने भी अध्यापकों और प्राचीनों के संगियों ने ठट्ठा कर कहा—।। 'उसने औरों को बचाया, अपने को नहीं बचा सकता है । जो वह इस्राएल का राजा है, तो क्रूश पर से अब उतर आवे, और हम उसका विश्वास करेंगे ।। वह ईश्वर पर भरोसा रखता है । यदि ईश्वर उसको चाहता है, तो उसको अब बचावे । क्योंकि उसने कहा—मैं ईश्वर का पुत्र हूँ ।।'

जो डाकू उसके संग चढ़ाये गये, उन्होंने भी इसी रीति से उनकी निन्दा की ।। दो प्रहर से तीसरे प्रहरलों सारे देश में अन्धकार हो गया ।। तीसरे प्रहर के निकट यीशु ने बड़े शब्द से पुकारके कहा—'एली एली लामा सबक्तनी' ।[5] अर्थात् हे मेरे ईश्वर ! हे मेरे ईश्वर ! तूने क्यों मुझे त्यागा है ? ।। जो लोग वहाँ खड़े थे, उनमें से कितनों ने यह सुनके कहा—'वह एलियाह[6] को बुलाता है' ।। उनमें से एक ने तुरन्त दौड़के इसपंज[7] लेके सिर्के में भिगोया ।। और नल[8] पर रखके उसे पीने को दिया ।। तब यीशु ने फिर बड़े शब्द से पुकारके प्राण त्यागा ।।

—इं० म० प० २७ । आ० ११—१४, २१, २२, २३, २६—३१, ३३, ३४, ३५, ३७—४८, ५०

[अपने को ईश्वरपुत्र कहना ठीक न था]

समीक्षक—सर्वथा यीशु के साथ उन दुष्टों ने बुरा काम किया । परन्तु यीशु का भी दोष है । क्योंकि ईश्वर का न कोई पुत्र, न वह किसी का बाप है । क्योंकि जो वह किसी का बाप होवे, तो किसी का श्वसुर श्याला सम्बन्धी आदि भी होवे ।

---

१. Scarlet Clock.
२. Reed.
३. मसी=ईसामसी अर्थात् उसी का । सं० ३१ से ३३ के मध्य बदल गया ।
४. गलगथा=Golgotha.
५. Fli Eli Lama Sabachthani.
६. Elias. ७. Sponge. ८. Reed.

[अन्त समय कोई करामात न दिखा सका]

और जब अध्यक्ष ने पूछा था, तब जैसा सच था उत्तर देना था। और यह ठीक है कि जो-जो आश्चर्य कर्म्म प्रथम किये हुए सच होते, तो अब भी क्रूश पर से उतरकर सबको अपने शिष्य बना लेता। और जो वह ईश्वर का पुत्र होता, तो ईश्वर भी उसको बचा लेता।

[सत्य अवश्य उजागर होकर रहता है]

जो वह त्रिकालदर्शी होता, तो सिर्के में पित्त मिले हुए को चीखके क्यों छोड़ता? वह पहिले ही से जानता होता। और जो वह करामती होता, तो पुकार-पुकारके प्राण क्यों त्यागता? इससे जानना चाहिए कि चाहे कोई कितनी ही चतुराई करे, परन्तु अन्त में सच सच और झूंठ झूंठ होता है।

[हाँ, ईसा उस समय के जंगलियों में कुछ अच्छा था]

इससे यह भी सिद्ध हुआ कि यीशु एक उस समय के जङ्गली मनुष्यों में से कुछ अच्छा था। न वह करामती, न ईश्वर का पुत्र, और न विद्वान् था। क्योंकि जो ऐसा होता, तो ऐसा वह दुःख क्यों भोगता? ॥६०॥

[यीशु का जी उठना, और पृथिवी-स्वर्ग का राज्य मिलना]

६१--और देखो, बड़ा भूइंडोल[1] हुआ कि परमेश्वर का एक दूत स्वर्ग से उतरा, और आके कबर के द्वार पर से पत्थर लुढ़काके उसपर बैठा॥ वह यहाँ नहीं है जैसे उसने कहा, वैसे जी उठा है॥ जब वे उसके शिष्यों को सन्देश देने को जाती थीं, देखो यीशु उनसे आ मिला और कहा—'कल्याण हो'। और उन्होंने निकट आ उसके पाँव पकड़के उसको प्रणाम किया॥ तब यीशु ने कहा—'मत डरो, जाके मेरे भाइयों से कह दो कि वह गालील को जावें, और वहाँ वे मुझे देखेंगे॥

ग्यारह शिष्य गालील को, उस परवत पर गये, जो यीशु ने उन्हें बताया था॥ और उन्होंने उसे देखके उसको प्रणाम किया, पर कितनों को सन्देह हुआ॥ यीशु ने उन पास आ उनसे कहा—'स्वर्ग में और पृथिवी पर समस्त अधिकार मुझको दिया गया है'॥ और देखो मैं जगत् के अन्त लों सब दिन तुह्मारे संग हूँ॥ —इं० म० प० २८। आ० २, ६, ६, १०, १६—१८, २०

[ईसा के पुनः जीवित होने की बात कोरी गप्प]

समीक्षक—यह बात भी मानने योग्य नहीं, क्योंकि सृष्टिक्रम और विद्याविरुद्ध है। प्रथम ईश्वर के पास दूतों का होना, उनको जहाँ-तहाँ भेजना, ऊपर से उतरना, क्या तहसीलदारी कलेक्टरी के समान ईश्वर को बना दिया?

[वह शरीर तो सड़ गया होगा, फिर जीवित कैसे हुआ?]

क्या उसी शरीर से स्वर्ग को गया और जी उठा? क्योंकि उन स्त्रियों ने उसके पग पकड़के प्रणाम किया, तो क्या वही शरीर था? और वह तीन दिनलों सड़ क्यों न गया?

---

६१. 'उन स्त्रियों ने'—इन स्त्रियों का निर्देश इसी पर्व की पहली, पाँचवीं आदि आयतों में है—'सब्त के दिन के बाद सप्ताह के पहले दिन पौ फटते ही मरियम मगदलीनो और दूसरी मरियम कब्र को देखने आईं' ॥१॥

---

१. अर्थात् भूकंम्प।

[मरकर अब क्यों नहीं जीवित होते ?]

और अपने मुख से सबका अधिकारी बनना, केवल दम्भ की बात है। शिष्यों से मिलना और उनसे सब बातें करनी असम्भव हैं। क्योंकि जो ये बातें सच हों, तो आजकल भी कोई क्यों नहीं जी उठते ? और उसी शरीर से स्वर्ग को क्यों नहीं जाते ? ॥६१॥

यह मत्तीरचित इंजील का विषय हो चुका। अब मार्करचित इंजील के विषय में लिखा जाता है।

मार्क रचित इञ्जील

[बढ़ई का बेटा पैगम्बर हो ईश्वरपुत्र ही बन बैठा]

६२—यह क्या बढ़ई नहीं ? ॥ —इं० मार्क प० ६। आ० ३

समीक्षक—असल में यूसफ बढ़ई था। इसलिये ईसा भी बढ़ई था। कितने ही वर्ष तक बढ़ई का काम करता था। पश्चात् पैगम्बर बनता-बनता ईश्वर का बेटा ही बन गया। और जङ्गली लोगों ने बना लिया। तभी बड़ी कारीगरी चलाई। काट-कूट फूट-फाट करना उसका काम है ॥६२॥

लुक[1] रचित इञ्जील

[एक ईश्वर को छोड़ तीन की कल्पना क्यों ?]

६३—यीशु ने उससे कहा—'तू मुझे उत्तम क्यों कहता है ? कोई उत्तम नहीं है, केवल एक अर्थात् ईश्वर'। —इं० लू० प० १८। आ० १९

समीक्षक—जब ईसा ही एक अद्वितीय ईश्वर कहता है, तो ईसाइयों ने पवित्रात्मा, पिता और पुत्र तीन कहाँ से बना लिये ? ॥६३॥

'शिष्यों से मिलना'—ग्रन्थकार के समय तक 'Crucification' नामक पुस्तक नहीं छपी थी। उस पुस्तक के पढ़ने से ज्ञात होता है कि Cross पर चढ़ाने से ईसा की मृत्यु नहीं हुई थी। जिस मठ का वह साधु था, उस मठ वालों ने राज्याधिकारियों से मिलकर उसका देह ले लिया और उसकी चिकित्सा की। ईसा स्वस्थ हो गया और गालील में प्रचार करता रहा। इसका संकेत इसी पर्व की ११ से १५वीं तक की आयतों में है। इसी पर्व में क्रास के पास आनेवाले स्वर्गदूत के वस्त्र को पाले के समान उज्ज्वल बताया है। उक्त पुस्तक में भी मसीह के मठवाले साधुओं का वेष भी श्वेत बताया गया है।

६३. **मुझे उत्तम क्यों ?** अनुवाद परिवर्त्तन में यहाँ पराकाष्ठा का नैपुण्य दिखाया गया है। प्रश्न और उत्तर दोनों को ही कुछ का कुछ बना दिया है। पहले अंग्रेज़ी में इस प्रकार था—

"Good Master, what good things shall I do, that I may have eternal life (16) and he said unto him, why callest thou me good ? There is none good but one, that is good. (17)"

इसका अर्थ है—सद्गुरु ! मैं कौन-से भले काम करूँ, जिससे मुझे अनन्त जीवन (अमरत्व) प्रप्त हो (१६)। और उस (ईसा) ने उसको कहा, तू मुझे अच्छा क्यों कहता है ? एक अर्थात् परमेश्वर के अतिरिक्त कोई अच्छा नहीं है (१७)। ग्रन्थकार ने इंजील के आधार पर अनेकत्र लिखा है कि तुम ईसा को पवित्र कहते हो, किन्तु वह वैसा सिद्ध नहीं होता। इस आरोप को टालने लिए 'Revised Authorised Edition' में यह वाक्य अब इस प्रकार कर दिया गया है—"Teacner, what

---

१. Luke.

[हेरोद को करामात क्यों न दिखाई ?]

९४—तब उसे हेरोद[1] के पास भेजा। हेरोद यीशु को देखके अति आनन्दित हुआ। क्योंकि वह उसको बहुत दिन से देखना चाहता था, इसलिए कि उसके विषय में बहुत-सी बातें सुनी थीं। और उसका आश्चर्य कर्म्म देखने की उसको आशा हुई। उसने उससे बहुत बातें पूछी, परन्तु उसने उसे कुछ उत्तर न दिया। —इं० लूक प० २३। आ० ७-९

समीक्षक—यह बात मत्तीरचित में नहीं है। इसलिए ये साक्षी बिगड़ गये। क्योंकि साक्षी एक से होने चाहियें। और जो ईसा चतुर और करामाती होता, तो हेरोद को उत्तर देता, और करामात भी दिखलाता। इससे विदित होता है कि ईसा में विद्या और करामात कुछ भी न थी ॥९४॥

[2]योहनरचित सुसमाचार

[सब कुछ वचन द्वारा बना]

९५—आदि में वचन था, और वचन ईश्वर के संग था, और वचन ईश्वर था। वह आदि में ईश्वर के संग था। सब कुछ उसके द्वारा सृजा गया। और जो सृजा गया है, कुछ भी उस विना नहीं सृजा गया।[3] उसमें जीवन था और वह जीवन मनुष्यों का उजियाला था। —यो० प० १ आ० १-४

---

good deeds must I do, to have eternal life ? (16) And he said to him, why do you ask me what is good, One there is who is good. (17)" इलाहाबाद से १९५० में छपे 'धर्मशास्त्र अर्थात् पुराना तथा धर्मनियम' (ईसाई बाइबल को यही नाम देते हैं, नये अनुवाद से हमारा निर्देश इसी संस्करण की ओर है) में इसका अनुवाद इस प्रकार है—"हे गुरु ! मैं कौन-सा भला काम करूँ कि अनन्त जीवन पाऊँ ? उसने अर्थात् गुरु ने उससे कहा—तू मुझसे भलाई के विषय में क्यों पूछता है ? भला तो एक ही है।" कितना परिवर्त्तन है—'Good Master' को 'Teacher' बना दिया। 'Good' को हटा देने से अगले वाक्य का अनुवाद भी बदलना पड़ा। वहाँ जो उत्तर बताया गया है, वह तो बहुत ही मूर्खतापूर्ण है। भलाई के सम्बन्ध में गुरु से न पूछें तो किससे पूछें ? नये अनुवाद में 'भला तो एक ही है' कहा गया है, किन्तु वह कौन है, यह नहीं बताया गया।

९४. नये अनुवाद में 'हेरोद' का 'हेरोदेस' बन गया है; 'बहुत-सी बातें' निकाल दिया है, जबकि अंग्रेज़ी में 'of many things' विद्यमान है; 'आश्चर्य कर्म' के स्थान में 'चिह्न' कर दिया है, जबकि अंग्रेज़ी में 'miracle' शब्द है, जिसका प्रचलित अर्थ 'चमत्कार' है। 'चिह्न' तो किसी प्रकार सिद्ध नहीं होता।

९५. विभिन्न मतों में वैदिक धर्म के कई उपदेश विकृत रूप में विद्यमान हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि सृष्टि के आदि में कुछ काल तक एकत्र (त्रिविष्टप) रहने के बाद लोग इधर-उधर फैल गये। उन्हीं के साथ आदि में ईश्वर द्वारा प्रदत्त वैदिक ज्ञान और भाषा भी गई। कालान्तर में उनमें परिवर्त्तन आने से अनेक धर्म, भाषा आदि बनते गये। यह आयत उसी का एक उदाहरण है। आरम्भ में सब ग्रन्थ-रचनाओं से पूर्व वेद था—इसे सभी मानते हैं। वेद का एक नाम 'ब्रह्म' भी है। वेद और ईश्वर में भेद

---

१. Herod. २. John.

३. भारत में शब्दब्रह्मवाद नामक एक मत था। भर्तृहरि ने 'वाक्यपदीय' के प्रथम श्लोक में उसका स्पष्ट वर्णन किया है। भर्तृहरि से बहुत पहले से वह मत चला आ रहा था। उसी मत का अतिभ्रष्ट रूप इन आयतों में मिलता है। भ० द०

[कारण के विना वचन द्वारा सृष्टि नहीं हो सकती]

समीक्षक—आदि में वचन विना वक्ता के नहीं हो सकता। और जो वचन ईश्वर के सङ्ग था, तो यह कहना व्यर्थ हुआ। और वचन ईश्वर कभी नहीं हो सकता। क्योंकि जब वह आदि में ईश्वर के सङ्ग था, तो पूर्व वचन वा ईश्वर था, यह नहीं घट सकता। वचन के द्वारा सृष्टि कभी नहीं हो सकती, जब तक उसका कारण न हो। और वचन के विना भी चुपचाप रहकर कर्त्ता सृष्टि कर सकता है।

[जीवन मनुष्यों का ही उजियाला क्यों है ?]

जीवन किसमें वा क्या था ? इस वचन से जीव अनादि मानोगे। जो अनादि है, तो आदम के नथुनों में श्वास फूंकना झूंठा हुआ। और क्या जीवन मनुष्यों ही का उजियाला है, पश्वादि का नहीं।९५।

[शैतान ने यिहूदा को बहकाया]

९६—और वियारी[1] के समय में जब शैतान शिमोन[2] के पुत्र यिहूदा इस्करियोती के मन में उसे पकड़वाने का मत डाल चुका था। —यो० प० १३। आ० २

[सबको बहकानेवाले शैतान को कौन बहकाता है ?]

समीक्षक—यह बात सच नहीं। क्योंकि जब कोई ईसाइयों से पूछेगा कि शैतान सबको बहकाता है, तो शैतान को कौन बहकाता है ? जो कहो शैतान आप-से-आप बहकता है, तो मनुष्य भी आप-से-आप बहक सकते हैं; पुनः शैतान का क्या काम ? और यदि शैतान का बनाने और बहकानेवाला परमेश्वर है, तो वही शैतान का शैतान ईसाइयों का ईश्वर ठहरा। परमेश्वर ही ने सबको उसके द्वारा बहकाया।

[शैतान तो ईसा को ईश्वरपुत्र बतानेवाले हैं]

भला ऐसे काम ईश्वर के हो सकते हैं ? सच तो यही है कि यह पुस्तक ईसाइयों का, और ईसा ईश्वर का बेटा जिन्होंने बनाये, वे शैतान हों तो हों, किन्तु न यह ईश्वरकृत पुस्तक, न इसमें कहा ईश्वर, और न ईसा ईश्वर का बेटा हो सकता है।।९६।।

करने के लिए ईश्वर को 'परब्रह्म' और वेद को 'शब्दब्रह्म' कहा जाता है। ब्रह्म का ज्ञान होने से 'शब्द' अर्थात् वेद उसके साथ रहता है—'In the beginning was the Word and the Word was with God and the Word was God'. सृष्टि के आदि में वेदों का प्रादुर्भाव होता है (इसी को वेदोत्पत्ति कह दिया जाता है) और प्रलय में 'तिरोभाव।' अन्यथा वेद नित्य हैं—'न हि छन्दांसि क्रियन्ते, नित्यानि छदांसि।' तथापि शब्द या वेद को ईश्वर नहीं माना जाना चाहिए। 'Through him all things were made and without him nothing was made that has been made.' ईश्वर के द्वारा ही सृष्टि की रचना हुई और उसके विना वह कुछ नहीं बना, जो बना है। स्पष्ट है कि ईश्वर से वही बना है, जो बनाया जाता है अर्थात् प्रकृति और जीव क्योंकि बनाये नहीं गये हैं, इसलिए उन्हें परमेश्वर ने नहीं बनाया—वे दोनों अनादि-अनुत्पन्न हैं। जीवात्मा के लिए प्रकृति से जगत् बना है, अतः वह सब परमेश्वर ने बनाया है, उसके विना कुछ नहीं बना है।

१. Supper.
२. Simon.

[विना मेरे ईश्वर के पास नहीं पहुंच सकते]

६७—तुह्मारा मन व्याकुल न होवे, ईश्वर पर विश्वास करो ।। और मुझ पर विश्वास करो। मेरे पिता के घर में बहुत-से रहने के स्थान हैं। नहीं तो मैं तुमसे कहता मैं तुह्मारे लिये स्थान तैयार करने जाता हूँ ।। जो मैं जाके तुह्मारे लिये स्थान तैयार करूँ, तो फिर आके तुम्हें अपने यहाँ ले जाऊँगा कि जहाँ मैं रहूँ तहाँ तुम भी रहो ।। यीशु ने उससे कहा मैं ही मार्ग औ सत्य औ जीवन हूँ। विना मेरे द्वारा से कोई पिता के पास नहीं पहुँचता है ।। जो तुम मुझे जानते तो मेरे पिता को भी जानते ।।

—यो० प० १४। आ० १-३, ६, ७

[क्या ईसा ने ईश्वर का ठेका ले रक्खा था?]

समीक्षक—अब देखिये, ये ईसा के वचन क्या पोपलीला से कमती हैं? जो ऐसा प्रपञ्च न रचता, तो उसके मत में कौन फसता? क्या ईसा ने अपने पिता को ठेके में ले लिया है? और जो वह ईसा के वश्य है, तो पराधीन होने से वह ईश्वर ही नहीं। क्योंकि ईश्वर किसी की सिफारिश नहीं सुनता।

[अपने को ही मार्ग सत्य व जीवन बताना दम्भ है]

क्या ईसा के पहले कोई भी ईश्वर को नहीं प्राप्त हुआ होगा? ऐसा स्थान आदि का प्रलोभन देता, और जो अपने मुख से आप मार्ग सत्य और जीवन बनता है, वह सब प्रकार से दंभी कहाता है। इससे यह बात सत्य कभी नहीं हो सकती ।।६७।।

[मुझ पर विश्वास से मेरे सदृश कार्य करेगा]

६८—मैं तुमसे सच कहता हूँ—'जो मुझ पर विश्वास करे, जो काम मैं करता हूँ, उन्हें वह भी करेगा। और इनसे बड़े काम करेगा' ।।

—यो० प० १४। आ० १२

[ईसा पर विश्वास, पर आश्चर्यकर्म एक भी नहीं]

समीक्षक—अब देखिये, जो ईसाई लोग ईसा पर पूरा विश्वास रखते हैं, वैसे ही मुर्दे जिलाने आदि काम क्यों नहीं कर सकते? और जो विश्वास से भी आश्चर्य-काम नहीं कर सकते, तो ईसा ने भी आश्चर्य-कर्म नहीं किये थे, ऐसा निश्चित जानना चाहिये। क्योंकि स्वयं ईसा ही कहता है कि—'तुम भी आश्चर्य-काम करोगे।' तो भी इस समय ईसाई कोई एक भी नहीं कर सकता। तो किसकी हिये[1] की आँख फूट गई है, जो वह ईसा को मुर्दे जिलाने आदि काम का कर्त्ता मान लेवे? ।।६८।।

---

६७. पुत्र को पिता के पास पहुँचने के लिए किसी मध्यस्थ की आवश्यकता नहीं होती। इसलिए इन आयतों में जो कुछ कहा गया है, वह लोगों को परमेश्वर से विमुख कर अपनी दुकान जमाने के लिए कहा गया है। परमेश्वर तो आप्तकाम है, यह बात ईसामसीह भी भली प्रकार जानता था। इसीलिए उसने अपने व्यापार में परमेश्वर को साझीदार (Partner) बना लिया। उसके नाम पर दुकान अच्छी चलेगी और हिस्सा बटाने वह आने से रहा। 'क्या ईसा से पहले···दम्भी कहाता है'—इस भाग को श्री उपाध्यायजी ने इन शब्दों में स्पष्ट किया है—"Had nobody ever realised God before Christ? If so, why did Christ give such temptation of the place? It is nothing short of vanity to call oneself 'the way, the truth, the life.' There is no proof its being true."

१. हिये की = हृदय की = अन्त:करणरूपी।

[अद्वैत का सिद्धान्त मानते हो, तो तीन क्यों कहते हो ?]

९९—जो अद्वैत सत्य ईश्वर है ॥ —यो० प० १७ । आ० ३

समीक्षक—जब अद्वैत एक ईश्वर है, तो ईसाइयों का तीन कहना सर्वथा मिथ्या है ॥९९॥

इसी प्रकार बहुत ठिकाने इञ्जील में अन्यथा बातें भरी हैं ॥

योहन के प्रकाशित वाक्य

अब योहन की अद्भुत बातें सुनो—

[योहन के स्वप्न में स्वर्ग के ठाठ-बाट]

१००—और अपने-अपने शिर पर सोने के मुकुट दिये हुए थे ॥[1] और सात अग्निदीपक सिंहासन के आगे जलते थे, जो ईश्वर के सातों आत्मा हैं ॥ और सिंहासन के आगे काँच का समुद्र है। और सिंहासन के आसपास चार प्राणी हैं, जो आगे और पीछे नेत्रों से भरे हैं ॥

—यो० प्र० प० ४ । आ० ४-६

[आगे-पीछे नेत्रों का होना असम्भव]

समीक्षक—अब देखिये, एक नगर के तुल्य ईसाइयों का स्वर्ग है। और इनका ईश्वर भी दीपक के समान अग्नि है। और सोने का मुकुटादि आभूषण धारण करना[2], और आगे-पीछे नेत्रों का होना असम्भावित है। इन बातों को कौन मान सकता है ? और वहाँ सिंहादि[3] चार पशु लिखे हैं ॥१००॥

[सात छापों में बन्द एक किताब]

१०१—और मैंने सिंहासन पर बैठनेहारे के दाहिने हाथ में एक पुस्तक देखा, जो भीतर और पीठ पर लिखा हुआ था। और सात छापों से उस पर छाप दी हुई थी ॥ यह पुस्तक खोलने और उसकी छापें तोड़ने के योग्य कौन है ? ॥

और न स्वर्ग में न पृथिवी पर, न पृथिवी के नीचे कोई वह पुस्तक खोलने अथवा उसे देखने सकता था ॥ और मैं बहुत रोने लगा, इसलिए कि पुस्तक खोलने और पढ़ने अथवा उसे देखने के योग्य कोई नहीं मिला ॥ —यो० प्र० पर्व० ५ । आ० १-४

---

९९. तीन कहना—१. पवित्रात्मा, २. पिता, ३. पुत्र।

१००. चार पशु—सातवीं आयत के अनुसार पहला प्राणी सिंह के समान है और दूसरा प्राणी बछड़े के समान है। तीसरे प्राणी का मुंह मनुष्य-का-सा है और चौथा प्राणी उकाब के समान है।

---

१. इस वाक्य से पूर्व लिखा है—"स्वर्ग में एक सिंहासन धरा है, उस पर एक बैठा है। जो सूर्यकान्त मणि और माणिक्य के समान है। उस सिंहासन के चारों ओर २४ सिंहासन हैं। उन पर 'चौबीस प्राचीन' बैठे हुए हैं"। पाठक देखें—यहाँ भी पौराणिकों के २४ अवतार एवं बौद्ध-जैनियों के २४ तीर्थङ्करों के समान ही २४ प्राचीन लिखे हैं। जैनियों के मत में भी सिद्धशिला के चारों ओर सिंहासनों पर तीर्थङ्करों के बैठने का वर्णन मिलता है।

२. सम्भवतः उद्धृत वाक्य को ईश्वर-विषयक समझकर यह वाक्य लिखा गया है।

३. सिंह बछड़ा, मनुष्य और गिद्ध के समान चार प्राणियों का उल्लेख अगली ७वीं आयत में है।

[उस किताब को ईसा के विना कोई खोलनेवाला न था ?]

समीक्षक —अब देखिये, ईसाइयों के स्वर्ग में सिंहासनों और मनुष्यों का ठाठ, और पुस्तक कई छापों से बन्ध किया हुआ, जिसको खोलने आदि कर्म करनेवाला स्वर्ग और पृथिवी पर कोई नहीं मिला। योहन का रोना, और पश्चात् एक प्राचीन ने कहा कि वही ईसा खोलनेवाला है[1]। प्रयोजन यह है कि जिसका विवाह उसका गीत। देखो ईसा ही के ऊपर सब माहात्म्य झुकाये जाते हैं। परन्तु ये बातें केवल कथनमात्र हैं ॥१०१॥

[मेम्ने=ईसा के ७ सींग ७ नेत्र]

१०२—और मैंने दृष्टि की, और देखो सिंहासन के और चारों प्राणियों के बीच में, और प्राचीनों के बीच में एक मेम्ना जैसा वध किया हुआ खड़ा है। जिसके सात सींग और सात नेत्र हैं, जो सारी पृथिवी में भेजे हुए ईश्वर के सातों आत्मा है ॥ —यो० प्र० प० ५। आ० ६

[स्वर्ग में जाकर बेचारे ईसा के ७ सींग लग गए]

समीक्षक—अब देखिये, इस योहन के स्वप्न का मनोव्यापार। उस स्वर्ग के बीच में सब ईसाई और चार पशु तथा ईसा भी है, और कोई नहीं। यह बड़ी अद्भुत बात हुई कि यहाँ तो ईसा के दो नेत्र थे, और सींग का नाम भी न था, और स्वर्ग में जाके सात सींग और सात नेत्रवाला हुआ !! और वे सात ईश्वर के आत्मा ईसा के सींग और नेत्र बन गये थे ! हाय ! ऐसी बातों को ईसाइयों ने क्यों मान लिया ? भला कुछ तो बुद्धि लाते ॥१०२॥

[२४ प्राचीन मेम्ने के आगे झुक गये]

१०३—और जब उसने पुस्तक लिया, तब चारों प्राणी और चौबीसों प्राचीन मेम्ने के आगे गिर पड़े। और हर एक के पास बीण थी, और धूप से भरे हुए सोने के पियाले, जो पवित्र लोगों की प्रार्थनायें हैं ॥ —यो० प्र० प० ५। आ० ८

[ईसाइयों का स्वर्ग बुतपरस्ती का घर]

समीक्षक--भला जब ईसा स्वर्ग में न होगा, तब ये बिचारे धूप दीप नैवेद्य आर्त्ति आदि पूजा किसकी करते होंगे ? और यहाँ प्रोटेस्टेण्ट[2] ईसाई लोग बुतपरस्ती=मूर्त्तिपूजा का तो खण्डन करते हैं, और इनका स्वर्ग बुतपरस्ती का घर बन रहा है ॥१०३॥

[स्वप्न में पुस्तक में से घोड़े और सवारों का निकलना]

१०४—और जब मेम्ने ने छापों में से एक को खोला, तब मैंने दृष्टि की, चारों प्राणियों में से एक को जैसे मेघ गर्जने के शब्द को, यह कहते सुना कि आ और देख ॥ और मैंने दृष्टि की, और देखो एक श्वेत घोड़ा है, और जो उस पर बैठा है उस पास धनुष है। और उसे मुकुट दिया गया, और वह जय करता हुआ और जय करने को निकला ॥

---

१. पुस्तक खोलनेवाले का संकेत अगली ५वीं आयत में है। यहाँ साक्षात् ईसा का नाम नहीं है, परन्तु अगले सारे प्रसङ्ग को देखकर ग्रन्थकार ने यहाँ 'ईसा' का निर्देश किया है।

२. Protestant.

और जब उसने दूसरी छाप खोली ॥ दूसरा घोड़ा जो लाल था निकला। उसको यह दिया गया कि पृथिवी पर से मेल उठा देवे ॥ और जब उसने तीसरी छाप खोली, देखो एक काला घोड़ा है ॥ और जब उसने चौथी छाप खोली ॥ और देखो एक पीला-सा घोड़ा है। और जो उस पर बैठा है उसका नाम मृत्यु है, इत्यादि ॥
—यो० प्र० प० ६। आ० १-५, ७, ८

[स्वप्न की बातों पर विश्वास अज्ञानता की पराकाष्ठा]

समीक्षक—अब देखिये, यह पुराणों से भी अधिक मिथ्या लीला है वा नहीं ? भला पुस्तकों के बन्धनों के छापे के भीतर घोड़ा सवार क्योंकर रह सके होंगे ? यह स्वप्ने का बरड़ाना, जिन्होंने इसको भी सत्य माना है, उनमें अविद्या जितनी कहें, उतनी ही थोड़ी है ॥१०४॥

[स्वर्ग में न्याय के लिए प्रतीक्षा]

१०५—और वे बड़े शब्द से पुकारते थे कि—'हे स्वामी पवित्र और सत्य कब लों तू न्याय नहीं करता है। और पृथिवी के निवासियों से हमारे लोहू का पलटा नहीं लेता है' ॥ और हरएक को उजला वस्त्र दिया गया। और उनसे कहा गया कि—'जब लों तुम्हारे सङ्गी दास भी, और तुम्हारे भाई जो तुम्हारी नाईं वध किये जाने पर हैं पूरे न हों, तब लों और थोड़ी वेर विश्राम करो ॥
—यो० प्र० प० ६। आ० १०, ११

[ईसाई न्याय के लिये रोते ही रहा करेंगे]

समीक्षक—जो कोई ईसाई होंगे, वे दौड़े सुपुर्द होकर ऐसे न्याय कराने के लिये रोया करेंगे। जो वेदमार्ग को स्वीकार करेगा, उसके न्याय होने में कुछ भी देर न होगी। ईसाइयों से पूँछना चाहिए—'क्या ईश्वर की कचहरी आजकल बन्द है ? और न्याय का काम नहीं होता, न्यायाधीश निकम्मे बैठे हैं' ? तो कुछ भी ठीक-ठीक उत्तर न दे सकेंगे।

[ये लोग सदा अशान्त ही रहेंगे]

और ईश्वर को भी बहकाकर, और इनका ईश्वर बहक भी जाता है, क्योंकि इनके कहने से झट इनके शत्रु से पलटा लेने लगता है, और दंशिले स्वभाववाले हैं कि मरे पीछे स्ववैर लिया करते हैं। शान्ति कुछ भी नहीं, और जहाँ शान्ति नहीं, वहाँ दुःख का क्या पारावार होगा ? ॥१०५॥

[तारों का गिरना आकाश का लपेटना]

१०६—और जैसे बड़ी बयार से हिलाये जाने पर गूलर के वृक्ष से उसके कच्चे गूलर झड़ते हैं, तैसे आकाश के तारे पृथिवी पर गिर पड़े ॥ और आकाश पत्र की नाईं जो लपेटा जाता है, अलग हो गया ॥
—यो० प्र० प० ६। आ० १३, १४

[तारे पृथिवी पर कैसे गिर सकते हैं ?]

समीक्षक—अब देखिये, योहन भविष्यद्वक्ता ने, जब विद्या नहीं है तभी तो, ऐसी अण्डबण्ड कथा गाई। भला तारे सब भूगोल हैं, एक पृथिवी पर कैसे गिर सकते हैं ? और सूर्यादि का आकर्षण उनको इधर-उधर क्यों आने-जाने देगा ?

[निराकार आकाश को चटाई के समान कैसे लपेटा ?]

और क्या आकाश को चटाई के समान समझता है ? यह आकाश साकार पदार्थ नहीं है, जिसको कोई लपेटे वा इकट्ठा कर सके। इसलिए योहन आदि सब जङ्गली मनुष्य थे। उनको इन बातों की क्या खबर ? ॥१०६॥

[इस्राएल और यिहूदा के कुलों पर छाप लगाना]

१०७—मैंने उनकी संख्या सुनी। इस्राएल के सन्तानों के समस्त कुल में से एक लाख चवालीस सहस्र पर छाप दी गई ॥ यिहूदा के कुल में से बारह सहस्र पर छाप दी गई ॥[1]

—यो० प्र० प० ७। आ० ४, ५

[क्या बाइबल का ईश्वर केवल इस्राएलियों का ही है ?]

समीक्षक—क्या जो बाइबल में ईश्वर लिखा है, वह इस्राएल आदि कुलों का स्वामी है, वा सब संसार का ? ऐसा न होता तो उन्हीं जंगलियों का साथ क्यों देता ? और उन्हीं का सहाय करता था, दूसरे का नामनिशान भी नहीं लेता, इससे वह ईश्वर नहीं। और इस्राएल कुलादि के मनुष्यों पर छाप लगाना अल्पज्ञता अथवा योहन की मिथ्या कल्पना है ॥१०७॥

[ईश्वर की रात-दिन सेवा]

१०८—इस कारण वे ईश्वर के सिंहासन के आगे हैं। और उसके मन्दिर में रात और दिन उसकी सेवा करते हैं ॥

—यो० प्र० प० ७। आ० १५

[जहाँ रातदिन पूजा चले, वहाँ सोने का क्या काम ?]

समीक्षक—क्या यह महाबुतपरस्ती नहीं है ? अथवा उनका ईश्वर देहधारी मनुष्यतुल्य एकदेशी नहीं है ? और ईसाइयों का ईश्वर रात में सोता भी नहीं है। यदि सोता है तो रात में पूजा क्योंकर करते होंगे ? तथा उसकी नींद भी उड़ जाती होगी। और जो रात-दिन जागता होगा, तो विक्षिप्त वा अति रोगी होगा ॥१०८॥

[वेदी की आग से गर्जना वा भूकम्प का होना]

१०९—और दूसरा दूत आके वेदी के निकट खड़ा हुआ, जिस पास सोने की धूपदानी थी, और उसको बहुत धूप दिया गया ॥ और धूप का धुँआ पवित्र लोगों की प्रार्थनाओं के सङ्ग दूत के हाथ में से ईश्वर के आगे चढ़ गया ॥ और दूत ने वह धूपदानी लेके उसमें वेदी की आग भरके उसे पृथिवी पर डाला। और शब्द और गर्जन और बिजुलियाँ और भुँइडोल हुए ॥

—यो० प्र० प० ८। आ० ३-५

[वैरागियों के मन्दिर से ईसाइयों का स्वर्ग कम नहीं]

समीक्षक—अब देखिये, स्वर्ग तक वेदी धूप दीप नैवेद्य तुरही[2] के शब्द होते हैं। क्या वैरागियों के मन्दिर से ईसाइयों का स्वर्ग कम है ? कुछ धूमधाम अधिक ही है ॥१०९॥

---

१. इस ईश्वरीय छाप का प्रयोजन देखें समीक्ष्यांश १११ का उत्तरार्द्ध।

२. तुरही और उसके शब्दों का निर्देश अगली आयत में है।

[पहले दूत ने पृथिवी पर ओले और आग बरसाई]

११०—पहिले दूत ने तुरही फूंकी। और लोहू से मिले हुए ओले और आग हुए, और वे पृथिवी पर डाले गए। और पृथिवी की एकतिहाई जल गई ॥ —यो० प्र० प० ८। आ० ७

[योहन को प्रलय के विषय में कुछ भी पता न था]

समीक्षक—वाह रे ईसाइयों के भविष्यद्वक्ता! ईश्वर, ईश्वर के दूत, तुरही शब्द और प्रलय की लीला केवल लड़कों ही का खेल दीखता है। क्या यह प्रलय की बात हो सकती है? ॥११०॥

[पाँचवें दूत द्वारा पृथिवी पर टिड्डियों की भरमार]

१११—और पाँचवें दूत ने तुरही फूँकी, और मैंने एक तारे को देखा, जो स्वर्ग में से पृथिवी पर गिरा हुआ था। और अथाह कुण्ड के कूप की कुञ्जी उसी को दी गई ॥ और उसने अथाह कुण्ड का कूप खोला, और कूप में से बड़ी भट्ठी के धुँए की नाईं धुँआ उठा ॥ और उस धुँए में से टिड्डियाँ पृथिवी पर निकल गईं। और जैसा पृथिवी के बोछुओं को अधिकार होता है, तैसा उन्हें अधिकार दिया गया ॥ और उनसे कहा गया कि उन मनुष्यों को, जिनके माथे पर ईश्वर की छाप नहीं है[1] ॥ पाँच मास उन्हें पीड़ा दी जाय ॥ —यो० प्र० प० ९। आ० १-५

[क्या तारों और टिड्डियों ने छापवालों को पहचान लिया?]

समीक्षक—क्या तुरही का शब्द सुनकर तारे उन्हीं दूतों पर और उसी स्वर्ग में गिरे होंगे? यहाँ तो नहीं गिरे। भला वह कूप वा टिड्डियाँ भी प्रलय के लिए ईश्वर ने पाली होंगी। और छाप को देख बाँच भी लेती होंगी कि छापवालों को मत काटो?

यह केवल भोले मनुष्यों को डरपाके ईसाई बना लेने का धोखा देना है कि जो तुम ईसाई न होगे, तो तुमको टिड्डियाँ काटेंगी। ऐसी बातें विद्याहीन देश में चल सकती हैं, आर्य्यावर्त्त में नहीं ॥१११॥

[२० करोड़ घोड़ों की लीद से स्वर्ग भी नरक हो गया होगा]

११२—और घुड़चढ़ों की सेनाओं की संख्या बीस करोड़ थी ॥ —यो० प्र० प० ९। आ० १६

समीक्षक—भला इतने घोड़े स्वर्ग में कहाँ ठहरते, कहाँ चरते, और कहाँ रहते, और कितनी लीद करते थे? और उसका दुर्गन्ध भी स्वर्ग में कितना हुआ होगा? बस ऐसे स्वर्ग, ऐसे ईश्वर और ऐसे मत के लिए हम सब आर्य्यों ने तिलाञ्जलि[2] दे दी है। ऐसा बखेड़ा ईसाइयों के शिर पर से भी सर्वशक्तिमान् की कृपा से दूर हो जाए, तो बहुत अच्छा हो ॥११२॥

[मेघ को ओढ़े हुए विशालाकृति स्वर्गदूत]

११३—और मैंने दूसरे पराक्रमी दूत को स्वर्ग से उतरते देखा, जो मेघ को ओढ़े था। और उसके शिर पर मेघ-धनुष[3] था। और उसका मुँह सूर्य की नाईं, और उसके पाँव आग के खम्भों के ऐसे

---

१. द्र०—समीक्ष्यांश १०७।

२. पौराणिक मतानुसार इसका अभिप्राय है—पितरों के निमित्त तिल देना। परन्तु भाषा में 'तिलांजलि देना' मुहावरे का अर्थ है—'छोड़ देना'।

३. Rainbow. अर्थात् इन्द्र-धनुष।

थे ॥ और उसने अपना दहिना पाँव समुद्र पर और बायाँ पृथिवी पर रक्खा ॥

—यो० प्र० प० ११ । आ० १, २

समीक्षक—अब देखिये इन दूतों की कथा, जो पुराणों वा भाटों की कथाओं से भी बढ़कर हैं ॥११३॥

[स्वर्ग में ईश्वर के मन्दिर और वेदी को नापा]

११४—और लग्गी[1] के समान एक नर्कट मुझे दिया गया। और कहा गया कि उठ, ईश्वर के मन्दिर को और वेदी और उसमें के भजन करनेहारों को नाप ॥ —यो० प्र० प० ११ । आ० १

[बुतपरस्ती से स्वर्ग भी न बच सका]

समीक्षक—यहाँ तो क्या, परन्तु ईसाइयों के तो स्वर्ग में भी मन्दिर बनाये और नापे जाते हैं। अच्छा है, उनका जैसा स्वर्ग है वैसी ही बातें हैं। इसलिए यहाँ प्रभुभोजन में ईसा के शरीरावयव मांस लोहू की भावना करके खीते-पीते हैं। और गिर्जा में भी क्रूश आदि का आकार बनाना आदि भी बुतपरस्ती है ॥११४॥

[स्वर्ग के मन्दिर में नियमों का सन्दूक]

११५—और स्वर्ग में ईश्वर का मन्दिर खोला गया। और उसके नियम का सन्दूक उसके मन्दिर में दिखाई दिया ॥ —यो० प्र० प० ११ । आ० १९

[क्या परमेश्वर का भी मन्दिर हो सकता है ?]

समीक्षक—स्वर्ग में जो मन्दिर है, सो हर समय बन्द रहता होगा, कभी-कभी खोला जाता होगा ? क्या परमेश्वर का भी कोई मन्दिर हो सकता है ? जो वेदोक्त परमात्मा सर्वव्यापक है, उसका कोई भी मन्दिर नहीं हो सकता। हाँ, ईसाइयों का जो परमेश्वर आकारवाला है, उसका चाहें स्वर्ग में हो चाहें भूमि में। और जैसी लीला टन्-टन् पूँ-पूँ की यहाँ होती है, वैसी ही ईसाइयों के स्वर्ग में भी।

और नियम का सन्दूक भी कभी-कभी ईसाई लोग देखते होंगे। उससे न जाने क्या प्रयोजन सिद्ध करते होंगे ? सच तो यह है कि ये सब बातें मनुष्यों को लुभाने की हैं ॥११५॥

[स्वर्ग के दो आश्चर्य]

११६—और एक बड़ा आश्चर्य स्वर्ग में दिखाई दिया, अर्थात् एक स्त्री जो सूर्य पहिने है, और चाँद उसके पाँवों तले है, और उसके शिर पर बारह तारों का मुकुट है ॥ और वह गर्भवती होके चिल्लाती है, क्योंकि प्रसव की पीड़ा उसे लगी है। और वह जनने को पीड़ित है ॥

और दूसरा आश्चर्य स्वर्ग में दिखाई दिया। और देखो, एक बड़ा लाल अजगर है, जिसके सात शिर और दस सींग हैं। और उसके शिरों पर सात राजमुकुट हैं ॥ और उसकी पूँछ ने आकाश के तारों की एक-तिहाई को खींचके उन्हें पृथिवी पर डाला ॥ —यो० प्र० प० १२ । आ० १-४

११६—'आश्चर्य'—नये अनुवाद में इसके स्थान में 'चिह्न' कर दिया है। अंग्रेज़ी में 'Wonder' शब्द है, जिसका अनुवाद 'आश्चर्य' ही है, चिह्न नहीं। 'Revised Authorised Edition' में Wonder के स्थान में Portent है, जिसका अर्थ 'Something marvellous' अर्थात् 'शकुन' या अद्भुत घटना है।

[1] Rod.

[छोटी-सी पृथिवी पर एक तिहाई तारे कैसे समाये ?]

समीक्षक—अब देखिये, लम्बे-चौड़े गपोड़े। इनके स्वर्ग में भी बिचारी स्त्री चिल्लाती है। उसका दुःख कोई नहीं सुनता, न मिटा सकता है। और उस अजगर की पूंछ कितनी बड़ी थी, [1]जिसने तारों की एक-तिहाई को पृथिवी पर डाला ? भला, पृथिवी तो छोटी है, और तारे भी बड़े-बड़े लोक हैं। इस पृथिवी पर एक भी नहीं समा सकता। किन्तु यहाँ यही अनुमान करना चाहिए कि ये तारों की तिहाई इस बात के लिखनेवाले के घर पर गिरे होंगे ? और जिस अजगर की पूंछ इतनी बड़ी थी, जिसने सब तारों की तिहाई लपेटकर भूमि पर गिरा दी, वह अजगर भी उसी के घर में रहता होगा ? ॥११६॥

[जिस स्वर्ग में उपद्रव हो, वह क्या स्वर्ग ?]

११७—और स्वर्ग में युद्ध हुआ। मीखायेल[2] और उसके दूत अजगर से लड़े। और अजगर और उसके दूत लड़े ॥ —यो० प्र० प० १२। आ० ७

समीक्षक—जो कोई ईसाइयों के स्वर्ग में जाता होगा, वह भी लड़ाई में दुःख पाता होगा। ऐसे स्वर्ग की यहीं से आश छोड़ हाथ जोड़ बैठ रहो। जहाँ शान्तिभङ्ग और उपद्रव मचा रहे, वह[3] ईसाइयों के योग्य है ॥११७॥

[शैतान को भूमि पर गिराना]

११८—और वह बड़ा अजगर गिराया गया। हाँ, वह प्राचीन साँप जो दियाबल[4] और शैतान[5] कहावता है, जो सारे संसार का भरमानेहारा है ॥ —यो० प्र० प० १२। आ० ६

[शैतान स्वर्ग में भी लोगों को बहकाता होगा]

समीक्षक—क्या जब वह शैतान स्वर्ग में था, तब लोगों को नहीं भरमाता था ? और उसको जन्मभर बन्दी में गिरा अथवा मार क्यों डाला ? उसको पृथिवी पर क्यों डाल दिया ? जो सब संसार का भरमानेवाला शैतान है, तो शैतान को भरमानेवाला कौन है ? यदि शैतान स्वयं भर्मा है, तो शैतान के विना भरमनेहारे भर्मेंगे। और जो उसको भरमानेहारा परमेश्वर है, तो वह ईश्वर ही नहीं ठहरा।

[शैतान से ईसाइयों का ईश्वर भी डरता था]

विदित तो यह होता है कि ईसाइयों का ईश्वर भी शैतान से डरता होगा। क्योंकि जो शैतान से प्रबल है, तो ईश्वर ने उसको अपराध करते समय ही दण्ड क्यों न दिया ? जगत् में शैतान का जितना राज्य है, उसके सामने सहस्रांश भी ईसाइयों के ईश्वर का राज्य नहीं। इसीलिये ईसाइयों का ईश्वर उसे हठा नहीं सकता होगा।

---

१. सं० २ से ३३ तक 'जिसने तारों को (की, पाठा०) एक तिहाई पृथिवी पर' पाठ है। यह पाठ मूल अभिप्राय से विरुद्ध है। मूल समीक्ष्य आयतांश में 'तारों की एक तिहाई अभिप्रेत है। यही अभिप्राय समीक्षक ने आगे दो वाक्यों में प्रकट किया है। जैसा सं० २ से ३३ तक का मुद्रित पाठ है, उसके अनुसार 'एक तिहाई' का सम्बन्ध पृथिवी के साथ जुड़ता है। सं० ३४ के सम्पादक ने 'जिसने एक तिहाई तारों को पृथिवी पर' इस प्रकार शोधा है। परन्तु हमने ग्रन्थकार के अभिप्रायानुसार सामान्य-सा संशोधन करके पाठ ठीक कर दिया है।

२. Michael. ३. अर्थात् वैसा स्वर्ग। ४. Devil. ५. Satan.

इससे यह सिद्ध हुआ कि जैसा इस समय के राज्याधिकारी ईसाई डाकू चोर आदि को शीघ्र दण्ड देते हैं, वैसा भी ईसाइयों का ईश्वर नहीं। पुनः कौन ऐसा निर्बुद्धि मनुष्य है, जो वैदिकमत को छोड़ पोकल[1] ईसाई मत स्वीकार करे ? ॥११८॥

[शैतान को यहाँ क्यों भेजा ? वहीं क्यों न मार दिया ?]

११९—हाय पृथिवी और समुद्र के निवासियो ! क्योंकि शैतान तुम पास उतरा है ॥

—यो० प्र० प० १२। आ० १२

समीक्षक—क्या वह ईश्वर वहीं का रक्षक और स्वामी है ? पृथिवी मनुष्यादि प्राणियों का रक्षक और स्वामी नहीं है ? यदि भूमि का भी राजा है, तो शैतान को क्यों न मार सका ? ईश्वर देखता रहता है, और शैतान बहकाता फिरता है, तो भी उसको बर्जता नहीं। विदित तो यह होता है कि एक अच्छा ईश्वर और एक समर्थ दुष्ट दूसरा ईश्वर हो रहा है ॥११९॥

[शैतान को युद्ध करने वा बहकाने का अधिकार]

१२०—और बयालीस मासलों युद्ध करने का अधिकार उसे दिया गया ॥ और उसने ईश्वर के विरुद्ध निन्दा करने को अपना मुँह खोला कि उसके नाम की और उसके तम्बू की और स्वर्ग में वास करनेहारों की निन्दा करे ॥ और उसको यह दिया गया कि पवित्र लोगों से युद्ध करे, और उनपर जय करे। और हर एक कुल और भाषा और देश पर उसको अधिकार दिया गया ॥

—यो० प्र० प० १३। आ० ५-७

[ईसाइयों के ईश्वर के डाकुओंवाले काम हैं]

समीक्षक—भला जो पृथिवी के लोगों को बहकाने के लिये शैतान और पशु आदि को भेजे, और पवित्र मनुष्यों से युद्ध करावे, वह काम डाकुओं के सर्दार के समान है वा नहीं ? ऐसा काम ईश्वर वा ईश्वर के भक्तों का नहीं हो सकता ॥१२०॥

[लाखों लोगों के साथ मेम्ना सियोन पर्वत पर]

१२१—और मैंने दृष्टि की। और देखो, मेम्ना सियोन पर्वत पर खड़ा है। और उसके संग एक लाख चवालीस सहस्र जन थे, जिनके माथे पर उसका नाम और उसके पिता का नाम लिखा है॥

—यो० प्र० प० १४। आ० १

१२०—'शैतान और पशु'—इसकी चर्चा १३वें पर्व में इस प्रकार है—"और मैंने एक पशु को समुद्र में से निकलते देखा, जिसके दस सींग और सात सिर थे और उसके सींगों पर दस राजमुकुट और उसके सिरों पर निन्दा के शब्द लिखे हुए थे। और जो पशु मैंने देखा, वह चीते की नाईं था। उसके पाँव भालू के से और मुँह सिंह का-सा था और उस अजगर ने अपनी सामर्थ्य और अपना सिंहासन और बड़ा अधिकार उसे दे दिया" (१, २)।

१. अर्थात् सारहीन। 'पोकल' राजस्थानी भाषा का शब्द है। सं० ३ में इसके स्थान में 'कपोलकल्पित' पाठ बनाया है। यही पाठ सं० ३५ तक छप रहा है। 'पोकल' (=सारहीन) शब्द से जो विशेष भाव यहाँ प्रकट किया गया है, वह कपोलकल्पित से व्यक्त नहीं होता। आश्चर्य तो इस बात का है कि सं० ३४ के सम्पादक ने राजस्थानी होते हुए भी इस पर ध्यान नहीं दिया। पोकल का दूसरा रूपान्तर 'फोकल' भी प्रयुक्त होता है।

[ये लाखों लोग स्वर्ग से पृथिवी पर कैसे आये ?]

समीक्षक—अब देखिये, जहाँ ईसा का बाप रहता था, वहीं उसी सियोन पहाड़ पर उसका लड़का भी रहता था। परन्तु एक लाख चवालीस सहस्र मनुष्यों की गणना क्योंकर की ? एक लाख चवालीस सहस्र ही स्वर्ग के वासी हुए। शेष करोड़ों ईसाइयों के शिर पर न मोहर लगी ? क्या ये सब नरक में गये ?

ईसाइयों को चाहिये कि सियोन पर्वत पर जाके देखें कि ईसा का बाप और उनकी सेना वहाँ है वा नहीं ? जो हों तो यह लेख ठीक है, नहीं तो मिथ्या। यदि कहीं से वहाँ आया, तो कहाँ से आया ? जो कहो स्वर्ग से, तो क्या वे पक्षी हैं कि इतनी बड़ी सेना और आप ऊपर-नीचे उड़कर आया-जाया करें ?

[फिर तो ब्रह्माण्ड के शासन के लिये अनेक ईश्वर चाहियें]

यदि वह आया-जाया करता है, तो एक जिले के न्यायाधीश के समान हुआ। और वह एक दो वा तीन हो तो नहीं बन सकेगा। किन्तु न्यून-से-न्यून एक-एक भूगोल में एक-एक ईश्वर चाहिये। क्योंकि एक-दो-तीन अनेक ब्रह्माण्डों का न्याय करने और सर्वत्र युगपत् घूमने में समर्थ कभी नहीं हो सकते ॥१२१॥

[आत्मा के कर्म आत्मा के संग]

१२२—आत्मा कहता है हाँ कि वे अपने परिश्रम से विश्राम करेंगे, परन्तु उनके कार्य उनके संग हो लेते हैं ॥ —यो० प्र० प० १४। आ० १३

[कर्मानुसार फल मिलेगा, तो पाप-क्षमा की बात व्यर्थ]

समीक्षक—देखिये, ईसाईयों का ईश्वर तो कहता है—उनके कर्म उनके सङ्ग रहेंगे, अर्थात् कर्मानुसार फल सबको दिए जायेंगे। और ये लोग कहते हैं कि ईसा पापों को ले लेगा, और क्षमा भी किए जायेंगे। यहाँ बुद्धिमान् विचारें कि ईश्वर का वचन सच्चा वा ईसाइयों का ? एक बात में दोनों तो सच्चे हो ही नहीं सकते। इनमें से एक झूंठा अवश्य होगा। हमको क्या, चाहें ईसाइयों का ईश्वर झूंठा हो, वा ईसाई लोग ? ॥१२२॥

[ईश्वर के कोप के कुण्ड]

१२३—और उसे ईश्वर के कोप के बड़े रस के कुण्ड[1] में डाला ॥ और रस के कुण्ड का रौन्दन नगर के बाहर किया गया। और रस के कुण्ड में से घोड़ों की लगाम[2] तक लोहू एकसौ कोस तक बह निकला ॥ —यो० प्र० प० १४। आ० १९, २०

[क्या ईश्वर का कोप कोई द्रवित पदार्थ है ?]

समीक्षक—अब देखिये इनके गपोड़े पुराणों से भी बढ़कर हैं, वा नहीं ? ईसाइयों का ईश्वर कोप करते समय बहुत दुःखित हो जाता होगा। और जो उसके कोप के कुण्ड भरे हैं, क्या उसका कोप

१. Great wine Press.
२. अर्थात् घोड़ों की लगाम की ऊँचाई तक।

जल है, वा अन्य द्रवित पदार्थ है, कि जिससे कुण्ड भरे हैं ? और सौ कोश तक रुधिर का बहना असम्भव है। क्योंकि रुधिर वायु लगने से झट जम जाता है, पुनः क्योंकर बह सकता है ? इसलिये ऐसी बातें मिथ्या होती हैं ॥१२३॥

[स्वर्ग में साक्षी के तम्बू]

१२४—और देखो स्वर्ग में साक्षी के तम्बू का मन्दिर खोला गया।

—यो० प्र० प० १५। आ० ५

[ईश्वर को साक्षियों की क्या आवश्यकता पड़ी ?]

समीक्षक—जो ईसाइयों का ईश्वर सर्वज्ञ होता, तो साक्षियों का क्या काम ? क्योंकि वह स्वयं सब कुछ जानता होता। इससे सर्वथा यही निश्चय होता है कि इनका ईश्वर सर्वज्ञ नहीं। क्योंकि जो मनुष्यवत् अल्पज्ञ है, वह ईश्वरता का क्या काम कर सकता है ? नहिं नहिं नहिं। और इसी प्रकरण में दूतों की बड़ी-बड़ी असम्भव बातें लिखी हैं। उनको सत्य कोई नहीं मान सकता। कहाँ तक लिखें ? इस प्रकरण में सर्वथा ऐसी ही बातें भरी हैं ॥१२४॥

[कर्मों का दूना फल]

१२५—और ईश्वर ने उसके कुकर्मों को स्मरण किया। जैसा तुम्हें उसने दिया है, तैसा उसको भर देओ। और उसके कर्मों के अनुसार दूना उसे दे देओ॥ —यो० प्र० प० १८। आ० ५, ६

[कर्म का दूना फल देना अन्याय है]

समीक्षक—देखो, प्रत्यक्ष ईसाइयों का ईश्वर अन्यायकारी है। क्योंकि 'न्याय' उसी को कहते हैं कि जिसने जैसा वा जितना कर्म किया, उसको वैसा और उतना ही फल देना। उससे अधिक-न्यून देना अन्याय है। जो अन्यायकारी की उपासना करते हैं, वे अन्यायकारी क्यों न हों ? ॥१२५॥

[मेम्ने (=यीशु) का विवाह]

१२६—क्योंकि मेम्ने का विवाह आ पहुँचा है। और उसकी स्त्री ने अपने को तैयार किया है॥

—यो० प्र० प० १९। आ० ७

[स्वर्ग में विवाह हुआ, तो सुसर साले आदि कौन थे ?]

समीक्षक—अब सुनिये, ईसाइयों के स्वर्ग में विवाह भी होते हैं। क्योंकि ईसा का विवाह ईश्वर ने वहीं किया। पूछना चाहिए कि उसके श्वसुर सासू शालादि कौन थे ? और लड़केवाले कितने हुए ? और वीर्य के नाश होने से बल बुद्धि पराक्रम आयु आदि के भी न्यून होने से अब तक ईसा ने वहाँ शरीर त्याग किया होगा ? क्योंकि संयोगजन्य पदार्थ का वियोग अवश्य होता है। अब तक ईसाइयों ने उसके विश्वास में धोखा खाया, और न जाने कब तक धोखे में रहेंगे ॥१२६॥

[शैतान को सीलबन्द कर दिया]

१२७—और उसने अजगर को अर्थात् प्राचीन साँप को, जो दियाबल और शैतान है, पकड़के उसे सहस्र वर्ष लों बाँध रक्खा॥ और उसको अथाह कुण्ड में डाला, और बन्द करके उसे छाप दी। वह जबलों सहस्र वर्ष पूरे न हों, तबलों फिर देशों के लोगों को न जिसतें भरमावे॥

—यो० प्र० प० २०। आ० २, ३

[शैतान को सदा के लिये कैद में क्यों न रक्खा ?]

समीक्षक—देखो मरूँ-मरूँ करके शैतान को पकड़ा, और सहस्र वर्ष तक बन्ध किया। फिर भी छूटेगा, क्या फिर न भरमावेगा ? ऐसे दुष्ट को तो बन्दीगृह में ही रखना वा मारे विना छोड़ना ही नहीं था।

[शैतान का डर दिखा भोले लोगों को फँसाना]

परन्तु यह शैतान का होना ईसाइयों का भ्रममात्र है। वास्तव में कुछ भी नहीं, केवल लोगों को डराके अपने जाल में लाने का उपाय रचा है। जैसे किसी धूर्त्त ने किन्हीं भोले मनुष्यों से कहा कि—'चलो तुमको देवता का दर्शन कराऊँ'[1]। किसी एकान्त देश में ले जाके एक मनुष्य को चतुर्भुज बनाकर रक्खा। झाड़ी में खड़ा करके कहा कि—'आँख मीच लो। जब मैं कहूँ तब खोलना। और फिर जब कहूँ, तभी मीच लो। जो न मीचेगा वह अन्धा हो जायेगा।' जब वह सामने आया तब कहा—देखो। और पुनः शीघ्र कहा कि—मीच लो। जब फिर झाड़ी में छिप गया, तब कहा—खोलो। देखा नारायण को, सबने दर्शन किया।

जैसी लीला मजहबियों की है। वैसी इन मत-वालों की बातें हैं कि जो हमारा मजहब न मानेगा, वह शैतान का बहकाया हुआ है। इसलिये इनकी माया में किसी को न फँसना चाहिए ॥१२७॥

[पृथिवी आकाश का भागना; पुस्तक देखकर कर्मफल देना]

१२८—जिसके सम्मुख से पृथिवी और आकाश भाग गये, और उनके लिए जगह न मिली ॥ और मैंने क्या छोटे क्या बड़े सब मृतकों को ईश्वर के आगे खड़े देखा, और पुस्तक खोले गये। और दूसरा पुस्तक अर्थात् जीवन का पुस्तक खोला गया। और पुस्तकों में लिखी हुई बातों से मृतकों का विचार उनके कर्मों के अनुसार किया गया ॥ —यो० प्र० प० २०। आ० ११, १२

[पृथिवी आकाश भाग गये, तो वह किस पर ठहरा]

समीक्षक—यह देखो लड़कपन की बात। भला पृथिवी और आकाश कैसे भाग सकेंगे ? और वे किस पर ठहरेंगे, जिनके सामने से भागे ? और उसका सिंहासन और वह कहाँ ठहरा ?

[क्या परमेश्वर के पास भी वही है ? उसे कौन लिखता है ?]

और मुर्दे परमेश्वर के सामने खड़े किये गये, तो परमेश्वर भी बैठा वा खड़ा होगा ? क्या यहाँ की कचहरी और दूकान के समान ईश्वर का व्यवहार है, जो कि पुस्तक-लेखानुसार होता है ? और सब जीवों का हाल ईश्वर ने लिखा वा उसके गुमाश्तों ने ? ऐसी-ऐसी बातों से अनीश्वर को ईश्वर और ईश्वर को अनीश्वर ईसाई आदि मत-वालों ने बना दिया ॥१२८॥

[मेम्ने की दुलहिन को दिखाना]

१२९—उनमें से एक मेरे पास आया, और मेरे सङ्ग बोला कि—'आ मैं दुलहिन को अर्थात् मेम्ने की स्त्री को तुझे दिखाऊँगा ॥' —यो० प्र० प० २१। आ० ९

---

१. देखो—स्वामीनारायण-मत प्रकरण।

[ईसा स्वर्ग में जाकर विषयभोग में क्यों पड़ा ?]

समीक्षक—भला ईसा ने स्वर्ग में दुलहिन अर्थात् स्त्री अच्छी पाई, मौज करता होगा। जो-जो ईसाई वहाँ जाते होंगे, उनको भी स्त्रियाँ मिलती होंगी, और लड़केवाले होते होंगे। और बहुत भीड़ के हो जाने से रोगोत्पत्ति होकर मरते भी होंगे। ऐसे स्वर्ग को दूर से हाथ ही जोड़ना अच्छा है ॥१२९॥

[ईसाइयों के स्वर्ग की रचना]

१३०—और उसने उस नल से नगर को नापा कि साढ़े सात सौ कोश का है। उसकी लम्बाई और चौड़ाई और ऊँचाई एक समान है॥ और उसने उसकी भीत को मनुष्य के अर्थात् दूत के नाप से नापा कि एक सौ चवालीस हाथ की है॥

और उसकी भीत की जुड़ाई[1] सूर्य्यकान्त की थी। और नगर निर्मल सोने का था, जो निर्मल काँच के समान था॥ और नगर के भीत की नेवें हरएक बहुमूल्य पत्थर से सँवारी हुई थीं। पहिली नेव सूर्य्यकान्त की थी, दूसरी नीलमणि की, तीसरी लालड़ी की, चौथी मरकत की॥ पाँचवीं गोमेदक की, छठवीं माणिक्य की, सातवीं पीतमणि की, आठवीं पेरोज की, नवीं पुखराज की, दसवीं लहसनिये की, ग्यारहवीं धूम्रकान्त की, बारहवीं मर्टीष की॥

और बारह फाटक बारह मोती थे। एक-एक मोती से एक-एक फाटक बना था। और नगर की सड़क स्वच्छ काँच के ऐसे निर्मल सोने की थी॥ —यो० प्र० प० २१। आ० १६-२१

[सीमित नगर में अपार जनसमूह कैसे समाया ?]

समीक्षक—सुनो ईसाइयों के स्वर्ग का वर्णन। यदि ईसाई मरते जाते और वहाँ जन्मते जाते हैं, तो इतने बड़े शहर में भी कैसे समा सकेंगे ? क्योंकि उसमें मनुष्य का आगम होता है, और उससे निकलते नहीं।

[नगर के निर्माण और चमक-दमक का वर्णन कल्पित]

और जो यह बहुमूल्य रत्नों की बनी हुई नगरी मानी है, और सर्व सोने की है, इत्यादि लेख केवल भोले-भाले मनुष्यों को बहकाकर फँसाने की लीला है। भला लम्बाई-चौड़ाई तो जो उस नगर की लिखी सो हो सकती, परन्तु ऊँचाई साढ़े सात सौ कोश क्योंकर हो सकती है ? यह सर्वथा मिथ्या कपोल-कल्पना की बात है। और इतने बड़े मोती कहाँ से आये होंगे ? इस लेख के लिखनेवाले के घर के घड़े में से निकले होंगे। यह गपोड़ा पुराण का भी बाप है ॥१३०॥

[घृणित कर्मों और झूंठ बोलनेवालों को स्वर्ग नहीं]

१३१—और कोई अपवित्र वस्तु अथवा घिनित कर्म करनेहारा अथवा झूंठ पर चलनेहारा उसमें किसी रीति से प्रवेश न करेगा॥ —यो० प्र० प० २१। आ० २७

१३०—नगर की सड़क व फाटक--ईसाइयों के स्वर्ग का यह नगर जैनप्रोक्त नगरों के सामने नगण्य है।

---

१. अर्थात् जड़ाई।

[योहन्ना जैसे असत्यवक्ता को स्वर्ग कैसे मिला ?]

समीक्षक—जो ऐसी बात है, तो ईसाई लोग क्यों कहते हैं कि पापी लोग भी स्वर्ग में ईसाई होने से जा सकते हैं ? यह ठीक बात नहीं है। यदि ऐसा है, तो योहन्ना[1] स्वप्ने की मिथ्या बातों का कहनेहारा स्वर्ग में प्रवेश कभी न कर सका होगा।

[अनेक पापियों के पाप-भार से युक्त ईसा को भी स्वर्ग कैसे ?]

और ईसा भी स्वर्ग में न गया होगा। क्योंकि जब अकेला पापी स्वर्ग को प्राप्त नहीं हो सकता तो जो अनेक पापियों के पाप के भार से युक्त है, वह क्योंकर स्वर्गवासी हो सकता है ? ॥१३१॥

[ईसाइयों के स्वर्ग में क्या-कुछ होगा]

१३२—और अब कोई श्राप न होगा, और ईश्वर का और मेम्ने का सिंहासन उसमें होगा, और उसके दास उसकी सेवा करेंगे॥ और उसका[2] मुँह देखेंगे, और उसका नाम उनके माथे पर होगा॥ और वहाँ रात न होगी, और उन्हें दीपक का अथवा सूर्य्य की ज्योति का प्रयोजन नहीं। क्योंकि परमेश्वर उन्हें ज्योति देगा[3]। वे सदा सर्वदा राज्य करेंगे॥ —यो० प्र० प० २२। आ० ३-५

[क्या सिंहासन पर ईसा और ईश्वर निरन्तर बैठे रहेंगे ?]

समीक्षक– देखिये, यही ईसाइयों का स्वर्गवास। क्या ईश्वर और ईसा सिंहासन पर निरन्तर बैठे रहेंगे ? और उनके दास उनके सामने सदा मुँह देखा करेंगे ? अब यह तो कहिए, तुम्हारे ईश्वर का मुँह यूरोपियन के सदृश गोरा वा अफ्रीकावालों के सदृश काला, अथवा अन्य देशवालों के समान है ?

[यह स्वर्ग भी बन्धन है; क्या ईश्वर के मुँह भी है ?]

यह तुह्मारा स्वर्ग भी बन्धन है, क्योंकि जहाँ छोटाई-बड़ाई है। और उसी एक नगर में रहना अवश्य है, तो वहाँ दुःख क्यों न होता होगा ? जो मुखवाला है, वह ईश्वर सर्वज्ञ सर्वेश्वर कभी नहीं हो सकता ॥१३२॥

[कर्मानुसार ही फल मिलेगा]

१३३—देख, मैं शीघ्र आता हूँ, और मेरा प्रतिफल मेरे साथ है। जिसतें हरएक को जैसा उसका कार्य ठहरेगा, वैसा फल देऊँगा॥ —यो० प्र० प० २२। आ० १२

[जो कर्मानुसार फल मिलेगा, तो पाप-क्षमा की बात व्यर्थ]

समीक्षक—जब यही बात है कि कर्मानुसार फल पाते हैं, तो पापों की क्षमा कभी नहीं होती। और जो क्षमा होती है, तो इञ्जील की बातें झूठी हैं। यदि कोई कहे कि क्षमा करना भी इञ्जील में लिखा है, तो पूर्वापरविरुद्ध अर्थात् 'हल्फ़दरोगी' हुई, तो झूंठ है। इसका मानना छोड़ देओ।

---

१. John.

२. अर्थात् ईश्वर का।

३. 'न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकं नेमा विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः। तमेव भान्तमनुभाति सर्वं तस्य भासा सर्वमिदं विभाति'॥ कठोप० वल्ली ५।१५। इस उपनिषद्वचन का यह विकृतस्वरूप जानना चाहिये।

अब कहाँ तक लिखें, इनकी बाइबल में लाखों बातें खण्डनीय हैं। यह तो थोड़ा-सा चिह्नमात्र ईसाइयों की बाइबल पुस्तक का दिखलाया है। इतने ही से बुद्धिमान् लोग बहुत समझ लेंगे। थोड़ी-सी बातों को छोड़ शेष सब झूंठ भरा है। जैसे झूंठ के सङ्ग से सत्य भी शुद्ध नहीं रहता[1], वैसा ही बाइबल पुस्तक भी माननीय नहीं हो सकता। किन्तु वह सत्य तो वेदों के स्वीकार में गृहीत होता ही है।

[2][यह थोड़ा-सा बाइबल के सम्बन्ध में लिखा है। बुद्धिमानों के सामने बहुत लिखना अनावश्यक है। इसके आगे मुसलमानों के मत के विषय में लिखा जायगा ॥]

इति श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीस्वामिनिर्मिते सत्यार्थप्रकाशे
सुभाषाविभूषिते कृश्चीनमतविषये त्रयोदशः
समुल्लासः सम्पूर्णः ॥१३॥

---

१. 'न तत्सत्यं यच्छलेनाभ्युपेतम्' ॥ महाभारत उद्योगपर्व ३५।३८।

२. ग्रन्थकार की यह सार्वत्रिक शैली है कि वह प्रत्येक समुल्लास के अन्त में समाप्यमान-समुल्लास के विषय का निर्देश करके अगले समुल्लास के विषय का निर्देश करते हैं। यहां भी इसी प्रकार का पाठ होना चाहिये। कैसे रह गया, यह विचारणीय है।

चतुर्दश-समुल्लासारम्भः

अनुभूमिका (४)

जो यह १४ चौदहवाँ समुल्लास मुसलमानों के मतविषय में लिखा है, सो केवल क़ुरान[1] के अभिप्राय से। अन्य ग्रन्थ[2] के मत से नहीं। क्योंकि मुसलमान क़ुरान पर ही पूरा-पूरा विश्वास रखते हैं।

यद्यपि फिरके होने के कारण किसी शब्द-अर्थ आदि विषय में विरुद्ध बात है, तथापि क़ुरान पर सब ऐकमत्य हैं। जो क़ुरान अर्बी भाषा में है, उस पर मौलवियों ने उर्दू में अर्थ लिखा है। उस अर्थ का देवनागरी अक्षर और आर्य्यभाषान्तर कराके, पश्चात् अर्बी के बड़े-बड़े विद्वानों से शुद्ध करवाके लिखा गया है।[3] यदि कोई कहे कि यह अर्थ ठीक नहीं है, तो उसको उचित है कि मौलवी साहबों के तर्जुमाओं का पहिले खण्डन करे। पश्चात् इस विषय पर लिखे।

क्योंकि यह लेख केवल मनुष्यों की उन्नति और सत्याऽसत्य के निर्णय के लिये है। अर्थात् सब मतों के विषयों का थोड़ा-थोड़ा ज्ञान होवे। इससे मनुष्यों को परस्पर विचार करने का समय[4] मिले। और एक-दूसरों के दोषों का खण्डन कर गुणों का ग्रहण करें। न किसी अन्य मत पर, न इस मत पर

यह एक निर्विवाद तथ्य है कि मानवबुद्धि जड़ वस्तु होने से किसी चेतन तत्त्व की प्रेरणा की अपेक्षा रखती है। बुद्धि जन्मजात होती है, किन्तु ज्ञान अर्जित शक्ति है। इसलिए मनुष्य में यह प्रवृत्ति देखी जाती है कि उसे स्वतः ज्ञान की उपलब्धि नहीं होती। मनुष्य को आरम्भ में गुरु-ज्ञान प्राप्त हो जाए तो वह मनन, चिन्तन, संवेदन तथा अनुभव के द्वारा उस ज्ञान का विकास कर सकता है। अर्थात् पशुओं की भाँति केवल स्वाभाविक ज्ञान के आश्रित न रहकर वह नैमित्तिक ज्ञान के सहारे ज्ञान की सीढ़ी पर चढ़ते चले जाने में समर्थ हो जाता है। मनुष्ययोनि की यही विशेषता है। इसी व्यवस्था में मनुष्ययोनि की सार्थकता है। यही ऐसी योनि है, जिसमें जीव को विकास का अवसर मिलता है, परन्तु यह विकास स्वतः नहीं होता, समुचित साधनों की सहायता से नैमित्तिक ज्ञान के द्वारा ही सम्भव होता है।

इसलिए सभी धार्मिक सम्प्रदाय किसी-न-किसी रूप में इस बात को स्वीकार करते हैं कि अनादि काल से परमेश्वर अपने ज्ञान की किरणें विशिष्ट आत्माओं में संक्रमित करके उनके माध्यम से

---

१. "वास्तव में यह शब्द 'कुरआन' है, परन्तु भाषा में लोगों के बोलने में 'कुरान' आता है।" इसलिए ऐसा ही लिखा है। यह टिप्पणी आगे ५वीं समीक्षा में पठित 'कुरान' पद पर सं० २ से मिलती हैं। उसे हम यहाँ ले आये हैं।

२. अर्थात् हदीसों आदि के मत से नहीं। हदीसों को कुछ मुसलमान मानते हैं कुछ नहीं मानते।

३. जिस देवनागरी कुरान के आधार पर ग्रन्थकार ने समीक्षाएँ लिखी हैं, वह 'परोपकारिणी सभा अजमेर' के संग्रह में सुरक्षित है। इसके अन्त का पाठ इस प्रकार है—"सं० १९३५ कार्तिक शु० ६ रविवासरे कुराणाख्योऽयं ग्रन्थः सम्पूर्णः। इन्द्रप्रस्थनगरे···।" इसका संशोधन 'गुड़ हट्टा' पटनानिवासी मुंशी मनोहरलाल ने किया था। द्र०—'ऋ० द० के पत्र और विज्ञापन' पृष्ठ १८१ (द्वि० सं०) मुन्शी मनोहरलाल के नाम का पत्र। इसी प्रसङ्ग में 'ऋ० द० के पत्र और विज्ञापन' के पृष्ठ २२ (द्वि० सं०) की टि० १ भी द्रष्टव्य है।

४. अर्थात् अवसर।

झूंठ-मूंठ बुराई वा भलाई लगाने का प्रयोजन है। किन्तु जो-जो भलाई है वही भलाई, और जो बुराई है वही बुराई सबको विदित होवे। न कोई किसी पर झूंठ चला सके, और न सत्य को रोक सके। और सत्याऽसत्य विषय प्रकाशित किये पर भी जिसकी इच्छा हो वह न माने वा माने। किसी पर बलात्कार नहीं किया जाता।

और यही सज्जनों की रीति है कि अपने वा पराये दोषों को दोष और गुणों को गुण जानकर गुणों का ग्रहण और दोषों का त्याग करें। और हठियों का हठ-दुराग्रह न्यून करें-करावें। क्योंकि पक्षपात से क्या-क्या अनर्थ जगत् में न हुए और न होते हैं? सच तो यह है कि इस अनिश्चित क्षणभङ्ग[1] जीवन में पराई हानि करके लाभ से स्वयं रिक्त रहना और अन्य को रखना मनुष्यपन से बहि:[2] है।

मानवजाति तक पहुँचाता आया है। इन्हीं ज्ञान-रश्मियों का प्रसृत रूप मनुष्य के ज्ञान का आधार बन जाता है। इस ज्ञान को परमेश्वर से सीधे प्राप्त करनेवालों को लोग अवतार, ऋषि, पैगम्बर, रसूल, सन्देशवाहक, फ़रिश्ते आदि नामों से पुकारने लगते हैं। कालान्तर में लोग परमेश्वर द्वारा प्रदत्त ज्ञान के आधार पर अपने काल और देश की आवश्यकताओं के अनुसार विभिन्न आचार-संहिताओं का रूप देकर विभिन्न सम्प्रदायों की स्थापना कर देते हैं।

आर्ष साहित्य में परमात्मा द्वारा प्रदत्त अनादि ज्ञान को श्रुति और समय-समय पर रचित मानवीय आचारसंहिताओं को स्मृति कहते हैं। ऋषि इस ज्ञानपरम्परा को वेदों तक ले गये हैं। ईश्वरीय ज्ञान के नाम से अभिहित धर्मग्रन्थों में ही नहीं, मानवजाति मात्र के पुस्तकालय में वेद सबसे प्राचीन पुस्तक है (The Veda is the oldest book in the library of the world), यह सर्ववादीसम्मत है। अपने सायणभाष्य के चतुर्थ खण्ड की भूमिका में मैक्समूलर ने लिखा है—

"After the latest researches into the history and chronology of the Old Testament, we may now safely call the Rigveda the oldest, not only of Aryan Community, but of the whole world." अर्थात् इतिहास की अधुनातम गवेषणाओं के आधार पर हम कह सकते हैं कि ऋग्वेद, आर्य जाति की ही नहीं, विश्वभर की प्राचीनतम पुस्तक है। इस प्रकार यह पुस्तक (वेद) सब पुस्तकों की जननी ठहरती है। अथर्ववेद में उसे 'वेदमाता' कहा गया है।

कुरान में इस तथ्य को ज्यों का त्यों, किन्तु प्रकारान्तर से, स्वीकार किया गया है। वहाँ हज़रत आदम को प्रभु का ज्ञान (इलहाम) प्राप्त होने के प्रसंग में कहा गया है—

अल्लमा आदमल असमाआ कुल्लहा। सूरा अल बक़रा, आयत ३१

और आदम को संसार की सब वस्तुओं के नाम सिखाये गये।

और आदम ने अपने रब से कुछ शब्द पा लिये (फ़तलक्का आदमामिन रब्बिही कलमातिन—वही ३७)।

इतना ही नहीं, कुरान इस बात को भी स्वीकार करता है कि—

माकानन्नास इल्ला उम्मतन वाहिदतन।

अर्थात् आरम्भ में तो सभी लोग एक ही धर्म को माननेवाले थे। उनमें मतभेद तो बाद में पैदा हुए।

---

१. अर्थात् नाशवान्।
२. अर्थात् बाहर की बात है।

इसमें जो कुछ विरुद्ध लिखा गया हो, उसको सज्जन लोग विदित कर देंगे। तत्पश्चात् जो उचित होगा, तो माना जायगा। क्योंकि यह लेख हठ दुराग्रह ईर्ष्या-द्वेष वाद-विवाद और विरोध घटाने के लिये किया गया है, न कि इनको बढ़ाने के अर्थ। क्योंकि एक-दूसरे की हानि करने से पृथक् रह परस्पर को लाभ पहुँचाना हमारा मुख्य कर्म है।

अब यह १४ चौदहवें समुल्लास में मुसलमानों का मतविषय सब सज्जनों के सामने निवेदन करता हूँ। विचारकर इष्ट का ग्रहण अनिष्ट का परित्याग कीजिये। अलमतिविस्तरेण बुद्धिमद्वर्य्येषु॥

इत्यनुभूमिका॥

आगे कुरान में लिखा है—

अर्थात्—ख़ुदा ने आदम से कहा कि अब तुम इन लोगों (फ़रिश्तों) को इनके नाम बताओ। तब उस (आदम) ने उन (फ़रिश्तों) को (सब वस्तुओं) के नाम बताये।

निरुक्त (१।२०) में इसी प्रकार लिखा था—"साक्षात्कृतधर्माण ऋषयो बभूवुः, तेऽवरेभ्यो-ऽसाक्षात्कृतधर्मभ्य उपदेशेन मन्त्रान् सम्प्रादुः।" अर्थात् साक्षात्कृतधर्मा (जिन्होंने धर्म का साक्षात्कार किया) ऋषि हुए। उन्होंने असाक्षात्कृतधर्माओं (जिनको स्वयं धर्म का साक्षात्कार नहीं हुआ था) को उपदेश द्वारा मन्त्र प्रदान किये (मन्त्रों का उपदेश किया)।

क़ुरान में आदम साक्षात्कृतधर्मा है, क्योंकि उसने साक्षात् ख़ुदा से ज्ञान प्राप्त किया था और फ़रिश्ते असाक्षात्कृतधर्मा हैं, क्योंकि उन्होंने वह ज्ञान सीधे ख़ुदा से नहीं, आदम से प्राप्त किया था।

मुसलमानों के सिद्धान्त के अनुसार सृष्टि के आदि में आदम प्रथम मनुष्य था और क़ुरान के अनुसार उस पहले मनुष्य को सृष्टि के आरम्भ में अपना मनुष्योपयोगी ज्ञान अर्थात् इलहाम दिया। और, जैसा कि हमने ऊपर लिखा है, वेद में सृष्टि का सबसे पुरातन एवं प्रभुप्रदत्त ज्ञान है। वैदिक मान्यता के अनुसार 'सर्वज्ञानमयो हि सः'—वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। मुसलमान ऐसा न भी न मानें, तब भी वे आज तक क़ुरान में ऐसा कोई सत्सिद्धान्त नहीं दिखा सके जो वेद में न हो। तब प्रश्न उपस्थित होता है कि फिर क़ुरान के इलहाम की आवश्यकता क्यों हुई?

मुसलिम विद्वान् इस बात को मानते हैं कि क़ुरान से पूर्व वेद, तौरत, ज़बूर, जन्दावस्ता, इंजील आदि अनेक ईश्वरप्रदत्त इलहाम थे। फिर एक और क्यों? इस पर मौलवी मुहम्मद अली का कहना है—

"Revelation, according to the Holy Quran, is not only universal, but also progressive and it attains perfection in the final revelation." (भू० पृ० XXXVIII) अर्थात्—क़ुरान के अनुसार इलहाम केवल सार्वभौम ही नहीं है, वरन् प्रगतिशील भी है और वह अन्तिम इलहाम में पूर्णता प्राप्त करता है। दूसरे शब्दों में मौलवी साहब क़ुरान को इलहामी सिद्ध करने के लिए विकासवाद (Theory of evolution) का सहारा लेते हैं। किन्तु विकासवाद का सहारा लेकर तो उन्होंने उसे बेसहारा कर दिया—कहीं का नहीं छोड़ा। विकासवाद के क्रम का तो कभी अन्त नहीं होता। अतः चौदह सौ वर्ष पूर्व हुआ ज्ञान पूर्ण कैसे कहा जा सकता है? तात्पर्य यह कि विकासवाद की प्रक्रिया को मानकर क़ुरान शरीफ़ को क्या, किसी को भी अन्तिम इलहाम नहीं कहा जा सकता।

क़ुरान से पूर्ववर्त्ती इलहामी ग्रन्थों के होते हुए क़ुरान की आवश्यकता में दूसरा हेतु मौलवी साहब यह देते हैं कि अन्य इलहामी ग्रन्थों में पर्याप्त हेर-फेर हो गया था। अतः परमात्मा को अपना ज्ञान शुद्ध रूप में देने के लिए क़ुरान का इलहाम देने की आवश्यकता पड़ी। परन्तु उनका यह कथन

सर्वथा मिथ्या है। वेद को आप इलहामी मानते हैं। पाश्चात्य विद्वान् वेद को प्राय: तीन सहस्र वर्ष पुराना मानते हैं। तो वे इस अवधि में उसमें किंचित् भी परिवर्त्तन हुआ नहीं मानते। वस्तुत: वेद को सुरक्षित रखने के लिए जो उपाय किये गये, उन्हें आजकल की गणित की भाषा में Permutation and combination कहा जा सकता है। वेदमन्त्र में स्मरण रखने और उसमें एक मात्रा का भी लोप या परिवर्त्तन न हो सके, इसके लिए उसे १३ प्रकार से याद किया जाता था। याद करने के इस उपाय को दो भागों में बाँटा जा सकता है—प्रकृति-पाठ तथा विकृति-पाठ। प्रकृति-पाठ का अर्थ है—मन्त्र को जैसा वह है, ठीक वैसा ही याद कर लेना। विकृति-पाठ का अर्थ है—उसे तोड़-तोड़ कर, पदों को आगे-पीछे से दुहरा-दुहराकर, भिन्न-भिन्न प्रकार से याद करना। पाठों के इन नियमों को विकृतिवल्ली नामक ग्रन्थ में विस्तार से दिया गया है।

वेदों की रक्षा के लिए किये गये प्रयत्नों की सराहना करते हुए प्रो० मैक्समूलर ने अपने ग्रन्थ 'Origin of Religion' में पृ० १३१ पर लिखा है—

"The tests of the Vedas have been handed down to us with such accuracy that there is hardly a various reading in the proper sense of the word or even an uncertain aspect in the whole of Rigveda."

सच तो यह है कि मौलवी मुहम्मद अली को वैदिक धर्म के सम्बन्ध में अधूरा ज्ञान भी नहीं है। यदि होता तो वह यह कभी न लिखते—"Judaism no doubt taught that 'Thou shalt have no gods before me' or that 'Thou shalt not make unto thee any graven image', but the Hindu scriptures do not contain even such an express injunction, while Christianity had little to add to the Jewish doctrine." (भू० पृ० XLII)। अर्थात् यहूदियत ने यह दिस्सन्देह सिखाया कि 'तू मेरे सामने किसी देवता को नहीं मानेगा' अथवा कि 'तू अपने लिए तू कोई मूर्ति नहीं बनायेगा।' किन्तु हिन्दू धर्मग्रन्थों में तो ऐसा स्पष्ट आदेश भी नहीं है। ईसाइयत ने यहूदी सिद्धान्त ने कुछ नहीं बढ़ाया।

ईसाई तो मौलवी साहब से स्वयं निपट लेंगे। उन्होंने इस विषय पर अनेक ग्रन्थ लिखे हैं, जिनमें क़ुरान के प्रमाण देकर सिद्ध किया है कि क़ुरान के मुख्य विषय बाइबल से ही लिए गए हैं। पादरी एस० एम० पाल का उर्दू में लिखा 'हमारा क़ुरान' नामक पुस्तक ही पढ़ लेंगे तो उनकी आँखें खुल जायेंगी। जहाँ तक हिन्दुओं का सम्बन्ध है, वेद उनका सर्वमान्य ग्रन्थ है। वे उसे ब्रह्मनि:श्वसित मानते हैं। उसमें स्पष्ट आदेश है—'न तस्य प्रतिमा अस्ति' (यजु० ३२।३) अर्थात् उत (=परमेश्वर) की कोई मूर्त्ति नहीं है। मूर्त्ति इसलिए नहीं बन सकती, क्योंकि वह 'अकायम्' (यजु० ४०।८) अशरीरी है। जब उसकी मूर्त्ति ही नहीं है तो उसकी पूजा का प्रश्न ही नहीं उठता। इस स्पष्ट आदेश के होते हुए यह कहना कि हिन्दुओं के धर्मग्रन्थों में मूर्त्तिपूजा के विषय में कोई स्पष्ट निर्देश नहीं है, नितान्त मिथ्या एवं द्वेषमूलक है। सच तो यह है कि मुसलमानों के बराबर मूर्त्तिपूजक अन्य कोई नहीं है। इस विषय का विस्तृत विवेचन आगे यथास्थान करेंगे। यहाँ संकेतरूप में इतना कह देना पर्याप्त है—

संगे असवद को तो तुम चूमो बसद शौक़ो ख़ुशी।
बुतपरस्ती यारे मन जायज़ नहीं इसलाम में॥

जहाँ तक इलहामी ग्रन्थों में हेराफेरी का सम्बन्ध है, यह निर्विरोध कहा जा सकता है कि इस विषय में क़ुरान सबसे आगे है। 'क़ुरआन' मजीद के अनुवादक मुहम्मद फ़ारुख़ ख़ाँ के अनुसार—

"क़ुरान २३ वर्ष की अवधि में आवश्यकतानुसार थोड़ा-थोड़ा करके विभिन्न अवसरों पर उतरा है। जब कोई 'सूरा' उतरती तो अल्लाह का रसूल उसे उसी समय लिख देता और कहता कि

इसे अमुक सूरा के बाद और अमुक सूरा से पहले रक्खा जाये। परन्तु जिस क्रम से क़ुरान की सूरतों का अवतरण हुआ, उन्हें उस क्रम से संकलित और संगृहीत नहीं किया गया। जब क़ुरान की आयतों (Words of Allah) को पुस्तकाकार देने का प्रबन्ध किया गया तो इस बात का एलान कर दिया गया कि जिस किसी के पास भी क़ुरान का थोड़ा-सा भी हिस्सा लिखित रूप में मौजूद हो, ले आये। नबी सल्ल० के लिखाये हुए हिस्से भी इकट्ठा कर लिये गये। लिपिबद्ध होने पर उसे हज़रत अबूबक्र के पास रख दिया गया। उनके बाद उसे हज़रत उमर और उनके बाद उनकी बेटी हज़रत हफ़्सा के पास रखवा दी गई।"

क़ुरान में कुल ११४ सूरा या सूरतें हैं। इनमें ८६ मक्की हैं और शेष २८ मदनी। क़ुरान जो भाग हिजरत (देशत्याग) से पूर्व मक्का में उतरा, वह मक्की और जो हिजरत के बाद मदीना में उतरा, वह मदनी कहलाया। क़ुरान में ६३६० आयतें हैं।

'Book of Knowledge' खण्ड में क़ुरान सम्बन्धी विवरण इस प्रकार उपलब्ध है—"The Koran is the Arabic name of the Bible or a collection of messages which Mohammed gave to the world as being transmitted by the Angel Gabriel in visions or in dreams. The verses of the Koran (scattered in all directions and recorded on parchments, leaves, stones, bones and other rude materials or those that were preserved in the memory of his contemporaries) were all collected. Abu Baker was the first to collect the Koran, but his collection was not a complete official version; for there were other fragments still in circulation which led to disputes as to the correct reading of particular passages. To put an end to this position of affairs, fatal alike to the laws and unity of the Faith, the Caliph Osman ordered a revision of the Koran, its basis being the collection under Baker." (Page 5366)

हज़रत आयशा (मुहम्मद साहब की पत्नी) से रवायत है कि दो आयतें (एक रजम=पथराव करने और दूसरी रज़ाअतल कबीर=बड़ों को दूध पिलाने की) कागद पर लिखी मेरे तख्त के नीचे पड़ी थीं। हम रसूलिल्लाह की वफ़ात (मृत्यु) में संलग्न थे कि घर की पालतू बकरी खा गई।

यह लिखने का तात्पर्य यह है कि काग़ज़, चमड़े आदि के टुकड़े जिन पर अंकित था, वे सब वस्तुएँ किसी सन्दूक में बन्द करके किसी सुरक्षित स्थान पर नहीं रक्खी गई थीं। इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि कितना क़ुरान उपलब्ध हो सका और कितना नहीं। हज़रत उसमान ने अपने द्वारा संशोधित कराये गये क़ुरान की एक-एक प्रति मुसलिम देशों को भेजी, इस आदेश के साथ कि इससे पूर्व की जो सहीफ़ें आपके पास हैं वे जला दिये जायें। और तो सब जल गये, किन्तु बीबीहफ़्सा का क़ुरान बच गया। जब मदीना का हाकिम मर्दान हुआ तो उसने बीबीहफ़्सा से क़ुरान माँगा, पर उसने नहीं दिया। बीबीहफ़्सा की मृत्यु होने पर उसके भाई अब्दुल्ला बिन उमर से लेकर वह क़ुरान भी जला दिया गया।

क़ुरान का उतरना—तफ़सीर इत्तिकान में लिखा है कि इब्बे साद ने बीबी आयरू से खायत की है कि जब वही उतरती थी तब आपका (हज़रत मुहम्मद का) सिर चकराने लगता था और चेहरे की दशा अस्त-व्यस्त होने लगती थी। दाँत कटकटाने लगते और पसीना आने लगता। यह हालत २३ वर्ष तक रात्रि के समय होती रही। क्या क़ुरान के इस विचित्र प्रकटीकरण को जानकर कोई समझदार व्यक्ति उसके ईश्वरीय ज्ञान होने पर विश्वास कर सकता है? कहा जाता है कि हज़रत मुहम्मद की यह दशा उनके मिरगी रोग से ग्रस्त होने के कारण होती थी। अरब के लोगों की अज्ञानता का लाभ

उठाने के लिए उन्होंने उसको इलहाम होने की दशा बताया। Book of knowledge में हज़रत मुहम्मद और कुरान के विषय में लिखा है—"Viewed as a piece of literature produced in strange circumstances by an ignorant but clever man, the Koran is full of frequent contradictions as the prophet forgot what he had said when he was speaking in different circumstances. Instead of being one book, written by one author during a continuous period, it is a collection and compilation of many writings, widely separated in time and character. These writings have been frequently edited and combined." (Page 5677)

२३ वर्ष तक आते रहने से ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे खुदा को रह-रहकर बातें याद आती रहती थीं। किसी विषय का क्रमबद्ध विवेचन करते हुए उसे पुस्तक रूप में अभिव्यक्त करना उसके सामर्थ्य से बाहर था। कोई भी व्यक्ति जिसने अपने मस्तिष्क व विवेक को ताला नहीं लगा रक्खा, ऐसी पुस्तक को इलहामी नहीं मान सकता।

अल्लामा जलालुद्दीन सियूती ने अपनी तफ़सीर इत्तिकान के प्रकरण १६ में पृष्ठ १०६ पर लिखा है कि क़ुरान के एकबारगी न उतरने का कारण यह है कि इसमें कुछ भाग नासिख है और कुछ भाग मनसूख (निरस्त) है अर्थात् कुरान में कुछ आयतें ऐसी हैं, जिनको दूसरी आयतों ने निरस्त कर दिया है। दोनों के पृथक्-पृथक् आने से ही व्यवस्था रह सकती थी। यह सिलसिला २३ वर्ष तक अर्थात् हजरत मुहम्मद साहब के जीवन काल में और तत्पश्चात् भी चलता रहा। इब्ने अब्बास ने उक्त हेतु कुरान की एक आयत से दिया है, जिसका एक भाग ही अल्लामा सियूती ने वहाँ दिया है। हम यहाँ पूरी आयत देते हैं—

वाला यातून का बिमसलिन इल्ला जेना का बिल हक्के व अहसना तफ़सीरा।

—पारा रकू १६, ३।१

अर्थात्—और नहीं लाते मुशरिक लोग तेरे वास्ते कोई मसल अर्थात् तेरी नबव्वत (पैग़म्बरी) को निरस्त करने और किताब (क़ुरान) पर तान (लांछन) करने की कुछ बात नहीं कहते। परन्तु हम तेरे लिए उचित उत्तर और खुली हुई दलील के साथ उनके कथन को निरस्त करते हैं। (तफ़सीर कादरी, भाग २, पृष्ठ १४०)

नासिख़-मनसूख़

क़ुरान के सम्बन्ध में एक समस्या 'नासिख-मनसूख' की है। अर्थात् क़ुरान की कुछ आयतें ऐसी हैं, जिनका इलहाम ख़ुदा ने पहले दिया, पर कालान्तर में विशेष कारण से उन्हें त्याज्य घोषित कर दिया। त्याज्य वा निषेध्य (निषिद्ध) को अरबी भाषा में 'मनसूब' कहते हैं तथा निषेधक अर्थात् मनसूख करनेवाली आयत को 'नासिख़' कहते हैं। बहुत से मुसलिम विद्वान् जो 'नासिख़-मनसूख़' सिद्धान्त को मानते हैं, इसका आधार क़ुरान की अनेक आयतें बतलाते हैं। उनमें से एक आयत २।१०६ है। इसका अर्थ प्रायः सभी एक-सा करते हैं। मौलाना अशरफ़ अली का अनुवाद इस प्रकार है—'हम किसी आयत का हुक्म जो मौक़ूफ़ कर देते हैं या उस आयत को फ़रामोश कर देते हैं तो हम उस आयत से बेहतर या उस आयत की मिस्ल ही ला देते हैं।' इसी आयत का मौलवी अब्दुल हकीम का अनुवाद यह है—'हम जो कोई आयत मनसूख़ या तर्क करते हैं तो उससे बेहतर या उसकी मिस्ल ले आते हैं।' यहाँ शाह रफ़ीउद्दीन ने 'मुवाजह-उल-क़ुरान' का यह उद्धरण टिप्पणी में दिया है—'यह भी यहूद का ताऽन (आक्षेप) था कि तुम्हारी किताब में बाज़ी आयत फसख (निषिद्ध) होती है। मगर अल्लाह की तरफ़ से थी तो

क्या ऐब देखा कि मौकूफ़ की। अल्ला ताला ने फ़रमाया ऐब न पहली में था, न पिछली में, पर हाकिम जो चाहे करे।' क़ुरान की इस आयत तथा 'मुवाजह-उल-क़ुरान' से स्पष्ट सिद्ध हो रहा है कि क़ुरान में ऐसी कुछ आयतें अवश्य हैं, जो मनसूख़ (निषिद्ध) हैं। मौलवी सना उल्ला ने इस आयत का यह अनुवाद किया है—'जो हुक्म हम बदलें या पीछे करें तो उससे अच्छा या उस जैसा लाया कर हैं।' इसमें मौलवी साहब ने 'आयत' का अर्थ 'हुक्म' करके और 'नसख़' का अर्थ 'हटायें' का अर्थ 'बदलें' करके ग्रन्थकार द्वारा किये आक्षेप का निराकरण करने का यत्न किया है। किन्तु अपने भाष्य में उन्होंने इस आक्षेप को बनाये रक्खा है—"यह हम पर उसकी मेहरबानी से है कि एक हुक्म बावजूद ज़रूरत बदलने (बदलने की आवश्यकता होने) पर दायम (सदा) नहीं रहने देते, बल्कि वन्दों की ताक़त उसे बर्दाश्त न कर सके तो बदल देते हैं। हमारे हाँ क़ायदा है कि जो हुक्म हम बदलें या कुछ मुद्दत के लिए उसे पीछे करें तो सबाब में उससे अच्छा या उस जैसा लाते हैं।" मौलवी सनाउल्ला ने इस पर यह टिप्पणी करके बात स्पष्ट कर दी है—"बाज़ अहकाम (आदेश) जो शरीयते इसलाम में मनसूख़ होते हैं, जैसे तहवीले क़ाबा, तो इस पर मुख़ालफ़ीन (विरोधी) एतराज़ करते हैं कि 'अभी तक इनके दीन का कुछ ठीक नहीं, बल्कि एक रोज़ एक हुक्म जारी है तो दूसरे रोज़ मनसूख़ है'। उनके जवाब में एक आयत नाज़िल हुई थी" (प्रथम भाग पृष्ठ ६३)। मौलवी सनाउल्ला ने यह टिप्पणी हदीस बुख़ारी के आधार पर लिखी है। इन उद्धरणों से स्पष्ट सिद्ध है कि मुसलमान विद्वानों की परम्परा 'नासिख़-मनसूख़' सिद्धान्त को मान्यता देती है।

परन्तु मौलवी मुहम्मद अली इसका विरोध करते हुए कहते हैं—"There is not a single report traceable to the Holy prophet that any verse of the Holy Quran was abrogated." (भू० पृष्ठ XIX-XX)। अर्थात् पवित्र पैग़म्बर की एक भी हदीस ऐसी नहीं है कि क़ुरानपाक की कोई आयत मनसूख़ है। हमने आयतों का मनसूख़ होना क़ुरान के आधार पर दर्शाया है, किन्तु मौलवी मुहम्मद अली का दुस्साहस देखें—"The Quran does not say that any of its verses or communications is abrogated." (भू० पृष्ठ XX) क़ुरान यह नहीं कहता कि उसकी कोई आयत या सन्देश मनसूख़ हुआ है। परन्तु जादू वह जो सिर पर चढ़ कर बोले। इसके आगे मौलवी मुहम्मद अली स्वीकार करते हैं—"It is only with the later commentators that we meat with the tendency to augment the number of verse thought to have been abrogated, so much so that some of them pronounced five hundred verses to have been abrogated." (भू० पृष्ठ XX) अर्थात् यह केवल पश्चाद्वर्ती भाष्यकारों की बात है कि उनमें मनसूख़ आयतों की संख्या बढ़ाने की प्रवृत्ति पाई जाती है, यहाँ तक कि कुछ के अनुसार यह संख्या पाँच सौ तक पहुँच जाती है।

मौलवी मुहम्मद अली को एक भी प्राचीन भाष्यकार ऐसा नहीं मिला, जिसने आयतों के मनसूख़ होने की बात को नकारा हो। मौलवी मुहम्मद अली तथा उससे पूर्ववर्ती सभी मुसलिम विद्वानों की सर्वसम्मत मान्यता है कि क़ुरान ने अपने पूर्ववर्ती इंजील आदि के कुछ आदेशों को मनसूख़ किया है। इसी आधार पर कुछ विचारशील मुसलमानों के मन में विचार आया कि जब ख़ुदा ने पहले आदेशों में से कुछ को, क़ुरान के द्वारा, मनसूख़ कर दिया है तो अवश्य ही इसमें के भी कुछ आदेश मनसूख़ हैं। यह विचारधारा निरन्तर प्रवहमान रही। संगठित रूप में अहमदियों (मिर्ज़ायियों या क़ादियानियों) से इस अपेक्षाकृत तर्कसंगत स्थापना को बल मिला।

क़ुरान के सम्बन्ध में उक्त विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि अन्यान्य इलहामों के होते हुए क़ुरान के रूप में अतिरिक्त इलहाम की आवश्यकता सिद्ध करने के लिए मौलवी मुहम्मद अली द्वारा

प्रस्तुत तर्क सर्वथा थोथे हैं। क़ुरान को बार-बार संकलित किया गया। निश्चय ही हर बार उसमें परिवर्त्तन हुआ होगा। मूल की सब प्रतियाँ हज़रत उसमान के आदेश से सर्वत्र जला दी गई थीं। हफ़सा के पास बच गई थी। कुछ समय बाद वह भी जला दी गई थी। हज़रत आयशा के पास कुछ पन्ने पड़े थे, एक दिन उनकी पालतू बकरी खा गई। मनसूख़ आयतों की संख्या भी पाँच सौ तक पहुँच गई है। इस प्रकार वर्त्तमान में उपलब्ध क़ुरान की प्रामाणिकता सर्वथा सन्दिग्ध है। जैसे-जैसे आवश्यकता होती थी, वैसे-वैसे आयतें उतरती रहती थीं। आवश्यकता का अर्थ था हज़रत मुहम्मद की आवश्यकता या इच्छा। वह जो चाहते थे करते थे। अपने अनुयायियों के सन्तोष के लिए अपने कार्य के औचित्य को सिद्ध करने के लिए प्रातःकाल उठ कर (आयतें रात्रि के अँधेरे में ही उतरती थीं) घोषणा कर देते थे कि बीती रात ख़ुदा की तरफ़ से यह आज्ञा अर्थात् आयत नाजिल हुई। लोग सिर झुकाकर उस पर विश्वास कर लेते या ईमान ले आते थे। उदाहरणार्थ—

हज़रत मुहम्मद को ख़ुदा की ओर से नौ पत्नियाँ रखने की अनुमति थी। जब उन्हें अधिक की आवश्यकता हुई तो आयत उतरी कि पत्नियों से अतिरिक्त औरतें उन्हें लौंडी या बाँदी का नाम देकर रखी जा सकती हैं। जब युद्ध में जीती गई कुछ औरतों पर उनका दिल आ गया तो आयत उतरी कि पैग़म्बर को लूट में मिली औरतें हलाल हैं। मुहम्मद साहब के पास ज़ैद नाम का एक गुलाम था। कुछ समय बाद उसे स्वतन्त्र कर दिया और अपना दत्तक पुत्र बना लिया। मुहम्मद साहब ने अपनी फूफी की बेटी ज़ैनब से कहा कि तू ज़ैद से विवाह कर। ज़ैनब कुलीन घर की लड़की थी। उसने अपने वंश की प्रतिष्ठा रखने के लिए अब मुक्त, परन्तु मूलतः गुलाम लड़के से विवाह करने से इनकार कर दिया। उसी रात आयत उतरी कि रसूल के आदेश की अवहेलना करने का किसी को अधिकार नहीं है। उन्हें अपनी स्वतन्त्रता ख़ुदा और रसूल के अधीन कर देनी चाहिए, वरना वे मुसलमान नहीं रहेंगे। इस प्रकार हज़रत मुहम्मद ने अपनी बात पूरी करने के लिए ख़ुदा को माध्यम बनाकर आयत उतारी और ज़ैद के साथ ज़ैनब का विवाह हो गया। ज़ैद और ज़ैनब के विवाह को अभी तक बहुत दिन नहीं हुए थे कि ख़ुदा ने हजरत मुहम्मद को एक आयत उतार कर बताया कि ज़ैनब तुम्हारी पत्नियों में सम्मिलित होगी। लोग निन्दा करेंगे कि अपने दत्तक पुत्र की पत्नी की इच्छा की। परन्तु तुम डरना मत, कह देना कि यह तो ख़ुदा का हुक्म है। ज़ैद ने ज़ैनब को तलाक़ दे दिया। आयत उतरी कि हमने (खुदा ने) तुम्हारा विवाह ज़ैनब से कर दिया ताकि तुम्हारे पश्चात् मुसलमानों को अपने दत्तक पुत्रों की पत्नियों के साथ विवाह करने में कोई बाधा न हो। इद्दत (तलाक़ के बाद की नियत अवधि) बीतने पर हज़रत मुहम्मद ज़ैनब के घर उसकी आज्ञा के विना ही जा पहुँचे। ज़ैनब ने आपत्ति की कि आप विना निकाह और साक्षियों के कैसे आ गये? हज़रत मुहम्मद ने कहा कि अल्लाह ने विवाह कर दिया। पैग़म्बर के विवाह के लिए औरत का समर्पण काफ़ी है—यह आयत नाज़िल हुई है। आश्चर्य की बात है कि जिस ज़ैनब का हज़रत मुहम्मद से विवाह हो चुका, और वह भी अल्लाह के द्वारा, उसे अपने विवाह की ख़बर तक नहीं हुई।

एक दिन हज़रत मुहम्मद की पत्नियों ने अधिक और अच्छे रोटी-कपड़े की माँग को लेकर हड़ताल कर दी। हड़ताल एक महीने तक चली। पत्नियाँ हज़रत मुहम्मद से हार्दिक प्रेम करती थीं, पर सांसारिक व्यवहार में वे साधारण स्त्रियों की भाँति थीं। २९ दिन के पश्चात् जिब्रील आयत (पारा २१-२२) लेकर आये—"ऐ पैग़म्बर! अपनी पत्नियों से कह दो कि यदि तुम सांसारिक जीवन की कामना करती हो और बनाव सिंगार करना चाहती हो तो आओ मैं तुमको तलाक़ दे दूँ और विदा

कर दूँ।" यह सुनकर सबसे पहले हज़रत की सबसे छोटी, सुन्दर और प्यारी पत्नी आयशा ने हथियार डाल दिये। नौकरी जाती देख सभी ने महँगाई भत्ते की माँग छोड़ दी और भविष्य में ऐसी माँगें न करने की प्रतिज्ञा की।

हज़रत मुहम्मद ने अपनी पत्नियों से संभोग हेतु क्रमशः रात्रियाँ निश्चित कर रक्खी थीं। उस रात हफ़सा की बारी थी। वह उसके यहाँ गये। हफ़सा अपने पिता को देखने गई हुई थी। हज़रत मुहम्मद ने उस रात वहीं दासी मारिया से संभोग किया। झट आयत नाज़िल हो गई—"ऐ नबी मुहम्मद! क्यों हराम करता है उस वस्तु (मारिया) को जिसे ख़ुदा ने तेरे लिए हलाल (ग्राह्य) कर दिया है" (पारा २८, रकू ११।१९)। आगे मुहम्मद साहब के परिवार (मुहम्मद साहब और उनकी पत्नियों में से दो की स्थिति व व्यक्तिगत चरित्र) की झाँकी व ख़ुदा की करामात देखिये—

"हफ़सा को इस बात का पता चल गया और इस पर दुःख प्रकट किया। हज़रत ने कहा—ऐ हफ़सा! तू प्रसन्न नहीं कि मैं उसे अपने ऊपर हराम कर लूँ। हफ़सा ने कहा—या रसूलिल्लाह, मैं प्रसन्न हूँ। हज़रत ने कहा—यह बात तुम्हारे पास धरोहर है, तुम इस बात को किसी अन्य से न कहना। हफ़सा ने इस बात को स्वीकार कर लिया। परन्तु जैसे ही हज़रत मुहम्मद घर से बाहर निकले, हफ़सा ने यह बात आयशा से कह दी। तब ख़ुदा ने अपने रसूल को सूचित कर दिया कि तेरा रहस्य प्रकट हो गया। फिर जब बीबी हफसा को हज़रत ने यह बात बताई तो हफसा ने पूछा कि आपको यह बात किसने बताई? रसूल ने कहा—मुझे यह बात खुदा ने बताई। हजरत ने कहा—ऐ हफसा और आयशा! तुम दोनों तोबा=प्रायश्चित करो। आयशा और हफसा ने वही कहा था जो हुआ था। वे तो इसके लिए भी तोबा करें। और हजरत मुहम्मद दासी से व्यभिचार करें और अपने इस पाप को छुपाते फिरें। उन्हें फिर भी कोई दण्ड नहीं। इस प्रकार की आयतों से बनी है इलहामी किताब कुरान।

कुरान-भाष्य—ग्रन्थकार की यह विशेषता रही कि वे तत्तन्मत के मूल ग्रन्थों के आधार पर उस-उस मत को समझने का पूरा यत्न करते थे। वे अरबी भाषा से अनभिज्ञ थे, इसलिए इसलाम की समीक्षा करने से पूर्व कुरान का भाषान्तर कराना उनके लिए आवश्यक था। उर्दू में कुरान के भाष्य हो चुके थे। परन्तु ग्रन्थकार पहले व्यक्ति थे, जो मुसलमानों के धर्मग्रन्थ का भाषानुवाद कराने में प्रवृत्त हुए। उस समय शाह रफीउद्दीन देहलवी का उर्दू अनुवाद मुसलमानों में प्रामाणिक माना जाता था। ग्रन्थकार ने उसी उर्दू अनुवाद का आर्यभाषा (हिन्दी) में अनुवाद कराया। शाहजी का अनुवाद अन्यथा शुद्ध होने पर भी दुर्बोध था, क्योंकि उन्होंने अरबी में जिस क्रम से शब्द हैं, उसी क्रम का उर्दू में अनुसरण किया। जैसे, पहली आयत का अनुवाद है—'सब तारीफ़ वास्ते अल्ला के परवरदिगार आलमों का।' उर्दू में न ऐसा बोला जाता है, न लिखा जाता है। कई स्थानों पर तो वह ऐसा हो गया कि पढ़ने से कुछ भी हाथ-पल्ले नहीं पड़ता। ग्रन्थकार के कराये अनुवाद में उसे व्यावहारिक रूप देने का प्रयास किया है। कहीं-कहीं पर विरामादि के कारण स्खलन हो जाने पर भी वह ऐसा नहीं है कि जिससे समीक्षा अन्यथा हो गई हो।

ग्रन्थकार ने वेद का भाष्य वेद से करने का आदेश किया है। कुछ मुसलमान विद्वानों ने कुरान का अनुवाद या भाष्य करने में इसी सिद्धान्त को अपनाया। ग्रन्थकार के कराये गये अनुवाद के ढंग को सबसे पहले दिल्ली के डिपुटी नजीर अहमद ने अपनाया। तत्पश्चात् मौलवी फ़तहखाँ ने उनका अनुसरण किया। इस प्रकार मुसलमानों ने ग्रन्थकार के बताये डगर को अपनाया। ग्रन्थकार ने केवल अनुवाद पढ़कर सन्तोष नहीं किया, प्रत्युत उस समय भारत में कुरान के जितने भी अरबी-फ़ारसी भाषाओं में भाष्य मिलते थे, उनको उन्होंने सूना था। कई मुसलमान विद्वानों ने ग्रन्थकार पर आक्षेप किया कि अरबी

भाषा में निष्णात न होने के कारण उन्हें कुरान की समीक्षा करने का अधिकार नहीं था। ग्रन्थकार ने इस बात को पहले ही भाँप लिया था। इसलिए इसका उत्तर उन्होंने पहले ही दे दिया है—"यदि कोई यह कहे कि यह अर्थ ठीक नहीं है तो उसको उचित है कि पहले मौलवी साहबों के तर्जुमों का खण्डन करे।" ग्रन्थकार के घोर विरोधी मौलवी सनाउल्ला को मानना पड़ा कि स्वामीजी का कराया अनुवाद अशुद्ध नहीं है। इसी से ग्रन्थकार की अध्ययन की व्यापकता एवं गम्भीरता तथा निष्पक्षपातता प्रमाणित होती है। तिस पर भी यदि कहीं ग्रन्थकारकृत समीक्षा कुरान के समीक्ष्य अंश पर ठीक प्रतीत होती हो तो उसे आपाततः असंगत न समझ लेना चाहिए। हो सकता है वह कुरान के किसी पुराने भाष्य को लक्ष्य करके लिखी गई हो।

यह सन्तोष का विषय है कि ग्रन्थकार की समीक्षा ने अनेक मुसलमान विद्वानों को कुरान के अनुवाद और उसके आधार पर प्रचलित सिद्धान्तों में अपेक्षित संशोधन करने की प्रेरणा की। सर सैयद अहमद खाँ ने इस दिशा में सबसे पहले पग उठाया। आरम्भ में मुसलमानों ने उनका विरोध किया। उनको नास्तिक, प्रकृतिपूजक आदि कहा। काफिर तो वाजिबुल्कतल (हत्या के योग्य) हैं ही, जो इसलाम के दायरे में हैं और अपने आपको मोमिन कहते हैं, उनके ऊपर भी तलवार लटकती रहती है। यदि किसी ने थोड़ी-सी अक्ल की बात की या सुधार का नाम लिया या प्रचलित मान्यताओं या विश्वासों से वैमत्य प्रकट किया तो उसे मौत के घाट उतार दिया जाता है। सर सैयद अहमद और उनके सहयोगियों ने जब इसलाम में तनिक-सा सुधार कराना चाहा तो मौलवी महदी अली (मोहसिनुल्मुल्क) को मजहरुल्मुल्क ने एक धमकी भरा खत लिखा जो 'तहजीबुल इखलाक' जिल्द अव्वल के पृष्ठ २६१ पर छपा है। उसके कुछ वाक्य इस प्रकार हैं—

"हजरत! न मुहत्सिब (हिसाब लेनेवाला) है, जिसके दुर्रे का खौफ हो, न काज़ी है जिसके फ़तवे से दार (सूली) का डर हो। आज़ाद सरकार की हकूमत है, वरना इस आजादी से बकवक करने की कैफ़ियत मालूम हो जाती। अब तक कभी की आजादी आपके दुनिया से हासिल हो गई होती। इससे बेहतर है कि आप मज़हबी तहरीरों से बाज आ जाएँ, वरना कोई जला हुआ मुसलमान कुछ कर बैठे तो सब खैरख्वाही इसलाम की मालूम हो। दिलजले बुरे होते हैं।"

सरसैयद अहमद खाँ इस प्रकार की धमकियों से विचलित नहीं हुए। आज तो उनके मार्ग पर चलनेवाले अनेक विद्वान् हैं। अहमदी विद्वानों का नाम इस विषय में विशेष उल्लेखनीय है।

मौलवी सना-उल्ला अमृतसरी ने इस समुल्लास के खण्डन में 'हक्क-प्रकाश' नाम से एक पुस्तक लिखी है। गाली देने से यदि किसी के पक्ष की पुष्टि हो सकती है तो मौलाना को अवश्य सफलता मिली है। ग्रन्थकार के आक्षेपों का निराकरण करते हुए अपने पूर्ववर्ती अनुवादों तथा भाष्यों को शुद्ध कहकर पीछा छुड़ाने का प्रयास किया है। जो उन भाष्यों को मानते हैं, वे आप से निपट लेंगे। परन्तु ग्रन्थकार के आक्षेप तो ज्यों-के-त्यों खड़े हैं। शाह रफीउद्दीन के भाष्य के सम्बन्ध में मौलाना लिखते हैं—"बनजह मुगायरत मुहावरह उर्दू और अरबी के मतलब खेज़ नहीं है" (उर्दू और अरबी मुहावरह के भेद के कारण शाहजी का अनुवाद अभिप्राय नहीं देता)। ग्रन्थकार के अनुवाद के सम्बन्ध में उक्त मौलाना ने 'हक्क-प्रकाश' के पृष्ठ २२३ पर लिखा है—"हाँ, यह बात काबिले इज़हार है कि स्वामीजी का मनकूल तरजमा गो मुतरजमा कुरान में है, मगर ज़रा सी वजाहत या इस्लाहतलब है" (हाँ, यह बात प्रकट करने योग्य है कि स्वामीजी का उद्धृत अनुवाद यद्यपि कुरानानुवाद में है, किन्तु तनिक-सी स्पष्टता या सुधार की अपेक्षा रखता है)। तात्पर्य यह है कि स्वामीजी का अनुवाद अशुद्ध नहीं, प्रत्युत शुद्ध है। अतः किसी को यह उपालम्भ देने का अधिकार नहीं रहता कि स्वामीजी अरबी से अनभिज्ञ होने के कारण कुरान

की समीक्षा करने के अधिकारी न थे। इतना और निवेदन करना आवश्यक है कि समीक्षा लिखते समय स्वामीजी के सामने शाहजी के अनुवाद के अतिरिक्त अनेक भाष्य व टीकायें थीं। उस खण्डन से ही सन्तुष्ट न होकर मौलाना ने 'तफ़सीर सनाई' नामक कुरान भाष्य भी लिखा। उसमें भाष्यकरण का एक हेतु यह भी दिया है—"दोयम, मैंने इस्लाम के मुखालफीन के हाल पर गौर किया तो बावजूद बेइल्मी और हेचमदानी के मुद्दई-ए-हमादानी पाया। खुदा की पाक किताब पर मुँह फाड़-फाड़कर मोतरिज हो रहे हैं, हालाँकि कुल सरमाया उनका सिवाय तराजिम उर्दू के कुछ भी नहीं, जिनमें से बाज तो तहते लफ़्जी हैं और बाज़ के महावरात भी इनकलाबे जमाना से मुनकलिब हो गये हैं, इसलिए वह भी मतलब बताने से आदी हैं।" (द्वितीय—मैंने इसलाम के विरोधियों की दशा पर विचार किया तो विद्याशून्यता और अज्ञानता के होते हुए भी वे सर्वज्ञता के अभिमानी हैं। खुदा की पवित्र किताब पर मुँह फाड़-फाड़कर आक्षेप कर रहे हैं, यद्यपि उनकी सारी सम्पत्ति उर्दू अनुवाद है। उनमें से कई तो शब्द के नीचे शब्द देकर रचे गये हैं। और कइयों के मुहावरे (भाषा-प्रयोग) समय के साथ परिवर्तित हो गये हैं। वे भी अभिप्राय बताने में असमर्थ हैं)। हमारा कहना है कि इन अनुवादों को आप लोग ही प्रकाशित करते रहे हैं। और आपके मौलवियों ने इन्हें अरबी न जाननेवाले लोगों के लिए रचा है। अतः जिनके लिए ये रचे गये हैं, उन्हें इन अनुवादों को पढ़कर उनपर आक्षेप करने का पूरा अधिकार है।

ग्रन्थकार की घोषणा थी कि "मेरा किसी नूतन विचार या मत को प्रवर्तन करने की तनिक भी इच्छा नहीं है, अपितु जो सत्य है, उसका मानना व मनवाना और जो झूठ है, उसका त्याग करना व करवाना मेरा उद्देश्य है। यदि मैं पक्षपात करता तो आर्यावर्त्त में प्रचरित किसी एक मत का आग्रही होता। किन्तु जो-जो आर्यावर्त्त व अन्य देशों में अधर्मयुक्त चाल-चलन है उसका स्वीकार और जो धर्म-युक्त बातें हैं, उनका त्याग नहीं करता, न करना चाहता हूँ। क्योंकि ऐसा करना मनुष्य धर्म से बहिः है" (स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश)। आलोचना करते समय ग्रन्थकार ने 'शत्रोरपि गुणा वाच्या दोषा वाच्याः गुरोरपि' इस नियम का पालन करते हुए सर्वत्र आलोच्य विषय की गुणवत्ता को स्वीकार किया है। इसी चौदहवें समुल्लास में कुरान की विस्तृत और आवश्यकतानुसार कठोर आलोचना करते हुए भी लिखा है—

'माता-पिता की सेवा करना तो उत्तम ही है, परन्तु यदि वे परमात्मा के साथ अन्य किसी को उपास्य देव मानें तो माता-पिता की आज्ञा को न मानें—यह शिक्षा ठीक है' (वाक्य १२२)।

रजस्वला को स्पर्श न करने के विषय में लिखा है—

'यह जो रजस्वला को न छूने का लिखा है, यह उत्तम शिक्षा है' (वाक्य ३८)।

ग्रन्थकार का सारा आग्रह वेद की सार्वभौम शिक्षाओं पर है। सत्यार्थप्रकाश की समाप्ति पर उन्होंने लिखा है—"और जो मतमतान्तर के परस्पर विरुद्ध झगड़े हैं, उनको मैं प्रसन्न (पसन्द) नहीं करता। क्योंकि इन्हीं मतवालों ने अपने मतों का प्रचार कर मनुष्यों को फँसा के परस्पर शत्रु बना दिये हैं। इस बात को काट सर्वसत्य प्रचार कर, सबको ऐकमत्य में करा, द्वेष छुड़ा, परस्पर में दृढ़ प्रीतियुक्त कराके, सबसे सबको सुखलाभ पहुँचाने के लिए मेरा प्रयत्न और अभिप्राय है।

सर्वशक्तिमान् प्रभु की कृपा सहाय और आप्तजनों की सहानुभूति से 'यह सिद्धान्त सर्वत्र भूगोल में शीघ्र प्रवृत्त हो जावे' जिससे सब लोग सहज से धर्मार्थकाममोक्ष की सिद्धि करके सदा उन्नत और आनन्दित होते रहें। यही मेरा मुख्य प्रयोजन है।"

विशेष—कारी (कुरानपाठी) सात दिन में कुरान का पाठ समाप्त करते हैं। 'मं०' का अर्थ मंज़िल है, 'सि०' का सिपारा, 'सू०' का सूरत 'आ०' का आयत। कुरान में ११४ सूरा या सूरतें हैं। प्रत्येक सूरत आयतों में विभक्त है। बड़ी सूरतों का एक और प्रकार का विभाजन भी है, जिसे 'रकूअ' कहते हैं। 'सूरत' शब्द का अर्थ है महत्त्व अथवा रचना का अंश। 'आयत' शब्द का अर्थ है निशान। लक्षणा से इसका अर्थ चमत्कार भी होता है, किन्तु यहाँ इसका अर्थ है खुदा का सन्देश। सारा कुरान समय-समय पर हजरत मुहम्मद पर नाज़िल हुई (उतरी) आयतों (६३६०) का संकलन है। कुरान शरीफ़ के दूसरे प्रकार के विभाजन के अनुसार ३ पारे या जुज़ हैं। प्रत्येक पारा या जुज़ पुनः चार विभागों में बँटा है। ये पारे परिमाण में समान हैं। दोनों प्रकार के विभाजन का विषय से कोई सम्बन्ध नहीं है। प्रयोग में प्रायः 'सूरत व आयत' का प्रचलन है। हो सकता है कि 'मंज़िल' शब्द 'मण्डल' का पर्याय हो, 'सूरत' सूक्त का, 'पारा' प्रपाठक का, 'रकुअ' ऋचा का और 'सूरत' मन्त्र का।

अथ चतुर्दश-समुल्लासारम्भः

अथ यवनमतविषयं व्याख्यास्यामः

इसके आगे मुसलमानों के मत-विषय में लिखेंगे—

[अल्लाह के नाम के साथ आरम्भ]

१—आरम्भ साथ नाम अल्लाह के क्षमा करनेवाला दयालु ॥

—मंजिल १। सिपारा १। सूरत १[२]

[अल्लाह के नाम के साथ आरम्भ करनेवाला कौन है ?]

समीक्षक—मुसलमान लोग ऐसा कहते हैं कि यह क़ुरान ख़ुदा का कहा है। परन्तु इस वचन से विदित होता है कि इसका बनानेवाला कोई दूसरा है। क्योंकि जो परमेश्वर का बनाया होता, तो 'आरम्भ साथ नाम अल्लाह के' ऐसा न कहता। किन्तु 'आरम्भ वास्ते उपदेश मनुष्यों के' ऐसा कहता।

अति पुराकाल में सर्वत्र वैदिक धर्म का ही प्रचार-प्रसार था। अरब देशों में भी वेद अर्थात् वैदिक शिक्षाओं का प्रचलन था, यह युक्तियुक्त तथा प्रमाण-पुरःसर है। अतः कुरान की आयतों में यत्र-तत्र वैदिक वचनों की प्रतिच्छाया मिलती है।

ग्रन्थकार की आलोचना का क्रम आयतों के क्रम में है। जैसाकि हम पहले लिख चुके हैं कि आयतें समय-समय पर हज़रत मुहम्मद की आवश्यकता तथा इच्छा के अनुसार उतरती रही हैं, अतः कुरान में विषयों की क्रमबद्धता नहीं है और इस कारण पुनरुक्ति दोष की भरमार है। परिणामतः ग्रन्थकार की शंकाओं में भी पुनरुक्ति अवश्यम्भावी है। क्रमबद्धता का तो प्रश्न ही नहीं उठता।

१. 'बिस्मिल्ला हिर्रहमा निर्रहीम'। वर्तमान कुरान का आरम्भ 'बिस्मिल्लाह' से होता है। सूरते तोबा के अतिरिक्त अन्य सभी सूरतों के आरम्भ में यह वचन मंगलाचरण के रूप में पाया जाता

१. सं० ३ से ३३ तक 'समीक्षिष्यामः' परिवर्तित पाठ मिलता है।

२. सं० २ में समर्थदान, प्रबन्धकर्त्ता 'वैदिक यन्त्रालय' प्रयाग की इस विषय में ग्रन्थस्थ विषयसूची के आरम्भ में यह सूचना छपी है—

'चौदहवें समुल्लास में कुरान की मंजिल सिपारा सूरत और आयत का ब्यौरा लिखा है। उसमें और तो सब ठीक है, परन्तु आयतों की संख्या में दो-चार के आगे-पीछे का अन्तर होना सम्भव है। अतएव पाठकगण क्षमा करें।'

यह आवश्यक सूचना अगले संस्करणों में नहीं छपी। सं० २६ में जिन आयतों की संख्याएँ शोधी गईं, उनके संशोधक आर्यसमाज के प्रसिद्ध विद्वान् श्री पं० महेशप्रसाद जी मौलवी आलिमफाजिल थे। उन्होंने यह कार्य १९४३ में अजमेर आकर किया था। इसी काल में श्री पं० रामचन्द्र देहलवी ने सत्यार्थप्रकाश में समीक्ष्य आयतांशों को देवनागरी लिपि में भाषानुवाद सहित छापा था। उसमें भी आयतों की संख्याएँ प्रायः वही दी गई हैं, जो २६वें संस्करण में शोधी गईं। इसलिये हम भी २६वें संस्करण के अनुसार ही शुद्ध आयत संख्याएँ छाप रहे हैं। उसमें ४-५ स्थानों पर रही साधारण भूलों को श्री पं० रामचन्द्र जी देहलवी के अनुसार ठीक कर दिया है। फिर भी कुरान के विभिन्न संस्करणों में आयत संख्याओं में एक दो का अन्तर होने से साधारण अन्तर सम्भव है।

यदि मनुष्यों को शिक्षा करता है कि 'तुम ऐसा कहो', तो भी ठीक नहीं। क्योंकि इससे पाप का आरम्भ भी खुदा के नाम से होकर उसका नाम भी दूषित हो जायेगा।

[दयालु मांस खाने की आज्ञा नहीं दे सकता]

जो वह क्षमा और दया करनेहारा है, तो उसने अपनी सृष्टि में मनुष्यों के सुखार्थ अन्य प्राणियों को मार दारुण पीड़ा दिलाकर, मरवाके मांस खाने को आज्ञा क्यों दी ? क्या वे प्राणी अनपराधी और परमेश्वर के बनाये हुए नहीं हैं ?

[क्या पाप-कर्म भी ईश्वर के नाम पर आरम्भ होवें ?]

और यह भी कहना था कि—'परमेश्वर के नाम पर अच्छी बातों का आरम्भ, बुरी बातों का नहीं'। इस कथन में गोलमाल है। क्या चोरी-जारी मिथ्या-भाषणादि अधर्म का भी आरम्भ परमेश्वर के नाम पर किया जाय ? इसी से देख लो, कसाई आदि मुसलमान गाय आदि के गले काटने में भी 'बिस्मिल्लाह' इस वचन को पढ़ते हैं। जो यही इसका पूर्वोक्त अर्थ है, तो बुराइयों का आरम्भ भी परमेश्वर के नाम पर मुसलमान करते हैं।

[हिंसा की आज्ञा देने से खुदा 'दयालु' न रहेगा]

और मुसलमानों का खुदा दयालु भी न रहेगा। क्योंकि उसकी दया उन पशुओं पर न रही। और जो मुसलमान लोग इसका अर्थ नहीं जानते, तो इस वचन का प्रगट होना व्यर्थ है। यदि मुसलमान लोग इसका अर्थ और करते हैं, तो सूधा अर्थ क्या है ? इत्यादि ॥१॥

है। यही नहीं, इस पवित्र वाक्य का पाठ मुसलमानों के सभी कार्यों के आरम्भ में करना अनिवार्य है।

ग्रन्थकार को इस वाक्य पर दो आपत्तियाँ हैं। पहली आपत्ति कुरान की वर्णनशैली और ईश्वरीय सन्देश के उतरने से सम्बन्ध रखती है। जब किसी मुसलमान से किसी आयत का पाठ (किरअत) कराना हो तो वहाँ 'इकरअ' (पढ़) या 'कुल' (कह) भूमिका का उस आयत के आरम्भ में ईश्वरीय सन्देश के एक भाग के रूप में वर्णन किया जाता है। यह है इलहाम, ईश्वरीय सन्देश कुरान की वर्णनशैली, जिससे इलहाम प्रारम्भ हुआ था। हदीसों (इसलाम) के प्रामाणिक श्रुति (ग्रन्थ) में वर्णन है कि सर्वप्रथम सूरत 'अलक' की पाँच आयतें परमात्मा की ओर से उतरीं। हज़रत जिबरील (ईश्वरीय दूत) ने हज़रत मुहम्मद से कहा—

'इकरअ बिइस्मे रब्बिका अल्लजी ख़लका'।

'पढ़ ! उस परमात्मा के नाम सहित जिसने उत्पन्न किया'। यदि विवेच्य 'सूरत फ़ातिहा' सूरत होती तो इसके पूर्व 'कुल' (कह) या 'इकरअ' (पढ़) ज़रूर पढ़ा गया होता। इससे स्पष्ट है कि कुरान के प्रारम्भ में यह कलमा परमात्मा की ओर से प्रेषित (इलहाम) नहीं है।

कुरान की कई सूरतों का आरम्भ स्वयं कुरान की स्तुति (विशेषता) से हुआ है। तद्यथा सूरते बकर (जो कुरान की दूसरी सूरत है) के आरम्भ में कहा है—

'ज़ालिकल किताबोला रैबार्फ़ हे हुदन लिलमुत्तकीन'।

अर्थात् सभी काम अल्लाह के नाम के साथ आरम्भ करो।

यह पुस्तक है, इसमें सन्देह की सम्भावना नहीं, आदेश करती है परहेजगारों को। यदि सूरते फ़ातिहा प्रामाणिक पहली सूरत होती तो यह कैसे हो सकता था कि उसमें कुरान की स्तुति न की गई होती।

इब्ने मसूद हजरत मसूद हजरत मुहम्मद के घनिष्ठ मित्र थे। वे अपने कुरान में सूरते फातिहा को सम्मिलित नहीं करते थे। उनकी कुरान की प्रति का आरम्भ सूरते बकर से होता था। कुरान की भूमिका के रूप में यह आयत, जिसका हमने ऊपर उल्लेख किया है, निश्चय ही अधिक उपयुक्त है। मौलवी मुहम्मद अली अपने अंग्रेजी में अनूदित कुरान में पृष्ठ ८२ पर लिखते हैं—"कुछ लोगों का विचार है कि 'बिस्मिल्ला' जिससे कुरान की प्रत्येक सूरत आरम्भ हुई है, प्रारम्भिक वाक्य के रूप में बढ़ाई गई है, वह इस सूरत का भाग नहीं है।" सूरते फातिहा है तो मुसलमानों के पाठ के लिए। परन्तु इसके आरम्भ में न 'इकरअ' (पढ़) है और न 'कुल' (कह) है। और हज़रत मुहम्मद के समकालीन ही नहीं, सहयोगी और घनिष्ठ मित्र इब्नेमसूद ने इसे अपनी पाण्डुलिपि में भी निरस्त कर दिया था। इससे इसकी प्रामाणिकता पर बहुत बड़ा प्रश्नचिह्न लग जाता है। और यदि बिस्मिल्ला और सूरते फातिहा पीछे से जोड़े गये हैं तो शेष पुस्तक की विश्वसनीयता का ही क्या प्रमाण है ? फिर, यदि बिस्मिल्ला ही गलत है तो इन्शा व इमला (अन्य लिखने पढ़ने) की विश्वसनीयता कैसी ?

आप इसे 'खुदा की किताब' कहते हैं, ग्रन्थकार को यह स्वीकार्य नहीं। उन्होंने इसके आदि-वचन होने के आधार पर आक्षेप किया कि "परन्तु⋯ऐसा कहता"। इस आक्षेप का निराकरण करने के लिए मौलवी सनाउल्ला कहते हैं—"चूँकि यह सूरत बन्दों की ज़बान पर एक अरबी का मसविदा नाज़िल हुआ है, इसलिए इसके अनुवाद के पूर्व 'कहो' गुप्त (अध्याहृत) समझना चाहिए। यानी 'ऐ मेरे बन्दो ! तुम यों कहो कि हम शुरु करते हैं सब काम अल्ला के नाम से'। परन्तु अध्याहार तो उस शब्द का होता है जो पहले कहीं प्रयुक्त हो चुका होता है। पहली आयत में अध्याहार सम्भव नहीं। यदि हो भी तो ग्रन्थकार की दूसरी आपत्ति "यदि मनुष्यों को⋯तो भी ठीक नहीं" का समाधान कैसे होगा ? कल्मे के शब्द आपाततः सर्वथा उत्कृष्ट हैं। परन्तु इसका विनियोग उसके अर्थों के विपरीत अत्यन्त बीभत्स एवं घृणित है। शुभ कर्मों के आरम्भ में तो खुदा का नाम लेना उचित है, किन्तु अशुभ कर्मों के आरम्भ में उसका नाम लेना तो मानों अपने दुष्कर्म में खुदा को भागीदार बनाना है। तीसरा आक्षेप इसके फलितार्थ के आधार पर है—"और मुसलमानों का खुदा⋯उसकी दया उन पशुओं पर न रही"। अर्थात् यदि पशुहत्यादि जैसे जघन्य कार्यों के आरम्भ में भी खुदा का नाम लेते हो तो वह 'रहमान' (कृपालु) और 'रहीम' कैसे रहा ?

'मुजिहुलकुरान' में लिखा है—"जब किसी जानवर का बध करें तो उसपर बिस्मिल्ला व अल्ला हो अकबर (ईश्वर महान् है) पढ़ लिया करें। कुरान में जहाँ कहीं हलाल (वैध) और हराम (अवैध) का उल्लेख हुआ है, वहाँ वैध (हलाल) उस वध को माना है, जिसपर दयालु और क्षमा करने-वाले अल्लाह का नाम पढ़ लिया गया हो।" इस विषय में हम अपनी ओर से कुछ न कहकर कलकत्ता विश्वविद्यालय के प्रोफेसर खुदाबख्श के ईदुज्जुहा के अवसर पर वहाँ के समाचारपत्रों में प्रकाशित एक लेख का उद्धरण प्रकाशित कर रहे हैं, जो इस प्रकार है—

"सचमुच-सचमुच बड़ा खुदा जो दयालु और क्षमा करनेवाला है, वह खुदा आज खून की नदियों का और चीखते हुए जानवरों की असह्य व अवर्णनीय पीड़ा का इच्छुक नहीं। प्रायश्चित्त—वास्तविक प्रायश्चित्त वह होता है, जो मनुष्य के हृदय में होता है। सभी प्राणियों की ओर अपनी भावना

[खुदा परवरदिगार और दयालु है]

२—सब स्तुति परमेश्वर के वास्ते हैं, जो परवरदिगार अर्थात् पालन करनेहारा है सब संसार का ॥ क्षमा करनेवाला दयालु है ॥ —मं० १ । सि० १ । सूरतुल्फातिहा । आ० १, २

[परवरदिगार है तो अन्य मतवालों के मारने की आज्ञा क्यों?]

समीक्षक—जो क़ुरान का खुदा संसार का पालन करनेहारा होता, और सब पर क्षमा और दया करता होता, तो अन्य मतवाले और पशु आदि को भी मुसलमानों के हाथ से मरवाने का हुक्म न देता।

परिवर्तित कर दी जाय। भविष्य का धर्म प्रायश्चित्त के इस कठोर व निर्दयतापूर्ण रूप को त्याग देगा ताकि वह इन दीनों पर दयापूर्ण दृष्टि से देख सके" (माडर्न रिव्यू)।

बिस्मिल्ला का दुरुपयोग—इसलाम में बहुविवाह की आज्ञा तो है ही, पत्नियों के अतिरिक्त रखैलों को भी परम्परा है। लिखा है—

२. 'सब स्तुति परमेश्वर के वास्ते'—वेद में बहुत पहले यह बात इन शब्दों में कही गई—'एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्त्यग्निं यमं मातरिश्वानमाहु:' (ऋग्वेद १।१६४।४६) अर्थात् एक ही परमात्मा की अग्नि, यम, मातरिश्वा आदि अनेक नामों से स्तुति की जाती है। 'य एक इत् तमु ष्टुहि' (ऋ० ६।४५।१६)—वह एक ही है, उसी की स्तुति करनेवाला है। 'एक एव नमस्य: सुशेव:' (अथर्व० २।२।२)—वह एक ही है और पूजा के योग्य है। 'मा चिदन्यद् विशंसत' (ऋ० ८।१।१)—किसी दूसरे की पूजा मत करो। 'माहाभाग्याद्देवताया एक एवात्मा बहुधा स्तूयत (निरुक्त ७।४।८)—देवता के अत्यन्त ऐश्वर्यशाली होने से एक ही देवता की अनेक प्रकार से स्तुति की जाती है। वह एक देवता कौन है? इसका उत्तर निरुक्त के परिशिष्ट में इस प्रकार दिया है—'अथैष महानात्मा सत्त्वलक्षण:, तत्परं, तद् ब्रह्म'—वह महानात्मा पर (परमात्मा) है, वह ब्रह्म है।

पर वेद का परमात्मा दयालु होने के साथ-साथ न्यायकारी भी है। अत: वह कृतकर्मों का फल अवश्य देता है, इसलिए वह क्षमा नहीं करता। दया और न्याय परस्पर विरोधी न होकर पूरक हैं—इसकी व्याख्या सत्यार्थप्रकाश के सप्तम समुल्लास में की गई है।

जहाँ तक कुरानी खुदा की क्षमा का सम्बन्ध है, उसकी विश्वसनीयता सन्दिग्ध है। यह नीचे दिये उद्धरणों से स्पष्ट है—

१—सचमुच अल्ला क्षमा करता है। सब पाप वही क्षमा करनेवाला दयालु है।

२—अल्ला क्षमा करता है जिसे चाहता है व पीड़ा देता है जिसे चाहता है।

३—फिर क्षमा करेगा जिसको चाहेगा और दण्ड देगा जिसे चाहेगा। और अल्ला सब बातों पर समर्थ है।

४—कोई इसलाम पर ईमान लाया और कोई काफिर बन गया। अल्ला चाहता तो न लड़ते। परन्तु अल्ला करता है जो चाहता है।

५—जिसको चाहे भले कामों का सामर्थ्य दे और जिसको चाहे लज्जित करे, सामर्थ्य न दे।

६—अल्ला दौलत देता है जिसे चाहता है, बिना हिसाब के।

७—देता है जिसे चाहता है बेटियाँ और देता है जिसे चाहता है बेटे और इकट्ठे देता है उनको बेटे और और बेटियाँ और कर देता जिसे चाहता है सन्तानरहित।

[क्या पापियों पर भी क्षमा करेगा ?]

जो क्षमा करनेहारा है, तो क्या पापियों पर भी क्षमा करेगा ? और जो वैसा है, तो आगे लिखेंगे कि 'काफ़िरों को क़त्ल करो' अर्थात् जो क़ुरान और पैग़म्बर को न मानें वे काफ़िर हैं, ऐसा क्यों कहता ? इसलिये क़ुरान ईश्वरकृत नहीं दीखता ॥२॥

८--मुसलमानों का खुदा दयालु भले ही हो उनके लिए जिन्हें वह चाहता है। पर न्यायकारी तो वह निश्चय ही नहीं है।

मौलवी मुहम्मद अली ने अपने कुरानभाष्य की भूमिका में लिखा है—

"The holy book is prefaced with a short Mecca Chapter which, in its seven short verses, contains the essence of the whole of the Quran, and teaches us a prayer which is admittedly the most beautiful of all prayers taught by any religion, and sets before us an ideal than which no higher ideal can be concieved." (Page 15).

अर्थात् इस पवित्र ग्रन्थ (कुरान) में एक छोटी मक्की सूरत.भूमिका रूप में है, जिसकी छोटी-छोटी सात आयतों में कुरान का सार समाविष्ट है। वह हमें एक ऐसी प्रार्थना सिखाती है, जो किसी भी मत की सिखाई सब प्रार्थनाओं से सचमुच अतीव सुन्दर है और हमारे सामने एक ऐसा आदर्श उपस्थित करती है, जिससे उच्च अन्य किसी आदर्श की कल्पना नहीं की जा सकती।

प्राय: सभी मुसलमान विद्वान् इस सूरत को कुरान की जान मानते हैं। और यह सूरत मूलत: यजर्वेद के निम्न चालीसवें अध्याय के सोलहवें मन्त्र के अनुवाद और व्याख्या से अधिक कुछ नहीं है—

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम ॥

कुरान शरीफ़ की इस सूरते फ़ातिह: में सात आयतें हैं, जिनका अर्थ इस प्रकार है--"सब तरह की तारीफ (स्तुति) खुदा ही को है, बड़ा मेहरबान, निहायत रहमवाला, इन्साफ का दिन का हाकिम, हम तेरी ही इबादत (पूजा) करते हैं और तुझ ही से दुआ माँगते हैं कि हमें सीधे रास्ते चला, उन लोगों के रास्ते पर जिन पर तू अपना फजल व करम (दया व अनुग्रह) करता रहा, न कि उनके जो गुमराहों के हैं और जिन पर सदा तू क्रुद्ध होता रहा।"

मन्त्र का प्रथम चरण है—"अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्" (हे प्रकाशकों के प्रकाशक ! हमें मुक्ति के लिए सीधे रास्ते ले चल)। कुरान में कहा है—'हमें सीधे रास्ते चला।' यह वेदमन्त्र के 'सुपथा' का अनुवाद है और शेष तीन आयतें इसी की व्याख्या रूप हैं। मन्त्र का दूसरा चरण है—'विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्' (हे सर्वज्ञ, तू हमारे सब आचारों-विचारों को जानता है)। कुरान में आया है—'इन्साफ के दिन का हाकिम।' हमारे आचार-विचार या गुण-दोषों को जाने बिना न्यायाधीश इन्साफ कैसे कर सकता है ? मन्त्र का तीसरा चरण है—'युयोध्यस्मज्जुहुराणमेन:' (हमसे टेढ़ी चालवाले पाप दूर कर।' कुरान में कहा है—'न कि उनके जो गुमराह हैं और जिन पर तू क्रुद्ध होता रहता है।' वेद में कुटिलता छुड़ाने की प्रार्थना है, कुरान में बुरों के मार्ग से बचाने की प्रार्थना है। शब्दों में किंचिद् भेद है; भावों में समानता है। वेद में आया है—'भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेम' (तुझे बहुत-बहुत नमस्कार वचन कहते हैं)। कुरान में इसी बात को इस प्रकार कहा है—'सब तरह की तारीफ खुदा ही को है' और हम तेरी इबादत करते और तुझ ही से मदद माँगते हैं। इन दोनों के भाव में कोई अन्तर नहीं है।

'अल अलक' नाम से अभिहित कुरान की ९६वीं सूरत की प्रथम ५ आयतें वे हैं जो हज़रत मुहम्मद पर सबसे पहले अवतीर्ण हुई थीं। कहते हैं कि किसी समय हजरत मुहम्मद मक्का के बाहर

[ईश्वर से ही सहाय चाहना]

३—मालिक दिन न्याय का। तुझ ही की हम भक्ति करते हैं, और तुझ ही से सहाय चाहते हैं। दिखा हमको सीधा रास्ता॥ —मं० १। सि० १। सू० १। आ० ३-५

पहाड़ की एक गुफा में, जिसका नाम हिरा था, रहते थे। वहीं एक दिन अचानक अल्लाह के भेजे हुए फरिश्ते जिबराल प्रकट हुए। उस समय उनके द्वारा इस सूरत की प्रारम्भिक पाँच आयतों का अवतरण हुआ। किन्तु कुरान को क्रमबद्ध करते समय इस सूरते फातिहा को सबसे पहले रक्खे जाने से स्पष्ट है कि कुरान में इसका महत्त्व सबसे अधिक है। इसीलिए मुसलमान इसे 'Essence of the whole of the Quran' (कुरान का सार) मानते हैं।

परन्तु मौलवी मुहम्मद अली का यह कहना कि, इस जैसी प्रार्थना अन्य किसी मत में सिखाई नहीं गई, नितान्त मिथ्या और उनके अज्ञान का द्योतक है। या तो उन्होंने वैदिक धर्म के किसी ग्रन्थ को पढ़ा नहीं या पूर्वाग्रह से ग्रस्त होने के कारण उन्होंने जानबूझ कर अशुद्ध बात लिख दी है। कुरान की इस सूरत का वेदमूलक होना सिद्ध है और यह भी निर्विवाद है कि, वेद का चाहे कोई भी समय हो, वह कुरान से बहुत पहले का है। ईमानदारी तो तब थी जब मौलवी मुहम्मद अली यह लिखते कि 'इससे अच्छी प्रार्थना किसी भी धर्मग्रन्थ में नहीं मिलेगी और कुरान में यह वेद से आई है।' ग्रन्थकार ने समीक्षा की है किन्तु उनकी आपत्ति इसके विनियोग पर है। परमात्मा को 'रहमान' (कृपालु) और 'रहीम' (दयालु) बतानेवाली सूरत से निर्दोष, निरीह तथा मूक प्राणियों की हत्या का काम लिया गया है। किमाश्चर्यमत: परम् !

परन्तु आश्चर्य है कि खुदा जानबूझकर रास्ता नहीं दिखाता, स्वयं कुरान कहता है—"यदि हम चाहते तो प्रत्येक व्यक्ति को सन्मार्ग दिखाते। किन्तु सच्चा है वचन मेरा कि निश्चय ही भरूँगा दोजख को जिन्नो व इन्सानों से इकट्ठा।" इससे स्पष्ट है कि अल्लाह हरेक को सन्मार्ग दिखा सकता था, किन्तु दिखाता नहीं, क्योंकि सन्मार्ग पर चलने से लोग पाप नहीं करेंगे। परिणामत: दोज़ख खाली पड़ी रहेगी।

और सूरते निसा आयत ८७ में कहा है—"क्या तुम चाहते हो कि राह पर लाओ उसको पथभ्रष्ट किया है अल्लाह ने। जिसे पथभ्रष्ट किया है अल्लाह ने, कदापि न पायेगा तू उसके लिए मार्ग।"

३. 'न्याय का दिन'—इसके लिए प्रसिद्ध शब्द 'कयामत' है। योमिल आखिरे (अन्तिम दिन), मोमिद्दीन, योमिल आखिर, योमन आदि इसके पर्यायवाची हैं। सूरते ऐराफ में लिखा है—"ये लोग कयामत बारे में पूछते हैं कि कयामत के आने का समय कौन-सा है ? कह दो कि इसका ज्ञान तो मेरे रब (ईश्वर) को ही है। वही उसको उसके समय पर प्रकट करेगा। जमीन और आसमान में वह एक भारी बात होगी और यकायक तुम पर आ जावेगी।" (आयत १८७)

फिर भी लोग पूछते ही रहे। कैसे पता चलेगा कि कयामत आ गई। आखिर बताना पड़ा। सूरते कियामा में कहा है—"पूछता है कयामत कब होगी ?" (आयत ६) उत्तर में उसकी भयानकता को स्पष्ट कर दिया—"जब आँख चौंधिया जाये, चाँद को ग्रहण लग जाये और चाँद व सूरज इकट्ठे कर दिये जायें" (आयतें ७, ८, ९)। जब न सूरज रहेगा न चाँद तो वह कयामत का दिन न होकर रात होगी। सूरते यासीन के अनुसार—"तब सुर (नरसिंघा) में फूंक मारी जायेगी और वे कबरों में से निकल-निकलकर अपने रब की ओर दौड़ेंगे" (आयत ५१)। प्रश्न उठ सकता है कि जो उस समय

[नित्य न्याय न कर एक ही दिन क्यों ?]

समीक्षक—क्या खुदा नित्य न्याय नहीं करता ? किसी एक दिन न्याय करता है ? इससे तो अन्धेर विदित होता है। उसी की भक्ति करना और उसी से सहाय चाहना तो ठीक, परन्तु क्या बुरी बात का भी सहाय चाहना ?

जीवित होंगे और इस कारण उनकी कब्र नहीं बनी होंगी, उनका क्या होगा ? इसका उत्तर दिया जाता है कि नरसिंघा दो बार बजेगा। पहली बार बजने पर जो भी उस समय जीवित होंगे, वे सब मर जायेंगे। पूछा जा सकता है कि इतने दिन कबर में पड़े रहने से शरीर तो मिट्टी हो चुके होंगे, फिर मुर्दे कैसे उठ खड़े होंगे। इस प्रश्न को अपने अंग्रेजी अनुवाद में उठाकर डा० सेल ने लिखा है—"हजरत मुहम्मद ने इसका समाधान यह कहकर किया था कि सारे शरीर के मिट्टी हो जाने पर भी रीढ़ के नीचे की एक हड्डी बची रह जायेगी जिसे 'अल अज्ब' और अंग्रेजी में 'Os Cocoggis' या 'Luz' कहते हैं। इसलाम में यह विकार यहूदी मत से लिया गया है। यह हड्डी विना गले सड़े कयामत के दिन तक बनी रहेगी और बीज का काम देगी, जिससे नया शरीर बनकर तैयार हो जायेगा। कयामत के दिन से ४० दिन तक वर्षा होगी और जैसे बारिश पड़ने पर बीजों से पौधे उठ खड़े होंगे, वैसे 'अल अज्ब' से सब मुर्दे उठ खड़े होंगे।

इसलाम के अनुसार किब्ला अर्थात् मक्का की तरफ मुँह करके दफनाया जाता है और कबर इतनी गहरी बनाई जाती है, जिसमें समय आने पर मुर्दा आसानी से उठकर बैठ सके। कबर में मुनकिर और नकीर दो फरिश्ते मुर्दे के दायें-बायें बैठकर उसके अच्छे बुरे कर्मों की पड़ताल करते हैं और उनकी आख्या (रिपोर्ट) के अनुसार उसे जन्नत या दोजख में भेजा जाता है। क्योंकि मुर्दे के साथ यह सब कुछ होना है, इसलिए इसलाम में मुर्दे को जलाने के स्थान में गाड़ना आवश्यक है ताकि वह बना रहे।

वस्तुतः कयामत के दिन (रात) से सम्बन्धित यह समस्त विवरण मात्र कल्पना-प्रसूत है। बीज से पेड़-पौधे बनते सबने देखे हैं, परन्तु हड्डियों से जीते-जागते प्राणियों के अंकुर फूटते कभी नहीं देखे जाते। यदि ऐसा होना सम्भव होता तो लोग अपने मृत प्रियजनों की रीढ़ के नीचे की 'अल अज्ब' ही नहीं समूची हड्डी बरसात में डालकर उन्हें फिर से बना लिया करते। परमात्मा भी सृष्टि-नियम के विरुद्ध कुछ नहीं कर सकता। मुर्दों के शरीर यदि बन भी गये तो कर्मों के कर्त्ता और भोक्ता जीवात्मा अपने-अपने शरीर को पहचान कर उनमें कैसे प्रवेश करेंगे, इसका कहीं कोई उल्लेख नहीं मिलता। कबर में तो केवल शरीर था, जीवात्मा तो शरीर से निकलकर पता नहीं कहाँ गया। हम यह भी जानते हैं कि एक कबर क्या, कबरिस्तान के कबरिस्तान नष्ट होते जाते हैं और उनकी जगह बड़े-बड़े नगर बसते जाते हैं। तब उन कबरों में दफनाये गये मुर्दों का न्याय कयामत के दिन कैसे होगा ? जो लोग कयामत के दिन ही मरेंगे, उनका न्याय तो उसी दिन हो जायेगा। परन्तु जो लोग कयामत के दिन से पाँच हजार या पाँच लाख वर्ष पहले मर चुके, वे तो विचाराधीन (under trial) होने से इतने लम्बे समय तक जेल में या हवालात में पड़े सड़ते रहेंगे। यह जेल या हवालात कहाँ है, इसका पता नहीं। इस लोक के कानून के अनुसार तो यह माना जाता है—'Justice delayed is justice denied' बहुत देर लग जाये तो अपराधी को छोड़ भी देते हैं। खुदा के न्याय का तो आदम ही निराला है।

वास्तव में खुदा कयामत के दिन न्याय नहीं करता, न्याय का नाटक करता है। सूरते बनी इसराइल में लिखा है—"और प्रत्येक व्यक्ति के लिए लटका दिया है हमने उसके कर्मों का हिसाब उसकी गर्दन के बीच और निकालेंगे उसके लिए न्याय के दिन एक खुली किताब" (आयत १२)। इस

[फिर सीधे मार्ग को क्यों नहीं ग्रहण करते ?]

और सूधा मार्ग एक मुसलमानों ही का है, वा दूसरे का भी ? सूधे मार्ग को मुसलमान क्यों नहीं ग्रहण करते ? क्या सूधा रास्ता बुराई की ओर का तो नहीं चाहते ? यदि भलाई सबकी एक है, तो फिर मुसलमानों ही में विशेष कुछ न रहा। और जो दूसरों की भलाई नहीं मानते, तो पक्षपाती हैं ॥३॥

आयत की व्याख्या में तफसीरे जलालैन में लिखा है—मुजाहिद ने कहा कि कोई बच्चा भी ऐसा नहीं जिसकी गरदन में एक कागज न हो। उसमें लिखा होता है उसके कर्मों का हिसाब कि वह सौभाग्यशाली है या दुर्भाग्यशाली। यही कथन हुसैनी में उद्धृत करके लिखा है—"जो भाग्य में लिख दिया है पहले से ही निश्चित किया है उसकी गर्दन में। उससे बचने का कोई उपाय नहीं है।"

सूरते रअद में कहा है—"वास्तव में खुदा गुमराह करता है जिसे चाहता है और राह दिखाता है अपनी ओर खींचता है" (आयत २६)। इस आयत को देखकर गोस्वामी तुलसीदास की यह चौपाई याद हो आती है—

जाको प्रभु दारुण दुख देहीं। ताकी मति पहले हर लेहीं ॥

आशय यह है कि पथभ्रष्ट होना या सन्मार्ग पर आना अपने वश में न होकर खुदा की इच्छा पर है। सूरते सिजदा में कहा है—"यदि हम चाहते तो सन्मार्ग दिखाते, परन्तु सच्चा है वचन मेरा कि निश्चय ही भरूँगा दोजख को जिन्नों और इन्सानों से इकट्ठा" (आयत १२) अर्थात् खुदा सबको सन्मार्ग दिखा सकता था, लेकिन दिखाता नहीं क्योंकि उसने दोजख को बनाया है तो उसे भरना भी तो उसकी जिम्मेदारी है। और यदि लोग गुमराह होकर दुष्कर्मों में प्रवृत्त नहीं होंगे तो उसकी बनाई दोजख कैसे भरेगी ? ऐसे खुदा से न्याय की आशा कैसे की जा सकती है ?' और कैसे उससे 'नय सुपथा राये' हमें सन्मार्ग से ले चल जैसी प्रार्थना की जा सकती है ?

और जिस न्यायाधीश के सम्बन्ध में पहले ही पता हो कि—"उन्होंने छल किया और छल किया अल्ला ने और अल्ला सबसे बड़ा छल करनेवाला है" (सूरते आले इमरान, आयत ५०) तथा "छल करता था अल्ला और वह उच्चकोटि का छल करनेवाला है" (सूरते इन्फाल आयत २९)। उसकी कचहरी में कौन न्याय पाने जाने की मूर्खता करेगा ?

मुख्य न्यायाधीश का कर्त्तव्य है कि उसकी व्यवस्था में सबको सब समय न्याय उपलब्ध हो। जहाँगीर की न्यायव्यवस्था आदर्श मानी जाती थी, क्योंकि उसके न्यायालय के द्वार सबके लिए हर समय खुले थे। कहते हैं कि उसने अपने महल में एक घण्टा टाँग रक्खा था। उसमें बँधा एक रस्सा महल के बाहर लटका रहता था। किसी के द्वारा खींचे जाते ही शहंशाह जहाँगीर के महल में घण्टा बज उठता था और खींचनेवाले को तत्काल न्याय मिलता था। इस व्यवस्था का लाभ पीड़ित पशु तक उठाते थे। यह कैसा दयालु और न्यायकारी खुदा है, जिसकी प्रजा कयामत के दिन से पहले तक अन्याय और अत्याचारों से पीड़ित हो सदा कराहती रहती है और खुदा 'अदालत बन्द है, कयामत के दिन खुलेगी' का नोटिस टाँग कर, टाँग पर टाँग धरे, आलसी बना पड़ा रहता है। और आशा करता है कि प्रजा हर समय उसकी इबादत करती रहे।

परमेश्वर अपने करने के काम सदा करता रहता है—

"God is eternally busy. He is not loofing on his throne till the Day of Judgement. He is pumping at your heart, operating in the laboratory of your stomach, direeting infinite atoms of matter, painting the lilies, whirling the stars, painting the lilies, pushing up the seeds. My father worketh hitherto and I work." —Great Thoughts, April 1933

[हमें श्रेष्ठों का मार्ग दिखा, दुष्टों का नहीं]

४—दिखा उन लोगों का रास्ता कि जिन पर तूने निआमत की ।। और उनका मार्ग मत दिखा कि जिनके ऊपर तूने ग़ज़ब अर्थात् अत्यन्त क्रोध की दृष्टि की, और न गुमराहों का मार्ग हमको दिखा ।

—मं० १ । सि० १ । सू०१ । आ० ६, ७

[पूर्व जन्म के पाप-पुण्य के विना श्रेष्ठ और दुष्ट कैसे ?]

समीक्षक—जब मुसलमान लोग पूर्वजन्म और पूर्वकृत पाप-पुण्य नहीं मानते, तो किन्हीं पर निआमत अर्थात् फ़ज़ल वा दया करने, और किन्हीं पर न करने से खुदा पक्षपाती हो जायगा । क्योंकि विना पाप-पुण्य के सुख-दुःख देना केवल अन्याय की बात है ।

परमात्मा हर समय काम में लगा रहता है। वह न्याय के दिन तक खाली बैठा रहनेवाला नहीं है। वह तुम्हारे हृदय को रक्तसंचालन में प्रवृत्त रखता है, तुम्हारे पेट की रसायनशाला में काम करता है, प्रकृति के परमाणुओं को गति देता है, फूलों में रंग भरता है, बीजों को अंकुरित करता है, नक्षत्रों का संचालन करता है। मेरा पिता काम में लगा रहता है, मैं भी अपने काम में लगा रहता हूँ।

डा० राधाकृष्णन ने ठीक लिखा है—"We cannot prevent the cause from producing its effect Every act, every thought is weighed in the invisible balance scales of justice. None can escape the day of judgement which is not in some remote future, but here and now.

—Hindu View of Life, P. 53.

हम कारण को कार्यरूप में परिणत होने से नहीं रोक सकते। प्रत्येक कर्म—प्रत्येक विचार को न्याय की परोक्ष तुला में तोला जाता है। न्याय-व्यवस्था से कोई बच नहीं सकता। न्याय का दिन कहीं सुदूर भविष्य में नहीं है, वह यहीं और अभी है अर्थात् हर समय और हर जगह है।

४. जगत् में सर्वत्र अनेकविध विषमता है। आत्माओं को लाखों योनियों में डाल रक्खा है। मनुष्य-योनि में भी सबके दैहिक रूप व सामर्थ्य में समानता नहीं है। एक आत्मा सम्पन्न परिवार में जन्म लेकर समस्त ऐश्वर्य का भोग करता और दूसरा दरिद्र की सन्तान होकर जीवन भर दर-दर की ठोकरें खाता रहता है। न्यायकारी परमेश्वर की सृष्टि में यह पक्षपात क्यों? आर्य (हिन्दू) धर्म के अनुसार इसमें आत्मा का नित्यत्व तथा पूर्वजन्म के कर्म कारण हैं। इसलाम की मान्यता के अनुसार अल्लाताला ही एकमात्र नित्य सत्ता है, उसके अतिरिक्त सारी सृष्टि उत्पन्न हुई है। जीवात्माएँ भी अभाव से भाव में आये हैं। उनका अस्तित्व व गुण अल्लाताला द्वारा निर्मित है। परिणामतः संसार में भला-बुरा जो कुछ होता है, अल्लाताला के आदेश से होता है। कोई नेक हुआ तो उसका कारण यह है कि अल्लाताला ने उसे नेक बनाया है, यह नहीं कि वह अपनी इच्छा और प्रयत्न से वैसा बना है। अल्लाताला ने न केवल हमारे स्वभाव व प्रवृत्तियों को सृष्टि के आरम्भ में ही निश्चित कर दिया, अपितु हमारे वर्त्तमान और भावी कर्मों को भी लेखबद्ध कर 'लोहे महफ़ूज़' परमात्मा के पास सुरक्षित भाग्य पुस्तक)में पहले से ही रख छोड़ा है और मरणोपरान्त हमारे स्थायी आवास (स्वर्ग या नरक) का भी निश्चय कर रक्खा है। इस प्रकार हमें गुमराह करना या सीधा रास्ता दिखाना खुदा की मर्जी पर निर्भर करता है। निश्चय ही उसका यह व्यवहार पक्षपातपूर्ण है। विना कारण किसी पर नियामत या दया करना और किसी पर क्रूर दृष्टि रखना अन्याय्य है।

आज से मात्र १४०० वर्ष पूर्व कुरान के रूप में इलहाम देना पक्षपातपूर्ण है, क्योंकि उससे पहले दुनिया में आये लोग ईश्वरीय ज्ञान से वञ्चित रह गये। स्वयं कट्टर ईसाई होते हुए और ईसाइयत

[निष्कारण दया और क्रोध ईश्वर नहीं कर सकता]

और विना कारण किसी पर दया और किसी पर क्रोध-दृष्टि करना भी ईश्वर के स्वभाव से बहिः[1] है। वह दया अथवा क्रोध नहीं कर सकता। और जब उनके पूर्वसंचित पुण्य-पाप ही नहीं, तो किसी पर दया और किसी पर क्रोध करना नहीं हो सकता।

[अल्लाह ने इस सूरः को मनुष्यों से कैसे बुलवाया?]

और इस सूरत की टिप्पन पर—"यह सूरः अल्लाह साहेब ने मनुष्यों के मुख से कहलाई कि सदा इस प्रकार से कहा करें।"

जो यह बात है, तो 'अलिफ़ बे' आदि अक्षर भी खुदा ही ने पढ़ाये होंगे। जो कहो कि नहीं, तो विना अक्षरज्ञान के इस सूरः को कैसे पढ़ सके? क्या कण्ठ ही से बुलाये और बोलते गये? जो ऐसा है, तो सब क़ुरान ही कण्ठ से पढ़ाया होगा[2]।

के प्रचार-प्रसार को सर्वात्मना समर्पित होते हुए भी प्रो० मैक्समूलर ने इस बात को अपनी पुस्तक 'Science and Religion' में इस प्रकार व्यक्त किया है—

"If there is a God who has created heaven and earth it will be unjust on his part if he deprives millions of his sons, born before Moses, of his divine knowledge. Reason and comparative study of religions declares that God gives his divine knowledge from his first appearance on earth." अर्थात् यदि धरती और आकाश का रचयिता ईश्वर है तो उसके लिए यह अन्यायपूर्ण होगा कि वह मसा से पूर्व उत्पन्न अपने करोड़ों पुत्रों को अपने ज्ञान से वञ्चित रक्खे। तर्क और धर्मों के तुलनात्मक अध्ययन दोनों घोषित करते हैं कि परमेश्वर सृष्टि के आदि में ही मनुष्यों को अपना ज्ञान देता है। यह निर्विवाद है कि इस कसौटी पर केवल वेद ही खरा उतरता है, क्योंकि यदि हम वेद का आविर्भाव सृष्टि के आरम्भ में न मानें तो भी वह ईश्वरीय ज्ञान होने का दावा करनेवाले अन्य सभी से पहले का है।

अरबी निश्चित रूप से एक देशविशेष की भाषा है, इसलिए उस भाषा में ईश्वरीय ज्ञान देने से ईश्वर पर पक्षपात का आरोप लग सकता है। परन्तु वेदों का प्रादुर्भाव ऐसी भाषा में हुआ, जो अपने मूल रूप में सबकी भाषा है। वर्तमान में प्रचलित विविध भाषाओं के बोलनेवाले लोगों के पूर्वज किसी अत्यन्त प्राचीन कालखण्ड में किसी एक स्थान पर निवास करते थे और एक भाषा बोलते थे। कालान्तर में जब वे अनेक शाखा-प्रशाखाओं में विभक्त होकर विविध प्रदेशों में बस गये तो उनकी भाषा भी विविध रूपों में विकसित होती गई। पर मूलतः एक होने के कारण वह समानता बनी रही, जो आज हमें आश्चर्यजनक प्रतीत होती है। जिस प्रकार गुजराती, मराठी, बंगला आदि विविध भारतीय भाषाओं का उद्भव प्राचीन संस्कृत भाषा से हुआ है, वैसे ही भारतीयेतर विभिन्न भाषाओं का स्रोत भी संस्कृत है। तुलनात्मक तथा ऐतिहासिक भाषाविज्ञान के जनक बॉप ने कहा था—"मैं नहीं मानता कि ग्रीक, लैटिन और दूसरी यूरोपीय भाषायें संस्कृत से निकली हैं। इसकी अपेक्षा में यह मानना अधिक उचित

---

१. अर्थात् बाहर है।

२. यह दोष वेद पर नहीं आता। क्योंकि परमेश्वर ने वेद का ज्ञान आदि ऋषियों के हृदयों में अथवा ज्ञान में प्रेरणा करके दिया। द्र०—ऋक् १।७१।१॥

[देशविशेष की भाषा में ज्ञान देना खुदा का पक्षपात]

इससे ऐसा समझना चाहिए कि जिस पुस्तक में पक्षपात की बातें पाई जायें, वह पुस्तक ईश्वर-कृत नहीं हो सकता। जैसाकि अरबी भाषा में उतारने से अरबवालों को इसका पढ़ना सुगम, अन्य भाषा बोलनेवालों को कठिन होता है। इससे खुदा में पक्षपात आता है। और जैसे परमेश्वर ने सृष्टिस्थ सब देशस्थ मनुष्यों पर न्याय-दृष्टि से सब देश-भाषाओं से विलक्षण संस्कृतभाषा, कि जो सब देशवालों के लिये एक-से परिश्रम से विदित होती है, उसी में वेदों का प्रकाश किया है, वैसे करता तो यह दोष नहीं होता ॥४॥

[क़ुरान परहेजगारों के लिये मार्गदर्शक]

५—यह पुस्तक कि जिसमें सन्देह नहीं, परहेजगारों को मार्ग दिखलाती है ॥ जो कि ईमान लाते हैं साथ ग़ैब (=परोक्ष) के (और) नमाज़ पढ़ते, और उस वस्तु से जो हमने दी खर्च करते हैं ॥

समझता हूँ कि ये सभी भाषायें किसी एक ही भाषा के विविध रूप हैं, जिसे संस्कृत ने अधिक अविकल रूप में सुरक्षित रक्खा है।" हम समझते हैं कि यहाँ जाने-अनजाने बॉप ने मूल 'वैदिक भाषा' की ओर संकेत किया है। इस प्रकार वेदों का 'मानवेर आदि जन्मभूमि' त्रिविष्टप में सृष्टि के आदि में वैदिक भाषा में प्रादुर्भूत होना तर्कप्रतिष्ठित एवं इतिहाससम्मत है। विश्वभाषा—वैदिक अथवा संस्कृत—में प्रादुर्भूत होने से परमेश्वर पर पक्षपात का आरोप नहीं लग सकता। ग्रन्थकार ने इस विषय का विस्तृत विवेचन सत्यार्थप्रकाश के प्रथम संस्करण (१८७५) तथा पूनाप्रवचन (५) में किया है।

भाषा विचारों के आदान-प्रदान का साधन है। वाणी से शब्दोच्चारण की आवश्यकता अपने से भिन्न व्यक्ति को बोध कराने के लिए होती है अर्थात् जब उपदेष्टा और उपदेश्य में दूरी हो तो भाव-संक्रमण के लिए वाणी की आवश्यकता होती है। परन्तु जब अपने से बात करती होती है अर्थात् जब हम चुपचाप बैठ कर किसी विषय का चिन्तन करते हैं तो उस समय की संकल्प-विकल्प अथवा प्रश्नोत्तर की श्रृंखला में कण्ठ-तालु-जिह्वा आदि के व्यापार के विना ही हमारे मन में सूक्ष्मरूप में (उपांशु) भाषा बोली जा रही होती है, वह मन-ही-मन बोली जा रही सूक्ष्म भाषा हमारे द्वारा बोली जानेवाली स्थूल भाषा के संस्कारों की स्मृतिरूप होती है। विचारोपरान्त जब वही बात हमने अपने से भिन्न किसी व्यक्ति से कहनी होती है, तब हमें स्थूल (वैखरी) भाषा की अपेक्षा होती है और वह वर्णोच्चारण के द्वारा संभव होता है। इसलाम का सन्देश देनेवाला खुदा सातवें आसमान पर रहता है और सन्देश लेनेवाला पैगम्बर (मुहम्मद साहब) मक्का या मदीना में रहते थे। इसलिए अपनी बात मुहम्मद साहब तक पहुँचाने के लिए खुदा को फ़रिश्ते (जिबरील) की आवश्यकता पड़ती थी। जब परमात्मा सृष्टि के आदि में वेद का ज्ञान ऋषियों को देता है तो सर्वान्तर्यामी होने के कारण वहाँ विद्यमान (ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशे तिष्ठति—गीता) होता हुआ उनकी आत्मा में वेद और उसकी भाषा के संस्कार डालकर उन्हें उद्बुद्ध कर देता है। तब अर्थों को जानते हुए उस शब्दराशि को दूसरे मनुष्यों तक पहुँचाने के लिए वे ऐसे ही उच्चारण करने लगते हैं जैसे कोई व्यक्ति पूर्वाभ्यस्त वाक्यों को निद्रा से जागकर उच्चारण करता है।

५. इस आयत का निहितार्थ यह है कि परहेजगार और गुनहगार पहले से निर्धारित हैं और केवल परहेजगारों को सत्प्रेरणा किए जाने से स्पष्ट है कि अल्लाह गुनहगारों को प्रेरणा नहीं करता। कहा है—

दरिद्रान्भर कौन्तेय मा प्रयच्छेश्वरे धनम्।

और वे लोग जो उस किताब पर ईमान लाते हैं जो रखते हैं तेरी ओर वा तुझसे पहिले उतारी गई, और विश्वास क़यामत पर रखते हैं ॥ ये लोग अपने मालिक की शिक्षा पर हैं, और ये ही छुटकारा पानेवाले हैं ॥

निश्चय जो काफ़िर हुए और उन पर तेरा डराना-न-डराना समान है, वे ईमान न लावेंगे ॥ अल्लाह ने उनके दिलों कानों पर मोहर कर दी और उनकी आँखों पर पर्दा है, और उनके वास्ते बड़ा अजाब है ॥

—मं० १ । सि० १ । सूर: २ । आ० २-७

[मार्गदर्शन तो पथभ्रष्टों के लिये आवश्यक है]

समीक्षक—क्या अपने ही मुख से अपनी किताब की प्रशंसा करना खुदा की दम्भ की बात नहीं ? जो 'परहेजगार' अर्थात् धार्मिक लोग हैं, वे तो स्वत: सच्चे मार्ग में हैं । और जो झूँठे मार्ग पर हैं, उनको यह क़ुरान मार्ग ही नहीं दिखला सकता, फिर किस काम का रहा ?

[खुदा ने दौलत सबको क्यों न दी ?]

क्या पाप-पुण्य और पुरुषार्थ के विना खुदा अपने ही खजाने से खर्च करने को देता है ? जो देता है, तो सबको क्यों नहीं देता ? और मुसलमान लोग परिश्रम क्यों करते हैं ?

[क्या खुदा पहली किताब में कुछ लिखना भूल गया था ?]

और जो बाइबल इञ्जील आदि पर विश्वास करना योग्य है, तो मुसलमान इञ्जील आदि पर ईमान, जैसा कुरान पर है वैसा क्यों नहीं लाते ? और जो लाते हैं, तो कुरान[1] का होना किसलिये ?

अर्थात्—इसका अभिप्राय यह है कि जिसका पेट भरा है, उसे खाना दिया जाये और भूखा देखता रह जाये । जिसे रास्ता मालूम है, उसे रास्ता बताया जाये और जो नहीं जानता उसे भटकने के लिए छोड़ दिया जाये ।

फ़तह मुहम्मद खाँ साहब इस आयत की व्याख्या में लिखते हैं—"दुनिया में सब तरह के लोग होते हैं, जिनके दिल नसीहत का असर नहीं लेते और ईमानी नूर से रोशन नहीं होते । ऐसों को नसीहत करना न करना बराबर है । दिलों और कानों पर मुहर लगने और आँखों पर परदा डालने से ये मुराद है कि जिन रास्तों से इन्सान हिदायत की बातों को सुन सकता या समझ सकता है, वे बन्द कर दिए गए हैं ।" यानी अच्छी बातें देख-सुन कर सुधरने का रास्ता बन्द कर दिया जाता है । ऐसा खुदा बयस्लु कैसे हो सकता है ऐसी अवस्था में दुष्कर्मों की सजा कैसी ?

सामान्य बुद्धिवाला भी ऐसी मूर्खता नहीं करेगा, प्राणिमात्र का हितैषी परमेश्वर तो ऐसा कर ही नहीं सकता । 'कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि माता कुमाता न भवति'—पुत्र कितना ही बिगड़ जाये परन्तु सन्तान का हित चाहनेवाली माता उसे कुमार्ग पर जाते देखकर चुप नहीं बैठेगी । डा० राधाकृष्णन ने ठीक लिखा है—"The sinner in the lowest depths of degradation has the light in him which he cannot put out though he may try to stifle it and turn away from it. God holds us, fallen though we may be, by the roots of our being, and is ready to send his his rays of light into our dark and

---

१. 'सत्यार्थ-प्रकाश' में यहाँ पर जो टिप्पणी मिलती है, वह आरम्भ में ही होनी चाहिये । इसलिये हम उसे आरम्भ में ले गये हैं ।

जो कहें कि कुरान में अधिक बातें हैं, तो पहिली किताब में लिखना खुदा भूल गया होगा। और जो नहीं भूला, तो कुरान का बनाना निष्प्रयोजन है।

[वेद जैसी एक पुस्तक न बनाकर दो क्यों बनाईं ?]

और हम देखते हैं, तो बाइबल और कुरान की बातें कोई-कोई न मिलती होंगी, नहीं तो सब मिलती हैं। एक ही पुस्तक जैसाकि वेद है क्यों न बनाया ? कयामत पर ही विश्वास रखना चाहिए, अन्य पर नहीं ?

[क्या ईसाई-मुसलमान ही खुदा की शिक्षा पर हैं ?]

क्या ईसाई और मुसलमान ही खुदा की शिक्षा पर हैं ? उनमें कोई भी पापी नहीं है ? क्या जो ईसाई और मुसलमान अधर्मी हैं, वे भी छुटकारा पावें, और दूसरे धर्मात्मा भी न पावें, तो बड़े अन्याय और अन्धेर की बात नहीं है ?

[अन्य मतस्थों को काफिर कहना ठीक नहीं]

और क्या जो लोग मुसलमानी मत को न मानें, उन्हीं को काफिर कहना वह एकतर्फी डिगरी नहीं है ? जो परमेश्वर ही ने उनके अन्तःकरण और कानों पर मोहर लगाई, और उसी से वे पाप करते हैं, तो उनका कुछ भी दोष नहीं। यह दोष खुदा ही का है, फिर उन पर सुख-दुःख वा पाप-पुण्य नहीं हो सकता। पुनः उनको सजा-जजा क्यों करता है ? क्योंकि उन्होंने पाप वा पुण्य स्वतन्त्रता से नहीं किया ॥५॥

---

rebellious hearts." (Hindu View of Life). अर्थात्—बड़े-से-बड़े पापी के मन में भी एक ज्योति दिखाई देती है। जिसकी उपेक्षा वह भले ही कर दे, किन्तु जिसे वह बुझा नहीं सकता। हम कितने ही पतित क्यों न हों, परमेश्वर हमें संभालता है और हमारे अन्धेरे और विद्रोही मन में भी अपने प्रकाश की किरणें डाले बिना नहीं रहता।

यदि कुरान खुदाई किताब होती तो उसमें ईश्वर के गुण-कर्म-स्वभाव के विपरीत ऐसी बातें न लिखी होतीं, जिनसे ईश्वर की दया को ग्रहण लग जाता है।

इस आयत पर आक्षेप करनेवाले ईसाइयों को मौलवी सना-उल्ला ने इन शब्दों में डाँट पिलाई है—"इसलाम के कदीम मेहरबान ईसाइयों ने इस मसइला के मुतअलिक जो जबान दराजियाँ की हैं, बिल्कुल इन्साफ से बईद (दूर) और वाक्यबोध से दूर हैं और इन जंटलमैन ईसाइयों की ईमानदारी का पूरा सबूत है कि उन्होंने इस मामले में सौकिन के जलाने को अपनी नाक की भी परवा न की।" कुरान करीम की इन आयत पर एतराज करते हुए अपने हाँ की भी खबर न ली कि तौरेत और जबूर ने भी मुतअद्द मकालात (अनेक सन्दर्भों का बवजाहत) लिखा है—तौरेत की दूसरी किताब सफर (यात्रा का निर्गमन) पर्व ४ की २१वीं आयत में है—"और यहोवा ने मूसा से कहा—जब तू मिस्र में पहुँचेगा तो सचेत होना कि जो चमत्कार मैंने तेरे वश में किये हैं, उन सबों को फिरौन के देखते करना, पर मैं उसके मन को हठीला करूँगा और वह मेरी प्रजा को जाने न देगा"।"पादरियों ने अपने घर की तो खबर न ली, या ली तो होगी मगर अपनी कलीसिया (सम्प्रदाय) में रसूख बढ़ाने को नाहक इसलाम से उलझे। पस पादरी तो जब तक इन मकामात मजकूरा का जवाब न सोच लें, हमसे मुखातिब नहीं हो सकते। इसके आगे मौलाना ने ग्रन्थकार के आक्षेप का समाधान करने की असफल चेष्टा की है।

[अल्लाह ने रोग बढ़ाया]

६—उनके दिलों में रोग है, अल्लाह ने उनको रोग बढ़ा दिया ॥

—मं० १। सि० १। सू० २। आ० १०[1]

[विना अपराध रोगादि बढ़ाना अन्याय है]

समीक्षक—भला विना अपराध खुदा ने उनको रोग बढ़ाया, दया न आई, उन विचारों को बड़ा दुःख हुआ होगा। क्या यह शैतान से बढ़कर शैतानपन का काम नहीं है? किसी के मन पर मोहर लगाना[2], किसी को रोग बढ़ाना, यह खुदा का काम नहीं हो सकता। क्योंकि रोग का बढ़ना अपने पापों से होता है ॥६॥

[पृथिवी बिछौना और आसमान छत]

७—जिसने तुह्मारे वास्ते पृथिवी बिछौना और आसमान की छत को बनाया ॥

—मं० १। सि० १। सू० २। आ० २२

६. उनके दिलों में कुफ्र का रोग था। उसे बढ़ाने का अर्थ है कि उन्हें और अधिक काफिर बना दिया। रोगी के रोग को दूर या कम करने की बजाय उसे बढ़ा देना आसुरी प्रवृत्ति है। प्रारम्भ में भी वे अपने किसी दोष के कारण रोगी नहीं हुए थे। खुदा ने रोगी अर्थात् काफिर होना उनके भाग्य में लिख दिया था और भाग्य में लिखा अटल था। तफसीरे जलालैन में लिखा है—"अल्लाह ने उनकी बीमारी को बढ़ाया, इस प्रकार कि जो आदेश अल्लाह उतारे, उसे वे न मानें। मानें तो तब जब वे देखें-सुनें और सुनें कैसे जब उनके दिलों पर और कानों पर सील लगा दी और आँखों पर परदा डाल दिया और यह सब अल्लाह के हुक्म से हुआ। यदि उनके भाग्य में काफिर होना लिखा है तो किसी भी न्याय से उन्हें अपराधी नहीं कहा जा सकता और यदि उनका दण्ड भी पहले से लिख दिया गया है तो किसी भी न्याय-व्यवस्था के अनुसार उन्हें दण्ड नहीं दिया जा सकता। ऐसा अन्यायी और क्रूर ईश्वर कुरान के सिवा कहीं नहीं मिलेगा।

७. आसमान को छत यहाँ कवि-कल्पना की भाँति ही नहीं कहा। सूरते रअद आयत २ में फरमाया है—"अल्लाह वह है, कि जिसने विना स्तम्भों के आसमान को ऊँचा उठाया जो तुम देखते हो और फिर वह राजसिंहासन पर विराजमान हुआ।" इस आयत पर तफसीरे हुसैनी में लिखा है—"सिद्ध होता है कि स्तम्भ तो हैं लेकिन तुम देख नहीं सकते।" यही बात सूरते लुकमान में कही है—"उत्पन्न किया आसमानों को बगैर स्तूनों के जो तुम देखते हो।" आसमान का फटना भी बताया है—"जब आसमान फट जाये और सब तारे झड़ जायें, जब दरिया चीरे जायें और जब कबरें जिन्दा होकर उठाई जायें" (सूरते फुरकान, आयत २३)। तफसीरे हुसैनी में फरमाया है—"फट जायेंगे सफेद बादल के कारण जो सात तबका आसमान के ऊपर है और जिसका आकार सात आसमानों के समान है और वह भारी है सात आसमानों से।" और सूरते नूह (आयत १४-१५-१६) में लिखा है—"क्या नहीं देखा तुमने अल्लाह ने सात आसमान ऊपर नीचे पैदा किये और बनाया चाँद जिसमें प्रकाश उत्पन्न किया है और बनाया सूरज को दीपक।"

१. यहाँ तथा आगे सं० २६ में आयतों की संख्याएँ शोधी गई हैं। इस विषय में प्रारम्भ में (पृष्ठ ६३६) टि० २ देखें।

२. द्र०—समीक्ष्यांश संख्या ५।

[आकाश को छत बताना अविद्या की बात है]

समीक्षक—भला आसमान छत किसी की हो सकती है ? यह अविद्या की बात है। आकाश को छत के समान मानना हँसी की बात है। यदि किसी प्रकार की पृथिवी को आसमान मानते हो, तो उनकी घर की बात है ॥७॥

अब छत एक न रही, सात हो गईं। उनके बीच में चाँद व सूरज रक्खे गये। इसपर प्रश्न होगा कि इन नक्षत्रों (चाँद, सूरज आदि) के प्रकाश इन छतों के बीच रुक क्यों नहीं जाते। कहा जा सकता है कि ये छतें पारदर्शी शीशों की बनी होंगी। पर कुरान में फरमाया है—"जब आकाश की खाल उतारी जायेगी" (सूरते तकबीर, आयत ११), "जैसाकि बकरी का चमड़ा उतारा जाता है" (तफसीरे जलालैन)। वास्तव में ये सब बच्चों का दिल वहलाने के लिए परी देश की विचित्र कथायें हैं, ऐसी पुस्तक को इलहामी मानकर उससे मार्गदर्शन की आशा रखना सरासर मूर्खता है—रेत में तेल निकालने के समान।

आगे आयत २६ में कहा है—"वही तो है जिसने तुम्हारे लिए धरती की सारी वस्तुएँ उत्पन्न कीं। फिर आकाश की ओर रुख किया और बिल्कुल ठीक और सन्तुलित रूप से सात आकाश वनाये।"

सात आसमान तबका तबका एक पर एक। मुआलिम में लिखा है कि आसमाने दुनिया एक मौज मजबूत (दृढ़ लहर) हो गई है। दूसरा आसमान सफेद संगमरमर का, तीसरा लोहा, चौथा सीसा (कुछ ने ताँबा कहा है), पाँचवाँ चाँदी, छठा सोना और सातवाँ आसमान याकूल, सुर्ख (लाल माणिक)—तफसीर कादरी, भाग २, पृष्ठ ५५८।

इसी प्रकार कससुल अंबिया, पृष्ठ ७ पर भी सात आसमान लिखे हैं और अजावबुल कसस भाग १, पृष्ठ २० में आसमानों का वर्णन है कि आसमान प्रथम जमुर्द सब्ज से है और उसके निवासी फरिश्ते गायों की शक्ल के हैं। आसमान द्वितीय याकूत सुर्ख और निवासी फरिश्ते बाज की शक्ल के हैं। आसमान तृतीय याकूत जर्द और निवासी गिद्ध की शक्ल के। आसमान चतुर्थ चाँदी का, निवासी घोड़ों की शक्ल के, पाँचवाँ सोने का निवासी हूरुलईन (खूबसूरत लड़के) की शक्ल के, छठा सफेद मोतियों का, निवासी गिलमान की शक्ल के और सातवाँ नूर का और निवासी मनुष्य की शक्ल के।

कुरान के और मनुष्यों के भाग्य को कलम ने खुदा के आदेश से लिखा। फिर उसे (कुरान) को लौह महफूज (सुरक्षित तख्ती) से लाकर आसमाने दुनिया पर बैतुल इज्जत में रक्खा गया।

इसपर भाष्यकार मुहम्मद फारुख खाँ की टिप्पणी है—"सात आकाश की वास्तविकता क्या है ? यह निश्चित करना कठिन है। बस इतना जान लेना चाहिए कि इसका तात्पर्य या तो यह हो कि पृथिवी के परे जितनी सृष्टि है, अल्लाह ने उसे सात स्थायी वर्गों में बाँट दिया है या फिर इसका तात्पर्य यह हो कि हमारी पृथिवी सृष्टि के जिस क्षेत्र में स्थित है, वह सात वर्गों में बँटा हो। हर युग में आकाश या आसमान के बारे में मनुष्य के अपने अनुमान और अन्दाजे के मुताबिक भिन्न-भिन्न विचार पाये जाते रहे हैं, उनमें से किसी के अनुसार इन शब्दों का अर्थ निकालना सही न होगा।"

यह खूब रही। आप जानते नहीं, दूसरा बताये तो आप मानते नहीं। सात आसमान आपकी समझ में नहीं आ रहे। आयें भी कैसे ? आकाश सात होते ही नहीं। आकाश सदा से एक ही रहा है, दो-तीन-चार आदि नहीं। कुरान की सात आकाशवाली बात कल्पना-प्रसूत है—वास्तविकता से दूर।

यदि मुसलमानों के हृदय में यह सत्य अंकित हो जाये कि आसमान कोई वस्तु नहीं है (आकाश वास्तव में निराकार एवं सर्वव्यापी तत्त्व है, जो किसी को दिखाई नहीं देता। सामान्यतया जिसे आकाश

[उस जैसी सूरत लाओ]

८—जो तुम उस वस्तु से सन्देह में हो, जो हमने अपने पैगम्बर के ऊपर उतारी, तो उस कैसी[1] एक सूरत ले आओ और साक्षियों अपने को पुकारो अल्लाह के विना जो तुम सच्चे हो ॥ जो तुम न करो और कभी न करोगे, तो उस आग से डरो जिसका इन्धन मनुष्य[2] है और काफिरों के वास्ते पत्थर तैयार किए गये हैं ॥ —मं० १। सि० १। सू० २। आ० २३,२४

कहते हैं, वह वास्तव में आकाश न होकर दूर तक फैले पृथिवी, जल और अग्नि के त्रसरेणुओं का संघात-मात्र है। नीला-नीला मेहराब-सा दीखनेवाला आकाश नहीं है। फिर वह क्या है, इसकी व्याख्या हमारे समय में सबसे पहले टिण्डाल (Tyndal) ने की है। उसने बताया कि जब सूर्य के प्रकाश की किरणें (तरंगें) वायु में स्थित सूक्ष्म परमाणुओं से टकराती हैं तो प्रकाश का ध्रुवीकरण हो जाता है। बोलचाल में उसी को आकाश का नाम दिया जाता है।)

जब आसमान का ही अस्तित्व नहीं तो न तो कुरान लोहे महफूज में बन्द था और न उसे आसमाने दुनिया पर लाकर रक्खा गया और न उसे जिब्रील ला-लाकर हजरत मुहम्मद को देता रहा। यह समस्त प्रपंच आवश्यकतानुसार हजरत मुहम्मद की उपज है, जैसाकि आगे उनके समकालीन काफिर कहलानेवाले और अन्याय लोगों का कहना है। हजरत मुहम्मद लोगों के सम्मुख जब आयतें सुनाते और फिर बदलते और बदलते भी खुदा के नाम पर। कुरान, पारा १४, कूर १४।२ की व्याख्या तफसीरे कादरी पृष्ठ ५८१ पर इस प्रकार की गई है—

"जब कुछ आज्ञाएँ निरस्त (रद्द) की गईं तो मक्का के काफिरों ने यह बात कही कि मुहम्मद अपने मित्रों के साथ परिहास करता है। आज एक आज्ञा देता है और कल उसे मना कर देता है और अपने मन से बातें बनाकर कह देता है तो उपरोक्त आयत उतरी —और जब बदलते हैं हम एक निरस्त (रद्द) करनेवाली आयत को तो काफिर लोग कहते हैं कि तू (मुहम्मद) खुदा पर इफ्तरा (मिथ्यारोपण) करता है। अर्थात् झूठमूठ खुदा का नाम लेता है। तू मुफतरी (मिथ्याभाषी) है और अपनी ओर से बातें बनाकर खुदा का नाम लेता है।"

कुरान सूरते फुरकान (फुरकान का अर्थ है एक ही वस्तु के भागों को अलग-अलग करना, कुरान के विभिन्न टुकड़े थोड़ा-थोड़ा करके विभिन्न अवसरों पर उतरे—मुहम्मद फारुख खाँ) की आयत ४-५ में यहाँ तक कहा गया है कि काफिर (विरोधी) लोग बोले कि नहीं है ये कुरान जो मुहम्मद हमारे पास लाये हैं। यह झूठ स्वयं मुहम्मद ने बाँधा है और उसकी सहायता की है एक और कौम के लोगों ने। कुरान खुदा का कलाम नहीं है। मुहम्मद स्वयं ही बातें बनाता है। और खुदा का नाम लेकर अरबी में सुनाता है।

८. कुरान के विशेषज्ञ विद्वान् पं० रामचन्द्र देहलवी के अनुसार इस आयत के अनुवाद में अरबी भाषा की दृष्टि से एक भूल हो गई है। शाह रफीउद्दीन का अनुवाद इस प्रकार है—

"पस डरो उस आग से जो ईंधन उसका आदमी हैं और पत्थर तैयार की गई है वास्ते काफिरों के।"

---

१. अर्थात् उस जैसी।

२. सं० ३४ में इससे आगे 'और पत्थर हैं,'जो काफिरों के वास्ते तैयार की गई हैं' परिवर्तित पाठ है। वस्तुतः यही शुद्ध पाठ है। इसके सम्बन्ध में श्री पं० रामचन्द्र देहलवी लिखित 'चतुर्दश समुल्लास उद्धृत कुरान कीआयतोंका अनुवाद'। द्रष्टव्य—परिशिष्ट २।

[कुरान जैसी सूरतें बनाई जा सकती हैं]

समीक्षक—भला यह कोई बात है कि उसके सदृश कोई सूरत न बने ? क्या अकबर बादशाह के समय में मौलवी फैजी ने विना नुकते का कुरान नहीं बना लिया था ?

[क्या भौतिक आग से न डरें ?]

वह कौन-सी दोजख की आग है ? क्या इस[1] आग से न डरना चाहिए ? इसका भी इन्धन जो कुछ पड़े सब है। जैसे कुरान में लिखा है कि काफिरों के वास्ते पत्थर तैयार किए गये हैं[2], तो वैसे पुराणों में लिखा कि म्लेच्छों के लिये घोर नरक बना है। अब कहिए किसकी बात सच्ची मानी जाय ?

[धार्मिक किसी भी मत के हों, वे सुख पावेंगे पापी नहीं]

अपने-अपने वचन से दोनों स्वर्गगामी, और दूसरे के मत से दोनों नरकगामी होते हैं। इसलिये इन सबका झगड़ा झूंठा है। किन्तु जो धार्मिक हैं वे सुख, और जो पापी हैं वे सब मतों में दुःख पावेंगे ॥८॥

कुरान की आयत के अनुसार शाह साहब के तर्जुमे का यह मतलब है—"पस उस आग से डरो जिसका ईंधन मनुष्य और पत्थर हैं, और जो (=आग) काफिरों के लिए तैयार की गई है।"

वास्तव में इस भूल का कारण शाह साहब के अनुवाद का प्रकार है। अकस्मात् शाह साहब ने 'हैं' क्रिया को 'आदमी' के पीछे लिख दिया, और 'पत्थर' के पीछे विराम (comma) नहीं दिया। आर्यभाषा में अनुवाद करनेवाले ने सामान्य बुद्धि का प्रयोग करके 'हैं' के पीछे विराम समझ लिया और 'पत्थर' को आगेवाले टुकड़े से जोड़ दिया और 'गई' को 'गए' पढ़ लिया। इस प्रकार अनर्थक से वाक्य को सार्थक बना दिया।

यहाँ कुरान के कर्त्ता का मतलब 'मनुष्य' से 'मूर्तिपूजक' और 'पत्थर' से 'मूर्त्तियाँ' है। मूर्त्ति-पूजक चेतन होने से आग में डाले जा सकते हैं, और ईंधन की नाईं जल सकते हैं, परन्तु पत्थर की मूर्त्तियां जड़ होने से आग का ईंधन नहीं हो सकतीं और न उनको कोई पीड़ा हो सकती है। इसलिए आर्यभाषा-नुवादक ने संभवार्थ के आधार पर विराम की कल्पना की—'हैं' के पश्चात् विराम लगाया और 'पत्थर' को उसके आगे के वाक्य से जोड़ दिया। इस प्रकार बेमुहावरा उर्दू तर्जुमे को बामुहावरा आर्यभाषा में जोड़ दिया, जैसा कि स० प्र० के १४वें समुल्लास में इस समय छपा है। इसमें ग्रन्थकार की तो क्या, अनुवादक की भी भूल नहीं है, जिसने अरबी न जानते हुए भी, विना किसी दुर्भावना के, केवल अपनी बुद्धि के सहारे शाह साहब के अनुवाद को सार्थक बनाकर आर्यभाषा का रूप दे दिया।

भ्रामकता को उर्दू लिपि ने भी बढ़ाया है। 'की गई' शब्द जिस प्रकार उर्दू लिपि में लिखे जाते हैं, उससे वे 'की गई' और 'किये गये' दोनों प्रकार से पढ़े जा सकते हैं। श्री अशरफ अली थानवी ने इसका अनुवाद इस प्रकार किया है—'फिर ज़रा बचते रहियो दोज़ख़ से जिसका ईंधन आदमी और पत्थर हैं तैयार हुई रक्खी है काफ़िरों के वास्ते।' थानवी जी ने ग्रन्थकार के आक्षेप से बचने के लिए 'नार' शब्द का सर्वसम्मत अनुवाद 'आग' न करके दोज़ख़=नरक किया है, किन्तु आरोप तो फिर भी बना हुआ है।

---

१. अर्थात् पृथिवी पर की आग से।

२. यह समीक्षा अशुद्ध अनुवाद पर आधृत है। द्र०—गत पृष्ठ की टि० २।

[मुसलमानों का बहिश्त]

६—और आनन्द का सन्देसा दे उन लोगों को कि ईमान लाये और काम किये अच्छे, यह कि उनके वास्ते बहिश्ते हैं, जिनके नीचे से चलती हैं नहरें, जब उसमें से मेवों के भोजन दिये जावेंगे तब कहेंगे कि यह वो वस्तु है जो हम पहिले इससे दिये गये थे[1]। और उनके लिये पवित्र बीबियाँ सदैव वहाँ रहनेवाली हैं ।। —मं० १। सि० १। सू० २। आ० २५

[अब बहिश्त में स्त्रियों के दिन कैसे कटते होंगे ?]

समीक्षक—भला यह कुरान का बहिश्त संसार से कौन-सी उत्तम बातवाला है ? क्योंकि जो पदार्थ संसार में हैं, वे ही मुसलमानों के स्वर्ग में हैं। और इतना विशेष है कि यहाँ जैसे पुरुष जन्मते-मरते और आते-जाते हैं, उसी प्रकार स्वर्ग में नहीं। किन्तु यहाँ की स्त्रियाँ सदा नहीं रहतीं, और वहाँ की बीबियाँ अर्थात् उत्तम स्त्रियाँ सदा काल रहती हैं। तो जब तक कयामत की रात न आवेगी, तब तक उन बिचारियों के दिन कैसे कटते होंगे ? हाँ जो खुदा की उन पर कृपा होती होगी, और खुदा ही के आश्रय समय काटती होंगी, तो ठीक है।

मुसलमान काफिरों=मुसलिमेतरों को दोजख में भेजेंगे और पौराणिक म्लेच्छों को तो दोजख में तो जगह मिलनी कठिन हो जायेगी। 'जो धार्मिक हैं वे सुख और जो पापी हैं वे सब मतों में दुःख पायेंगे'- ग्रन्थकार का यह कथन ही यथार्थ एवं पक्षपातरहित है और वेदसम्मत है। यही न्याय्य है।

६. मौलवी सना-उल्ला के मत से यहाँ अनुवाद में शाह साहब के अनुवाद से घोटाला हुआ है। मूल शब्द 'खालिदून' पुल्लिंग है। उसका अर्थ है 'सदा रहनेवाले'। पूरा वाक्यांश है—'वहुम फीहा खालिदून' (और वह बीच उनके सदा रहनेवाले)। इस अशुद्ध अनुवाद का उत्तरदायित्व उर्दू लिपि है, जो 'ई' और 'ए' के लिए भिन्न-भिन्न अक्षर होते हुए भी एक-सा लिखने में दोष नहीं मानती। वाक्य प्रवाह में, अरबी न जाननेवाला व्यक्ति 'वाला' न पढ़कर 'वाली' ही पढ़ेगा। परन्तु स्वयं कुरान शरीफ (सूरत इ अल् इमरान्, आयत १४) में बीवियों को सदा बहिश्त में रहनेवाली बताया है—'अल् अनहार खालिदीन फीहा व अज्वाजुम् मुत्वाहहरतुम् (नहरें बीच हमेशा रहनेवाली पाकीजा औरतें—अनुवादक —फतहमुहम्मद खाँ)। अतः ग्रन्थकार का आक्षेप ठीक है। गोकुलिये गोसाइयों की आलोचना ११वें समुल्लास में की गई है।

बहिश्त में खाने-पीने की मौज होगी। बहिश्त में रहनेवालों के करने के लिए कुछ काम भी होगा या नहीं। कुछ भी परिश्रम करने का अवसर नहीं मिलेगा तो पड़े-पड़े शरीर में रोग लग सकते हैं। रोग लगेंगे तो चिकित्साव्यवस्था भी करनी होगी। कहा जा सकता है कि बहिश्त में रोग नहीं लगते। तो मल मूत्र का विसर्जन तो होगा ही। तब सफाई कौन करेगा ? तरह-तरह के माँस खाने को मिलेंगे तो वहाँ वधशाला (बूचड़खाने) भी चाहिए। कसाइयों का होना भी आवश्यक है। ये कहाँ से आयेंगे ? सफाई करनेवाले व झाड़ू आदि लगानेवाले भी होंगे। बहिश्त में रहने के अधिकारी तो ये काम करेंगे नहीं, वे यहाँ कुछ करने के लिए नहीं आये, खुदा के मेहमान बन कर ऐश करने आए हैं।

मौलाना सनाउल्ला फरमाते हैं कि ये बेगार काफिरों से ली जायेगी। पर बहिश्त में काफिर

---

१. यहाँ से आगे सं० २ में'''पाठ छोड़ने का चिह्न है। सं० ४ में अनावश्यक होने से हटाया गया है।

[बहिश्त में औरतों की ही पूछ है, मर्दों की नहीं]

क्योंकि यह मुसलमानों का स्वर्ग गोकुलिये गुसाइंयों के गोलोक और मन्दिर के सदृश दीखता है। क्योंकि वहाँ स्त्रियों का मान्य बहुत, पुरुषों का नहीं। वैसे ही खुदा के घर में स्त्रियों का मान्य अधिक, और उन पर खुदा का प्रेम भी बहुत है, उन पुरुषों पर नहीं। क्योंकि बीबियों को खुदा ने बहिश्त में सदा रक्खा, और पुरुषों को नहीं। वे बीबियाँ विना खुदा की मर्जी स्वर्ग में कैसे ठहर सकतीं? जो यह बात ऐसी ही हो, तो खुदा स्त्रियों में फँस जाय? ॥६॥

तो हो ही नहीं सकते। मौलाना कहते हैं—दोजख से काम करने आयेंगे। चलो, इस बहाने काफिरों को बहिश्त का मजा चखने का अवसर तो मिलेगा। काम करनेवाले तो चौबीस घंटे चाहिएँ। जो बेगारी काफिर पूर्णकालिक (Whole time) होंगे तो उन्हें तो कयामत के दिन दोजख की आग में जलाये जाने का दण्ड मिलने पर भी बैठे-बिठाये बहिश्त मिल गया। जो थोड़ी देर के लिए आया करेंगे, वे भी फायदे में ही रहेंगे। यदि ऐसी व्यवस्था होगी तो निश्चित है कि बहिश्त और दोजख के बीच अधिक दूरी नहीं होगी।

सूरते तौबा आयत ७२ के अनुसार ईमान लानेवाले पुरुषों और स्त्रियों से जन्नत की और अन्यों के लिए दोजख की व्यवस्था की है। यदि विवाहित दम्पती—पति और पत्नी—के कर्मों में अन्तर होने के कारण एक बहिश्त में और एक दोजख में चला गया हो तो क्या उन्हें विधुर और विधवा घोषित कर दिया जायेगा? बहिश्त में पुरुषों को सदा युवती रहनेवाली हूरें मिलेंगी। उन पुरुषों के शरीर तो वही होंगे जो कबरों में से निकल कर पहुँचे हैं। उनके अंगों का काफी ह्रास हो चुका होगा। इस शरीर के साथ वे सदा युवा रहनेवाली सुन्दरियों---हूरों—को लेकर क्या करेंगे?

बहिश्तप्राप्ति कृतकर्मों का पुरस्कार है और यह पुरस्कारवितरण कमायत के दिन होता है। पुरस्कार की घोषणा होते ही उसके अधिकारी सीधे बहिश्त में चले जाते हैं और वहाँ जाते ही उन्हें हूरों और गिलमान मिल जाते हैं। निश्चित ही वे वहाँ पहले से विद्यमान थे। प्रश्न पैदा होता है कि ये सब (हूर और गिलमान) विना किसी कर्मफल के वहाँ कब और कैसे पहुँच गये? ये पहले से वहाँ विद्यमान थे, इसका एक अतिरिक्त प्रमाण और है। आदिसृष्टि में बहिश्त में स्थित बागे अदन में जानेवाला सबसे पहला मनुष्य आदम था। उनके वहाँ पहुँचने के समय बहिश्त का वर्णन कुरान में इस प्रकार किया है—

"और उसमें नहरें हैं पानी की जो कभी सड़ता नहीं और नहरें हैं दूध की जिसका स्वाद बदलता नहीं और स्वादिष्ट शराब की नहरें हैं पीनेवालों के लिए और साफ शहद की नहरें हैं" (सूरते मुहम्मद १५)। 'हैं' का अर्थ है कि वे सब आदम के वहाँ पहुँचने से पहले ही विद्यमान थीं। हूरों की वहाँ विद्यमानता इस वर्णन से सिद्ध है—"और इससे पहले उनको किसी मनुष्य या जिन ने छुआ नहीं है" (सूरते रहमान रकूअ आयत ६)। पहले से विद्यमान होने और अछूती होने पर प्रश्न पैदा होता है कि वे और गिलमान वहाँ पहले से (पता नहीं कब से) क्या करते थे? यदि उनका उद्देश्य मोमिनों के मनोरंजन के अतिरिक्त कुछ नहीं तो पूर्व का जीवन व्यर्थ था, क्योंकि कयामत से पूर्व अल्लाह की सत्ता के सिवा और कोई था ही नहीं। सृष्टि में सबसे पहले मानव के रूप में आदम को बनाया था और सबसे पहली स्त्री के रूप में हौवा को। परन्तु जब उनसे पहले ही सृष्टि में हूरों और गिलमान के रूप में असंख्य स्त्रियाँ और पुरुष विद्यमान थे तो यह कहने का क्या अर्थ है कि आदम और हौवा से मानवसृष्टि का विकास हुआ?

[खुदा का फरिश्तों को धोखा देना]

१०—आदम को सारे नाम सिखाए, फिर फरिश्तों के सामने करके कहा जो तुम सच्चे हो मुझे उनके नाम बताओ ।। कहा हे आदम ! उनको उनके नाम बता दे, तब उसने बता दिए तो खुदा ने फरिश्तों से कहा कि क्या मैंने तुमसे नहीं कहा था कि निश्चय मैं पृथिवी और आसमान की छिपी वस्तुओं को और प्रकट छिपे कर्मों को जानता हूँ ।। —मं० १ । सि० १ । सू० २ । आ० ३१, ३३

---

१०. इसलाम और कुरान शरीफ के अनुसार खुदा ने सबसे पहले 'आदम' को बनाया। उसी को सबसे पहले नाम सिखाये। आयत (बकर ३) का शब्दार्थ है—आदमल (आदम को) कुल्लहा (सब चीजों के) अस्माअ (नाम) अल्लम (सिखाये)। 'इस्म' का अर्थ है नाम। किसी का नाम पूछना हो तो व्यक्ति को सम्बोधन करके कहा जाता है—आपका 'शुभ नाम'। उर्दू या फारसी में इसका पर्यायवाची है—'आपका इस्म शरीफ़' यहाँ 'शुभ नाम' का अर्थ 'इस्म शरीफ़' या 'आपका नाम' या 'Your name' नहीं, अपितु वह व्यक्तिविशेष है, जिसका इस नाम से ग्रहण किया जाता है। 'अग्नि' एक शब्द है तो उसका अर्थ है वह पदार्थ है, जो जलता या जलाता है और जिसे भाषा-भेद से भिन्न-भिन्न नामों से पुकारा जाता है। शब्द और अर्थ (नाम और नामी) का सम्बन्ध न हो तो भाषा व्यवहार का माध्यम नहीं बन सकती। आयत में प्रयुक्त 'अस्माअ' शब्द 'इस्म' का बहुवचन है। जब कुरान कहता है कि अल्लाह ने 'आदमल्' आदम को 'कुल्लहा' सब पदार्थों के 'अस्मआ' नाम 'अल्लम' सिखाये तो इसका अर्थ यह हुआ कि पूरी विद्या सिखा दी। इससे यह भी पता चलता है कि कुरान शरीफ के अनुसार खुदा ने सबसे पहले आदम को इलहाम दिया। वह इलहाम पूरा था, अन्यथा 'कुल्लहा' शब्द का प्रयोग निरर्थक हो जाता। कुरान का यह कथन या दावा कहाँ तक सत्य है, इसका विवेचन यहाँ अभीष्ट नहीं है।

कुरान की इस आयत में ऋग्वेद के निम्नलिखित मन्त्र की प्रतिच्छाया है—

> बृहस्पते प्रथमं वाचो अग्रं यत् प्रैरत नामधेयं दधानाः ।
> यदेषां श्रेष्ठं यदरिप्रमासीत् प्रेणा तदेषां निहितं गुहाविः ।।१०।७१।१।।

विलसन ने इस मन्त्र का अर्थ इस प्रकार किया है—

That, Brihaspati, is the best part of speech, which those giving a name (to objects) first utter; that which was the best of those (words) and free from defect, (Saraswati) reveals it though secretly implanted, by means of affection.

अर्थात्—हे विद्याओं के स्वामी परमेश्वर ! भाषा का सर्वोत्कृष्ट भाग वह है जो पदार्थों को नाम देनेवाले सबसे पहले बोलते हैं। ये सर्वोत्तम शब्द थे और 'अरिप्र' अर्थात् दोषरहित थे। सरस्वती अर्थात् विद्या कृपा करके उन बातों का आविर्भाव करती है, जो लोगों के हृदय में निहित हैं।

यहाँ विलसन ने अपनी ओर से विद्या की देवी 'सरस्वती' का नाम दे दिया है। वेद में इससे केवल बृहस्पति अर्थात् परमात्मा से अभिप्राय है, जो ज्ञान का आविर्भाव (प्रकाशन) ऋषियों के हृदय में करता है। जिन ऋषियों के हृदयों में ज्ञान का प्रकाश हुआ, वे चेतन थे। 'यस्मिन्नृचः साम यजूंषि यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः' (यजु० ३४।५)—उनके हृदयों में विद्या का अंकुर अभिगुप्त था। इसी गुप्त ज्ञान को सृष्टि के आदि में परमात्मा ने प्रकाशित (अभिव्यक्त) कर दिया, जैसे गुलाब के बीज में से गुलाब का फूल खिल उठता है।

फिर भी हजरत आदम को अहले किताब नहीं माना गया। मुसलमानों की परिभाषा में 'अहले किताब' उन पैगम्बरों को माना जाता है, जिन पर खुदा की ओर से कोई किताब उतरती है, जैसा कि

[फरिश्तों को धोखा दे अपनी बड़ाई करना खुदा का काम नहीं]

समीक्षक—भला ऐसे फरिश्तों को धोखा देकर अपनी बड़ाई करना खुदा का काम हो सकता है? यह तो एक दम्भ की बात है। इसको कोई विद्वान् नहीं मान सकता, और न ऐसा अभिमान करता। क्या ऐसी बातों से ही खुदा अपनी सिद्धाई जमाना चाहता है? हां, जङ्गली लोगों में कोई कैसा ही पाखण्ड चला लेवे, चल सकता है, सभ्यजनों में नहीं ॥१०॥

[शैतान ने खुदा का कहना न माना]

११—जब हमने फरिश्तों से कहा कि बाबा आदम को दण्डवत करो, देखा सभों ने दण्डवत् किया, परन्तु शैतान ने न माना और अभिमान किया क्योंकि वो भी एक काफिर था ॥

—मं० १। सि० १। सू० २। आ० ३४

[खुदा शैतान का कुछ भी न बिगाड़ सका]

समीक्षक—इससे खुदा सर्वज्ञ नहीं, अर्थात् भूत, भविष्यत् और वर्तमान की पूरी बातें नहीं जानता। जो जानता हो, तो शैतान को पैदा ही क्यों किया? और खुदा में कुछ तेज भी नहीं है। क्योंकि शैतान ने खुदा का हुक्म ही न माना, और खुदा उसका कुछ भी न कर सका।

हजरत मूसा, हजरत दाऊद, हजरत मुहम्मद को बताया जाता है। कुरान शरीफ में हजरत आदम का कथानक कई स्थानों पर मिलता है। पर सर्वत्र आदम व हव्वा की पैदायश तथा आदम और इबलीस (शैतान) के झगड़ों तक सीमित है, इलहाम की वहाँ कोई चर्चा नहीं।

कुरान में हजरत आदम के पश्चात् चार मुलहिमों (इलहाम पानेवालों) का उल्लेख है, इनमें से प्रत्येक का एक किताब (धर्मशास्त्र) से सम्बन्ध है। हजरत मूसा पर तौरेत उतरा, दाऊद पर जबूर, ईसा पर इंजील और मुहम्मद पर कुरान। और हर किताब पर आधारित एक मजहब और उसको प्रमाण एवं पवित्र माननेवाला एक सम्प्रदाय। आश्चर्य है कि हजरत और हजरत मूसा के बीच के दीर्घ-कालीन अंतराल में एक भी पीर-पैगम्बर नहीं आया। भारत, चीन, यूनान आदि सहस्रों वर्ष पुरानी जातियों और महात्मा बुद्ध जैसे विश्वविख्यात महापुरुषों का संकेत तक कुरान में उपलब्ध नहीं है। 'आदम को सब नाम सिखाये' से इस बात की तो पुष्टि होती है कि मानव जाति के इतिहास के प्रति प्राचीन काल में भी ईश्वरीय ज्ञान की आवश्यकता को अनुभव किया गया। आरम्भ में जब कभी भी सबसे पहले मनुष्य उत्पन्न होते हैं, उस समय उनके माता-पिता या गुरु तो होते नहीं, जिनसे कुछ सीख कर वे अपना काम चला सकें। बिना सीखे मनुष्य कुछ जान नहीं सकता। उस समय सृष्टि का रचयिता परमेश्वर अपनी व्यवस्था से कुछ उत्कृष्ट कोटि के मनुष्यों के हृदयों में ऐसी शक्ति प्रदान करता है कि वे शब्दों द्वारा एक दूसरे का मार्गदर्शन कर सकें। ऐसे लोगों को ऋषि-महर्षि के नाम से अभिहित किया जाता है। आदम [आदिम (संस्कृत)=आदि पुरुष] के सारे नाम=पद तथा पदवाच्य अर्थ=पदार्थों का ज्ञान देनेवाला परमेश्वर के सिवा अन्य कोई नहीं हो सकता। और यह निर्विवाद है कि वेद ही उस आदि ज्ञान से युक्त प्राचीनतम शास्त्र है।

खुदा का यह कहना कि 'क्या मैंने……कर्मों को जानता हूँ'? यह प्रकट करता है कि फरिश्तों ने उसकी सर्वज्ञता को चुनौती दी थी और खुदा ने आदम को सारे नाम सिखाकर यह सिद्ध कर दिया कि वह सर्वज्ञ है। इसे खुदा की बचकाना हरकत ही मानी जायेगी। फिर फरिश्तों के सामने आदम को खड़ा

[करोड़ों काफिररूप शैतान खुदा को भारी हो जायेंगे]

और देखिये, एक शैतान काफिर ने खुदा का भी छक्का छुड़ा दिया, तो मुसलमानों के कथनानुसार उनसे भिन्न जहाँ क्रोड़ों काफिर हैं, वहाँ मुसलमानों के खुदा और मुसलमानों की क्या चल सकती है ?

[शैतान में शैतानी खुदा से ही आई होगी]

कभी-कभी खुदा भी किसी का रोग बढ़ा देता, किसी को गुमराह कर देता है। खुदा ने ये बातें शैतान से सीखी होंगी, और शैतान ने खुदा से। क्योंकि विना खुदा के शैतान का उस्ताद और कोई नहीं हो सकता ॥११॥

[शैतान की बहक से आदम को पृथिवी पर आना पड़ा]

१२—हमने कहा कि ओ आदम ! तू और तेरी जोरू बहिश्त में रहकर आनन्द में जहाँ चाहो खाओ, परन्तु मत समीप जाओ उस वृक्ष के कि पापी हो जाओगे ॥ शैतान ने उनको डिगाया और उनको बहिश्त के आनन्द से खो दिया। तब हमने कहा कि उतरो, तुह्मारे में कोई परस्पर शत्रु हैं, तुह्मारा ठिकाना पृथिवी है और एक समय तक लाभ है ॥ आदम अपने मालिक की कुछ बातें सीखकर पृथिवी पर आ गया ॥ —मं० १। सि० १। सू० २। आ० ३५-३७

करके उसे नाम सुनाने के लिए कहने से ऐसा लगता है कि जैसे मास्टर जी बच्चों से पूछ रहे हों कि पाठ याद हुआ या नहीं।

११-१२. भद्र पुरुषों के सामने कोई विद्वान् पुरुष आजाये तो उसका अभिवादन करना उनका कर्त्तव्य है। आदम ईश्वर से ज्ञान प्राप्त कर चुका था, अतः विद्वान् था। फरिश्ते विद्वान् तो नहीं थे, परन्तु नेक थे, इसलिए उन्होंने आदम के प्रति नमन किया। इबलीस (शैतान) जन्म से धूर्त्त था, विद्वान् भी नहीं था। उससे शिष्टाचार की आशा कैसे की जा सकती थी ? ग्रन्थकार की आपत्ति का आधार दार्शनिक है। इसलाम में जीवात्मा को अनादि अनुत्पन्न नहीं माना जाता। वह शरीर के साथ ही उत्पन्न होता है और परमेश्वर या खुदा की कृति है। इसलिए वह जैसा भी है, खुदा का बनाया हुआ है। प्रश्न यह है कि जब शैतान अल्लाताला की रचना है और अल्ला जैसा चाहता बना सकता था तो उसे काफिर क्यों बनाया ? गुनाह की कहानी आगे चलती है—

"और कहना हमने ऐ आदम, रहो तुम और तुम्हारी पत्नी स्वर्ग में और खाओ-पिओ इच्छानुसार जैसा चाहो। पर न जाओ पास उस वृक्ष के। पापी हो जाओगे। परन्तु भ्रष्ट किया उनको शैतान ने। और निकाल दिया उसमें से जिसमें वे थे। और कहा हमने उतारो। तुमसे-से कुछ लोग एक-दूसरे के शत्रु हैं और तुम्हारे लिए भूमि पर ही ठिकाना है।" (सूरते बकर, आयत ३८)

यहाँ से पाप का आरम्भ हुआ। अल्ला मियाँ ने तो आदम और उसकी पत्नी को स्वर्ग में डाल ही दिया था। कोई पूछे किन कर्मों के पुरस्कारस्वरूप ? कहा जायेगा—कर्मों के फलस्वरूप। वह कैसे ? पूर्वजन्म न होने से पिछले कर्म तो थे नहीं और इस जन्म में तो अभी कर्म शुरू ही हुए हैं। कहा जायेगा—खुदा की मर्जी, वह दयालु है और सर्वशक्तिमान् भी। शैतान ने उनको बहकाया, किसकी मेहरबानी से। बहिश्त कहाँ था, कितनी ऊँचाई पर जहाँ से उतारे जाने का आदेश हुआ। फिर शत्रु भी बना दिया। यह वह गुण है जिसे ऊपर जुल्म और कुफर बताया गया है। शैतान की उत्पत्ति के रूप में प्रारम्भिक पाप का करनेवाला कौन था ? सूरते स्वाद, रकूअ ५ में उपरोक्त वार्त्तालाप और भी विस्तार से इस प्रकार दिया है—

[क्या खुदा नहीं जानता था कि आदम को शैतान बहकायेगा ?]

समीक्षक—अब देखिये, खुदा की अल्पज्ञता। अभी तो स्वर्ग में रहने का आशीर्वाद दिया, और पुनः थोड़ी देर में कहा कि—निकलो। जो भविष्यत् बातों को जानता होता, तो वर ही क्यों देता ? और बहकानेवाले शैतान को दण्ड देने में असमर्थ भी दीख पड़ता है। और वह वृक्ष किसके लिये उत्पन्न किया था ? क्या अपने लिये वा दूसरे के लिये ? जो दूसरे के लिये तो क्यों रोका ? इसलिये ऐसी बातें न खुदा की और न उसके बनाये पुस्तक में हो सकती हैं।

[स्वर्ग से आदम पृथिवी पर कैसे आये ?]

आदम साहेब खुदा से कितनी बातें सीख आये ? और जब पृथिवी पर आदम साहेब आये, तब किस प्रकार आये ? क्या वह वहिश्त पहाड़ पर है, वा आकाश पर ? उससे कैसे उतर आये ? अथवा पक्षी के तुल्य आये, अथवा जैसे ऊपर से पत्थर गिर पड़े ?

(अल्ला ने कहा) ऐ शैतान, क्या बात मना करती है तुझको उसके सामने नतमस्तक होने से जिसे मैंने स्वयं अपने दोनों हाथों से उत्पन्न किया है। तूने घमण्ड किया था, तू उच्चश्रेणीवालों में से था। (शैतान बोला) कहा मैं श्रेष्ठ हूँ इससे कि बनाया तूने मुझको अग्नि से और बनाया इसको मिट्टी से। (खुदा बोला) अच्छा, तू इन आसमानों में से निकल जा, वास्तव में तू सड़ा गन्दा है। वास्तव में तुझ पर लानत फिटकार है, मेरी न्याय के दिन (कयामत) तक। कहा—ऐ रब ढील दे मुझे उस दिन तक कि उठाए जायेंगे मुर्दे। कहा कि अच्छा तू ढील दिये गयों में से है, दिन निश्चित ज्ञात तक। (शैतान बोला) अच्छा सौगन्ध है तेरी प्रतिष्ठा की। पथभ्रष्ट करूँगा इनको सम्मिलित (रूप) से।

पहले तो शैतान किया, और वह भी अग्नि से। और अब जब वह अपनी स्वाभाविक प्रकृति (स्वयं ईश्वरप्रदत्त) के करिश्मे दिखाने लगा तो अल्ला मियाँ बिगड़ने लगे। क्या जानते न थे कि है ही ऐसा। प्रश्न हो सकता है कि जब यह अल्ला के अधिकार में था कि सबको स्वामिभक्त बनाता तो शैतान को अन्यथा क्यों बनाया ? या भूल-चूक से ऐसा हो गया। यदि भूल नहीं हुई, अपितु इच्छा से ऐसा बनाया तो रुष्ट होने या डराने धमकाने में क्या तुक है ? बेचारे को बुरी तरह फटकारा गया। फिर भी रहमानियत का गौरव है कि उसके मोहलत माँगने पर दे दी गई, प्रलयकाल तक लोगों को पथभ्रष्ट करने की। अपराध करे शैतान और उसका दण्ड भोगना पड़े मनुष्यों को। यह कहाँ की दयालुता है—यह तो घोर अन्याय है, न्यायकारी का !

और लगे हाथों मनुष्य को शिक्षा भी दे दी है—

और मत पीछे चलो शैतान के। सचमुच वह तुम्हारे लिए बड़ा शत्रु है। वह और कुछ नहीं करेगा, तुम्हें बुराई व लज्जाजनक कार्यों का ही आदेश देगा।

या अल्ला ! इसे पैदा ही करना था, करना ही था तो हमारा शत्रु बनाना था ! उसने आज्ञा का उल्लंघन किया, उसपर लानत (फिटकार) हुई। या बुद्धिमान् कि मोहलत (अवसर) माँग ली। कृपालुता दिखाई कि उसे अवसर दे दिया जाये। इसमें हमें कोई आपत्ति नहीं। परन्तु हमें पथभ्रष्ट करने का सामर्थ्य क्यों प्रदान किया ? उसकी शैतानियत का कोई और उपयोग नहीं हो सकता था ?

इसी सूरते स्वाद का कथानक सूरते ऐराफ के प्रारम्भ में आया है। अवसर प्राप्त होने पर शैतान ने अपनी इस महत्त्वाकांक्षा का कि वह प्रलय के दिन तक लोगों को पथभ्रष्ट करेगा, कारण बताया है—

[स्वर्ग के फरिश्तों के शरीर किस पदार्थ के बने थे ?]

इसमें यह विदित होता है कि जब आदम साहब मट्टी से बनाये गये, तो इनके स्वर्ग में भी मट्टी होगी ? और जितने वहाँ और है, वे भी वैसे ही फरिश्ते आदि होंगे। क्योंकि मट्टी के शरीर बिना इन्द्रिय-भोग नहो हो सकता।

(शैतान) ने कहा—(ऐ खुदा) चूंकि तूने पथभ्रष्ट किया मुझे, अलबत्ता (निश्चय ही) मैं उनके लिए तेरे सीधे रास्ते पर बैठूंगा। फिर उनके आगे से, पीछे से, दाएँ से, बाएँ से, और तू उन्हें प्राय: धन्यबादी नहीं पायेगा। (खुदा ने कहा)—निकल जा यहाँ से फिटकारे हुए। जो उन (लोगों) में से तेरे पीछे लगेंगे, वास्तव में भरूँगा दोजख को तुम सबसे।

शैतान कहता ही तो है कि अल्लाह ने मुझे पथभ्रष्ट किया है। जब उसकी सत्ता अभाव से हुई है और जब वह अल्लाह के आदेश का सब तरह से पालन करता है तो उसमें शैतानियत का सामर्थ्य कहाँ से आया ? फिर अल्लाताला है कि बजाय इसके कि 'कुन' कहकर उसे शैतान से भला बना दे, विपरीत इसके शैतान को प्रलयकाल तक खुली पथभ्रष्टता का अवसर देता है। और इस पथभ्रष्टता का लक्ष्य बनाता है बेचारे मनुष्यों को। बेचारे मनुष्य भी तो उसी के बनाए हैं, जैसा जिसको बना दिया, वैसा बना दिया। किसी के भाग्य में पथभ्रष्टता लिखी गई, किसी के भाग्य में शैतान से बचा रहना लिखा गया। फिर वह लानत फटकार क्यों ? फिर जब खुदा ने इरादा कर लिया कि दोजख भरनी हैं तो सबको सन्मार्ग कैसे दिखाता ? उसकी शाश्वत इच्छा की पूर्ति में बाधा कौन डाल सकता है। अब बताइये, संसार में फैली भलाई-बुराई के लिए कौन जिम्मेदार है ?

परहेजगार पहले से ही हैं, बने-बनाये पैदा हुए हैं। फिर मार्गदर्शन किनका हुआ ? सूरते हजर (आयत ४६) में शैतान ने फिर अपना कथन दुहराया है—"कहा ऐ रब, चूंकि पथभ्रष्ट किया है तूने मुझे, निश्चय ही सजाऊँगा (उनके गुनाहों से) मैं जमीन पर, उन सबको पथभ्रष्ट करूँगा।" यह जमीन को सजाना (जीनत देना) क्या है ? दोजख के लिए सँवारना। यह अल्लामियाँ की शाश्वत वाणी का ही तो पालन हो रहा है। अल्ला मियाँ स्वयं फरमाते हैं—

"क्या नहीं देखा तूने, हमने भेजा शैतानों को जो इन काफिरों को बहकाते और उकसाते रहें" (मरयम ८३)।

एक ओर हिन्दुओं (आर्यों) का ईश्वर है, जो ज्ञानी देवजनों को भेजता है—'परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्' (गीता) सज्जनों की रक्षा और दुष्टों के संहार के लिए। और दूसरी ओर मुसलमानों का अल्ला है, जो शैतानों को भेजता है लोगों को बहकाकर उकसाने के लिए ताकि वे परस्पर लड़ें और दोजख को भरने में उसकी मदद करें। फिर ईश्वर और अल्ला एक कैसे हो सकते हैं।

इसलाम के अनुसार अनादि नित्य सत्ता केवल अल्लाताला की है। परिणामत: वास्तविक कर्त्ता भी उसी को मानना होगा। कोई बुरा है तो इसलिए नहीं कि उसने कोई बुरा काम किया है, अपितु इसलिए कि अल्ला ने उसे बुरा बनाया है। और यहाँ तो आदम को पढ़ाया भी स्वयं अल्ला ने, फरिश्तों को नतमस्तक भी स्वयं ही बना दिया और शैतान को पथभ्रष्ट भी स्वयं ही कर दिया। शैतान की स्वीकारोक्ति भी सत्य पर आधारित है कि मैं अल्ला ताला द्वारा भ्रष्ट किया हुआ हूँ। या तो उसे बनाने में अल्ला ताला से भूल हो गई और समय पर उस भूल को सुधारा नहीं जा सका या उसकी बनाई दोजख खाली पड़ी थी और वह उसे भरना चाहता था। इसलिए वह चाहता था कि मनुष्य अकृतज्ञ हों और गुमराह हों, जिससे उसकी दोजख भर जाये। खुदा का आदम को पढ़ाना, फरिश्तों का

[मिट्टी के बने हैं, तो रोग-भोग और मौत भी होगी]

जब पार्थिव शरीर है, तो मृत्यु भी अवश्य होना चाहिए। यदि मृत्यु होता है, तो वे वहां से कहां जाते हैं? और मृत्यु नहीं होता, तो उनका जन्म भी नहीं हुआ। जब जन्म है, तो मृत्यु अवश्य ही है। यदि ऐसा है, तो कुरान में लिखा है कि बीबियां सदैव बहिश्त में रहती हैं, सो झूठा हो जायगा। क्योंकि उनका भी मृत्यु अवश्य होगा। जब ऐसा है, तो बहिश्त में जानेवालों का भी मृत्यु अवश्य होगा ॥१२॥

[कयामत के दिन से डरो]

१३—उस दिन से डरो कि जब कोई जीव किसी जीव से भरोसा न रक्खेगा, न उसकी सिफारिश स्वीकार की जावेगी, न उससे बदला लिया जावेगा, और न वे सहाय पावेंगे ॥

—मं० १। सि० १। सू० २। आ० ४८

सिजदा करना, शैतान को पथभ्रष्ट करना, उसका आदम को नमन करने से इन्कार करना, खुदा का उसे अभिशप्त करना और बदले की भावना से शैतान का मनुष्यों को पथभ्रष्ट करना, पथभ्रष्ट हुए मनुष्यों का अकृतज्ञ होना यह सब खुदा की दोजख को भरने की योजना के अन्तर्गत हुआ। सर्वशक्तिमान् खुदा के सामने किसी भी स्तर पर ननु नच करने का सामर्थ्य उसी के बनाये बन्दों में कैसे हो सकता था? दोजख में जायेंगे तो हम अपने ही कर्मों के फलस्वरूप, परन्तु उन कर्मों को करने में हम स्वतन्त्र नहीं होंगे। विवश होकर हमें ऐसे कर्म करने पड़ेंगे, जिन्हें कर लेने पर हमें दोजख में भेजने में परमेश्वर को कोई कानूनी अड़चन न आये। परन्तु बलात् कराये गये कर्मों के फल को पुरस्कार या दण्ड नहीं माना जा सकता। फिर भी अल्ला को दयालु और न्यायकारी कहना पड़ेगा।

पाँचभौतिक शरीर के निर्माण में मट्टी मुख्य तत्त्व है। आत्मा के शरीर से निकल जाने पर मृतक शरीर को मट्टी कहने का यही रहस्य है। इसलिए शरीरों के निर्माण के लिए स्वर्ग में मट्टी का होना आवश्यक है। प्रकृति परिवर्त्तनशील है, इस नियम का कहीं अपवाद नहीं हो सकता। वैज्ञानिक आधार पर कहा जाता है कि जिन परमाणुओं से शरीर बनता है, उनमें प्रतिक्षण परिवर्त्तन होता रहता है, यहाँ तक कि प्रति सात वर्ष में समूचा शरीर पूरी तरह बदल जाता है। इसलिए यह कहना कि स्वर्ग में रहनेवाले—हूर व गिलमान सदा एक से बने रहते हैं, प्रकृति-विरुद्ध होने से मिथ्या है।

१३. कयामत के दिन अल्लामियाँ की कचहरी में "लाये जायेंगे पैगम्बर और गवाह और फैसला किया जायेगा उनमें इन्साफ से" (सूरते जमर आयत ६९)। इनके अतिरिक्त बुलाये जायेंगे सब मनुष्य उनके पेशवा (मार्गदर्शकों) के सहित" (बनी इसराईल आयत ६८)। गवाहों से तात्पर्य है 'मुराद उम्मते अस्त'—हजरत मुहम्मद की उम्मत।

कचहरी में जज, वकील, गवाह और अपराधी की उपस्थिति तो आवश्यक है। परन्तु पैगम्बर तो वहाँ अन्यथा सिद्ध है। अदालत में किसी बड़े आदमी के आने का एकमात्र प्रयोजन सिफारिश करना होता है चाहे वह बोलकर करे, चाहे इशारे से। उसकी वहाँ उपस्थिति मात्र का अर्थ भी सिफारिश ही होता है। स्पष्ट है कि स्वयं खुदा (जज) द्वारा नियुक्त पैगम्बरसाहब वहाँ सिर्फ इसलिए आये हैं कि बारी आने पर 'मेरा अपना आदमी' बताते जायें। कुरानशरीफ में अगणित स्थानों पर यह कहा गया है कि 'खुदा और उसके पैगम्बर' पर ईमान लानेवाले ही बहिश्त में भेजे जाने के अधिकारी हैं। अब अल्लाताला ऐसे लोगों को कैसे पहचाने। सर्वव्यापक तथा सर्वज्ञ परमात्मा को तो न वकील चाहिए, न गवाह। क्योंकि वह सबके कर्मों को जानता है। परन्तु इसलाम का खुदा तो सातवें आसमान पर रहता है और कर्म करनेवाले सब धरती पर।

[बुराई करने से सब दिन डरना चाहिए]

समीक्षक—क्या वर्त्तमान दिनों में न डरें ? बुराई करने में सब दिन डरना चाहिए। जब सिफारिश न मानी जावेगी, तो फिर पैगम्बर की गवाही वा सिफारिश से खुदा स्वर्ग देगा, यह बात क्योंकर सच हो सकेगी ? क्या खुदा बहिश्तवालों ही का सहायक है, दोजखवालों का नहीं ? यदि ऐसा है, तो खुदा पक्षपाती है ॥१३॥

[मूसा को किताब और मौजिजे देना]

१४—हमने मूसा को किताब और मौजिजे दिये।[1] —मं० १। सि० १। सू० २। आ० ५३

कुरान की दो आयतों (मरियम ८७ तथा बकर २५४) में 'शफाअत' शब्द आया है। अरबी के इस शब्द का प्रसंगत: अर्थ सिफारिश ही है। अभिप्रेत अर्थ है कि इसलाम और पैगम्बर पर ईमान लाओगे तो मुहम्मदसाहब गुनाह बखशवाकर हाकिम से बहिश्त में भेजे जाने का आर्डर करवा देंगे।

सिफारिश के सम्बन्ध में सूरत अल मुनाफिकून में लिखा है—"और जब इनसे कहा जाता है कि अल्लाह का रसूल तुम्हारे लिए क्षमा की प्रार्थना करे तो ये खिंचे रहते हैं और अपने को बड़ा समझते हैं" (आयत ५)। किसी के लिए क्षमा की प्रार्थना करना सिफारिश करना नहीं, तो क्या है ? और जब तुम्हें पता है कि वहाँ सिफारिश नहीं सुनी जाती तो सिफारिश की बात ही क्यों करते हो ? अल्लाह के रसूल से तो तथाकथित पापी या अपराधी अधिक समझदार हैं, जो वास्तविकता को जानने के कारण सिफ़ारिश की उपेक्षा कर देते हैं और इस प्रकार अपने आत्मसम्मान की रक्षा करते हैं।

सिफारिश निषिद्ध होने पर भी कहा है—"कौन है जो उससे सिफारिश करे, परन्तु उसकी आज्ञा लेकर कर सकता है।" (सूरते बकर १५५)। यह आज्ञा से सिफारिश करने का क्या अर्थ है ? यदि हाकिम या न्यायाधीश की अपनी इच्छा क्षमा करने की है तो क्षमा कर दे, किसी और से यह कहना कि 'आ, तू सिफारिश कर दे, मैं मानकर क्षमा कर दूंगा' कितना उपहासास्पद है !

अल्लाह की कचहरी में कुछ विचित्र गवाह देखने को मिलेंगे—आरोपियों के हाथ, पैर, वाणी आदि शरीरांग (सूरते नूर आयत २४, सूरते यासीन आयत ६३, सूरते सिजदा आयत १९-२२)। ये सब (जो कबर में पड़े-पड़े गल सड़ चुके) अपनी गवाही में बतायेंगे कि जीवन-काल में उन्होंने क्या देखा, क्या सुना, क्या बोला, क्या किया आदि।

वास्तव में तो यह न्याय का नाटक है—मात्र औपचारिकता। खुदा ने तो प्रत्येक मनुष्य के जन्म के साथ ही उसके द्वारा किए जानेवाले कर्मों का लेखा-जोखा और उसके आधार पर उसके स्वर्ग-नर्क में भेजे जाने का निर्णय लिखकर लोहे महफूज में रख छोड़ा है। कयामत के दिन उसे निकालकर सम्बद्ध व्यक्ति के हाथ पर रख देना होता है। तब जिसके दायें हाथ में उसके कर्मों का हिसाब रक्खा जाता है, वह उछलता-कूदता चला जाता है और स्वर्ग के मुख्य द्वार पर दिखाकर भीतर चला जाता है। और जिसके बाएँ हाथ पर रक्खा जाता है, वह बेचारा सिर पीटकर रह जाता है—तानाशाह के फैसले के खिलाफ न वकील, न दलील, न अपील।

१४. किसी मुसलमान से अपना धार्मिक सिद्धान्त दो शब्दों में बयान करने को कहा जाय तो वह तत्काल कह उठेगा—तौहीद (परमात्मा की एकत्वता) तथा रिसालत (ईश्वरीय दूत पर विश्वास)

१. यहाँ से आगे सं० २ से ३३ तक वह-पाठ है, जो समीक्ष्यांश १७ पृष्ठ ८५३ पर दिया है। जिस हिन्दी कुरान के आधार पर ऋषि द० ने ये समीक्षाएँ लिखीं थीं, उसका ८वाँ ९वाँ पृष्ठ जिल्द बाँधने के समय भूल से १४वें पृष्ठ के आगे लग गया। इन पृष्ठों में ५४ से ६४ तक आयतें थीं। इस भूल की ओर ध्यान न जाने से ग्रन्थकार ने भी आयत संख्या ५४ से

[मूसा को किताब दी, तो कुरान का होना निरर्थक]

समीक्षक—जो मूसा को किताब दी, तो कुरान का होना निरर्थक है। और उसको आश्चर्य-शक्ति दी, यह बाइबल और कुरान में भी लिखा है। परन्तु यह बात मानने योग्य नहीं। क्योंकि जो ऐसा होता, तो अब भी होता। जो अब नहीं, तो पहिले भी न था।

[आश्चर्यशक्ति खुदा अब क्यों नहीं देता]

जैसे स्वार्थी लोग आजकल भी अविद्वानों के सामने विद्वान् बन जाते हैं, वैसे उस समय भी कपट किया होगा। क्योंकि खुदा और उसके सेवक अब भी विद्यमान हैं। पुनः इस समय खुदा आश्चर्य-शक्ति क्यों नहीं देता, और नहीं कर सकते ?

रिसालत का मुख्य अर्थ है हजरत मुहम्मद को ईश्वरीय दूत स्वीकार करना। हजरत मुहम्मद से पूर्व अन्य पैगम्बरों का आना भी इसलाम में स्वीकार किया गया है। परन्तु हजरत मुहम्मद को आखिरुलनवी (अन्तिम नबी या पैगम्बर) घोषित कर उनके बाद किसी पैगम्बर के आने की बात करना कुफ्र में शामिल है। ऐसा माननेवाले (हजरत मुहम्मद के बाद मिर्जा गुलाम अहमद कादियानी को पैगम्बर स्वीकार करनेवाले) कादियानी, मिर्जाई या अहमदी सम्प्रदाय को इसलाम से बहिष्कृत कर दिया गया है। पाकिस्तान में उनको अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है।

कुरान के सम्बन्ध में फरमाया है—"इसमें सन्देह नहीं मार्गदर्शन करती है परहेजगारों का" (सूरते बकर आयत १)। परन्तु परहेजगारों का मार्गदर्शन करना व्यर्थ है, क्योंकि वे तो पैदायशी परहेज-गार होते हैं। पैगम्बरों में सबसे अधिक गौरवशाली हजरत मूसा माने जाते हैं। अल्ला ने फरमाया है—"ऐ मूसा ! सचमुच मैं खुदा हूँ, बड़ी कार्यकुशलतावाला" (सूरते नहल, आयत ९)। होगा ? शैतान को बनाने में तो उसने प्रौढ़ता का परिचय नहीं दिया। जिस खुदा ने उसे बनाया, उसके कहने से उसने आदम के सामने नमन करने से इन्कार कर दिया। पहले आदम और हव्वा को बहकाया और जब खुदा ने इस कुकृत्य के लिए उसे धमकाया तो घोषणा कर दी कि मैं सब मनुष्यों को पथभ्रष्ट करूँगा। खुदा देखता रह गया। आज भी लोगों को गुमराह कर रहा है और खुदा उसका कुछ नहीं बिगाड़ पा रहा। लोग कहने लगे हैं—दुनिया में सबसे बड़ा खुदा और खुदा से बड़ा शैतान। खुदा सुनता है और कन्नी काटकर चल देता है। ऐसे में अपनी कार्यकुशलता का ढिंढोरा पीटना अपने मुँह मियाँ मिट्ठू बनना है। हजरत मूसा के सम्बन्ध में कुरान में लिखा है—"फिर मूसा ने उसे मुक्का मारा, उसे मार डाला। उस मूसा ने कहा—मेरा यह कार्य शैतान के कर्मों में से है। वास्तव में वह प्रकट पथभ्रष्ट करनेवाला शत्रु है। कहा—ऐ रब, मैंने अपने ऊपर अत्याचार किया है, अतः मुझे क्षमा कर दे। बस अल्लाह ने उसे क्षमा कर दिया" (सूरते कसस, आयत १४-१५)। हजरत मूसा पर तौरत उतरी, जो यहूदियों को मान्य है।

मूसा के बाद दाऊद आये, जिन पर जबूर उतरी और उनके बाद हजरत ईसा की इंजील आई। एक के बाद एक इलहाम होने का अर्थ यही है कि अपने पहले दिए गये ज्ञान में दोषों का परिमार्जन करने अथवा कसर (अधूरेपन) को दूर करने के लिए अल्लाह को संशोधित अथवा परिवर्धित संस्करण

---

६४ की ११ आयतों में से संख्या ५८ और ६१ की समीक्षा आगे कर दी, और यहाँ आयत संख्या ५३ के साथ ६५ जुड़ गई। हमने इस भूल की ओर सन् १९४९ में प्रकाशित 'ऋ० द० के ग्रन्थों का इतिहास' ग्रन्थ में पृष्ठ ४३, ४४ पर ध्यान आकृष्ट किया था। सं० ३४ में आगे-पीछे हो रहे अंशों को यथास्थान रख दिया है। हम भी इसी प्रकार शुद्ध रूप में छाप रहे हैं। यहाँ जिन आयत-संख्याओं का निर्देश है, वह शोधी गई संख्याओं के अनुसार है।

[क्या मूसा आदि की पुस्तकों में खुदा कुछ भूल गया था ?]

जो मूसा को किताब दी थी, तो पुन: कुरान का देना क्या आवश्यक था ? क्योंकि जो भलाई-बुराई करने-न-करने का उपदेश सर्वत्र एक-सा हो, तो पुन: भिन्न-भिन्न पुस्तक करने से पुनरुक्त दोष होता है। क्या मूसाजी आदि को दी हुई पुस्तक में खुदा कुछ भूल गया था ?

(Rvirsed edition) निकालते रहना पड़ता था। अथवा जैसा ग्रन्थकार का सन्देह है, पैगम्बर लोग साहित्यिक चोर होंगे, जो अपने से पहले पैगम्बर या पैगम्बरों के विचारों में थोड़े-बहुत अन्तर करके अपने नाम से जारी कर देते होंगे। इस प्रकार इसलाम के अनुसार कुरान से पहले बहुत-सी आसमानी किताबें उतर चुकी थीं, परन्तु कुरान के बाद अब कोई किताब उतरनेवाली नहीं है और न हजरत मुहम्मद के बाद अब कोई नया नबी आनेवाला है।

मौजिजे—आम की एक गुठली भूमि के भीतर छिपा दी। कुछ समय बाद देखा कि वह एक गुठली हजारों आम बनकर बाहर आ गई। धरती में एक सेर गेहूँ के दाने डाले और कुछ दिनों बाद उस एक दाने से मनों—टनों दाने बन गये। मूर्ख व्यक्ति इसे चमत्कार समझता है। किसान या बागबान के लिए सामान्य बात है। एक बटन दबाते ही जब हमारी आँखों के सामने नाच-गाना होने लगता है तो हमारे लिए यह चमत्कार नहीं है, किन्तु जिसने कभी टी० वी० रेडियो का नाम नहीं सुना, उसके लिए मानो जादू की छड़ी से इन्द्रलोक धरती पर उतर आया। लोगों के दिलों में चमत्कारों की पैदायश उनके अज्ञान का परिणाम है। स्वार्थी लोग इस अज्ञान के कारण लोगों को भटकाते हैं। वे उन्हीं को प्रभु तक पहुँचा हुआ मानते हैं, जिनसे कोई करामात, चमत्कार वा प्रकृति के नियमविरुद्ध काम सम्बन्धित हों। अधिकतर धार्मिक सम्प्रदायों की आधारशिला ही उनके प्रवर्त्तकों की चमत्कारी कहानियों पर है। अनुयायियों के लिए स्वयं चमत्कार दिखाना कठिन है, इसलिए वे अपनी कल्पना के सहारे कहानियाँ गढ़कर और उन्हें अपने पैगम्बरों—अवतारों के साथ जोड़कर पुस्तकों में भर देते हैं। यहाँ हम प्रसंगोपात्त कुरान में दोहराई हजरत मूसा की कहानी में वर्णित कतिपय प्रकृतिविरुद्ध कारनामों को प्रस्तुत कर रहे हैं—

मनुष्य बन्दर बन गये—कुरानशरीफ में सूरते बकर आयत ६६ में फरमाया है—

सचमुच सौगन्ध है कि तुम जानते हो उनको, जिन्होंने (प्रतिबन्ध लगाने पर भी) इतवार के दिन (मछली का शिकार करके) सीमा का उल्लंघन किया। वे लोग ईला के रहनेवाले थे सो हमने उनसे कहा कि तुम बन्दर बन जाओ, सो वे हो गये और तीन दिन बाद मर गये।—(तफसीरे जलालैन)

शरीरों में परिवर्त्तन प्रकृति के किस नियम के अनुसार हुआ। हजरत डार्विन की कठिनाई थी कि बन्दर की पूँछ मनुष्य के शरीर में आकर लुप्त कैसे हो गई। कुरान की कठिनाई यह है कि पूंछ उत्पन्न कैसे हो गई। धर्म में तर्क का प्रवेश नहीं—अकल का दखल नहीं।

मृत शरीर बोल उठा—जबकि तुमने एक आदमी को मारा। फिर उसमें झगड़ा किया और अल्लाह प्रकट करनेवाला है उस बात को जिसको तुम छुपाते हो। फिर हमने कहा" वह जीवित हो गया और अपने चाचा के बेटों के बारे में कहा कि उन्होंने मुझे मारा है और यह कहकर मर गया।

—सूरते बकर ७३, तफसीरे जलालैन

डण्डे का चमत्कार—जबकि उस जंगल में मूसा ने अपनी जाति के लिए पानी माँगा। सो हमने कहा कि अपनी लाठी पत्थर पर मार (यह वही पत्थर था, जो स्नान के समय उस पर रक्खे मूसा के कपड़े ले भागा था)। बस १२ जल के स्रोत (चश्मे) उसमें से निकलकर बहने लगे।

—सूरते बकर ७३, जलालैन

[पाप क्षमा किये जायेंगे]

१५—और कहो कि क्षमा माँगते हैं हम, क्षमा करेंगे तुम्हारे पाप और अधिक भलाई करनेवालों के।
—मं० १। सि० १। सू० २। आ० ५८

[पाप-क्षमा की बात से पापों की वृद्धि होती है]

समीक्षक—भला यह खुदा का उपदेश सबको पापी बनानेवाला है वा नहीं? क्योंकि जब पाप क्षमा होने का आश्रय मनुष्यों को मिलता है, तब पापों से कोई भी नहीं डरता। इसलिए ऐसा कहनेवाला खुदा और यह खुदा का बनाया हुआ पुस्तक नहीं हो सकता।

[पाप-क्षमा से खुदा भी अन्यायकारी बनता है]

क्योंकि वह न्यायकारी है, अन्याय कभी नहीं करता। और पाप-क्षमा करने मे अन्यायकारी हो जाता है। किन्तु यथापराध दण्ड ही देने में न्यायकारी हो सकता है ॥१५॥

डण्डा अजगर बन गया—जब मूसा ने अपनी लाठी डाली तो वह बड़ा अजगर साँप बन गई। और मूसा ने अपना हाथ कपड़ों में से निकाला और वह चमकता हुआ प्रकाशमान प्रकट हुआ।
—सूरते ऐराफ, आयत १०६-१०७, जलालैन

टिड्डियों, जुओं व मेंढकों का मेंह—हम कभी तेरा विश्वास न करेंगे और ईमान न लायेंगे (सो मूसा ने उनको शाप दिया) फिर हमने उन पर पानी का तूफान भेजा कि सात दिन तक पानी उनके घर भरा रहा, जो बैठे हुए आदमी के हलक तक पहुँचता था। और भेजा टिड्डियों को। सात दिन की उनकी खेती व फल खा गये और भेजा जुओं को या चिचड़ी को जो उसने टिड्डियों से बचा हुआ खाया और कुछ शेष न छोड़ा और भेजा उन पर मेंढकों को कि वे उनके घरों व खानों में भर गए।
—सूरते ऐराफ १३२-१३४, जलालैन

ये चमत्कार किसी की समझ में न आएँ तो उसका इलाज वही है, जो इस आयत के अनुसार ईमान न लानेवालों का हुआ, अर्थात् पानी का तूफान, टिड्डियाँ जुएँ, मेंढक आदि। इस भय के होते हुए, भला कौन है जो ईमान नहीं लायेगा?

१५.. वस्तुतः पाप कभी क्षमा नहीं होता। कर्म और उसके फल में कार्य-कारण सम्बन्ध है। इसलिये फल भोगे विना कर्म से छुटकारा नहीं मिल सकता—नाभुक्तं क्षीयते कर्म। कर्मफल से छुटकारा दिलाने (क्षमा करवाने) की बात कहकर लोगों को बहकाकर अपना उल्लू सीधा करके लोगों को पाप के लिए प्रोत्साहित करना है।

कुरान में वदतो व्याघात (परस्पर विरोधी वक्तव्यों) की भरमार है। एक ओर क्षमा की बात कही जाती है तो दूसरी ओर कहा जाता है—"चाहे तुम इनके लिए क्षमा की प्रार्थना करो, चाहे न करो, अल्लाह इन्हें कदापि क्षमा नहीं करेगा" (सूरतअल मुनाफिकून, आयत ६)। उधर सूरते बकर आयत ५१-५२ में कहा है—"तुमने बड़ा ही जुल्म किया। इसके पश्चात् हमने तुम्हें क्षमा कर दिया ताकि तुम कृतज्ञता दिखलाओ।" जो न्यायाधीश कृतज्ञता पाने के लिए अपराधी को क्षमा कर देता है, उससे न्याय की आशा कैसे की जा सकती है? परन्तु उसकी न्यायव्यवस्था इतनी पूर्ण है कि उसमें यथायोग्य व्यवहार होने से न निर्दोष दण्डित हो सकता है और न अपराधी छूट सकता है।

[पत्थर पर डण्डा मारने से १२ चश्मे बह निकले]

१६—जब मूसा ने अपनी कौम के लिए पानी माँगा, हमने कहा कि अपना असा (=दण्ड) पत्थर पर मार, उसमें से बारह चश्मे बह निकले। —मं० १। सि० १। सू० २। आ० ६०

[डण्डा मारने से झरनों का निकलना सर्वथा असम्भव]

समीक्षक—अब देखिये, इन असम्भव बातों के तुल्य दूसरा कोई कहेगा ? एक पत्थर की शिला में डण्डा मारने से बारह झरनों का निकलना सर्वथा असम्भव है। हाँ, उस पत्थर को भीतर से पोला कर उसमें पानी भर बारह छिद्र करने से सम्भव है, अन्यथा नहीं ॥१६॥

[तुम बन्दर हो जाओ]

१७—हमने उनको कहा कि तुम निन्दित बन्दर हो जाओ। यह एक भय दिया जो उनके सामने और पीछे थे उनको, और शिक्षा ईमानदारों को। —मं० १। सि० १। सू० २। आ० ६५, ६६

---

१६. सृष्टिक्रम के विरुद्ध कुछ कर सकना किसी के लिए भी संभव नहीं। अभाव से भाव की उत्पत्ति संभव नहीं। पत्थर में जल का अभाव है, डण्डा मारने से उसमें से जल कदापि नहीं निकल सकता।

१७. विवेच्य आयत का पूरा सन्दर्भ इस प्रकार है—"और तुम्हें अपने उन लोगों का हाल मालूम है, जिन्होंने 'सब्त' (Sabbath) के विषय में मर्यादा का उल्लंघन किया (सब्त शनिवार को कहते हैं। 'बनी इसराइल' के लिए यह दिन आराम और इबादत के लिए मखसूस कर दिया गया था। उस दिन सांसारिक कार्य, विशेष रूप से शिकार वर्जित था) तो हमने उनसे कह दिया—बन्दर हो जाओ धिक्कारे और फिटकारे हुए (Be yeapes, dispised and hated)।"

संस्कृत के आवागमन वा पुनर्जन्म का समानार्थक अरबी में 'तनासुख' है। सूरत अल-आराफ, आयत १६६ में भी यह बात दुहराई गई है। यह मत सब हिन्दुओं (आर्यों), बौद्धों, जैनों, सिक्खों आदि का है। ईसाई और मुसलमान इसे नहीं मानते, यद्यपि बाइबल और कुरान दोनों में इस आशय के संदर्भ मिलते हैं। परन्तु मुसलमान विद्वानों ने प्रचारित कर रक्खा है कि 'तनासुख' (पुनर्जन्म) इसलामी सिद्धान्तों या मन्तव्यों के विरुद्ध है। परन्तु विवेच्य सन्दर्भ (आयत) में इसका स्पष्ट निर्देश मिलता है। इस स्थिति से निपटने के लिए मुसलमानों ने एक और शब्द 'तनासुख' गढ़ लिया है। तनासुख के यह अर्थ लिए हैं कि शरीर तो वही रहे, पर उसी के कुछ अंगों में कुछ विजातीय परिवर्त्तन (विकृति) हो जाये। कुरान शरीफ के भाष्यकारों ने इसी कल्पना के आधार पर अपने भाष्य लिखे हैं। यदि इन भाष्यों की सहायता के विना कुरान ने उन सन्दर्भों को पढ़ा जाए तो इन आयतों के अर्थों से हिन्दुओं के मन्तव्यों की पुष्टि होगी और सीधा अर्थ यही होगा कि जब किसी जीव के पाप सीमा से आगे बढ़ जाते हैं तो ईश्वर अगला जन्म उन्हें नीच योनियों में देता है।

कतिपय भाष्यकारों ने अपनी व्याख्या में कहा है कि बन्दर और सूअर से तात्पर्य केवल जिल्लत और अपमान से है। सर सय्यद अहमदखाँ की मान्यता के अनुसार ऐसे लोगों की आदतें बन्दर और सूअर के जैसी कर दी जाती हैं। ये सब व्याख्यायें बलात् इसलिए की जाती हैं कि एक बार अस्वीकार करके स्वीकार करना आसान नहीं होता; अन्यथा कुरान में एक भी आयत ऐसी नहीं है, जिससे पुनर्जन्म या तनासुख का निषेध होता हो। इसके विपरीत ऐसी अनेक आयतें हैं, जिनमें पुनर्जन्म का स्पष्ट निर्देश किया है। उदाहरणार्थ—

[झूठा भय दिखाना खुदा का काम नहीं हो सकता]

समीक्षक—जो खुदा से निन्दित बन्दर हो जाना केवल भय देने के लिए कहा था, तो उसका कहना मिथ्या हुआ, वा छल किया। जो ऐसी बातें करता है, और जिनमें ऐसी बातें हैं, वह न खुदा और न यह पुस्तक खुदा का बनाया हो सकता है ॥१७॥

[खुदा का मुर्दों को जिलाना]

१८—इस तरह खुदा मुर्दों को जिलाता है, और तुमको अपनी निशानियाँ दिखलाता है कि तुम समझो। —मं० १। सि० १। सू० २। आ० ७३

(१) 'खुदा से कैसे इन्कार कर सकते हो कि तुम मर गये थे तो उसने तुमको जिलाया। फिर वही तुमको मारता है। वही तुमको जिन्दा करेगा। फिर तुम उसी की तरफ लौटकर जाओगे' (सूरते बकर, आयत२८)।

यहाँ मृत्यु और जीवन का पर्याय से आना स्पष्ट है। भाष्यकारों ने पुनर्जन्म से बचने के लिए 'अमवातन' (मौतों) आ अर्थ कर दिया है 'तुम बेजान थे'। किन्तु जीव बेजान तो हो ही नहीं सकता, क्योंकि जीव और जान में तो अविनाभाव सम्बन्ध है, दोनों पर्यायवाची हैं। जीव का शरीर से निकल जाना मौत है और उसका शरीर से संयुक्त होना जन्म या जीवन है। कुरान शरीफ का कहना है कि मौत और हयात (जीवन) का क्रम तब तक जारी रहता है जब तक जात न (मुक्ति) नहीं हो जाती। यही वैदिक सिद्धान्त है।

(२) 'और खुदा ने उनको आज्ञा दी कि मर जाओ। फिर उनको जिन्दा कर दिया। कुछ सन्देह नहीं कि खुदा लोगों पर कृपा रखता है। परन्तु बहुत से लोग कृतज्ञता प्रकट नहीं करते।' (बकर २४३)। जहाँ तक पुनर्जन्म के सिद्धान्त का सम्बन्ध है, वह तो एक बार भी मारकर जिन्दा कर देने से सिद्ध है।

(३) 'फिर मृत्यु आ जाने के पश्चात् हमने तुमको नये सिरे से जीवित कर दिया ताकि तुम अहसान मानो' (बकर ५६)। यहाँ पुनर्जन्म स्पष्ट है और तदर्थ ईश्वर को धन्यवाद भी।

(४) 'और जिन पर उसने कोप किया और जिनको उनमें से सूअर और बन्दर बना दिया' (मायिदा ६०)। 'सस्यमिव मर्त्यः पच्यते सस्यमिवाजायते पुनः' (कठोपनिषद् १।६)। प्राणी अन्न की तरह पैदा होता, बढ़ता, नष्ट होता और पुनः उत्पन्न होता है। शेख फरीदुद्दीन अत्तार के निम्न शेर में उपनिषद् के इस वचन की प्रतिच्छाया होती है—

हफ्त सद हफ्ताद कालिब दीदाअम्।
मिस्ले सब्जा बारहा दा रोई अम् ॥

मैं बहत्तर अर्थात् बहुत से शरीर देख चुका हूँ। घास के समान बार-बार उग चुका हूँ।

इसलाम के कई सम्प्रदाय पुनर्जन्म पर विश्वास रखते थे, जैसे—कीसानिया सम्प्रदाय, हाशमिया सम्प्रदाय तथा फलात सम्प्रदाय (देखो—'अल्मलल वल् हल्'—लेखक अबू फ़त हुल् इमाम मुहम्मद विन् अब्दुल करीम अल् शहरस्तानी)। अरस्तू (Aristotle), अफलातून (Plato), सुकरात (Socrates) तथा फासागोरस (Pythagorus) आदि यूनानी दार्शनिक पुनर्जन्म के सिद्धान्त को मानते थे।

१८. जीवात्मा जब किसी शरीर को छोड़ देता है तो पुनः उसमें प्रवेश नहीं करता। मनुष्य की मृत्यु वस्तुतः तब होती है जब उसका मस्तिष्क काम करना बन्द कर देता है। चिकित्सा-विज्ञान की

[खुदा मुर्दों को अब क्यों नहीं जिलाता ?]

समीक्षक—क्या मुर्दों को खुदा जिलाता था ? तो अब क्यों नहीं जिलाता । क्या कयामत की रात तक कबरों में पड़े रहेंगे ? आजकल दौड़ासुपुर्द हैं ? क्या इतनी ही ईश्वर की निशानियाँ हैं ? पृथिवी सूर्य चन्द्रादि निशानियाँ नहीं हैं ? क्या संसार में जो विविध रचनाविशेष प्रत्यक्ष दीखती है, ये निशानियाँ कम हैं ? ॥१८॥

[बहिश्त में सदा रहना]

१९—वे सदैव काल बहिश्त अर्थात् वैकुण्ठ में वास करनेवाले हैं ।

—मं० १ । सि० १ । सू० २ । आ० ८२

[स्वर्ग-नरक अनन्त काल के लिए नहीं हो सकता]

समीक्षक—कोई भी जीव अनन्त पाप-पुण्य करने का सामर्थ्य नहीं रखता । इसलिए सदैव स्वर्ग-नरक में नहीं रह सकते । और जो खुदा ऐसा करे, तो वह अन्यायकारी और अविद्वान् हो जावे ।

[सबके पाप-पुण्य बराबर नहीं, तो समान फल कैसे ?]

कयामत की रात न्याय होगा, तो मनुष्यों के पाप-पुण्य बराबर होना उचित है । जो अनन्त नहीं है, उसका फल अनन्त कैसे हो सकता है ? और सृष्टि हुए सात-आठ हजार वर्षों से इधर ही बतलाते

भाषा में इसे Biological death कहते हैं । परन्तु सामान्यतया हृदय की गति बन्द होने पर मनुष्य को मृत घोषित कर दिया जाता है । इसे Clinical death कहते हैं । अर्थी पर या चिता पर रक्खे शव के अकस्मात् जी उठने की घटनाएँ यदा-कदा सुनने में आती हैं । ऐसा तभी होता है जब भूल से 'नाड़ी बन्द हो गई' को मृत्यु समझ लिया जाता है । वस्तुत: मस्तिष्क अभी काम कर रहा होता है । किसी कारण संचार रक्त में बाधा आ जाती है, किन्तु जल्दी ही उसके दूर हो जाने पर प्राणों का संचार हो जाने से कहा जाता है कि मुर्दा जी उठा । इसी को चमत्कार का नाम दे दिया जाता है । शंकराचार्य आदि के नाम से प्रचलित परकाया-प्रवेश आदि की घटनाएँ प्रसूत कल्पना हैं । वस्तुत: मृत व्यक्ति फिर से जीवित नहीं हो सकता ।

जहाँ तक ईश्वरीय निशानियों का सम्बन्ध है, प्रात:काल नियत समय पर सूर्योदय, सायंकाल सूर्यास्त दिन व रात्रि का क्रम, उषा की रंगीनी, बादलों में से किरणों का छनना, इन्द्रधनुष बन जाना, सागर की असीम गहराई, पर्वतों की आकाश को छूती चोटियाँ, ग्रहों-नक्षत्रों की निर्बाध नियमित गति, मानवशरीर की रचना और उसके भीतर हो रही रक्तसंचार तथा विभिन्न अंगों की क्रिया—इत्यादि क्या कोई छोटी निशानियाँ हैं ? इनमें से क्या किसी एक को भी मनुष्य समझ पाया है ?

१९. ईश्वर को सभी अविनाशी-अनादि व अनन्त मानते हैं । वह वर्त्तमान सृष्टि की उत्पत्ति से पहले भी वर्त्तमान था और प्रलय के अनन्तर भी रहेगा । सृष्टि की उत्पत्त्यादि तथा कर्मफल की व्यवस्था आदि उसके स्वाभाविक गुण हैं । गुण और गुणी में समवाय या अविनाभाव सम्बन्ध रहता है—एक के विना दूसरा नहीं रह सकता । सदा के लिए स्वर्ग वा नरक में वास करने का अर्थ होगा कि ईश्वर का कर्मफल-व्यवस्था का काम समाप्त हो गया । धरती पर जीवों के लिए अपेक्षित भोगादि की व्यवस्था भी अब अन्यथा सिद्ध हो गई । यही स्थिति सृष्टि की उत्पत्ति से पूर्व की भी होगी । दाहकता अग्नि का स्वाभाविक गुण है । इस गुण के नष्ट होते ही अग्नि का अस्तित्व नहीं रहता । इसलिए सृष्टि से पूर्व

हैं। क्या इसके पूर्व खुदा निकम्मा बैठा था, और कयामत के पीछे भी निकम्मा रहेगा ? ये बातें सब लड़कों के समान हैं। क्योंकि परमेश्वर के काम सदैव वर्त्तमान रहते हैं। और जितने जिसके पाप-पुण्य हैं उतना ही उसको फल देता है। इसलिये क़ुरान की यह बात सच्ची नहीं ॥१६॥

[मुसलमान परस्पर न लड़ें]

२०—जब हमने तुमसे प्रतिज्ञा कराई न बहाना लोहू अपने आपस के, और किसी अपने आपस को घरों से न निकालना। फिर प्रतिज्ञा की तुमने इसके तुम ही साक्षी हो।

फिर तुम वे लोग हो कि अपने आपस के को मार डालते हो, एक फिरके को आप में से घरों उनके से निकाल देते हो। —मं० १। सि० १। सू० २। आ० ८४, ८५

[दूसरों को मारना वा घर से निकालना अन्याय है]

समीक्षक—भला प्रतिज्ञा करानी और करनी अल्पज्ञों की बात है, वा परमात्मा की ? जब परमेश्वर सर्वज्ञ है, तो ऐसी कड़ाकूट संसारी मनुष्य के समान क्यों करेगा ? भला यह कौन-सी भली बात है कि आपस का लोहू न बहाना, अपने मतवालों को घर से न निकालना, अर्थात् दूसरे मतवालों का लोहू बहाना, और घर से निकाल देना ? यह मिथ्या मूर्खता और पक्षपात की बात है।

और प्रलय के अनन्तर यदि ईश्वर में इन गुणों का अभाव माना जायेगा तो इसका अर्थ होगा कि ईश्वर न पहले कभी था और न बाद में कभी रहेगा। इस प्रकार ईश्वर का अस्तित्व ही संकट में पड़ जायेगा। वास्तविकता यही है कि परमेश्वर के करने के जो भी काम हैं, उन्हें वह सदा करता रहा है और करता रहेगा। इसलिए जीवों का भी बहिश्त से आना-जाना लगा रहेगा।

२०. **घर से निकालना**—बात यह थी कि यहूदियों के खानदानों में बड़ी फूट पड़ गई थी। वे परस्पर एक दूसरे को तंग करते और घरों तक से निकाल देते थे। परन्तु जब कहीं वे किसी दुश्मन के फन्दे में फँस जाते थे तब उन्हें बेकली होती थी और अर्थदण्ड देकर अपने भाई-बन्दों (बन्धुओं) को छुड़ा लेते थे और कहते थे कि चूँकि अल्लाह की किताब में यह हुक्म मौजूद है कि कैदियों को अर्थदण्ड देकर छुड़ा लेना चाहिए, इसलिये हम ऐसा करते हैं। इस अवसर पर उन्हें याद दिलाया जा रहा है कि तुम अल्लाह की किताब के अनुसार काम करने का यह ढोंग तो रचते हो, पर तुम्हें यह याद नहीं रहता कि अल्लाह की किताब में भाई-बन्धुओं को घरों से निकालना भी तो मना है। इस तरह उन्हें अपराधी ठहराया गया है कि वे किताब के एक भाग को मानते हैं और एक भाग से इन्कार करते हैं।

जब परमेश्वर सबका पिता है तो मनुष्यमात्र परस्पर भाई ठहरते हैं। इसलिए अपने-पराये का भेद करके प्रकारान्तर से उन्हें लड़ाई के लिए उकसाना है। इसके विपरीत वेद की भावना कितनी उदात्त है—'मित्रस्य चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्'—प्राणिमात्र को मित्र की दृष्टि से देखें। 'मित्र' शब्द 'मिदि स्नेहने' से निष्पन्न होता है। हम प्राणिमात्र से स्नेह करें, किसी से द्वेष न करें—यह वेद का सन्देश है। अपनों का खून न बहाओ, यह क़ुरान का आदेश है और वह भी इसलिए कि 'अपने गिरोह पर ज्यादती करने से शत्रुओं को सहायता मिलती है' (आयत ८५)। जो लोग खुदा को वचन देकर भी कि हम अपने फिरकेवालों को नहीं मारेंगे, उन्हें मार डालते हैं, उन्हें दूसरे मतवालों को मारने में क्यों संकोच होगा। क़ुरान की इस शिक्षा का ही परिणाम है कि धरती का कोई कोना ऐसा नहीं बचा, जो खून से न रंगा हो। सबसे पहले हजरत मुहम्मद ने मक्का पर चढ़ाई करके वहाँ खून की नदियाँ बहाई थीं। पैगम्बर से

[क्या ईश्वर जानता न था कि मुसलमान प्रतिज्ञा तोड़ेंगे ?]

क्या परमेश्वर प्रथम ही से नहीं जानता था कि ये प्रतिज्ञा से विरुद्ध करेंगे ? इससे विदित होता है कि मुसलमानों का खुदा भी ईसाइयों की बहुत-सी उपमा[1] रखता है। और यह कुरान स्वतन्त्र नहीं बन सकता। क्योंकि इसमें में थोड़ी-सी बातों को छोड़कर बाकी सब बातें बाइबल की हैं ॥२०॥

[पाप हल्के न किये जायगे]

२१—ये वे लोग हैं कि जिन्होंने आखरत के बदले जिन्दगी यहाँ की मोल लेली। उनसे पाप कभी हल्का न किया जावेगा, और न उनकी सहायता दी जावेगी।

—मं० १। सि० १। सू० २। आ० ८६

[विना भोगे पाप-पुण्य किसी के हल्के भारी नहीं होते]

समीक्षक—भला ऐसी ईर्ष्या-द्वेष की बातें कभी ईश्वर की ओर से हो सकती हैं ? जिन लोगों के पाप हल्के किये जायेंगे, वा जिनको सहायता दी जावेगी वे कौन हैं ? यदि वे पापी हैं, और पापों का दण्ड दिये विना हल्के किये जावेंगे, तो अन्याय होगा। जो सजा देकर हल्के किये जावेंगे, तो जिनका बयान इस आयत में है, ये भी सजा पाके हल्के हो सकते हैं। और दण्ड देकर भी हल्के न किये जायेंगे, तो भी अन्याय होगा।

[प्रत्येक को सुख-दुःख कर्मानुसार ही मिलता है]

जो पापों से हल्के किये जानेवालों से प्रयोजन धर्मात्माओं का है, तो उनके पाप तो आप ही हल्के हैं, खुदा क्या करेगा ? इससे यह लेख विद्वान् का नहीं। और वास्तव में धर्मात्माओं को सुख और अधर्मियों को दुःख उनके कर्मों के अनुसार सदैव होना चाहिए ॥२१॥

[मूसा और ईसा को प्रकट करना]

२२—निश्चय हमने मूसा को किताब दी। और उसके पीछे हम पैगम्बर को लाये, और मरियम के पुत्र ईसा को प्रकट मौजिजे अर्थात् दैवी शक्ति और सामर्थ्य दिये, उसके साथ रूहुलकुद्स[2] के, जब

प्रेरणा पाकर उसके अनुयायियों ने जो किया, भारतीयों ने वह स्वयं भोगा भी है और पढ़ा-सुना भी है। आश्चर्य है कि परमेश्वर सर्वज्ञ होते हुए भी वह न जान सका, जो 'परम पुरुष के दास' गुरुगोविन्दसिंह ने जान लिया था कि कोई मुसलमान सीरे से भरे मटके में हाथ डाल दे, फिर उस सीरे से सने हाथ को पोस्त (खसखस) से भरी बोरी में डाल दे, तब हाथ में लगे खसखस के दानों की संख्या के जितनी बार भी वह कसम खाये तब भी उसका विश्वास न करे।

२१. पारलौकिक सुख की तुलना में ऐहिक सुख-सुविधाएँ हेय हैं। परन्तु जहाँ तक पाप कर्मों का सम्बन्ध है, उनका फल देने में पक्षपात करना स्वयं में पाप है। इस विषय में सबके साथ यथायोग्य व्यवहार ही न्याय्य है।

२२. मूसा के बाद दाऊद और दाऊद के बाद ईसामसीह आए। इन तीनों को क्रमशः तौरेत, जबूर और इंजील के रूप में इलहाम मिला। मसीह को मुसलमान वह महत्ता नहीं देते, जो ईसाई लोग

---

१. अर्थात् सादृश्य। उपमा सादृश्यमूलक होती है। इस कारण यहाँ सदृश के लिये ही उपमा का लाक्षणिक प्रयोग किया है।

२. 'रूहुलकुद्स' कहते हैं जबरईल को, जो कि हरदम मसीह के साथ रहता था। द० स०

तुम्हारे पास उस वस्तु सहित पैगम्बर आया कि जिसको तुम्हारा जी चाहता नहीं फिर तुमने अभिमान किया, एक मत को झुठलाया और एक को मार डालते हो। —मं० १। सि० १। सू० २। आ० ८७

[तब तो बाइबल भी मुसलमानों का धर्म-पुस्तक है]

समीक्षक—जब कुरान में साक्षी है कि मूसा को किताब दी, तो उसका मानना मुसलमानों को आवश्यक हुआ। और जो-जो उस पुस्तक में दोष हैं, वे भी मुसलमानों के मत में आ गिरे।

[मौजिजों की बातें लोगों को बहकाने के लिए हैं]

और 'मौजिजे' अर्थात् दैवीशक्ति की बातें सब अन्यथा हैं। भोलेभाले मनुष्यों के बहकाने के लिए झूंठमूंठ चला ली हैं। क्योंकि सृष्टिक्रम और विद्या से विरुद्ध सब बातें झूंठी ही होती हैं। जो उस

देते हैं। मती (Matthew) की इंजील में १२वें पर्व में मसीह के कई मौजिजों का उल्लेख हुआ है। उदाहरणार्थ—

'Then they brought him a demon-possessed man who was blind and mute, and Jesus healed him, so that he could both talk and see. All the people were astonished and said, "Could this be the son of David ?" 12-22-23

वे लोग एक भूतग्रस्त अन्धे और गूंगे मनुष्य को उसके पास लाये और उसने उसे ठीक कर दिया, यहाँ तक कि वह बोलने और देखने लग गया। सब लोग विस्मित होकर बोले—क्या यह दाऊद की सन्तान है ?

(१) कुरान में भी मसीह के कुछ मौजिजों का वर्णन मिलता है, जैसा कि सूरते बकर, आयत ८७ में बताया है—और मरियम के पुत्र ईसा को कई चमत्कार दिये—जीवित करना मृतकों का और अन्धे व जन्मजात कोढ़ी को ठीक करना और उनको सामर्थ्य दी जिब्रील से (जहाँ ईसा चलते, जिब्रील उनके साथ होते थे)।

(२) जब फरिश्ते बोले—ऐ मरियम ! अल्लाह ने तुझे पसन्द किया, व शुद्ध बनाया और पसन्द किया तुझको संसार की सब स्त्रियों से।—आगे इमरान ३९

(३) याद करो कुरान में कथा मरियम की। सो भेजा हमने उनकी ओर अपनी रूह जिब्रील को। उसे देखकर मरियम बोली—निस्सन्देह मैं तुझसे शरण माँगती हूँ, यदि तू कोई पवित्र हृदयपुरुष है। जिब्रील ने कहा—बात यह है कि मैं तेरे परमात्मा का भेजा हुआ हूँ कि तुझे एक पवित्र बेटा प्रदान करूँ (जो पैगम्बर होगा)। मरियम ने कहा—मेरे पुत्र कैसे होगा, क्योंकि किसी पुरुष ने मेरे हाथ नहीं लगाया (विवाह करके) और न मैं व्यभिचारिणी हूँ···जिब्रील ने कहा—यह बात अवश्य होनेवाली है, अर्थात् बिना पिता के तेरे पुत्र उत्पन्न होनेवाला है। तेरा परमात्मा कहता है कि यह काम मेरे लिए सरल है है (इस प्रकार कि मेरे आदेश से जिब्रील तेरे अंदर फूंक मारे और तू उससे गर्भवती हो जाये)···और हम उसको अवश्य पैदा करेंगे, ताकि बनायें उसको अपने सामर्थ्य की निशानी। फिर मरियम गर्भवती हुई और चली गई, गर्भवती होने के कारण अपने घरवालों से दूर। फिर प्रसवपीड़ा होने पर एक खजूर के तने के नीचे आ गई। कहने लगी—क्या ही अच्छा होता कि मैं इससे पहले ही मर गई होती (लोगों को कलंक लगाने का अवसर न मिलता। गर्भ को तो किसी तरह छिपाया, अब इस लड़के को लेकर कहाँ जाऊँ ?)·· फिर नवजात शिशु को लेकर अपनी जाति वालों में आई। वे बोले—हे मरयम, तूने बड़ा ही आश्चर्य का काम कर डाला। तब उसने (मरयम ने) उस बच्चे की तरफ इशारा कर दिया। वे कहने

समय 'मौजिजे' थे, तो इस समय क्यों नहीं ? जो इस समय नहीं, तो उस समय भी न थे, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं ॥२२॥

[काफिरों पर खुदा की लानत]

२३—और इससे पहले काफिरों पर विजय चाहते थे, जो कुछ पहिचाना था जब उनके पास वह आया झट काफिर हो गये, काफिरों पर लानत है अल्लाह की ।

—मं० १ । सि० १ । सू० २ । आ० ८८

[आपस में एक-दूसरे को काफिर कहना मूर्खता है]

समीक्षक—क्या जैसे तुम अन्य मतवालों को काफिर कहते हो, वैसे वे तुमको काफिर नहीं कहते हैं ? और उनके मत के ईश्वर की ओर से धिक्कार देते हैं । फिर कहो कौन सच्चा और कौन

लगे—हम इससे कैसे बात करें जो पालने में पड़ा हुआ, एक बच्चा है ? तब वह बच्चा बोल पड़ा—मैं अल्लाह का बन्दा हूँ । उसने मुझे 'किताब' प्रदान की है और मुझे 'नबी' बनाया है ।

—सूरत मरयम आयत १८-२६

(४) और स्मरण करो मरियम को जिसने अपनी योनि को सुरक्षित रक्खा । सो हमने अपनी आत्मा फूंकी अर्थात् जिब्रील ने उसके कुर्ते के गिरेबान में फूंक मारी जिससे उसको ईसा का गर्भ रह गया ।

—सूरते अम्बिया ८८

२३. **काफिर कौन ?**—शब्दकोष के अनुसार कुफ्र सतरश्शैइन अर्थात् एक वस्तु को ढाँकने का नाम है । रात को काफिर कहा जाता है और किसान को भी । किसान को इसलिए कि वह बीज को भूमि में छिपा देता है और अहसानफरामोश को भी काफिर कहा जाता है । आजमुत्तफासीर में पृष्ठ ७६ पर यही अर्थ लिखा है । शरीयत में कुफर का अर्थ 'नबी (हजरत मुहम्मद) को न मानना है' (तफसीर बयानुल्कुरान पारा १ पृष्ठ २२) । तफसीर हक्कानी ने इस विषय को एक आयत से स्पष्ट किया है—'अल्लाह फरमाता है कि हमने बहुत से जिन्न और मनुष्य नर्क के लिए पैदा किए हैं । उन्हें दिल मिले हैं, परन्तु वे समझते नहीं । उन्हें आँखें दी हैं, पर वे देखते नहीं । कान दिये हैं, पर वे सुन नहीं सकते । वे लोग पशुसदृश हैं, अपितु पशुओं से भी भ्रष्ट और अचेतन हैं ।' आँख, कान होने पर भी वे क्यों नहीं देख-सुन सकते ? इसका कारण है कि अल्लाह ने आँख, कान और दिलों पर मुहर लगा रक्खी है (पारा १, रकू १, आयत ८) । और यह सब इसलिए कि खुदा ने अपनी दोजख भरने के लिए ही काफिर बनाये हैं । तफसीर मजहरी पारा १ पृष्ठ ३६ के अनुसार अल्लाह को काफिरों के दिलों को पवित्र करना स्वीकार्य नहीं था । काफिर अगर मोमिन बन जाते तो दोजख खाली रह जाती ।

अल्लाह ने कुछ रुहों को बहिश्त के लिए और कुछ को दोजख के लिए पहले से नियत कर रक्खा है । इस सिद्धान्त के होते नेक कर्मों को करके बेहतर इन्सान बनाने का अवसर ही नहीं रह जाता । तफसीरे हुसैनी में लिखा है—"न उन लोगों का मार्ग जिनपर तूने क्रोध किया, अर्थात् उत्पन्न होने से पूर्व ही तेरे क्रोध के पात्र बने और इस कारण काफिर ।

यदि इसलाम व कुफ्र को अल्लाताला ने पहले से ही कुछ लोगों के लिए निश्चित कर दिया है तो इसलाम के प्रचार की अब कोई आवश्यकता नहीं रह जाती और काफिर अगर इसलाम को स्वीकार नहीं करते तो इसमें उन बेचारों का क्या द्रोष है ? जिनके भाग्य में काफिर होना लिखा गया है, वह अटल है । इसलिए वे लाख यत्न करने पर भी कुफ्र को नहीं छोड़ सकेंगे ।

झूंठा ? जो विचार कर देखते हैं, तो सब मतवालों में झूंठ पाया जाता है। और जो सच है, सो सबमें एक-सा है। ये सब लड़ाइयाँ मूर्खता की हैं ॥२३॥

[अल्लाह काफिरों का शत्रु है]

२४—आनन्द का सन्देशा ईमानदारों को। अल्लाह, फरिश्तों, पैगम्बरों, जिबरईल[1] और मीकाइल[2] का जो शत्रु है, अल्लाह भी ऐसे काफिरों का शत्रु है।

—मं० १। सि० १। सू० २। आ० ९७, ९८

[ईश्वर किसी का शत्रु नहीं हो सकता]

समीक्षक—जब मुसलमान कहते हैं कि खुदा लाशरीक है, फिर यह फौज-की-फौज शरीक कहाँ से कर दी ? क्या जो औरों का शत्रु वह खुदा का भी शत्रु है ? यदि ऐसा है, तो ठीक नहीं। क्योंकि ईश्वर किसी का शत्रु नहीं हो सकता ॥२४॥

[अल्लाह जिसे चाहता है, प्रधान बनाता है]

२५—और अल्लाह खास करता है जिसको चाहता है साथ दया अपनी के।

—मं० १। सि० १। सू० २। आ० १०५

[खुदा की मर्जी ही से सब होवे, तो अच्छा काम कौन करेगा ?

समीक्षक—क्या जो मुख्य और दया करने के योग्य न हो, उसको भी प्रधान बनाता, और उस पर दया करता है ? जो ऐसा है, तो खुदा बड़ा गड़बड़िया है। क्योंकि फिर अच्छा काम कौन करेगा ? और बुरे कर्म को कौन छोड़ेगा ? क्योंकि खुदा की प्रसन्नता पर निर्भर करते हैं, कर्म-फल पर नहीं। इससे सबकी अनास्था होकर कर्मोच्छेद प्रसंग होगा ॥२५॥

इसलाम के मतानुसार धर्म केवल दिल बहलाने की वस्तु है, उनमें हमारी स्वेच्छावृत्ति के लिए कोई स्थान नहीं है। हम अच्छा करने पर भी विवश हैं और बुरा करने पर भी। तदनुसार स्वर्ग-नरक में जाने पर भी विवश हैं। अल्लामियाँ का दोजख भरा जाना है और यह शुभ कार्य हमारे द्वारा ही होगा।

२४. तौहीद का दावा करनेवाले इसलाम में खुदा के साथ मुहम्मदसाहब की शरकत (Partnership) तो कलमा से जाहिर है, किन्तु इस आयत को पढ़कर तो लगता है जैसे कोई प्राइवेट लिमिटेड कम्पनी हो। फरिश्तों की तो कोई गिनती ही नहीं। कहते हैं कि 'कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि माता कुमाता न भवति'—सन्तान भले ही बिगड़ जाये, किन्तु माता-पिता सन्तान के बैरी नहीं हो सकते। यहाँ तो डर है कि खुदा के चहेतों में से किसी की भी उपेक्षा होने पर स्वयं खुदा बैर बाँध लेगा और दोजख में धकेल देगा।

२५. इससे अल्लाह का पक्षपाती और क्षुद्रहृदय होना सिद्ध होता है, क्योंकि—

अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम्।
उदारचरितानान्तु वसुधैव कुटुम्बकम् ॥

अर्थात्—यह अपना है और यह पराया है, इस प्रकार का व्यवहार करनेवाला तो तंगदिल होता है, फराखदिल तो धरती-भर के लोगों को अपना परिवार मानता है और सबसे उनके गुण-दोषों के आधार पर व्यवहार करता है।

---

१. Gabriel. २. Michael.

[काफिरों से ईमान के फिरने का डर]

२६—ऐसा न हो कि काफिर लोग ईर्ष्या करके तुमको ईमान से फेर देवें, क्योंकि उनमें से ईमानवालों के बहुत-से दोस्त हैं।' —मं० १। सि० १। सू० २। आ० १०९

[काफिरों के काम का ईश्वर को सही पता न था]

समीक्षक—अब देखिए, खुदा ही उनको चिताता है कि तुह्मारे ईमान को काफिर लोग न डिगा देवें। क्या वह सर्वज्ञ नहीं है? ऐसी बातें खुदा की नहीं हो सकती हैं॥२६॥

[अल्लाह का मुंह सब ओर]

२७—तुम जिधर मुंह करो उधर ही मुंह अल्लाह का है। —मं० १। सि० १। सू० २। आ० ११५

[फिर मुसलमान किबले की ओर मुंह क्यों करते हैं?]

समीक्षक—जो यह बात सच्ची है, तो मुसलमान किबले की ओर मुँह क्यों करते हैं? जो कहें कि हमको किबले की ओर मुंह करने का हुक्म है, तो यह भी हुक्म है कि चाहें जिधर की ओर मुख करो। क्या एक बात सच्ची और दूसरी झूंठी होगी?

---

२६. इस आयत में कहा है—'किताबवालों (मुसलमानों) में से बहुतेरे अपने दिलों की ईर्ष्या से यह चाहते हैं कि किसी तरह तुम्हारे 'ईमान' के बाद फिर तुम्हें 'काफिर' बना दें'। हम पिछली कई आयतों को उद्धृत कर यह दिखला चुके हैं कि काफिर और मोमिन बनते नहीं, बल्कि बने-बनाये पैदा होते हैं, न काफिर से मोमिन बन सकता है और न मोमिन से काफिर। फिर खुदा को ईमानवालों के काफिर बन जाने का डर क्यों? और वह भी अहले किताब से!

२७. सूरते बकर आयत १४४ में लिखा है—"हम तुम्हारे मुंह की गर्दिश आकाश की ओर देखते रहे हैं तो हम उसी किबले (मस्जिदुलहराम) की ओर फेर देते हैं जिसे तुम पसन्द करते हो और जहाँ कहीं भी तुम हो (नमाज में) उसी तरफ अपना मुंह करो।" ग्रन्थकार ने इस आयत को आगे ३१वें वाक्य के अन्तर्गत उद्धृत किया है। उनकी आपत्ति यह है कि ये दोनों बातें परस्पर विरोधी हैं। इससे दोनों सच नहीं हो सकतीं। कुरान के प्राय: सभी भाष्यकारों के अनुसार पहले बैतुलमुकद्दस की ओर मुंह करके नमाज पढ़ा करते थे। कुरान के एक भाष्यकार मुहम्मद फारुख खाँ लिखते हैं—

"अब तक इसलाम का किबला 'बैतुलमुकद्दस' (जरुसलेम) था, अर्थात् मुसलमान उसी की ओर मुंह करके नमाज पढ़ते थे। यही अहलेयहूद का भी किबला (पूज्य) था। शाबान सन् २ हिजरी की घटना है कि ठीक नमाज की हालत में किबले को बदलने का आदेश उतरा और बैतुलमुकद्दस के बदले काबा को मुसलमानों का किबला करार दे दिया गया। तदनुसार हजरत मुहम्मद ने नमाज पढ़ने की स्थिति में ही अपना मुंह उत्तर में बैतुलमुकद्दस की ओर से फेरकर दक्षिण में काबे की ओर कर लिया। इसलामी इतिहास की यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण घटना थी। मानो यह अल्लाह की ओर से इस बात का एलान था कि अब तक यहूदियों को यह पद प्राप्त था कि वे दुनिया के सामने अल्लाह का दीन पेश करें, अब उन्हें इस पद से हटाया जा रहा है और अब मुसलमानों को यह जिम्मेदारी सौंपी जा रही है कि वे अल्लाह के बन्दों तक अल्लाह के दीन का सन्देश पहुँचाने का काम पूरा करेंगे। साथ में इसमें इस बात

[यदि अल्लाह् का मुख है, तो वह सब ओर कैसे ?]

और जो अल्लाह् का मुख है, तो वह सब ओर हो ही नहीं सकता। क्योंकि एक मुख एक ओर रहेगा, सब ओर क्योंकर रह सकेगा ? इसलिए यह संगत नहीं ॥२७॥

[हो जा कहनेमात्र से सृष्टि की रचना]

२८—जो आसमान और भूमि का उत्पन्न करनेवाला है, जब वो कुछ करना चाहता है, यह

की भी परीक्षा थी कि कौन अल्लाह् और उसके रसूल के आदेशों का बिना किसी हुज्जत के पालन करनेवाला है और कौन पुराने पक्षपातों में ग्रस्त है। इसका एक बड़ा फायदा यह हुआ कि ऐसे लोग जो हजरत मुहम्मद के आदेश का पूरी तरह पालन करने के लिए तैयार नहीं थे, उनका भाँडा फूट गया और वे मुसलमानों से अलग हो गये।"

श्री अशरफअली थानवी ने इस विषय में अपने अनुवाद के ३३वें पृष्ठ के अन्त में जो लिखा है, उसका सार इस प्रकार है—"हिजरत से पूर्व हजरत जब मक्का में थे तो इस प्रकार नमाज पढ़ाते थे कि जिससे मुख काबा और बैतुलमुकद्दस दोनों की ओर हो जाये। फिर मदीना में आने के बाद सत्रह मास तक खुदा के आदेश से केवल बैतुलमुकद्दस की ओर नमाज पढ़ते रहे। फिर आदेश आया कि काबा की ओर नमाज पढ़ो। किबला परिवर्तन के आदेश से पूर्व खुदा ने 'सैकूलुस्सुफहा मिनन्नासे मा वल्लहुम्' यह आयत (बकर १४२) उतारी कि किबला परिवर्तन के आदेश के पश्चात् मूर्ख लोग कहेंगे कि इन (मुसलमानों) को इनके उस किबले से, जिसपर ये थे, किसने फेर दिया।" अगली आयत के अनुवाद पर भी इस प्रकार की टिप्पणी है—"हजरत जब मक्का से मदीना पधारे, सवा वर्ष तक बैतुलमुकद्दस की ओर नमाज पढ़ी, पश्चात् आदेश आया, काबा की ओर पढ़ो। तब यहूदी और उनके बहकाने से कुछ कच्चे मुसलमान सन्देह करने लगे कि वह किबला सब नबियों का था, उसको छोड़ना नबी का निशान नहीं। इस सन्देह में आये 'किबला' का अर्थ है वह स्थानविशेष, जिसकी ओर मुख करके नमाज पढ़ी जानी चाहिए।"

'तुम जिधर मुँह करो, उधर ही मुँह अल्लाह का है' यह तभी सम्भव है जब पौराणिकों के ब्रह्मा की तरह मुसलमानों के अल्लाह के भी कम से कम चार मुँह हों।

बैतुलमुकद्दस—काबा और मस्जिदे अक्सा के नाम से प्रसिद्ध अल्लाह का घर हजरत इब्राहीम और उनके सुपुत्र हजरत इस्माइल ने अल्लाह की इबादत के लिए अल्लाह के हुक्म से बनवाया था। इसके निर्माण का इरादा हजरत दाऊद ने किया था। अल्लाह ने कहा कि यह काम सुलेमान के हाथों होगा। हजरत सुलेमान के समय में बनी इसराईल ने बैतुलमुकद्दस को अपना केन्द्र बनाया था। जब तक बनी इसराईल 'इमामत' (नेतृत्व) के पद से हटाये नहीं गये, बैतुलमुकद्दस ही सत्यवादियों का किबला रहा। हजरत मुहम्मद और उनके साथी भी उस समय तक बैतुलमुकद्दस को ही अपना किबला बनाये रहे जब तक बनी इसराईल विधिपूर्वक 'इमामत' के पद से हटाये नहीं गये। इसके बाद काबा के 'धर्मकेन्द्र' और 'किबला' होने की घोषणा कर दी गई। आरम्भ में 'काबा' ही हजरत इब्राहीम के निमन्त्रण का केन्द्र था। अतः 'काबा' ही को 'किबला' (पूज्य) होने का हक पहुँचता था।

बैतुलमुकद्दस यरुशलम (Jeruslem)में स्थित है, जो यहूदियों, मुसलमानों तथा ईसाइयों—तीनों के लिए समान रूप से मुकद्दस है।

२८. उत्पन्न करनेवाला चेतन न किसी का उपादान होता है और न किसी का कार्य। निमित्त तथा उपादान एक नहीं हो सकते। बढ़ई को स्वयं मेज बनते या जुलाहे को स्वयं वस्त्र बनते कभी नहीं

नहीं कि उसको करना पड़ता है, किन्तु उसे कहता है कि हो जा, बस हो जाता है ।[1]

—मं० १ । सि० १ । सू० २ । आ० ११७

[खुदा ने होने का किसे हुक्म दिया, और किसने सुना ?]

समीक्षक—भला खुदा ने हुक्म दिया कि 'हो जा', तो हुक्म किसने सुना, और किसको सुनाया ? और कौन बन गया, किस कारण से बना ? जब यह लिखते हैं कि सृष्टि के पूर्व सिवाय खुदा के कोई भी दूसरा वस्तु न था, तो यह संसार कहाँ से आया ? विना कारण के कोई भी कार्य नहीं होता, तो इतना बड़ा जगत् कारण के विना कहाँ से हुआ ? यह बात केवल लड़कपन की है ।

[कोई भी पदार्थ विना तीन कारणों के नहीं बन सकता]

पूर्वपक्षी—नहीं-नहीं । खुदा की इच्छा से ।

उत्तरपक्षी—क्या तुम्हारी इच्छा से एक मक्खी की टाँग भी बन जा सकती है ? जो कहते हो कि खुदा की इच्छा से यह सब कुछ जगत् बन गया ।

पूर्वपक्षी—खुदा सर्वशक्तिमान् है । इसलिए जो चाहे सो कर लेता है ।

उत्तरपक्षी—'सर्वशक्तिमान्' का क्या अर्थ है ?

पूर्वपक्षी—जो चाहे सो कर सके ।

उत्तरपक्षी—क्या खुदा दूसरा खुदा भी बना सकता है ? अपने आप मर सकता है ? मूर्ख रोगी और अज्ञानी भी बन सकता है ?

पूर्वपक्षी—ऐसा कभी नहीं बन सकता ।

देखा जाता । लकड़ी और सूत के सहयोग से ही बढ़ई और जुलाहा मेज या वस्त्र बना पाते हैं। दृश्यमान जगत् की उत्पत्ति स्वतः नहीं हुई और अभाव से उत्पन्न करना भी परमेश्वर के सामर्थ्य से बाहर है। परमेश्वर सर्वशक्तिमान् है सही । परन्तु वह जो कुछ करता है, विधि-विधान के भीतर रहकर ही करता है। प्रकृति जड़ होने से स्वतः कार्य में प्रवृत्त नहीं हो सकती। चेतन की प्रेरणा के विना वह कुछ नहीं कर सकती। इसलिए सृष्टिरचना के लिए निमित्तकारण ईश्वर का होना आवश्यक है। और जैसे कुम्हार मिट्टी के बिना घड़ा नहीं बना सकता, वैसे ही प्रकृति उपादान के विना ईश्वर सृष्टि को नहीं बना सकता। फिर सृष्टि-रचना किसके लिए ? इसलिए इसके भोग के लिए जीवात्माओं का होना अनिवार्य है। अतएव खुदा के 'कुन' (हो जा) कहनेमात्र से सृष्टि की उत्पत्ति की कल्पना नहीं की जा सकती। सामने सुननेवाला कोई न हो तो बोलनेवाले को सब कोई पागल ही तो कहेंगे। कार्यालय में बैठा अफसर तब तक कुछ नहीं कहता जब तक घण्टी सुनकर आनेवाला कर्मचारी उपस्थित नहीं हो जाता। भूमि, आकाश आदि जब कोई नहीं था तो खुदा ने किससे कहा—हो जा और किसने सुनकर उसके आदेश का पालन किया ? क़ुरान की यह बात तर्कसंगत नहीं हो सकती।

यूनान के महान् दार्शनिक प्लेटो (Plato) ने पूछा था—

Well, can you imagine God will be willing to lie, whether in words or in deeds or to put forth a phantam of himself. ?—See Plato—Republic in Five Great Dialogues, Translated by B. Jowett, Page 285.

---

१. ऐसा ही भाव बाइबल में है—'उसने कहा, हो जा'।

उत्तरपक्षी—इसलिए परमेश्वर अपने और दूसरों के गुण कर्म स्वभाव के विरुद्ध कुछ भी नहीं कर सकता। जैसे संसार में किसी वस्तु के बनने-बनाने में तीन पदार्थ प्रथम अवश्य होते हैं। एक—बनानेवाला जैसे कुम्हार; दूसरी—घड़ा बननेवाली मिट्टी, और तीसरा उसका साधन, जिससे घड़ा बनाया जाता है। जैसे कुम्हार मिट्टी और साधन से घड़ा बनता है, और बननेवाले घड़े के पूर्व कुम्हार मिट्टी और साधन होते हैं, वैसे ही जगत् के बनने से पूर्व जगत् का कारण प्रकृति और उसके गुण कर्म स्वभाव अनादि हैं। इसलिए यह कुरान की बात सर्वथा असम्भव है ॥२८॥

[काबे को पवित्र स्थान बनाया]

२६—जब हमने लोगों के लिए काबे को पवित्र स्थान सुख देनेवाला बनाया, तुम नमाज के लिए इबराहीम के स्थान को पकड़ो। —मं० १। सि० १। सू० २। आ० १२५

[काबे से पहिले पवित्र स्थान खुदा ने क्यों न बनाया]

समीक्षक—क्या काबे के पहिले पवित्र स्थान खुदा ने कोई भी नहीं बनाया था? जो बनाया था, तो काबे के बनाने की कुछ आवश्यकता न थी। जो नहीं बनाया था, तो बिचारे पूर्वोत्पन्नों को पवित्र स्थान के विना ही रक्खा था? पहिले ईश्वर को पवित्र स्थान बनाने का स्मरण न हुआ होगा ॥२६॥

[इबराहीम के दीन से मत फिरो]

३०—वो कौन मनुष्य है जो इबराहीम के दीन से फिर जावे, सिवाय उसके जिसने अपनी जान

आशय यह है कि परमात्मा न कभी मिथ्याचरण कर सकता है और न अपने जैसा कोई बना सकता है। इङ्गलैण्ड के प्रसिद्ध दार्शनिक बर्टरण्ड रसेल के अनुसार—

He cannot undo the past, Gommit sin, make another God or make himself not exist.
—History of Western Philosophy, P. 480.

अर्थात् परमेश्वर भूतकाल को नष्ट नहीं कर सकता। न स्वयं पाप में प्रवृत्त हो सकता है और न अपने को मारकर दूसरा ईश्वर बना सकता है।

२६. तात्पर्य यह कि हजरत मुहम्मद से पूर्व यहूदी आदि बैतुलमुकद्दस की ओर मुंह करके नमाज पढ़ते थे और मुहम्मद साहब भी पर्याप्त समय तक उसी ओर मुंह करके नमाज पढ़ते थे। फिर ऐसा क्या हेतु उपस्थित हुआ कि इसमें परिवर्तन करना पड़ा। स्वयं कुरान ने इसका हेतु इस प्रकार दिया है—"और जिस किबले पर तुम (पहले) थे हमने उसको इस वास्ते स्थापित किया था कि (जब किबला बदल जाये तो) हमको यह मालूम हो जाये कि कौन है (जो) रसूल का आज्ञाकारी होगा, और कौन अपने उल्टे पाँव फिर जायेगा।···॥१४३॥ हे पैगम्बर! हमने तेरे मुख का फिरना आकाश में देखा सो हम अवश्य तुमको उस किबले की तरफ फेर देंगे, जिससे तुम प्रसन्न हो, बस फेर लो अपना मुख मस्जिद हराम की तरफ और जहाँ कहीं हुआ करो, उसी तरफ अपना मुख फेरो। और जिन लोगों को पुस्तकें मिली हुई हैं, उनको भली प्रकार मालूम है कि किबले का फिरना सत्य और उनके प्रतिपालक (की आज्ञा) से है।···(कुरान शरीफ का हिन्दी अनुवाद, पृष्ठ २३।" समीक्षाकार ने इस १४४वीं आयत को ३०वीं समीक्षा का आधार बनाया है। तात्पर्य यह है कि खुदा ने यह जानने के लिए किबला का परिवर्तन किया कि कौन उसके रसूल का सच्चा अनुयायी है। इससे तो यह ध्वनित होता है कि किबला परिवर्तन से पहले खुदा को इस बात का ज्ञान नहीं था।

३०. 'जान को मूर्ख बनाया'=जो निहायत नादान थे। भले-बुरे की पहचान के लिए नियत

को मूर्ख बनाया ? और निश्चय हमने दुनिया में उसी को पसन्द किया, और निश्चय आखरत में वो ही नेक है। —मं० १। सि० १। सू० २। आ० १३०

[इबराहीम को ही खुदा ने क्यों पसन्द किया ?]

समीक्षक—यह कैसे सम्भव है कि जो इबराहीम के दीन को नहीं मानते, वे सब मूर्ख हैं ? इबराहीम को ही खुदा ने पसन्द किया, इसका क्या कारण है ? यदि धर्मात्मा होने के कारण से किया, तो धर्मात्मा और भी बहुत हो सकते हैं ? यदि विना धर्मात्मा होने के ही पसन्द किया, तो अन्याय हुआ। हाँ, यह तो ठीक है कि जो धर्मात्मा है, वही ईश्वर को प्रिय होता है, अधर्मी नहीं ।।३०।।

[किबले की ओर मुँह करो]

३१—निश्चय हम तेरे मुख को आसमान में फिरता देखते हैं, अवश्य हम तुझे उस किबले को फेरेंगे कि पसन्द करे उसको, बस अपना मुख 'मस्जिदुल्हराम' की ओर फेर, जहाँ कहीं तुम हो अपना मुख उसकी ओर फेर लो। —मं० १। सि० २। सू० २। आ० १४४

[किबले की ओर मुँह करना बुतपरस्ती है]

समीक्षक—क्या यह छोटी बुत्परस्ती है ? नहीं बड़ी।

पूर्वपक्षी—हम मुसलमान लोग बुत्परस्त नहीं हैं, किन्तु बुत्शिकन अर्थात् मूर्त्तों को तोड़नेहारे हैं। क्योंकि हम किबले को खुदा नहीं समझते।

उत्तरपक्षी—जिनको तुम बुत्परस्त समझते हो, वे भी उन मूर्त्तों को ईश्वर नहीं समझते, किन्तु

इसी मापदण्ड के आधार पर ही मौलाना मुहम्मद अली ने यह फतवा दिया था कि निकृष्ट से निकृष्ट मुसलमान भी महात्मा गाँधी से अच्छा है। अगर गाँधी अच्छा होता तो खुदा उसे काफिर क्यों पैदा करता ?

३१. **इसलाम और मूर्त्ति-पूजा**—मुसलमानों की बुतपरस्ती को लक्ष्य करके किसी शायर ने लिखा—

संगे असवद को तो तुम चूमो बसद शौको खुशी।
बुतपरस्ती यारे मन जायज नहीं इसलाम में।।

संगे असवद एक काला पत्थर है, जो काबे भीतर रक्खा है और दुनिया-भर के हज करनेवाले (हाजी लोग) उसका चुम्बन लेते हैं। हदीस (हिन्दुओं के पुराणों के समकक्ष) के अनुसार इसके छूने और चूमने से इन्सान के गुनाह माफ होकर उसे निजात (मुक्ति) मिल जाती है। कहा जाता है कि पहले यह पत्थर सफेद और चमकीला था। पापियों (गुनहगारों) के स्पर्श से यह काला और आभाहीन हो गया (देखो—'तारीखुल् अंबिया' नबियों का इतिहास सन् १२८१, शीर्षक जिक्र इब्राहीम)। यह प्रथा मूर्त्ति-पूजा की याद दिलाने के लिए काफी है। यह तो निश्चित है कि हजरत मुहम्मद के जन्मकाल में अहले अरब मूर्त्ति-पूजक (बुतपरस्त) थे। उन्हीं के विरोध के कारण मुहम्मद साहब को हिजरत करनी पड़ी थी—मक्का छोड़कर मदीना जाना पड़ा था। मदीना में अपनी स्थिति को मजबूत कर एक सेना के साथ मक्का पर आक्रमण किया और भयंकर रक्तपात और लूटपाट के साथ वहाँ की सब मूर्त्तियों को तोड़कर फेंक दिया। पर जब सब मूर्तियों को उठाकर फेंक दिया गया तो मूर्त्ति-पूजा के इस अवशेष

उनके सामने परमेश्वर की भक्ति करते हैं। यदि बुतों के तोड़नेहारे हो, तो उस मस्जिद किबले बड़े बुत् को क्यों न तोड़ा ?

[मुसलमान बुतपरस्ती में पुराणियों से कम नहीं]

पूर्वपक्षी—वाह जी ! हमारे तो किबले की ओर मुख फेरने का कुरान में हुक्म है। और इनको वेद में नहीं है, फिर वे बुत्परस्त क्यों नहीं, और हम क्यों ? क्योंकि हमको खुदा का हुक्म बजाना अवश्य है।

उत्तरपक्षी—जैसे तुह्मारे लिये कुरान में हुक्म है, वैसे इनके लिए पुराण में आज्ञा है। जैसे तुम कुरान को खुदा का कलाम समझते हो, वैसे पुराणी भी पुराणों को खुदा के अवतार व्यासजी का वचन समझते हैं। तुममें और इनमें बुत्परस्ती का कुछ भिन्नभाव नहीं है। प्रत्युत तुम बड़े बुत्परस्त और ये छोटे हैं।

[मक्के की मस्जिद भी एक बड़ा बुत् है]

क्योंकि जबतक कोई मनुष्य अपने घर में से प्रविष्ट हुई बिल्ली को निकालने लगे, तबतक उसके घर में ऊँट प्रविष्ट हो जाय, वैसे ही मुहम्मद साहब ने छोटे को मुसलमान के मत से निकाला। परन्तु

(शिवलिङ्ग) को क्यों छोड़ दिया गया ? पौराणिक मूर्त्ति-पूजकों का कहना है कि शिवलिङ्ग की शक्ति के कारण कोई उसे हिला नहीं सका। परन्तु, यदि दुर्जनतोषन्याय से ऐसा मान लिया जाय तो प्रश्न उठता है कि सोमनाथ आदि पर हुए महमूद गजनवी के आक्रमण के समय शिवजी की वह शक्ति कहाँ चली गई थी ? और काशी के विश्वनाथ के मन्दिर पर हुए आक्रमण के समय अपनी जान बचाने के लिए पास के कुएँ में कूदकर क्यों जा छिपे थे ? क्यों अभी तक भी उस सदमे से उबरकर बाहर निकलने का साहस नहीं जुटा पा रहे ? जनश्रुति है कि जब हजरत उमर संग असबद के पास गये तो उनको यह बात खटकी। वह नहीं चाहते थे कि संग असबद को बोसा देकर (चूमकर) मूर्त्ति-पूजन की प्रथा को जीवित रक्खा जाये। वह कहने लगे—'हे काले पत्थर ! तू उसी प्रकार का एक पत्थर है जैसे अन्य मूर्त्तियाँ हैं। मैं तुझे पूजना नहीं चाहता, किन्तु विवश हूँ। हजरत मुहम्मद साहब ने तुझे बोसा दिया था।' क्या ही अच्छा होता यदि हजरत उमर साहस करके इस पत्थर को भी फेंक देते और इसलामी जगत् से मूर्त्ति-पूजन का कलंक मिट जाता।

मुसलमानों ने मूर्त्ति-पूजा का विरोध करने के बहाने मूर्त्तियों का विरोध किया और मूर्त्ति-भंजक (बुतशिकन) होने पर गर्व करते रहे। उन्होंने यह नहीं समझा कि उनके सर्वश्रेष्ठ सिद्धान्त तौहीद-परस्ती (एकेश्वरवाद) की शत्रु मूर्त्तियाँ नहीं, मूर्त्तियों की पूजा है। इसलिए मूर्त्तियों को तोड़ने से मूर्त्ति-पूजा नहीं जा सकती। और तौहीद की शत्रु मूर्त्ति-पूजा केवल पत्थर की पूजा नहीं है। सितारों की पूजा, वृक्षों की पूजा, नदियों की पूजा, पहाड़ों की पूजा, मनुष्यों की पूजा, कबरों की पूजा—ये सब प्रकार की पूजाएँ मूर्त्ति-पूजा हैं और ईश्वर पूजा के मार्ग में बाधक हैं। गंगा-यमुना की पूजा छुड़ाने के लिए उन्हें सुखाना आवश्यक नहीं है। सूर्य की उपासना छुड़ाने के लिए सूर्य को मिटाने की बात सोचना मूर्खता होगी। काशी के विश्वनाथ मन्दिर के एक भाग को तोड़ देना मुगल सम्राट् औरंगजेब के लिए आसान था। किन्तु मूर्त्ति-पूजा तो ज्यों-की-त्यों बनी रही। मुसलमानों ने मूर्त्ति-भंजन को सबाब मानकर पत्थर की दृश्यमान मूर्त्ति को तो तोड़ दिया, किन्तु भीतर बैठी उसकी भावना को न मिटा सके और उसने अनेक रूपों में बाहर निकलकर उन्हें बुरी तरह जकड़ लिया।

बड़ा बुत् जोकि पहाड़ के सदृश मक्के की मस्जिद है, वह सब मुसलमानों के मत में प्रविष्ट करा दी। क्या यह छोटी बुत्‌परस्ती है ?

[मुसलमानों को मूर्त्तिपूजा के खण्डन का अधिकार नहीं]

हाँ, जो हम लोग वैदिक हैं, वैसे ही तुम लोग भी वैदिक हो जाओ, तो बुत्‌परस्ती आदि बुराइयों से बच सको, अन्यथा नहीं। जब तक अपनी बड़ी बुत्‌परस्ती को न निकाल दो, तबतक तुमको दूसरे छोटे

सिजदा—मूर्ति न होने पर भी मुसलमानों में मूर्त्ति-पूजा में सहायक क्रियाएँ ज्यों-की-त्यों विद्यमान हैं। पहली सहायक क्रिया है 'सिजदा' (सिर झुकाना)। मुसलमान नमाज पढ़ते हुए जिस प्रकार घुटने टेकता और सिर झुकाता—सिजदा करता है, यह सब क्रियाएँ तो हैं जो एक हिन्दू मूर्त्तियों के सामने करता है। ईश्वर तो सबके हृदय के भीतर विद्यमान है, उसके सामने कैसे झुका जा सकता है ? समस्त मूर्त्ति-पूजकों के मन्दिरों में (चाहे वे किसी भी सम्प्रदाय के हों) प्राय: समान रूप से उठक-बैठक होती है। भेद केवल इतना है कि मुसलमान के सामने मूर्त्ति नहीं होती परन्तु मूर्त्ति-पूजा का विधान तो वैसा ही है। वैदिककाल में जब मूर्त्ति-पूजा नहीं थी तो न कहीं मूर्त्तियाँ थीं और न मूर्त्तियों के घर (मन्दिर)। ईश्वर के सर्वव्यापक होने से, जहाँ कहीं मनुष्य ईश्वर का स्मरण करता वही उसका उपासनालय था। वस्तुत: लोग योग द्वारा समाधिस्थ हो अपने हृदय में ही ईश्वर की भावना करते थे। समस्त संसार अल्लाह का घर था। उसका कोई विशेष घर न था। जब स्थानविशेष—क्षीरसागर, कैलाश पर्वत, चौथा आसमान, सातवाँ आसमान आदि के रूप में ईश्वर के घर की कल्पना की गई तो इतनी दूर जाकर उसकी पूजा-अर्चना करने में असुविधा समझकर धरती पर ही जगह-जगह उसके लिए मन्दिर बनाकर उनमें भगवान् को ला बिठाया। उन्हीं में से एक क़ाबा का बुतखाना है, जिसमें शिवलिङ्ग जैसे संगे असवद के रूप में खुदाबन्द ताला विराजमान हैं। जब मस्जिदें बन गईं और वहाँ जाकर या अन्यत्र काबे की तरफ मुँह करके सिजदा किया तो मानो मूर्त्ति-पूजकों की करीब-करीब सारी नकल हो गई।

परिक्रमा (तवाफ)—हिन्दुओं के मन्दिरों में परिक्रमा करने की प्रथा है। काबे की भी उसी प्रकार परिक्रमा की जाती है। जब काबा मूर्त्ति-पूजकों का उपासनालय था और उसकी मूर्त्तियों की उपासना की जाती थी तो उनकी परिक्रमा भी आवश्यक थी। मुसलमानों ने काबे की परिक्रमा करके मूर्त्ति-पूजा में अपेक्षित उस परम्परा को बनाये रक्खा है, भले ही किंचित् अन्तर के साथ।

पशुबलि—यह भी मूर्त्तिपूजकों की प्रथा है। वे मूर्त्तियों के समक्ष भाँति-भाँति के भोजन रखते हैं। उनकी धारणा है कि भोजन का सूक्ष्म भाग देवता स्वयं खा जाते हैं और स्थूल भाग प्रसाद के रूप में पुजारियों आदि के लिए रह जाता है। इसी प्रकार जैसे हम लोग समय-समय पर विशेष प्रकार का भोजन करते हैं, वैसे ही इन देवी-देवताओं के लिए भी विशेष अवसरों पर विशेष भोजन की व्यवस्था होती है और वह विशेष भोजन प्राय: पशुओं का मांस होता है। इसे वे (मुसलमान) कुर्बानी का नाम देते हैं। ईद के नाम से एक त्यौहार तो इसी के लिए मखसूस है—बकर ईद। उस दिन खुदा के नाम पर—उसे खुश करने के लिए करोड़ों मूक प्राणियों के गले पर छुरी चल जाती है और खुदा के साथ खुदा के बन्दे भी खुश होते हैं। अपने ही पैदा किए हुए पशुओं को मरवाकर खुदा खुश होता है। और इस सबको इबादत का नाम दिया जाता है।

कबरपरस्ती—कबरें जड़ हैं पत्थर के समान। उनके भीतर दफन हैं लाशें उनकी, जो जीवात्मा के निकल जाने से निर्जीव हो गये थे। अब उनमें और पत्थरों में कोई भेद नहीं है। लेकिन सब मुसलमान

बुत्परस्तों के खण्डन से लज्जित होके निवृत्त[1] रहना चाहिए। और अपने को बुत्परस्ती से पृथक् करके पवित्र करना चाहिए ॥३१॥

[अल्लाह के मार्ग में मारे गये जीवित हैं]

३२—जो लोग अल्लाह के मार्ग में मारे जाते हैं, उनके लिए यह मत कहो कि वे मृतक हैं, किन्तु वे जीवित हैं। —मं० १। सि० २। सू० २। आ० १५४

[ईश्वर के मार्ग में मरने-मारने की क्या आवश्यकता ?]

समीक्षक—भला ईश्वर के मार्ग में मरने-मारने की क्या आवश्यकता है ? यह क्यों नहीं कहते हो कि यह बात अपने मतलब सिद्ध करने के लिए है ? कि यह लोभ देंगे तो लोग खूब लड़ेंगे, अपना विजय होगा। मरने से न डरेंगे, लूटमार करने से ऐश्वर्य प्राप्त होगा, पश्चात् विषयानन्द करेंगे। इत्यादि स्वप्रयोजन के लिए यह विपरीत व्यवहार किया है ॥३२॥

कबरों पर फातिहा पढ़ते और चढ़ावा चढ़ाते हैं। बहुत-से मुसलमान विद्वान् कहते सुने जाते हैं कि—इसलाम में कबरपरस्ती निषिद्ध है और जो लोग मदीने में हजरत मुहम्मद की कबर पर माथा टेकने जाते हैं, उन्हें वहाँ की सरकार जाने नहीं देती। परन्तु सच तो ये है कि दुनिया-भर के हाजी हज करने केवल इसलिए जाते हैं कि काबे और मदीने में इब्राहीम और मुहम्मद साहब के स्मारक हैं और उनके दर्शन से बहिश्त मिलेगा। वस्तुतः जैसे मन्दिरों के पुजारियों को मूर्त्ति-पूजा से लाभ पहुँचता है, वैसे ही कबरों, मकबरों, रोजों आदि के मुजाविरों (रखवाली करनेवालों) को कबरपरस्ती से लाभ पहुँचता है। इसलिए वे नहीं चाहते कि कबरपरस्ती बन्द हो।

यदि मुसलमानों को वस्तुतः मूर्त्ति-पूजा छोड़नी होती और हज़रत मुहम्मद इसे बुरा समझते तो मूर्त्तियों के घर काबे पर अधिकार करने के लिए हजरत मुहम्मद सेना के साथ मक्का पर आक्रमण न करते और वहाँ हजारों लोगों का खून न बहाते। निराकार ईश्वर की पूजा तो कहीं भी की जा सकती थी।

३२. उपनिषद् में कहा है—'परोक्षप्रिया इव हि देवाः प्रत्यक्षद्विषः'—तात्पर्य यह है कि दार्शनिक या सच्चे अध्यात्म के प्रेमी तो कम होते हैं। सर्वसाधारण तो लौकिक विलासी जीवन के इच्छुक होते हैं। हज़रत मुहम्मद व्यावहारिक व्यक्ति थे। उन्होंने साधारण अरबों में से अपना साथ देनेवालों को ललचाने और विरोधियों को डराने के लिए स्वर्ग और नरक की व्यवस्था की कल्पना की। अपनी खातिर लड़ाई में मरनेवालों को 'अल्लाह की राह में मरनेवाले' घोषित करके उन्हें स्वर्ग में भेजने का विश्वास दिलाया। अरब जैसे गर्म रेतीले मैदान में एक-एक बूंद पानी के लिए तरसनेवालों के लिए दूध, शहद और शराब से लबालब नहरें, अच्छे-से-अच्छे भोज्य पदार्थ, धरती तक लटकते हुए रस भरे अंगूर, तरह-तरह के मेवे, सदा जवान रहनेवाली हूरें, गिलमान (सदा लड़के बने रहनेवाले मोती जैसे सुन्दर लड़के)—इससे अधिक आदमी को और क्या चाहिए ? दूसरी ओर नरक में लपलपाती आग, पीने को उबलता हुआ पीप मिला पानी, खाने को थूहर, तले जाने के लिये खौलते हुए तेल के कड़ाहे—इससे अधिक डरानेवाली चीज और क्या हो सकती है ? इस प्रकार नरक के भय और स्वर्ग के प्रलोभन के सहारे (चाहे वे सब कल्पित ही थे) लोग मुहम्मद साहब के पीछे हो लिये।

---

१. अर्थात् मूर्त्तियों को तोड़नेरूप कर्म से निवृत्त रहना चाहिये।

[शैतान के पीछे मत चलो]

३३—और यह कि अल्लाह कठोर दुःख देनेवाला है। शैतान के पीछे मत चलो, निश्चय वो तुम्हारा प्रत्यक्ष शत्रु है। उसके विना और कुछ नहीं कि बुराई और निर्लज्जता की आज्ञा दे, और यह कि तुम कहो अल्लाह पर जो नहीं जानते। —मं० १। सि० २। सू० २। आ० १६५, १६८, १६९

[क्या अन्य मतस्थ धर्मात्माओं को भी खुदा कष्ट देगा ?]

समीक्षक—क्या कठोर दुःख देनेवाला दयालु खुदा पापियों पुण्यात्माओं पर है ? अथवा मुसलमानों पर दयालु, और अन्य पर दयाहीन है ? जो ऐसा है, तो वह ईश्वर ही नहीं हो सकता। और पक्षपाती नहीं है, तो जो मनुष्य कहीं धर्म करेगा उस पर ईश्वर दयालु, और जो अधर्म करेगा उसपर दण्डदाता होगा। फिर बीच में मुहम्मद साहब और कुरान को मानना आवश्यक न रहा।

[पथभ्रष्ट करनेवाले शैतान को खुदा ने क्यों बनाया ?]

और जो सबको बुराई करानेवाला मनुष्यमात्र का शत्रु शैतान है, उसको खुदा ने उत्पन्न ही क्यों किया ? वह क्या भविष्यत् की बात नहीं जानता था ? जो कहो कि जानता था, परन्तु परीक्षा के लिए बनाया, तो भी नहीं बन सकता। क्योंकि परीक्षा करना अल्पज्ञ का काम है। सर्वज्ञ तो सब जीवों के अच्छे-बुरे कर्मों को सदा से ठीक-ठीक जानता है।

[जो शैतान सबको बहकाता है, उसे कौन बहकाता है ?]

और शैतान सबको बहकाता है, तो शैतान को किसने बहकाया ? जो कहो कि शैतान आप-से-आप बहकता है, तो अन्य भी आप-से-आप बहक सकते हैं। बीच में शैतान का क्या काम ? और जो खुदा

---

३३. शैतान को अल्लाह ने नाहक बदनाम कर रक्खा है। वास्तव में दोषी अल्लाह है, शैतान नहीं। पहली बात तो यह है कि कुरान के अनुसार शैतान को पैदा करनेवाला स्वयं अल्लाह है। फिर, भला बुरा जैसा भी है, वह अपने कर्मों से नहीं बना, अपितु पैदायश से पहले ही अल्लाह ने जैसा उसे बना दिया था, वह वैसा ही था। फिर उसे बहकाया भी अल्लाह ने ही। यह तो शैतान की तारीफ की बात है कि खुदा या अल्लाह के बहकाने पर भी वह बहका नहीं और उसने जो कुछ किया वह मनुष्यमात्र की भलाई के लिए किया। उसका पहला काम था आदम को अदन के बाग में खड़े एक वृक्ष विशेष का फल खाने की प्रेरणा करना। आदम नहीं माना। तब भी वह निराश होकर चुप नहीं बैठा। उसने उसकी पत्नी हव्वा को समझाया। उसकी समझ में आ गया तो उसने (हव्वा ने) फल तोड़कर आधा स्वयं खाया और आधा अपने पति आदम को खिलाया। वह ज्ञान का वृक्ष था। उसका फल खाते ही दोनों की आँखें खुल गईं—दोनों को ज्ञान हो गया। शैतान ने क्या बुरा किया ? ज्ञान देना तो बड़े पुण्य का कार्य है। मनुस्मृति के अनुसार तो यह सबसे बड़ा दान है—'सर्वेषामेव दानां ब्रह्मदानं विशिष्यते'। किन्तु क्योंकि अल्लाह उस आदिम पुरुष को अज्ञानी रखना चाहता था, इसलिए उसे शैतान का यह काम अच्छा नहीं लगा, उसे अदन के बाग से निकाल दिया गया। हवन करते बेचारे के हाथ जल गये। यदि शैतान ने अपने को संकट में डालकर हमारे आदि पुरुष को ज्ञान न दिया होता तो हम सब, जो उसकी सन्तान हैं, अज्ञानी ही पैदा होते रहते।

दूसरा आरोप शैतान पर इस रूप में है—अल्लाह ने आदम को नाम सिखाये (नाम सिखाने की व्याख्या हम पूर्व १०वें वाक्य की समीक्षा के अन्तर्गत कर आये हैं) अर्थात् सृष्टि के आदि में खुदा ने

ही ने शैतान को बहकाया, तो खुदा शैतान का भी शैतान ठहरेगा। ऐसी बात ईश्वर की नहीं हो सकती। और जो कोई बहकाता है, वह कुसङ्ग तथा अविद्या से भ्रान्त होता है ॥३३॥

[मुर्दार लोहू और सूअर का गोश्त हराम]

३४—तुम पर मुर्दार लोहू और गोश्त सूअर का हराम है, और अल्लाह के विना जिस पर कुछ पुकारा जावे।'[1]

—मं० १। सि० २। सू० २। आ० १७३

[क्या मनुष्य का मांस खाया जा सकता है ?]

समीक्षक—यहाँ विचारना चाहिए कि मुर्दा चाहे आप-से-आप मरे वा किसी के मारने से, दोनों बराबर हैं। हाँ, इनमें कुछ भेद भी है, तथापि मृतकपन में कुछ भेद नहीं। और जब एक सूअर का निषेध किया, तो क्या मनुष्य का मांस खाना उचित है ?

आदि पुरुष को ज्ञान दिया। तत्पश्चात् फरिश्तों से कहा कि आदम को सिजदा (नमन) करो। सबने खुदा का कहना मानकर आदम को नमन किया। परन्तु शैतान को प्रेरणा हुई—'यान्यस्माकं सुचरितानि तानि त्वयोपास्यानि नो इतराणि'—(गुरु के भी अनुचित आदेश का पालन नहीं करना चाहिए)। सो उसने खुदा की आज्ञा होने पर भी आदम को सिजदा करने से इन्कार कर दिया। उसने स्पष्ट कह दिया—'हे परवरदिगार ! अल्लाह को छोड़कर कोई दूसरा मेरा उपास्य देव नहीं है, इसलिए मेरा सिर सिर्फ आपके सामने झुक सकता है। आदम मनुष्य है, इसलिए मैं उसे सिजदा करने का गुनाह नहीं करूँगा।' यह थी शैतान की अपने सिद्धान्तों के प्रति निष्ठा और कर्त्तव्य-परायणता। 'शैतान के पीछे मत चलो, वह तुम्हारा शत्रु है'—अल्लाह का यह आदेश शैतान की लोकप्रियता के कारण ईर्ष्याप्रेरित था।

३४. मांसाहार के प्रसंग में सूरते बकर आयत १७४ में लिखा है—

"वास्तव में तुम्हारे ऊपर मृतक शरीर का प्रयोग हराम (निषिद्ध) किया गया है। सूअर का लहू व गोश्त भी निषिद्ध है और वह भी निषिद्ध है जिसपर खुदा के सिवाय और कोई नाम पुकारा जाय।"

सूरते मायदा रकूअ १ में आया है—"हराम (निषिद्ध) किया गया तुम पर मुर्दार (मृत शरीर) लहू और गोश्त सूअर का और मांस जिसके वध पर अल्लाह के सिवा कुछ और पढ़ा जाए और जो घुटकर मर गया हो और जो लाठी व पत्थर की चोट से मर गया हो और जो गिरकर या जो सींग मारने से या जानवरों के खाये जाने से मर गया हो।"

'उसपर अल्लामियाँ का नाम लिया गया हो' का अर्थ है वध करते समय 'अल्ला हो अकबर' या 'बिस्मिल्ला हिर्रहमानिर्रहीम' पढ़ना। इधर अल्लाह को 'रहीम और रहमान' (कृपालु व दयालु) कहते जाना और उधर मूक पशु के गले पर छुरी फेरते जाना ! वचन और कर्म में इतना वैषम्य ! यह अपने किये पाप में अल्लाह को उसकी मर्जी के विना भागीदार बनाना है। ऐसे इन्सानों से तो वे हैवान कहीं अच्छे हैं, जो दूसरे प्राणी को मारकर खाते तो हैं, किन्तु ईश्वर का नाम बदनाम नहीं करते। हराम तो और भी कई चीजें हैं—जैसे इन्सान का गोश्त, हिंसक पशुओं का गोश्त आदि आदि। हिंसक पशुओं के मांस के निषेध के लिए यह तर्क दिया जाता है कि इसके खाने से हिंसक जीवों के से गुण आ जाते हैं।

---

१. यही बात आगे समीक्ष्यांश ६५ में भी कही है।

[क्या ईश्वर दूसरों को पुत्रवत् नहीं मानता ?]

क्या यह बात अच्छी हो सकती है कि परमेश्वर के नाम पर शत्रु आदि को अत्यन्त दुःख देके प्राणहत्या करनी ? इससे ईश्वर का नाम कलङ्कित हो जाता है। हाँ, ईश्वर ने विना पूर्वजन्म के अपराध के मुसलमानों के हाथ से दारुण दुःख क्यों दिलाया ?[१] क्या उनपर दयालु नहीं है ? उनको पुत्रवत् नहीं मानता ?

[उपकारक गाय आदि पशुओं को मारना महापाप है]

जिस वस्तु से अधिक उपकार होये, उन गाय आदि के मारने का निषेध न करना, जानो हत्या

इसपर मिर्जा नादिर बेग ने बड़ा सटीक प्रश्न किया है कि ऐसा है तो इन हिंसक पशुओं में हिंसक गुण कैसे आ गये ? क्योंकि ये अधिकतर अहिंसक पशुओं के मांस पर जीते हैं। हम भी तो प्रायः अहिंसक (बकरा, गाय, भैंस आदि शाकाहारी) पशुओं के मांस से ही हिंसक बनते जाते हैं और कहते भी जाते हैं कि हिंसक पशुओं के गुणों से बचना चाहिए। क्या यह ईश्वरीय सन्देश की कमी नहीं है कि उसमें निषिद्ध वस्तुओं की सूची अधूरी दी गई है ? जो कुरान को पूर्ण ईश्वरीय ज्ञान मानते हैं, क्या वे उसमें निषिद्ध वस्तुओं के अतिरिक्त अन्य सब वस्तुओं को हलाल (वैध) समझें ?

भाष्यकार मुहम्मद फारुख खाँ सूरते मायदा पर अपनी टिप्पणी में कहते हैं—'मूल में 'अनआम' शब्द आया है, जो ऊँट, गाय, भेड़ और बकरी के लिए बोला जाता है। इस हुक्म से वे सभी जानवर हलाल ठहरते हैं जो मांसाहारी न हों वल्कि चरने-चुगनेवाले हों और अपनी दूसरी विशेषताओं में ऊँट, भेड़, गाय और बकरी से मिलते-जुलते हों।' सूरते बकर की टिप्पणी में उन्होंने कहा है—"यहाँ सारे जानवरों को सामने रखकर बात नहीं की जा रही है, बल्कि बात केवल उन जानवरों के विषय में की जा रही है, जिनके बारे में मुसलमानों, यहूदियों और ईसाइयों के बीच मतभेद था।"

आर्यसमाज गुजरात (पंजाब) में पं० लेखरामजी का मुसलमानों के 'हराम-हलाल' पर व्याख्यान हो रहा था। समाप्ति पर प्रश्नोत्तर का समय दिया गया। मौलवी बाकर हुसैन उठे और बोले—"पण्डित साहेब ! आपने जो हमारे हराम-हलाल के मसले पर एतराज (आक्षेप) किये हैं, वे ठीक नहीं हैं। आपने फरमाया है कि इसलाम में शेर, चीते जैसे जबरदस्त जानवर हराम करार दिये गये हैं। क्या आपको मालूम है कि हमारे मजहब में चुहिया भी हराम है। क्या वह इसलिए हराम करार दी गई कि वह जबरदस्त थी ?" पण्डितजी ने पूछा कि मौलवीसाहब सुन्नी हैं या शिया। यह मालूम होने पर कि मौलवीसाहब शिया हैं, पण्डित लेखराम बोले—"मौलवीसाहब ! आप शिया होकर चूहे की बजुर्गी और जबरदस्ती से इन्कार कर रहे हैं। यही नामुराद चूहा था, जिसने मैदान कर्बला में पानी की सब मशकें काट दी थीं और बेचारे इमाम हुसैन और उनकी फौज को प्यासा मरवा दिया था। अगर ऐसे दो-तीन चूहे और पैदा हो जायें तो अरब और ईरान में कई कर्बला की घटनायें हो जायें और मुसलमानों का सफाया हो जाये।"

यद्यपि कुरान में अनेक स्थलों में पूर्वापर जन्म का उल्लेख मिलता है, मुसलमान विद्वानों की अभी तक यही मान्यता है कि वर्त्तमान जन्म ही सब-कुछ है, न इससे पहले कभी हम दुनिया में आये थे और न इसके बाद कभी आयेंगे। इसीलिए ग्रन्थकार ने यहाँ 'विना पूर्वजन्म के अपराध के' लिखा है। तात्पर्य यह है कि निरपराध पशुओं की हत्या का आदेश करना खुदा के लिए शोभाजनक नहीं है। सूअर

१. यह पङ्क्ति कुरान के मतानुसार (पुनर्जन्म न मानकर) लिखी है।

कराकर खुदा जगत् का हानिकारक है। और हिंसारूप पाप से कलङ्कित भी हो जाता है। ऐसी बातें खुदा और खुदा के पुस्तक की कभी नहीं हो सकतीं ॥३४॥

[रोजे की रात हलाल]

३५—रोजे की रात तुह्मारे लिये हलाल की गई कि मदनोत्सव करना अपनी बीबियों से, वे तुह्मारे वास्ते पर्दा हैं और तुम उनके लिए पर्दा हो, अल्लाह ने जाना कि तुम चोरी करते हो अर्थात् व्यभिचार, बस फिर अल्लाह ने क्षमा किया तुमको, बस उनसे मिलो और ढूंढो जो अल्लाह ने तुह्मारे लिए लिख दिया है अर्थात् सन्तान। खाओ-पिओ यहाँ तक कि प्रकट हो तुम्हारे लिए काले तागे से सुफेद तागा वा रात से जब दिन निकले। --मं० १। सि० २। सू० २। आ० १८७

[रोजा पौराणिकों के चान्द्रायण व्रत का विकृत रूप है]

समीक्षक—यहाँ यह निश्चित होता है कि जब मुसलमानों का मत चला, वा उससे पहिले किसी ने किसी पौराणिक को पूछा होगा कि 'चान्द्रायणव्रत' जो एक महीने भर का होता है, उसका विधि क्या है? वह शास्त्रविधि जोकि मध्याह्न में[1] चन्द्र की कला घटने-बढ़ने के अनुसार ग्रासों को घटाना-बढ़ाना,

---

के मांस को खाने के निषेध का समर्थन करते हुए मौलवी सना-उल्लाह लिखते हैं—"ऐसा ही सूअर का गोश्त मुजरे सेहत है, खसूसन गर्म मुल्कों में (ऐसा ही सूअर का मांस भी स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है, विशेषत: उष्ण देशों में)।" मौलाना के इस समाधान का यह अर्थ है कि शीतप्रधान (ठण्डे) प्रदेशों में सूअर का मांस खाना निषिद्ध (हराम) नहीं है। पर हम समझते हैं, कोई भी मुसलमान मौलाना के इस समाधान को स्वीकार नहीं करेगा।

३५. सूरते बकर की १८७वीं आयत में रोजे के सम्बन्ध में लिखा है--

"तुम्हारे लिए रोजे की रातों में अपनी स्त्रियों के पास जाना अवर्जित (Lawful=वैध) है। वे तुम्हारे लिए वस्त्रसमान हैं और तुम उनके लिए वस्त्र (परदा) समान हो। अल्लाह को मालूम हो गया कि तुम लोग अपने आपसे कपट करते थे तो उसने तुम पर कृपा की और तुम्हें क्षमा किया। तो अब तुम स्त्रियों से मिलो और अल्लाह ने जो कुछ तुम्हारे लिए नियत किया है, उसके इच्छुक बनो और खाओ-पियो, यहाँ तक कि प्रभात की सफेद धारी तुम्हें रात की काली धारी से स्पष्ट अलग दिखाई देने लगे। फिर रात के आने तक रोजा पूरा करो और जब तुम मस्जिदों में 'एतकाफ' में हो तो उनसे सम्भोग न करो। यह अल्लाह की नियत की हुई सीमाएँ हैं, इनके निकट न जाना। इस प्रकार अल्लाह अपनी आयतें लोगों के लिए स्पष्ट करता है ताकि वे अल्लाह का डर रखनेवाले बनें।"

भाष्यकार मुहम्मद फारुख खाँ की टिप्पणी के अनुसार इस आयत के द्वारा अल्लाह ने मुसलमानों को 'रोजे' (व्रत=उपवास) के पवित्र दिनों में भी स्त्री-सहवास की अनुमति दो कारणों से दी। एक—पति-पत्नी में चोली-दामन का साथ है, दोनों एक-दूसरे के लिए शान्ति (mutual comfort) का कारण बनते हैं। दो—रमजान की रातों में स्त्रियों के पास जाना हराम नहीं था, परन्तु मुसलमान भूल से ऐसा समझते थे और इसलिए ऐसा (सम्भोग) करते हुए अपने को अपराधी मानते थे। जब अल्लाह को अपने बन्दों की इस करतूत (चोरी) का पता चला तो उसे वैधता प्रदान करके अर्थात् अपराध को Legalise करके उन्हें अपराध-बोध से मुक्ति दिलाने के लिए उसने यह आयत उतारी।

---

१. यहाँ 'मध्याह्न में' पाठ व्यर्थ-सा है। इसका चन्द्र की कला के घटने-बढ़ने से सम्बन्ध नहीं है। भोजनकाल के साथ इसका सम्बन्ध है, सो आगे यथास्थान पढ़ा ही है।

और मध्याह्न दिन में खाना लिखा है, उसको न जानकर कहा होगा कि चन्द्रमा का दर्शन करके खाना। उसको इन मुसलमान लोगों ने इस प्रकार कर लिया।

[यह क्या व्रत, दिन में न खाया, रात को खा लिया ?]

परन्तु व्रत में स्त्रीसमागम का त्याग है। वह एक बात खुदा ने बढ़कर कह दी कि तुम स्त्रियों का भी समागम भले ही किया करो, और रात में चाहे अनेक बार खाओ। भला यह व्रत क्या हुआ ? दिन को न खाया, रात को खाते रहे। यह सृष्टिक्रम से विपरीत है कि दिन में न खाना रात में खाना ॥३५॥

[कत्ल से कुफ बुरा]

३६—अल्लाह के मार्ग में लड़ो उनसे जो तुमसे लड़ते हैं। मार डालो तुम उनको जहाँ पाओ। कत्ल से कुफ बुरा है। यहाँ तक उनसे लड़ो कि कुफ न रहे, और होवे दीन अल्लाह का। उन्होंने जितनी जियादती करी तुम पर उतनी ही तुम उनके साथ करो।

—मं० १। सि० २। सू० २। आ० १९०, १९१, १९३, १९४

जैनी लोग दिन में खाते हैं, सो ठीक है। परन्तु मुसलमानों ने इसके विपरीत रात का नियम बना लिया। जो काफ़िर (हिन्दू) करें उसके उलट करना वे अपना कर्त्तव्य समझते हैं। अन्यथा रात्रि में खाना प्रकृति के विरुद्ध है। चिकित्साशास्त्र की दृष्टि से समय-समय पर पाचन तन्त्र को आराम देना सर्वथा उचित है। उपवास का विधान किसी-न-किसी रूप में सभी मत-मतान्तरों में मिलता है। सूरते बकर आयत १८३ में इन्सान को परहेजगार बनाने में उपवास (रोजा) की उपयोगिता का संकेत किया है। वासनाओं को शिथिल करने में निराहार रहना सहायक है, किन्तु उपवास की अवधि समाप्त होने पर ठूंस-ठूंस कर खाने से तो उसका विपरीत प्रभाव पड़ता है। परहेजगार बनने के लिए रोजे के दिनों में सम्भोग का वर्जित होना ही श्रेयस्कर है। अपने विधान को कठोरता से लागू न करके उसमें संशोधन करके अल्लाह ने बन्दों के आगे हथियार डालकर अच्छा नहीं किया।

इसलाम इबादत के लिए क्षितिज में स्पष्ट रूप से दिखाई देनेवाले चिह्नों के अनुसार समय नियत करता है। कहा जाता है कि ध्रुवों के निकट जहाँ रात और दिन कई-कई महीनों के होते हैं, वहाँ भी चक्र चाहे रात का हो या दिन का, प्रत्येक अवस्था में प्रातःकाल और सन्ध्या के लक्षण क्षितिज पर नियामत रूप से दिखाई देते हैं।

३६. हजरत मुहम्मद का जन्म मक्का में कुरैश वंश में हुआ था। वह एक अच्छी सूझ-बूझ वाले मनुष्य थे। २५ वर्ष की आयु में वह ४० वर्ष की अत्यन्त सम्पन्न औरत से विवाह करने में सफल हो गये। पत्नी खदीजा साधक और मुहम्मद साहब सिद्ध। कुछ ही दिनों में उन पर कुरान की आयतें उतरने लगीं और मुहम्मद साहब नबूवत का दावा करने लगे। मक्का के लोगों को वह अपने नबी होने का यकीन न दिला सके। मक्का में दाल गलती न देख वह मक्का से भाग खड़े हुए और मदीने में जा बसे। मक्के से मदीने आने को हिजरत का नाम दिया गया। यहाँ उन्हें कुछ जाँबाज़ साथी मिल गये। ३१३ आदमियों को साथ लेकर मदीने से ८० मील दूर बद्र नाम के गाँव पर मुहम्मद साहब ने धावा बोल दिया। उन्हें जीत प्राप्त हुई। लड़ाई में जो लोग कैद होकर आये, वे दो-दो, चार-चार करके मुसलमानों में बाँट दिये गए। बद्र के बाद क्रमशः उहुद, खदक़, ख़ैबर आदि की छोटी-छोटी लड़ाइयों के बाद लगभग दस हजार मुसलमानों की सेना लेकर मक्का पर चढ़ाई की। युद्ध में सफल होकर जब वह मक्का में दाखिल हुए तो हजरत मुहम्मद ने सबसे पहला काम काबे में रक्खी ३६० मूर्त्तियों को निकाल फेंकने और

[कुरान की इस शिक्षा से आपस में विरोध ही बढ़ा]

समीक्षक—जो कुरान में ऐसी बातें न होतीं, तो मुसलमान लोग इतना बड़ा अपराध, जोकि अन्य मतवालों पर किया है, न करते। और विना अपराधियों को मारना उन पर बड़ा पाप है।

[अन्य मतस्थों को मारने की बात अच्छी नहीं]

जो मुसलमान के मत का ग्रहण न करना है, उसको 'कुफ' कहते हैं। अर्थात् कुफ से कत्ल को मुसलमान लोग अच्छा मानते हैं। अर्थात् जो हमारे दीन को न मानेगा, उसको हम कत्ल करेंगे। सो करते ही आये। मजहब पर लड़ते-लड़ते आप ही राज्य आदि से नष्ट हो गये।

दीवारों पर बने देवी-देवताओं के चित्रों को मिटाने का किया। इस विवरण को पढ़ने से स्पष्ट हो जाता है कि संसार भर में इसलाम का प्रचार-प्रसार एक हाथ में कुरान और दूसरे में तलवार लेकर ही हुआ है। विवेच्य आयत और उसकी समीक्षा में ग्रंथकार ने जिहाद नाम से प्रसिद्ध इसलाम की धर्मप्रचार की इसी कुनीति की आलोचना की है।

जिहाद के सिद्धान्त ने इसलाम को तलवार का धर्म बना दिया है। इसलामी परम्पराओं के अनुसार मुसलमानों के लिए, यदि उनमें शक्ति हो तो अमुस्लिमों पर आक्रमण करना, उनसे लड़ना और उन्हें मार डालना अथवा वे जज़िया (धार्मिक कर) देना स्वीकार करें तो गुलाम बनाकर रखना धार्मिक कर्त्तव्य है, जिसका पालन करने के बदले बहिश्त में उनके लिए स्थान सुरक्षित है। कुरान में स्थान-स्थान पर मुसलमानों को अपने कर्त्तव्य का स्मरण कराया गया है—

(१) ऐ ईमानवालो ! मत चुनो काफिरों में से मित्र, केवल मुसलमानों को ही मित्र बनाओ।
—सूरते निसा, आयत १३९

(२) यदि किसी भय के कारण बचाव के विचार से मित्रता का वादा भी कर लिया जाय और दिल में शत्रुता रहे तो कोई हानि नहीं। काफ़िर की मित्रता खुदा के क्रोध व अप्रसन्नता का कारण है।
—जलालैन की टिप्पणी।

(३) हे ईमानवालो ! अपने बाप और अपने भाइयों को अपना मित्र न बनाओ, यदि वे 'ईमान' की अपेक्षा 'कुफ़' को पसन्द करें और तुममें से जो कोई उनसे मित्रता का नाता जोड़ेगा, तो ऐसे लोग ज़ालिम होंगे।
—सूरते तोबा, आयत २३

(४) और लड़ो उनसे यहाँ तक कि शेष न रहे काफ़िरों का उपद्रव व उनका वर्चस्व समाप्त हो जाये और सारा समुदाय अल्लाह के दीन (मत) में मिल जाये। —सूरते इन्फाल, आयत ३८

(५) वास्तव में खुदा अपनाता है उनको जो गिरोह बनाकर उसके मार्ग में युद्ध करते हैं।
—सूरते सफ़, आयत ४

(६) ऐ पैगम्बर ! मुसलमानों को काफिरों से लड़ने को उत्तेजित कर। यदि मुकाबले पर जमनेवाले तुममें बीस आदमी भी होंगे तो वह दो सौ पर विजय पा लेंगे। —टिप्पणी जलालैन

(७) ऐ पैगम्बर ! काफ़िरों से धर्म युद्धकर। उन पर विजय पाने के लिए उन पर कड़ाई कर, उन्हें झिड़क व क्रोध कर।
—सूरते तहरीम

(८) मुसलमान धर्माचार्यों के मत में युद्ध केवल आत्मरक्षा के लिए ही कर्त्तव्य नहीं, अपितु, यदि सामर्थ्य हो तो स्वयं दूसरों पर आक्रमण करने का भी आदेश है। कुरान ने फ़रमाया है—

मैं काफ़िरों के दिल में आतंक डालूंगा। अब मारो उनकी गर्दनों पर और काटो उनकी बोटी-बोटी।
—सूरते इन्फ़ाल, आयत ९

[वैर से वैर कभी शान्त नहीं होता]

और उनका मन अन्य मतवालों पर अति कठोर रहता है। क्या चोरी का बदला चोरी है? कि जितना अपराध हमारा चोर आदि चोरी से करें, क्या हम भी चोरी करें? यह सर्वथा अन्याय की

---

(९) फिर जब तुम भेंट करो उनसे जो काफ़िर हुए, बस काट दो उनकी गर्दनें, यहाँ तक कि चूर-चूर कर दो उनको। —सूरते मुहम्मद, आयत ४

(१०) और जो खुदा के मार्ग में मरेंगे, उन्हें मरा हुआ मत कहना, अपितु वे जिन्दा ही हैं। —सूरते बकर, आयत १४९

(११) परन्तु रसूल और जो लोग ईमान लाये उसके साथ जिहाद किया उन्होंने अपने धन और अपने जीवन व व्यक्तित्व सहित और भलाईयाँ उन्हीं के लिए हैं। —सूरते तोबा, आयत ८८

(१२) सचमुच अल्लाह ने खरीद ली हैं मुसलमानों से उनकी जानें और माल उनके इस मूल्य पर कि उनके लिए बहिश्त दे दिया है। वे खुदा के मार्ग में लड़ेंगे। —सूरते तोबा, आयत १११

(१३) ऐ लोगो! जो मुसलमान बने हो, विश्वासघात अल्लाह व रसूल से मत करो (धन मत छुपाओ)। —सूरते इन्फाल, आयत २७।

इस पर मूजिहुल कुरान में लिखा है—

अल्लाह व रसूल की चोरी यह है कि काफ़िरों से छुपकर मिलें अपनी सन्तानों को बचाने के लिए···और यह भी कि लूट के (युद्धों के) माल को छुपाकर रक्खें, सेना के सरदार को प्रकट न करें।

(१४) मुसलमानों की जान व माल तो अल्ला की सम्पत्ति हुए, मगर अल्ला मियाँ कर्ज़ भी चाहते हैं—भला कौन है जो ऋण दे खुदा को अच्छा ऋण, फिर वह उसके लिए उस ऋण को दो गुना करे।—सूरते बकर, आयत २४५। इस कर्ज़ की व्याख्या मूजिहुल कुरान में की है—धर्मयुद्ध (जिहाद) में खर्च करें। तफसीरे हुसैनी में लिखा है—"अबू अलदहद्दाह अंसारी सामने आया और कहा कि या रसूलिल्लाह, खुदा यह कर्ज़ क्यों माँगता है? आं हजरत ने फ़रमाया कि खुदा चाहता है कि इसके द्वारा तुम्हें स्वर्ग में ले जाये। अबू अलदहद्दाह ने कहा—या रसूलिल्लाह! मेरे पास दो नखलिस्तान हैं। उनमें से उत्तम का नाम जनीमा है, यदि मैं उसे खुदा को कर्ज़ दे दूँ तो क्या आप मेरे लिए बहिश्त के जामिन होते हैं? सरवरे आलम ने फरमाया कि मैं जामिन होता हूँ कि सच्चा खुदा बहिश्त में तुझे दस गुना देगा। कहा—ऐ पैगम्बर! इस शर्त पर कि मेरे लड़के व उसकी माँ भी मेरे साथ हों। फरमाया—ऐसा ही होगा।"

धर्मयुद्ध के लिए धन की जरूरत होती है। सरकार भी युद्ध के लिए कर्ज़ लेती है। अल्लामियाँ ने लिया तो क्या बुरा किया। सरकार भी सूद का प्रलोभन देती है। यहाँ भी कई गुना दिये जाने का आश्वासन है और वह भी केवल देनेवाले को ही नहीं, उनकी सन्तान व सन्तानों की माता को भी वहाँ ले जाने की अनुमति है। एक नखलिस्तान के बदले में एक पूरे परिवार को स्वर्ग व स्थान। इससे अधिक ब्याज दर और क्या होगी?

(१५) यही बात सूरते माइदा में फिर दुहराई है—"और कर्ज़ दो तुम अल्लाह को अच्छा। निश्चय ही मैं तुम्हारी बुराई दूर करूँगा और तुम्हें जन्नतों में प्रविष्ट करूँगा।" —आयत १२

धर्मयुद्ध जिहाद में खर्च कर दिया। अब चाहे पाप किये भी हों, सब दूर।

(१६) और वादा किया है तुमको अल्लाह ने बहुत लूटों का कि उनको प्राप्त करोगे। —सूरते फ़तह रकूअ ३

बात है। क्या कोई अज्ञानी हमको गालियाँ दे, क्या हम भी उसको गाली देवें ? यह बात न ईश्वर की और न ईश्वर के भक्त विद्वान् की, और न ईश्वरोक्त पुस्तक की हो सकती है। यह तो केवल स्वार्थी ज्ञानरहित मनुष्य की है ॥३६॥

[इस्लाम में प्रवेश करो]

३७—अल्लाह झगड़े को मित्र नहीं रखता। ऐ लोगो ! जो ईमान लाये हो इस्लाम में प्रवेश करो।
—मं० १। सि० २। सू० २। आ० २०५, २०८

[खुदा को झगड़ा पसन्द नहीं, तो उसकी प्रेरणा क्यों ?]

समीक्षक—जो झगड़ा करने को खुदा नहीं समझता, तो क्यों आप ही मुसलमानों को झगड़ा करने में प्रेरणा करता, और झगड़ालू मुसलमानों से मित्रता क्यों करता है ?

[क्या खुदा मुसलमानों का ही है, अन्यों का नहीं ?]

क्या मुसलमानों के मत में मिलने ही से खुदा राजी है ? तो वह मुसलमानों ही का पक्षपाती है, सब संसार का ईश्वर नहीं। इससे यहाँ यह विदित होता है कि न कुरान ईश्वरकृत, और न इसमें कहा हुआ (ईश्वर) ईश्वर हो सकता है ॥३७॥

---

(१७) और इस बात को समझ लो कि जो कोई वस्तु तुम लूटकर लाओ, उसमें से पाँचवाँ भाग अल्लाह के लिए निर्धारित है। —सूरते इन्फाल, आयत ४१

(१८) तुमसे लूटों के माल के बारे में पूछते हैं, लूटें खुदा के लिये हैं, रसूल के लिये हैं, इसलिए खुदा से डरो। अर्थात्—खुदा का हिस्सा दो, रसूल का हिस्सा दो, और शेष तुम ले जाओ।
—सूरते इन्फ़ाल, आयत १

(१९) और वह लूटी हुई स्त्रियाँ, तुम्हारे दायें हाथ जिनके स्वामी बनें। —सूरते मोमिनून

(२०) जो मुसलमान नहीं बन जाते उनसे युद्ध करो। जो अल्लाह पर ईमान नहीं लाते और जो न्याय के दिन (कयामत) पर विश्वास नहीं रखते उनसे और जो सच्चे दीन का पालन नहीं करते, जिन बातों को अल्लाह ने हराम किया है और उसके रसूल ने और उनमें से जिन्हें खुदा ने किताब दी है जब वह आज्ञापालक हों और अपने हाथ से कर (जजिया) दें और दुर्गति स्वीकार करें।
—सूरते तोबा, आयत २७

यह तो मुसलमानों के अन्य मतावलम्बियों के प्रति व्यवहार का निदर्शन है। दूसरों पर अत्याचार की बात छोड़िये। अपने ही पूज्यतम पैगम्बर के अत्यन्त लाड़ले दौहित्रों को जिस निर्दयता से तलवार के घाट उतारा, उससे तो निर्दयता भी थर्रा उठी। उसके कारण इसलाम के दो सम्प्रदायों—शिया और सुन्नी में आज तक वैमनस्य चला आता है।

"Islam is the most intolerent religion in the world. Either you accept it and have your throat cut by someone who will be destined to heaven." (George Bernard Shaw in 'Everybody's Political What is What' : Religions Sumury).

३७ यदि खुदा झगड़े पसन्द न करता होता तो दोजख क्यों बनाता ? दोजख को भरने के लिए ही उसने काफिर बनाये और फिर उन्हें दोजख में भेजने के लिए मुसलमानों को उन्हें मारने को प्रेरित किया।

सूरते बकर में स्पष्ट लिखा है कि "अगर अल्लाह चाहता तो न लड़ते। परन्तु अल्लाह सर्व-

[जिसको चाहे अनन्त रिजक देवे]

३८—खुदा जिसको चाहे अनन्त रिजक देवे। —मं० १। सि० २। सू० २। आ० २१२

[खुदा की मर्जी से ही पदार्थ मिलें, तो परिश्रम व्यर्थ]

समीक्षक—क्या विना पाप-पुण्य के खुदा ऐसे ही रिजक देता है ? फिर भलाई-बुराई का करना एक-सा ही हुआ। क्योंकि सुख-दुःख प्राप्त होना उसकी इच्छा पर है। इससे धर्म से विमुख होकर मुसलमान लोग यथेष्टाचार करते हैं। और कोई-कोई इस कुरानोक्त पर विश्वास न करके धर्मात्मा भी होते हैं ॥३८॥

[रजस्वला से बचो; बीबियाँ खेती हैं]

३९—प्रश्न करते हैं तुझसे रजस्वला को कह वो अपवित्र है, पृथक् रहो ऋतुसमय में, उनके समीप मत जाओ, जब तक कि वे पवित्र न हों। जब नहा लेवें उनके पास उस स्थान से जाओ, खुदा ने आज्ञा दी। तुह्मारी बीबियाँ तुह्मारे लिए खेतियाँ हैं। बस जाओ जिस तरह चाहो अपने खेत में। तुमको अल्लाह लगब (=बेकार, व्यर्थ) शपथ में नहीं पकड़ता।

—मं० १। सि० २। सू० २। आ० २२२, २२३, २२५

[रजस्वला से दूर रहना तो ठीक; उन्हें खेती बताना ठीक नहीं]

समीक्षक—जो यह रजस्वला का स्पर्श-सङ्ग न करना लिखा है, वह अच्छी बात है। परन्तु जो यह स्त्रियों को खेती के तुल्य लिखा, और जैसा जिस तरह से चाहो जाओ, यह मनुष्यों को विषयी करने

शक्तिमान् है, जो चाहता है, करता है" (आयत २५३)। तब कैसे कहा जा सकता है कि खुदा झगड़े नहीं चाहता।

३८. 'जिसको चाहे' का अर्थ है कि परमेश्वर (अल्लाह) न्यायकारी नहीं है। मनमानी करता है। न्यायकारी होता तो यथायोग्य व्यवहार करता अर्थात् कर्मों के अनुसार जितना जिसका देय होता उसको उतना ही देता। फिर, मनुष्य का सामर्थ्य सीमित है, इसलिए उसके कर्म अनन्त नहीं हो सकते और सीमित कर्मों के फलस्वरूप अनन्त रिजक कैसे दे सकता है ?

३९. तफ्सीरे जलालैन में इसकी व्याख्या में लिखा है—'सम्भोग करो, जिस प्रकार चाहो—उठाकर, बैठकर, लेटकर, उल्टे, सीधे जिस प्रकार चाहो··· सम्भोग के समय 'बिस्मिल्लाह' कह लिया करो।' इसलाम में संयम के लिये कोई स्थान नहीं। स्वयं हजरत मुहम्मद स्वयं अत्यधिक विषयी थे। पहले उन्होंने अपने लिये नौ बीबियाँ और दूसरे मुसलमानों के लिये चार बीबियाँ वैध (हलाल) बताईं। फिर जब उन्हें अतिरिक्त औरतों की जरूरत पड़ी तो एक आयत के द्वारा खुदा ने उन्हें रखैल (दासियाँ) रखने की इजाजत दे दी। इतने पर भी जब उन्हें सन्तोष न हुआ तो खुदा ने उनके लिए लूट में आई औरतें हलाल कर दीं। फिर एक दिन एक आयत उतरी, जिसके अनुसार पैगम्बर साहब को निकाह की रसम से छुटकारा मिल गया और औरत के समर्पण को ही निकाह मान लिया गया। वर्त्तमान में शासकीय व्यवस्था में अनेक आदेशों का प्रारम्भिक वाक्य इस प्रकार शुरू होता है—'The President is pleased to···' यद्यपि राष्ट्रपति को उस विषय में कोई जानकारी नहीं होती। इसी प्रकार मुहम्मद साहब खुदा की जानकारी के विना ही खुदा के नाम पर—'रात आयत उतरी' कहकर स्वेच्छापूर्वक खुदाई (तथाकथित) विधान 'कुरान' में संशोधन, परिवर्धन करते रहते थे। Legislative, Executive तथा Judicial

का कारण है। जो खुदा बेकारी शपथ पर नहीं पकड़ता, तो सब झूंठ बोलेंगे, शपथ तोड़ेंगे। इससे खुदा झूंठ का प्रवर्त्तक होगा ॥३९॥

[खुदा का उधार मांगना, और दूना देना]

४०--वो कौन मनुष्य है जो अल्लाह को उधार देवे, अच्छा बस अल्लाह द्विगुण करे उसको उसके वास्ते।

—मं० १। सि० २। सू० २। आ० २४५

[क्या खुदा दीवालिया हो गया था, जो दुगुने पर कर्ज लिया?]

समीक्षक—भला खुदा को कर्ज उधार[1] लेने से क्या प्रयोजन? जिसने सारे संसार को बनाया, वह मनुष्य से कर्ज लेता है? कदापि नहीं। ऐसा तो विना समझे कहा जा सकता है। क्या उसका खजाना खाली हो गया था? क्या वह हुण्डी पुड़ियाँ व्यापारादि में मग्न होने से टोटे में फँस गया था, जो उधार लेने लगा? और एक का दो-दो देना स्वीकार करता है, क्या यह साहूकारों का काम है? किन्तु ऐसा काम तो दिवालियों वा खर्च अधिक करनेवाले और आय न्यून होनेवालों को करना पड़ता है, ईश्वर को नहीं ॥४०॥

[अल्लाह जो चाहता है, करता है]

४१—उनमें से कोई ईमान न लाया, और कोई काफिर हुआ, जो अल्लाह चाहता न लड़ते, जो चाहता है अल्लाह करता है।

—मं० १। सि० ३। सू० २। आ० २५३

सब प्रकार के अधिकार मुहम्मद साहब में निहित थे। उनको चुनौती देना अपनी जान से हाथ धोना था।

जन्नतपरस्त जाहिद कब हकपरस्त है।
हूरों पै मर रहा है शहवतपरस्त है ॥

४०. इसलाम में ब्याज लेना-देना निषिद्ध है। परन्तु यहाँ स्वयं खुदा ही महाजनी कर रहा है। दुगुना करके लौटाने की घोषणा के साथ 'कौन है जो उधार देगा' की पुकार लगाने से प्रतीत होता है कि खुदा की साख नहीं है।

४१. कुरान के अनुसार न कोई ईमान लाया और न कोई काफिर हुआ। जो जैसा था, खुदा का बनाया हुआ है। और जो वह चाहता है, वही होता है। सूरत आराफ में लिखा है—"तब हमने उनसे (फिरौन के लोगों से) बदला लिया और उन्हें दरिया में डुबो दिया" (आयत १३६)। "और हमने फिरौन के लोगों को अकाल और पैदावार की कमी में ग्रस्त किया" (आयत १३०)। "और फिर हमने उन पर तूफान और टिड्डियाँ भेजीं" (आयत १३६)। "और आज्ञा दी हमने कि जो कुछ लूटो उसका पाँचवाँ हिस्सा अल्लाह का और वास्ते उसके रसूल के" (सूरते अनफाल, आयत ३९)। स्पष्ट है कि खुदा शान्ति भंग करने में रुचि लेता है और लड़ाई के लिए लोगों को उकसाता है। क्योंकि लूट का

---

१. इसी आयत के भाष्य में 'तफसीरहुसेनी' में लिखा है कि—"एक मनुष्य मुहम्मद साहब के पास आया। उसने कहा कि ए रसूलल्लाह खुदा कर्ज क्यों माँगता है? उन्होंने उत्तर दिया कि तुमको बहिश्त में ले जाने के लिये। उसने कहा जो आप जमानत लें, तो मैं दूं। मुहम्मद साहब ने उसकी जमानत ले ली॥" खुदा का भरोसा न हुआ, उसके दूत का हुआ। द० स०

[क्या सब लड़ाई ईश्वर की इच्छा से होती है ?]

समीक्षक—'क्या जितनी लड़ाई होती है, वह ईश्वर ही की इच्छा से ? क्या वह अधर्म करना चाहे, तो कर सकता है ? जो ऐसी बात है, तो वह खुदा ही नहीं। क्योंकि भले मनुष्यों का यह कर्म नहीं कि शान्ति भङ्ग करके लड़ाई करावें। इससे विदित होता है कि यह कुरान न ईश्वर का बनाया, और न किसी धार्मिक विद्वान् का रचित है ॥४१॥

[खुदा की कुर्सी]

४२—जो कुछ आसमान और पृथिवी पर है, सब उसी के लिए है। उसकी कुरसी ने आसमान और पृथिवी को समा लिया है। —मं० १। सि० ३। सू० २। आ० २५५

[सृष्टि के पदार्थ जीवों के लिए हैं; कुर्सीवाला ईश्वर कैसे ?]

समीक्षक—जो आकाश भूमि में पदार्थ हैं, वे सब जीवों के लिए परमात्मा ने उत्पन्न किये हैं,

---

पाँचवाँ हिस्सा उसे भी मिलता है। ईश्वर तो क्या, कोई सामान्य मनुष्य भी ऐसे निकृष्ट कार्य नहीं करेगा। बराबरवाले से तो बदला लेते लोग देखे जाते हैं। किन्तु पिता समान खुदा अपनी सन्तान के समान मनुष्यों से बदला ले—इसकी तो कल्पना भी नहीं की जा सकती। पर मुसलमानों का खुदा जो करे सो थोड़ा है।

४२. परमेश्वर के आप्तकाम होने से दृश्यमान जगत् की रचना जीवात्माओं के भोग और अपवर्ग के लिए की गई है। उसे अल्लाह के लिए बताना सरासर मूर्खता है। जिसे भूख-प्यास नहीं लगती, उसे भूमि में उत्पन्न पदार्थों की क्या आवश्यकता है। कुरान में ऐसे अनेक स्थल हैं, जिनसे खुदा का सर्वव्यापक न होकर एकदेशी होना सिद्ध होता है। सूरते हूद की ७वीं आयत के अनुवाद में रफ़ीउद्दीन शाह लिखते हैं—"और वही है जिसने पैदा किया आस्मानों को और जमीन को बीच छह दिन के और था उसका अर्श पानी पर।" स्पष्ट ही खुदा के अर्श को पानी पर बतलाया गया है। इससे उसका एकदेशी होना सिद्ध है। अर्श साकार और एकदेशी है, इसका निरूपण कुरान में इस प्रकार है—"और उठायेंगे अर्श रब्ब तेरे का ऊपर अपने आठ शख्स" (सूरते हावेक, आयत १७)। जिस वस्तु को आठ शख्स उठायेंगे, वह अवश्य ही साकार और एकदेशी होगी। उस पर बैठनेवाला भी निश्चय ही साकार और एकदेशी होगा। इसी प्रकार सूरते यूनुस की तीसरी आयत का अनुवाद शाहजी ने इन शब्दों में किया है—

"तहकीक परवरदिगार तुम्हारा अल्लाह है जिसने पैदा किया आसमानों को बीच छह दिन के। फिर इन्तजाम किया ऊपर अर्श के।"

फारसी भाषा में निबद्ध तफसीर हुसैनी नाम के भाष्य में इसके ऊपर एक वाक्य है—"हम तो उस पर विश्वास रखते हैं और इसकी व्याख्या उस पर छोड़ते हैं। इसी भाँति सूरते सिजदा आयत १४, सूरते कआरज आयत ४, सूरते आराफ आयत १४३ इत्यादि अनेक स्थानों में ईश्वर को एकदेशी होने के प्रमाण उपलब्ध हैं। सूरते आराफ में और अन्य कई सूरतों में अनेकत्र खुदा के साथ फरिश्तों, आदम तथा शैतान के संवादों का उल्लेख मिलता है। बातचीत करनेवाला तो निश्चय ही मूर्तिमान् होता है। जब खुदा मुजस्सिम है तो उसके हाथों, पैरों आदि शरीरांगों का होना स्वाभाविक है। सूरत ७ की ७५वीं

---

१. यहाँ पहले भाग की समीक्षा त्रुटित प्रतीत होती है।

अपने लिए नहीं। क्योंकि वह पूर्णकाम है, उसको किसी पदार्थ की अपेक्षा नहीं। जब उसकी कुर्सी है, तो वह एकदेशी है। जो एकदेशी होता है, वह ईश्वर नही कहाता। क्योंकि ईश्वर तो व्यापक है ॥४२॥

[**खुदा पापियों को मार्ग नहीं दिखाता**]

४३—अल्लाह सूर्य को पूर्व से लाता है, बस तू पश्चिम से ले आ। बस जो काफिर हैरान हुआ था। निश्चय अल्लाह पापियों को मार्ग नहीं दिखलाता। —मं० १। सि० ३। सू० २। आ० २५८

[**सूर्य कहीं नहीं आता-जाता, अपनी परिधि में घूमता है**]

समीक्षक—देखिये, यह अविद्या की बात। सूर्य न पूर्व से पश्चिम और न पश्चिम से पूर्व कभी आता-जाता है। वह तो अपनी परिधि में घूमता रहता है। इससे निश्चित जाना जाता है कि कुरान के कर्त्ता को न खगोल और न भूगोल विद्या आती थी।

[**मार्गदर्शन तो पापियों को ही चाहिये**]

जो पापियों को मार्ग नहीं बतलाता, तो पुण्यात्माओं के लिए भी मुसलमानों के खुदा की

आयत में स्पष्ट ही लिखा है—"बनाया साथ दोनों हाथों अपने के।" कुरान के ईश्वर का एकदेशी होना सिद्ध करके ग्रन्थकार यह कहना चाहते हैं कि कुरान में जिसका अल्ला के नाम से बार-बार जिक्र आता है, वास्तव में वह अल्लाह नहीं है। अल्ला होता तो एकदेशी न होकर सर्वदेशी और इस कारण निराकार होता।

४३. लगभग ४५० वर्ष पूर्व तक इसलाम और ईसाइयत से प्रभावित पाश्चात्य लोग यही मानते थे कि पृथिवी स्थिर है और सूर्य उसके चारों ओर घूमता है। यह सिद्धान्त भूकेन्द्रित था। जिन वैज्ञानिकों ने इस मान्यता का विरोध किया, उन्हें कठोर यातनाएँ दी गईं। परन्तु गैलिलियो, कैपलर और कापरनिकस आदि वैज्ञानिकों की साहसपूर्ण खोजों के प्रकाश में आने के बाद ईसाई धर्मगुरुओं को विवश होकर यह मानना पड़ा कि यह जगत् सूर्यकेन्द्रित है और पृथिवी आदि ग्रह सूर्य के चारों ओर चक्कर काटते हैं। परन्तु कुरान के माननेवाले मुसलमान आज भी यही रट लगाये हैं कि सूर्य पृथिवी के गिर्द चक्कर लगा रहा है। 'हम तो डूबेंगे सनम तुमको भी ले डूबेंगे'—खुदा के बन्दों ने अपनी मूर्ख-मण्डली में उसको भी शामिल कर लिया है, इसलिए कहते हैं कि 'अल्लाह सूर्य को पूर्व से लाता है।' ग्रन्थकार ने अपनी ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में वेद के आधार पर सिद्ध किया है कि वेद में पथिवी की दोनों गतियों—पृथिवी की अपनी धुरी पर तथा सूर्य के चारों ओर कक्षा गति (Axial Rotation and Orbital Rotation) के स्पष्ट प्रमाण उपलब्ध हैं। ये गतियाँ सूर्य के कारण उत्पन्न हुई हैं। लुड्विग ने बहुत पहले बताया था कि ऋग्वेद में इस बात के स्पष्ट प्रमाण हैं कि पृथिवी सूर्य के चारों ओर घूम रही है। ऋग्वेद (७।५८।२) में लिखा है कि पृथिवी की दोनों प्रकार की गति के कारण ही सूर्य दिन, रात, मास और वर्ष बनानेवाला है।

पृथिवी का सूर्य के चारों ओर घूमना प्रत्यक्ष है। जब कोई पदार्थ घूमता है तो उसका वेग अपने केन्द्र स्थान (ठीक बीच) की अपेक्षा दूरतर स्थान में अधिक होता है। इसीलिये यदि कोई वस्तु बहुत ऊँचे स्थान (मीनार आदि) से नीचे गिराई जाय तो वह वस्तु कुछ दूर पूर्वांश में गिरेगी, उस स्थान के ठीक नीचे नहीं। इसी से अनुमान लगाया जा सकता है कि पृथिवी पश्चिम से पूर्व की ओर घूमती

आवश्यकता नहीं। क्योंकि धर्मात्मा तो धर्ममार्ग में ही होते हैं। मार्ग तो धर्म से भूले हुए मनुष्यों को बतलाना होता है। सो कर्त्तव्य[1] के न करने से कुरान के कर्त्ता की बड़ी भूल है ॥४३॥

[खुदा की बाजीगरी]

४४—कहा चार जानवरों में से ले, उनकी सूरत पहिचान रख, फिर हर पहाड़ पर उनमें से एक-एक टुकड़ा रख दे। फिर उनको बुला, दौड़ते तेरे पास चले आवेंगे।

—मं० १। सि० ३। सू० २। आ० २६०

[क्या ऐसी ही बातों से खुदा की खुदाई है ?]

समीक्षक—वाह-वाह ! देखोजी, मुसलमानों का खुदा भानमती के समान खेल कर रहा है। क्या ऐसी ही बातों से खुदा की खुदाई है ? बुद्धिमान् लोग ऐसे खुदा को तिलाञ्जलि देकर दूर रहेंगे, और मूर्ख लोग फसेंगे। इससे खुदा की बड़ाई के बदले बुराई उसके पल्ले पड़ेगी ॥४४॥

[किसी को नीति, किसी को अनीति देना खुदा का काम नहीं]

४५—जिसको चाहै नीति देता है। —मं० १। सि० ३। सू० २। आ० २६६

समीक्षक—जब जिसको चाहता है उसको नीति देता है, तो जिसको नहीं चाहता उसको अनीति देता होगा। यह बात ईश्वरता की नहीं। किन्तु जो पक्षपात छोड़ सबको नीति का उपदेश करता है, वही ईश्वर और आप्त हो सकता है, अन्य नहीं ॥४५॥

है। वेद पर आधारित इन तथ्यों का ज्ञान होने से ही ग्रन्थकार ने यह लिखा है कि कुरान के कर्त्ता को न खगोल और न भूगोल विद्या आती थी।

पापियों को मार्ग न दिखलाने की बात कुरान में कई स्थानों पर आती है। वस्तुतः कुरान को किसी को भी मार्ग दिखलाने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि जो परहेजगार हैं, वे तो स्वतः सच्चे मार्ग पर हैं और 'जो काफिर हैं, उनके दिलों-कानों पर अल्लाह ने मोहर लगा दी है' (सूरते बकर, आयत २-७) जिससे न वे सुन सकते हैं और न विचार कर सकते हैं।

४४. खुदा से लोग बड़ी-बड़ी चीजों (ज्ञान की बातों) की आशा रखते हैं। ऐसी बाजीगरी का तमाशा दिखानेवाले तो गली-गली में मिल जाते हैं। ग्रन्थकार की समीक्षा को देखकर ही शायद किसी शायर ने कहा है—

> खुदा के बन्दों को देख करके खुदा से मुनकिर हुई है दुनियाँ।
> कि ऐसे बन्दे हैं जिस खुदा के वो कोई अच्छा खुदा नहीं है ॥

४५. इस प्रकार मनमानी करनेवाला परमेश्वर नहीं हो सकता। दयालु व न्यायकारी खुदा को चाहिए कि पक्षपातरहित होकर अधिकारियों को नीति दे, अनधिकारियों की उपेक्षा करे। तानाशाही ईश्वर को शोभा नहीं देती।

---

१. अर्थात् करनेयोग्य कार्य = भूले हुए को मार्ग दिखाना।

[क्या ब्याजखोर सदा कबरों में ही रहेंगे ?]

४६—'जो ब्याज खाते हैं, वे कबरों से नहीं खड़े होंगे।

—मं० १। सि० ३। सू० २। आ० २७५

समीक्षक—क्या वे कबरों में ही पड़े रहेंगे ? और जो पड़े रहेंगे तो कब तक ? ऐसी असम्भव बात ईश्वर के पुस्तक की तो नहीं हो सकती, किन्तु बालबुद्धियों की तो हो सकती है ॥४६॥

[क्षमा और दण्ड खुदा की मर्जी से]

४७—वह कि जिसको चाहेगा क्षमा करेगा, जिसको चाहे दण्ड देगा, क्योंकि वह सब वस्तु पर बलवान् है।

—मं० १। सि० ३। सू० २। आ० २८४

---

४६. कबरों में तो किसी के भी खड़े होने या बैठने का प्रश्न नहीं उठता, क्योंकि दफनाये जाने के कुछ समय बाद ही शव गल-सड़ कर नष्ट हो जाता है, जीवात्मा कबर में डाले जाने से पूर्व ही शरीर को छोड़कर न जाने कहाँ चला जाता है। इसलिए कयामत (प्रलय) के दिन मुर्दों के खड़े होने की बात करना सरासर मूर्खता है—मृतक चाहे ब्याज लेनेवाला हो या अन्य कोई। जैसे रिश्वत लेने-वाला और देनेवाला दोनों अपराधी माने जाते हैं, वैसे ही यदि ब्याज लेना बुरा है तो ब्याज देना भी वैसा ही बुरा है। खुदा के कर्ज लेने का उल्लेख कुरान में अनेक स्थलों में हुआ है। साधारणतया उसे कोई उधार नहीं देता तो वह दुगुने ब्याज का प्रलोभन देकर और इतने पर भी न माने तो बहिश्त में स्थान देने का वचन देकर और आवश्यकता पड़ने पर पैगम्बर को बीच में डालकर और उसकी जमानत देकर कर्ज लेता है। यदि ब्याज लेना गुनाह है तो ब्याज लेनेवालों को प्रोत्साहित करना क्या पाप नहीं है ? इस प्रकार खुदा अपराध का न सही अपराध करने के लिए उकसाने (Abetment of crime) का अपराधी तो है ही।

४७. क्षमा करने की चर्चा कुरान में बार-बार आई है, पर उसका आधार न्याय नहीं है। यह खुदा का विशेषाधिकार (Prerogative) है, जिसका प्रयोग उसके विवेक (Discrition) पर नहीं, उसकी मर्जी (Sweet will) पर निर्भर है। इस विषय के कुछेक स्थल ये हैं—'हम बख्श देंगे हम वास्ते तुम्हारे खताएँ तुम्हारी और अलबत्ता ज्यादा देंगे नेकी करनेवालों को' (बकर ५८); 'बख्शता है जिसको चाहता है और अजाब करता है जिसे चाहता है' (मायदा १८); 'बख्शनेवाला गुनाह का और कबूल करनेवाला तोबा का सख्त करनेवाला अजाब का' (मोमिन २)। तफ़सीरे हुसैनी में इस आदेश पर एक प्रतिबन्ध भी लगाया है—'हर कसेरा कि बसिद्क गोयद ला इलाह इल्लिल्लाह मुहम्मदुर्रसूलिल्लाह' अर्थात् यह क्षमा उसको दी जायेगी जो सच्चे हृदय से कल्मा कहेगा (हजरत मुहम्मद की सिफारश के बिना क्षमा नहीं मिलेगी)। इसके साथ अजाब (दुःख) देने की बात भी आ गई। एक आध स्थान पर पूरा-पूरा न्याय करने का उल्लेख भी मिलता है, यथा—'बदला दिये जायेंगे मुआफ़िक' (नबा १६) श्री अशरफ़ अली थानवी ने इसका अनुवाद किया है—'यह पूरा बदला मिलेगा'। कुरान शरीफ के हिन्दी

---

१. यह समीक्ष्यांश और इसकी समीक्षा सं० २ से ३३ तक नहीं छपी। कैसे छपने से रह गई, यह ज्ञात नहीं। सं० ३४ में प्रथम बार छपी है। इस आयत में ब्याज खाना बुरा कहा गया है, पर समीक्ष्यांश ४० में खुदा का उधार मांगना और दूना देना क्या ब्याज खाना नहीं है ? सम्भवतः इसी कारण (=खुदा का अनुकरण कर) अफगान आदि गरीबों को उधार दिये धन का कई गुणा वसूल करते हैं।

[यथायोग्य न्याय न करने से खुदा स्वयं ही पापी होगा]

समीक्षक—क्या क्षमा के योग्य पर क्षमा न करना, अयोग्य पर क्षमा करना गवरगण्ड[1] राजा के तुल्य यह कर्म नहीं है ? इदि ईश्वर जिसको चाहता पापी वा पुण्यात्मा बनाता है, तो जीव को पाप-पुण्य न लगना चाहिए।

[ईश्वर की मर्जी से किया, तो जीव को सुख-दुःख क्यों ?]

जब ईश्वर ने उसको वैसा ही किया, तो जीव को दुःख-सुख भी होना न चाहिए। जैसे सेनापति की आज्ञा से किसी भृत्य ने किसी को मारा वा रक्षा की, उसका फलभागी वह नहीं होता, वैसे वे भी नहीं ॥४७॥

[मुसलमानों का बहिश्त; नहरें बीबियाँ और सेवक]

४८—कह इससे अच्छी और क्या परहेजगारों को खबर दूं कि अल्लाह की ओर से बहिश्तें हैं, जिनमें नहरें चलती हैं, उन्हीं में सदैव रहनेवाली शुद्ध बीबियाँ हैं अल्लाह की प्रसन्नता से, अल्लाह उनको देखनेवाला है साथ बन्दों के। —मं० ३। सि० ३। सू० ३। आ० १४

अनुवाद में यह इस प्रकार है—'(यह उनके कुकर्मों का पूरा बदला है'। यहाँ इस कादियानी अनुवाद पर स्पष्टतः ग्रन्थकार की छाप है। 'और पूरा दिया जायगा हरेक को जो कुछ कि किया है और न वह जुल्म किये जायेंगे' (नहल १११)। 'तहकीक अल्ला नहीं जुल्म करता बराबर एक भुनगे के' (निसा ४०)। इससे यह प्रतीत होता है कि खुदा विशुद्ध न्याय करेगा। परन्तु यदि यह बात है तो बखशने, क्षमा करने की बात नहीं रहती। कुरान में नेकी को दुगुना करने की बात भी आती है। यह भी न्याय नहीं है। न्याय तो यही है कि जिसने जैसा और जितना किया है, उसे तदनुसार ही फल मिले।

फिर, जब सब कुछ ख़ुदा की मर्जी पर निर्भर करेगा तो किसी की पुण्य में प्रवृत्ति और पाप से निवृत्ति कैसे होगी। एक किसान खेत में गेहूँ का बीज बोता है, इस आशा से कि उसमें गेहूँ पैदा होगा। इसी प्रकार चने की फसल चाहनेवाला चने का बीज़ बोता है। यदि फसल खुदा की मर्जी से पैदा होने लगे तो अव्यवस्था हो जाये। कोई अपनी समझ से कुछ भी न करे। इसी प्रकार यदि लोक में प्रजा में यह बात फैल जाय कि राजा जिसको चाहेगा, फाँसी दे देगा और जिसको चाहेगा, ५० लोगों की हत्या करने पर भी, मन्त्री बना देगा तो सारे में अराजकता फैल जाएगी। इसलाम के सिद्धान्तानुसार जीवात्मा अनादि-अनुत्पन्न नहीं है, वह ईश्वर की रचना है और बनाते समय ईश्वर जिसको चाहता है, पुण्यात्मा बना देता है और जिसे चाहता है, पापात्मा बना देता है। तब वह जीव तदनुसार ही पाप-पुण्य में प्रवृत्त होता है। ऐसी अवस्था में न किसी को पुण्य के फलस्वरूप सुख मिलना चाहिए और न किसी को पाप के फलस्वरूप दुःख ही मिलना चाहिए। सुख-दुःख का भोक्ता जीवों को बनानेवाला ईश्वर (खुदा) ही होना चाहिए। आगे ५०वाँ वाक्य भी इसी प्रकरण से जुड़ा है।

४८. यह आयत नवें वाक्य में उद्धृत २।२५ की पूरक है। जिन चीजों के बहिश्त में मिलने का यहाँ उल्लेख हुआ है, वे सब इस धरती पर सहज उपलब्ध हैं। किसी भी विलासी नवाब के महल में

---

१. गवरगण्ड राजा की कथा ग्रन्थकार नें स्वीय 'व्यवहारभानु' ग्रन्थ के अन्त में दी है, वहाँ देखें। द्र०—दयानन्दीय लघुग्रन्थसंग्रह, पृष्ठ ५३५-५४२।

[यह स्वर्ग है वा वेश्यावन ?]

समीक्षक—भला यह स्वर्ग है किंवा वेश्यावन ? इसको ईश्वर कहना वा स्त्रैण[1] ? कोई भी बुद्धिमान् ऐसी बातें जिसमें हों, उसको परमेश्वर का किया पुस्तक मान सकता है ?

[बीबियां बहिश्त में कहां से आईं ?]

यह पक्षपात क्यों करता है ? जो बीबियाँ बहिश्त में सदा रहती हैं, वे यहाँ जन्म पाके वहाँ गई हैं, वा वहीं उत्पन्न हुई हैं ? यदि यहाँ जन्म पाकर वहाँ गई हैं, और जो कयामत की रात से पहिले ही वहाँ बीबियों को बुला लिया, तो उनके खाविन्दों को क्यों न बुला लिया ? और कयामत की रात में सबका न्याय होगा, इस नियम को क्यों तोड़ा ? यदि वहीं जन्मी हैं, तो कयामत तक वे क्योंकर निर्वाह करती हैं ? जो उनके लिए पुरुष भी हैं, तो यहाँ से बहिश्त में जानेवाले मुसलमानों को खुदा बीबियाँ कहाँ से देगा ?

[बीबियां सदा से वहां हैं, तो पुरुष क्यों नहीं ?]

और जैसे बीबियाँ बहिश्त में सदा रहनेवाली बनाईं, वैसे पुरुषों को वहाँ सदा रहनेवाले क्यों नही बनाया ? इसलिए मुसलमानों का खुदा अन्यायकारी बेसमझ है ॥४८॥

[क्या इस्लाम से पहले कोई ईश्वरीय मत न था ?]

४९—निश्चय अल्लाह की ओर से दीन इस्लाम है। —मं० १। सि० ३। सू० ३। आ० १८

अथवा आजकल के पंचतारा (Five Star) होटल में वह सब मिल जायेगा—जेब भरी होनी चाहिए। सर्वसाधारण तो लौकिक विलासी जीवन के अभिलाषी होते हैं। हजरत मुहम्मद के व्यावहारिक चातुर्य का यह प्रमाण है कि उन्होंने अपने अनुयायियों को ललचाने के लिए स्वर्ग का ऐसा मोहक चित्र खींचा। कहाँ अरब जैसे गरम और उजाड़ देश के रेतीले मैदान और कहाँ दूध और शहद की नहरें, बड़ी-बड़ी आँखों वाली हूरें और मोती जैसे लौंडे। और यह सब कलमे के चार शब्द बोलते ही झोली में। हींग लगे न फिटकरी और रंग चोखा। ग्रन्थकार ने अपनी समीक्षा में जो प्रश्न उठाये हैं, उनका उत्तर कौन दे सकता है ?

४९. मुसलमानों के विद्वान् इसकी इस प्रकार व्याख्या करते हैं—'मतलब यह है कि अल्लाह की ओर से संसार के जिस देश और जिस युग में भी कोई पैगम्बर आया है, उसका दीन (धर्म) यही था कि मनुष्य अपने पूरे जीवन में केवल अल्लाह का दास और उसका उपासक बन कर रहे। यही 'इसलाम' है, और यही सदा से अल्लाह का 'दीन' रहा है'। यदि ऐसा है तो इसलाम को हजरत मुहम्मद और क़ुरान से बाबस्ता क्यों करते हो और ईश्वर को उपास्य माननेवाले अमुस्लिमों को 'काफ़िर' कह कर वाजिबुल-कतल का फ़तवा क्यों देते हो ?

क़ुरान में एक नहीं बीसों स्थानों पर परमात्मा की आज्ञा पालन करने के साथ ही रसूल (हजरत मुहम्मद) की आज्ञा पालने का आदेश किया है। यही नहीं, उनकी आज्ञा न पालने पर दण्ड का विधान है। सूरते निसा आयत १२-१३ में कहा है—

"जो खुदा व उसके पैगम्बर की आज्ञा पालन करेगा, वही जन्नत में प्रविष्ट होगा, जिसके नीचे नहरें बह रही हैं। और जो विरोध करे खुदा से और उसके रसूल से, खुदा उसको दोजख की आग में प्रविष्ट करेगा। वह उसमें सदा रहेगा और उसके लिए बड़ी पीड़ा है"। अत:—

1. स्त्रैण=स्त्रियों में आसक्त।

समीक्षक—क्या अल्लाह मुसलमानों ही का है, औरों का नहीं ? क्या तेरह सौ वर्षों के पूर्व ईश्वरीय मत था ही नहीं ? इसी से यह कुरान ईश्वर का बनाया तो नहीं, किन्तु किसी पक्षपाती का बनाया है ।।४६।।

[सबके साथ न्याय होगा; सब कुछ खुदा की मर्जी पर]

५०—प्रत्येक जीव को पूरा दिया जावेगा जो कुछ उसने कमाया, और वे न अन्याय किये जावेंगे। कह या अल्लाह ! तू ही मुल्क का मालिक है, जिसको चाहे देता है, जिससे चाहे छीनता है। जिसको चाहे प्रतिष्ठा देता है, जिसको चाहे अप्रतिष्ठा देता है। सब-कुछ तेरे ही हाथ में है, प्रत्येक वस्तु पर तू ही बलवान् है।

रात को दिन में और दिन को रात में पैठाता है, और मृतक को जीवित से जीवित को मृतक से निकालता है, और जिसको चाहे अनन्त अन्न देता है।

मुसलमानों को उचित है कि काफिरों को मित्र न बनावें, सिवाय मुसलमानों के, जो कोई यह करे बस वह अल्लाह की ओर से नहीं। कह जो तुम चाहते हो अल्लाह को तो पक्ष करो मेरा। अल्लाह चाहेगा तुमको और तुह्मारे पाप क्षमा करेगा। निश्चय करुणामय है।

—मं० १। सि० ३। सू० ३। आ० २४-२७, ३०

[कर्मानुसार फल मिलेगा तो पाप-क्षमा की बात व्यर्थ]

समीक्षक—जब प्रत्येक जीव को कर्मों का पूरा-पूरा फल दिया जायगा, तो क्षमा नहीं किया जायगा। और जो क्षमा किया जायगा, तो पूरा फल नहीं दिया जायगा, और अन्याय होगा। जब विना उत्तम कर्मों के राज्य देगा, तो भी अन्यायकारी हो जायगा।

अल्लाह व उसके रसूल पर ईमान लाओ। —आल इमरान १७४

और आज्ञा पालन करो अल्ला व उसके रसूल की। —सूरते मायदा ६०

और आज्ञा पालन करो रसूल की, संभव है तुम्हें क्षमादान मिले। —सूरते नूर ५५

तात्पर्य यह है कि अकेले रसूल की आज्ञा मानने से तो काम चल सकता है, पर अकेले खुदा की आज्ञा-पालन से नहीं।

इसलाम की दीक्षा लेने के लिये 'ला इलाहा इल्लिल्लाह' कहना पर्याप्त नहीं है, क्योंकि 'मुहम्मदुल रसूलिल्लाह' कहे विना कलमा पूरा नहीं होता और कलमा पढ़े विना इसलाम की दीक्षा पूरी नहीं होती। फिर कहाँ रही तौहीद और कहाँ रहा अल्लाह लाशरीक। खुदा में पैगम्बर की मिलावट होने से खुदा का शुद्ध स्वरूप नष्ट हो गया। मिलावट करने से इन्कार करके अल्ला व रसूल में भेद करनेवाला शैतान काफ़िर कहलाया और बागे अदन से निकाल दिया गया। खुदा ने सब फ़रिश्तों को आज्ञा दी कि मेरे साथ-साथ आदम को भी सिजदा करो। शैतान ने खुदा को तो सिजदा किया, किन्तु आदम को सिजदा करने से इन्कार कर दिया, क्योंकि वह खुदा में इन्सान (आदम) की मिलावट करने के लिए तैयार नहीं था अर्थात् वास्तव में मुशरिक नहीं था।

५०. 'प्रत्येक···न अन्याय किये जावेंगे' का निषेध हो जाता है, 'कह या अल्लाह···बलवान् है'। यह वदतो व्याघात है। ऐसा तानाशाह (स्वेच्छाचारी) न्यायकारी कभी नहीं हो सकता। और ऐसे ईश्वर के राज्य में प्रजा कभी सुखी नहीं रह सकती। सृष्टिक्रम के विपरीत खुदा कुछ नहीं कर सकता, इसलिए रात को दिन और दिन को रात बनाना या मृतक को जीवित करना आदि उसकी शक्ति से

[असम्भव काम ईश्वर भी नहीं कर सकता]

भला जीवित से मृतक और मृतक से जीवित कभी हो सकता है ? क्योंकि ईश्वर की व्यवस्था अछेद्य अभेद्य है। कभी अदल-बदल नहीं हो सकती।

[केवल मुसलमानों से ही मैत्री की बात पक्षपात]

अब देखिये पक्षपात की बातें, कि जो मुसलमान के मजहब में नहीं हैं, उनको काफिर ठहराना। उनमें श्रेष्ठों से भी मित्रता न रखने, और मुसलमानों में दुष्टों से भी मित्रता रखने के लिए उपदेश करना, ईश्वर को ईश्वरता से बहिः कर देता है। इससे यह कुरान, कुरान का खुदा और मुसलमान लोग केवल पक्षपात अविद्या के भरे हुए हैं। इसीलिए मुसलमान लोग अन्धेरे में हैं।

[खुदा किसी का पक्ष नहीं किया करता, चाहे वह कोई भी हो]

और देखिये मुहम्मद साहब की लीला कि जो तुम मेरा पक्ष करोगे, तो खुदा तुह्मारा पक्ष करेगा। और जो तुम पक्षपात-रूप पाप करोगे, उसको क्षमा भी करेगा। इससे सिद्ध होता है कि मुहम्मद साहब का अन्तःकरण शुद्ध नहीं था। इसीलिए अपने मतलब सिद्ध करने के लिए मुहम्मद साहब ने कुरान बनाया वा बनवाया, ऐसा विदित होता है ॥५०॥

[खुदा ने मरियम को पसन्द किया]

५१—जिस समय कहा फरिश्तों ने कि ऐ मर्य्यम तुझको अल्लाह ने पसन्द किया, और पवित्र किया ऊपर जगत् की स्त्रियों के। —मं० १। सि० ३। सू० ३। आ० ४१

[अब खुदा और फरिश्ते किसी से बातें क्यों नहीं करते ?]

समीक्षक—भला जब आजकल खुदा के फरिश्ते और खुदा किसी से बातें करने को नहीं आते,

---

बाहर है। सोलहवीं शताब्दी में सुधारवाद के आन्दोलन (Reformation Movement) के एक नेता एन्सलम ने इंगलैंड के पादरियों से पूछा था—'Can God restore virginity to a prostitute ?'—क्या खुदा किसी वेश्या को कुंवारी कर सकता है ? किसी अन्य ने पूछा था—'Can God construct a triangle whose two sides together should fall shorter than the third ?'—क्या खुदा ऐसी त्रिभुज (तिकोन=Triangle) बना सकता है, जिसकी दो भुजाओं की लम्बाई मिल कर तीसरी से कम हो। अथवा 'Can God produce a stone which he cannot lift ?' अर्थात् क्या खुदा ऐसा पत्थर बना सकता है, जिसे वह उठा न सके। इन सब प्रश्नों का उत्तर स्पष्टतः नकारात्मक है। काफिरों को मित्र न बनाने सम्बन्धी मुहम्मद साहब की इस शिक्षा का ही प्रभाव था कि अली ब्रदर्स के नाम से कुख्यात दो भाइयों में से एक मौलाना मुहम्मद अली ने यह कहने का दुस्साहस किया—'एक फ़ासिक और फाजिर मुसलमान महात्मा गांधी से श्रेष्ठ है'। इस आयत से यह भी स्पष्ट है कि लोक में कार्यरत न्यायाधीशों या अफसरों की तरह खुदा भी सिफारिशों को मानता है और अपराधियों को मुक्त कर देता है। ऐसे अपराधी पुनः दुगुनी शक्ति के साथ लोगों पर अत्याचार करते और दुष्कर्मों में प्रवृत्त होते हैं। जो सिफारिश या रिशवत लेकर अपराधी को छोड़ देते हैं, वे इनके निर्दोषों को दण्डित करने में भी संकोच नहीं करते। मुसलमानों का खुदा ऐसा ही है।

५१ देखें—समुल्लास १३, समीक्ष्यांश वाक्य ६३।

तो प्रथम कैसे आये होंगे ? जो कहो कि पहिले के मनुष्य पुण्यात्मा थे अब के नहीं, तो यह बात मिथ्या है। किन्तु जिस समय ईसाई और मुसलमानों का मत चला था, उस समय उन देशों में जङ्गली और विद्याहीन मनुष्य अधिक थे। इसीलिए ऐसे विद्याविरुद्ध मत चल गये। अब विद्वान् अधिक हैं इसलिए नहीं चल सकता। किन्तु जो-जो ऐसे पोकल[1] मजहब हैं, वे भी अस्त होते जाते हैं, वृद्धि की तो कथा ही क्या है ? ॥५१॥

[अल्लाह ने कहा--हो जा, और हो गया]

५२—उसको कहता है कि हो, बस हो जाता है। काफिरों ने धोखा दिया ईश्वर ने धोखा दिया, ईश्वर बहुत मकर करनेवाला है। —मं० १। सि० ३। सू० ३। आ० ४६, ५३

[खुदा ने किससे कहा--और कौन हो गया ?]

समीक्षक—जब मुसलमान लोग खुदा के सिवाय दूसरी चीज नहीं मानते, तो खुदा ने किससे कहा ? और उनके कहने से कौन हो गया ? इसका उत्तर मुसलमान सात जन्म में भी नहीं दे सकेंगे। क्योंकि विना उपादान कारण के कार्य्य कभी नहीं हो सकता। विना कारण के कार्य्य कहना, जानो अपने माँ-बाप के विना मेरा शरीर हो गया, ऐसी बात है।

---

५२. देखें—समीक्ष्यांश वाक्य २८।

Plato and Aristotle assume the extstence of primitive matter to which God gives name and form. God is an artificer or architect, rather than a creator, for primitive substance is thought of as eternal and uncreated and only form is due to the will of God. The Old Testament teaches creation out of nothing. For Cristian thinkers, God creates not from any pre-existent matter but out of nothing. Both matter and form are derived from God.

प्लैटो और अरस्तू दोनों प्रकृति की सत्ता को स्वीकार करते हैं, जिसे ईश्वर नाम और रूप प्रदान करता है। ईश्वर कलाकार या निर्माता है, उत्पादक नहीं, क्योंकि मूल उपादान अनादि-अनुत्पन्न है, ईश्वर तो केवल अपनी इच्छानुसार उसे विभिन्नरूप ही दे सकता है। पुराना नियम (अहदनामा) के अनुसार सृष्टि की उत्पत्ति अभाव से होती है। ईसाई विचारकों के अनुसार ईश्वर पहले से स्थापित प्रकृति से सृष्टि की रचना नहीं करता, अपितु शून्य से करता है और उपादान तथा रूप दोनों की उत्पत्ति ईश्वर से होती है।

यह तो ऐसा है जैसे बढ़ई अपने शरीर में से उत्पन्न लकड़ी से मेज बना दे या जुलाहा अपने में से उत्पन्न रुई से वस्त्र बुन दे। यह प्रकृत्या असम्भव है।

ग्रन्थकार की समीक्षा का प्रभाव है, कि कुरान के नये अनुवादों में इसका रूप यों हो गया है—"और उन लोगों ने खुफिया तदबीर की और अल्लाताला सब तदबीर करनेवालों से अच्छा है" (मौ० अशरफ अली थानवी)। मौलाना यहाँ चूक गये। 'मकर' शब्द का हिन्दी उर्दू में भी प्रयोग होता है। 'मकर' शब्द का अनुवाद मौलाना ने 'खुफिया तदबीर' अर्थात् गुप्त उपाय किया है। इस युक्ति से आयत में आये 'माकरीन्' का अनुवाद 'खुफिया तदबीरें करनेवालों से' होना चाहिए। जाने, मौलाना यहाँ खुफिया शब्द को क्यों छोड़ गये। शाहजी का अनुवाद, जिसपर सत्यार्थप्रकाश की समीक्षा आधारित है, इस प्रकार है—'और मकर किया उन्होंने और मकर किया अल्ला ने और अल्ला

---

१. द्र०—समु० १३, समीक्ष्यांश ११८।

[धोखा खाने और देनेवाला खुदा कभी नहीं हो सकता]

जो धोखा खाता और धोखा करता अर्थात् छल और दम्भ करता है, वह ईश्वर तो कभी नहीं हो सकता, किन्तु उत्तम मनुष्य भी ऐसा काम नहीं करता ।।५२।।

[तीन हजार फरिश्तों के साथ मदद]

५३—क्या तुमको यह बहुत न होगा कि अल्लाह तुमको तीन हजार फरिश्तों के साथ सहाय देवे । —मं० १ । सि० ४ । सू० ३ । आ० १२३

[अब फरिश्तों को लेकर क्यों नहीं आता ?]

समीक्षक—जो मुसलमानों को तीन हजार फरिश्तों के साथ सहाय देता था, तो अब मुसलमानों की बादशाही बहुत-सी नष्ट हो गई, और होती जाती है, क्यों सहाय नहीं देता ? इसलिये यह बात केवल लोभ देके मूर्खों को फसाने के लिये महा अन्याय की है ।।५३।।

[काफिरों पर हमको सहाय कर]

५४—और काफिरों पर हमको सहाय कर । अल्लाह तुह्मारा उत्तम सहायक और कारसाज है । जो तुम अल्लाह के मार्ग में मारे जाओ वा मर जाओ, तो अल्लाह की दया बहुत अच्छी है । —मं १ । सि० ४ । सू० ३ । आ० १४६, १४६, १५६

बेहतर है मकर करनेवालों में' । 'कुरान शरीफ का अनुवाद' में इसका रूप यह है—'और यहूदियों ने (ईसा से) द्रोह किया और ईश्वर ने (उनके साथ) तदबीर (युक्ति) की और युक्ति करनेवालों में ईश्वर की युक्ति सबसे अच्छी है' । इस अनुवाद में 'मकर' के दो विभिन्न अर्थ स्पष्ट हैं—१. द्रोह और २. तदबीर । इस अर्थभेद का आधार क्या है, यह तो अनुवादक ही जाने । मौ० मुहम्मद फारुख खाँ ने 'मकर' का अर्थ 'गुप्त चाल' और 'गुप्त तोड़' किया है । उनका अर्थ इस प्रकार है—'और वे गुप्त चाल चले तो अल्लाह ने भी उसका गुप्त तोड़ किया, और अल्लाह उत्तम तोड़ करनेवाला है ।' अंग्रेज़ी अनुवाद इस प्रकार किया है—

'And they (the disbelievers) schemed and Allah schemed against (against them) and Allah is the best of schemers'. सर्वत्र ग्रन्थकार का जादू सिर पर चढ़कर बोल रहा है ।

५३. आयत के शाहजीकृत अनुवाद में 'तुमको' के स्थान में 'मुसलमानों को' शब्द विद्यमान है—'वास्ते मुसलमानों के क्या किफायत न करेगा तुमको यह कि मदद करे रब्ब तुम्हारा साथ तीन हजार के फरिश्तों के उतारे हुए ।'

बदर की लड़ाई में मुसलमानों की सहायता के लिए तीन हजार फरिश्तों के आने का वर्णन है । उनकी सहायता से मुसलमानों ने सफलता प्राप्त की थी । सूरते तोबा आयत ३५ में आया है—'सेना फरिश्तों की नहीं देखी, वे आये, लड़े, मुसलमानों को विजय दिला गये और पता भी न लगा आये थे ।' युद्ध तो बाद में भी होते रहे, परन्तु फरिश्तों की सेना कहीं और भी आई हो, ऐसी चर्चा और कहीं नहीं मिलती ।

५४. सूरते सिजदा आयत १० में लिखा है—'अधिकार पा लेगा तुम पर मृत्यु का फरिश्ता जो तुम पर नियत किया गया है ।' पुनः सूरते इन्फाल आयत ४८ में कहा है—'क्या ही अच्छा हो कि तू देखे जब कब्जा करते हैं उन लोगों पर फरिश्ते कि जो काफिर हुए, मारते हैं उनके मुंह पर और पीठ पर और (कहते हैं कि) चखो पीड़ा जलने की ।'

[खुदा ऐसी प्रार्थना कभी नहीं सुना करता]

समीक्षक—अब देखिये मुसलमानों की भूल, कि जो अपने मत से भिन्न हैं, उनके मारने के लिये खुदा की प्रार्थना करते हैं। क्या परमेश्वर भोला है, जो इनकी बात मान लेवे ? यदि मुसलमानों क कारसाज अल्लाह ही है, तो फिर मुसलमानों के कार्य नष्ट क्यों होते हैं ? और खुदा भी मुसलमानों के साथ मोह से फसा हुआ दीख पड़ता है। जो ऐसा पक्षपाती खुदा है, तो धर्मात्मा पुरुषों का उपासनीय कभी नहीं हो सकता ॥५४॥

[अल्लाह और रसूल पर ईमान लाओ]

५५—और अल्लाह तुमको परोक्ष नहीं करता, परन्तु अपने पैगम्बरों से जिसको चाहे पसन्द करे। बस अल्लाह और उसके रसूल के साथ ईमान लाओ। —मं० १। सि० ४। सू० ३। आ० १७६

[फिर तो खुदा को लाशरीक कहना बेकार]

समीक्षक—जब मुसलमान लोग सिवाय खुदा के किसी के साथ ईमान नहीं लाते, और न किसी को खुदा का साझी मानते हैं, तो पैगम्बर साहब को क्यों ईमान में खुदा के साथ शरीक किया ? अल्लाह ने पैगम्बर के साथ ईमान लाना लिखा। इसीसे पैगम्बर भी खुदा के साथ शरीक हो गया। पुन: खुदा को लाशरीक कहना ठीक न हुआ।

[क्या खुदा पैगम्बर के विना अपना काम नहीं कर सकता ?]

यदि इसका अर्थ यह समझा जाय कि मुहम्मद साहब के पैगम्बर होने पर विश्वास लाना चाहिये, तो यह प्रश्न होता है कि मुहम्मद साहब के होने की क्या आवश्यकता है ? यदि खुदा उनको पैगम्बर किये विना अपना अभीष्ट कार्य नहीं कर सकता, तो अवश्य असमर्थ हुआ ॥५५॥

जब अल्ला मियाँ हर स्थान में व्यापक है और सर्वशक्तिमान् होने से स्वेच्छापूर्वक लोगों को मार सकता है तो उसे अपने और मनुष्यों के बीच में मलिकुल मौत (मृत्यु का फरिश्ता) को डालने की क्या आवश्यकता है ?

५५. इसलाम अपने आपको तौहीद (एकेश्वरवाद) का वाहिद (एकमात्र) अलम्बरदार मानते हुए खुदा के लाशरीक होने की घोषणा करता है। फिर भी बात-बात में मुहम्मदसाहब का राग अलापता है। अपनी बात बनाये रखने के लिए खुदा और रसूल में अभेद की कल्पना करता है। हम कहते हैं कि यदि अभेद है तो अल्ला और रसूल में से किसी एक को या रसूल को ही अल्लाह मान लेने में क्या हानि है ? और यदि कोई दार्शनिक व्यक्ति केवल अल्लाह पर ही ईमान लाये और रसूल को कलमे में सम्मिलित न करे तो उसे स्वर्ग में स्थान मिलेगा या नहीं ? कहा जा सकता है कि रसूल के विना खुदा का सन्देश मनुष्यों तक नहीं पहुँच सकता, इसलिए पैगम्बर को नहीं छोड़ा जा सकता। तब यह भी कहा जा सकता है कि हजरत मुहम्मद तक खुदा का सन्देश पहुँचाने के लिए भी तो खुदा को फरिश्तों की आवश्यकता पड़ती है तो कलमा में अल्ला व रसूल के साथ जिबरील का नाम भी क्यों न बढ़ाया जाय ? फिर हजरत जिबरील को वह सन्देश किसके द्वारा पहुँचा ? यदि इस प्रकार विचार को आगे बढ़ाया जाय तो कलमा इतना लम्बा हो जाय कि उसका पाठ ही समाप्त न हो। वस्तुत: एकेश्वरवाद का शुद्ध स्वरूप वैदिक धर्म से अतिरिक्त कहीं नहीं मिलेगा।

[लड़ाई में लगे रहो]

५६—ऐ ईमानवालो ! सन्तोष करो, परस्पर थामे रक्खो और लड़ाई में लगे रहो, अल्लाह से डरो कि तुम छुटकारा पाओ। —मं १। सि० ४। सू० ३। आ० २००

[कुरान का खुदा और पैगम्बर दोनों लड़ाईबाज]

समीक्षक—यह कुरान का खुदा और पैगम्बर दोनों लड़ाईबाज थे। जो लड़ाई की आज्ञा देता है, वह शान्तिभङ्ग करनेवाला होता है। क्या नाममात्र खुदा से डरने से छुटकारा पाया जाता है, वा अधर्मयुक्त लड़ाई आदि से डरने से ? जो प्रथम पक्ष है तो डरना-न-डरना बराबर, और जो द्वितीय पक्ष है तो ठीक है ॥५६॥

---

५६. श्री अशरफ अली थानवी ने इस आयत का अनुवाद इस प्रकार किया है—'सब्र करो और मुकाबले में सब्र करो और मुकाबले के लिए मुस्तइद रहो और अल्लातंाला से डरते रहो ताकि तुम पूरे कामयाब हो'। ग्रन्थकार की समीक्षा को सामने रखकर यह अनुवाद किया गया है। शाहजी के 'थाम रक्खो एक-दूसरे को' के स्थान में मौ० थानवी ने 'मुकाबले में सब्र करो' बना दिया है। 'लड़ाई में लगे रहो' को मौ० ने 'मुकाबले के लिए मुस्तइद रहो' कर दिया है और 'छुटकारा पाओ' को 'पूरे कामयाब हो' बना दिया है।

परन्तु इससे वास्तविकता पर परदा नहीं डाला जा सकता। शब्दों में हेर-फेर किया जा सकता है, पर तथ्यों (घटनाओं) को नहीं झुठलाया जा सकता। महात्मा बुद्ध का धर्मप्रवर्तनचक्र सारनाथ में दिये गये धार्मिक प्रवचनों से चालू हुआ और ईसामसीह ने अपने धर्म का प्रचार पहाड़ी पर एकत्र जन-समुदाय के सम्मुख उपदेशों (Sermons on the Mount—Matthew 5) से किया—'Blessed are the merciful, for they will be shown mercy'. दोनों निहत्थे थे। इसके विपरीत अपने धर्म का प्रचार तलवारों से लैस होकर बद्र पर चढ़ाई करके शुरु किया। उस 'लड़ाई में कितने ही लोग मारे गये, कितने कैद कर लिए गये। जो कैद होकर आये वे दो-दो, चार-चार करके गुलामों के रूप में मुसलमान सैनिकों में बाँट दिये गये।' बद्र की लड़ाई में जीतने के बाद मुहम्मदसाहब ने अपने सिपाहियों को सम्बोधित करते हुए कहा था—"तुमने उन्हें (बद्र के लोगों को) कत्ल नहीं किया, बल्कि अल्लाह ने उन्हें कत्ल किया"—सूरते अनफाल, आयत १७। ग्रन्थकार की आलोचना कितनी सटीक है कि 'कुरान का खुदा और पैगम्बर दोनों लड़ाईबाज थे'। मुसलमानों का पवित्र स्थान मक्का में स्थित काबा पहले देवालय था। हजरत मुहम्मद ने रमजान सन् ८ हिजरी में दस हजार मुसलमानों की सेना के साथ मक्का पर आक्रमण किया, खून की नदियाँ बहाकर मक्का पर विजय पाई और सब मूर्तियों को बाहर फेंक दिया। परन्तु रसूलिल्लाह के अत्याचारों की साक्षी देने के लिए एक मूर्ति बची रह गई। पहले वह शिवलिंग के रूप में पूजी जाती थी। अब मुसलमान उसी को 'संगे असबद' के नाम से पूजते और अपना जीवन सफल मानते हैं।

यह निर्विवाद है कि दुनिया में जहाँ भी इसलाम है, वह तलवार की उपज है। स्वामी विवेकानन्द ने मुसलमान आक्रान्ताओं के विषय में लिखा है—"The Mohammadons came upon the people, slaughtering and killing, slaughtering and killing they overran them."

—Teachings of Swami Vivekananda

आज भी वे यही सब कुछ कर रहे हैं।

[लड़ाई में लगे रहो]

५६—ऐ ईमानवालो ! सन्तोष करो, परस्पर थामे रक्खो और लड़ाई में लगे रहो, अल्लाह से डरो कि तुम छुटकारा पाओ। —मं १। सि० ४। सू० ३। आ० २००

[कुरान का खुदा और पैगम्बर दोनों लड़ाईबाज]

समीक्षक—यह कुरान का खुदा और पैगम्बर दोनों लड़ाईबाज थे। जो लड़ाई की आज्ञा देता है, वह शान्तिभङ्ग करनेवाला होता है। क्या नाममात्र खुदा से डरने से छुटकारा पाया जाता है, वा अधर्मयुक्त लड़ाई आदि से डरने से ? जो प्रथम पक्ष है तो डरना-न-डरना बराबर, और जो द्वितीय पक्ष है तो ठीक है ॥५६॥

---

५६. श्री अशरफ अली थानवी ने इस आयत का अनुवाद इस प्रकार किया है—'सब्र करो और मुकाबले में सब्र करो और मुकाबले के लिए मुस्तइद रहो और अल्लातआला से डरते रहो ताकि तुम पूरे कामयाब हो'। ग्रन्थकार की समीक्षा को सामने रखकर यह अनुवाद किया गया है। शाहजी के 'थाम रक्खो एक-दूसरे को' के स्थान में मौ० थानवी ने 'मुकाबले में सब्र करो' बना दिया है। 'लड़ाई में लगे रहो' को मौ० ने 'मुकाबले के लिए मुस्तइद रहो' कर दिया है और 'छुटकारा पाओ' को 'पूरे कामयाब हो' बना दिया है।

परन्तु इससे वास्तविकता पर परदा नहीं डाला जा सकता। शब्दों में हेर-फेर किया जा सकता है, पर तथ्यों (घटनाओं) को नहीं झुठलाया जा सकता। महात्मा बुद्ध का धर्मप्रवर्तनचक्र सारनाथ में दिये गये धार्मिक प्रवचनों से चालू हुआ और ईसामसीह ने अपने धर्म का प्रचार पहाड़ी पर एकत्र जन-समुदाय के सम्मुख उपदेशों (Sermons on the Mount—Matthew 5) से किया—'Blessed are the merciful, for they will be shown mercy'. दोनों निहत्थे थे। इसके विपरीत अपने धर्म का प्रचार तलवारों से लैस होकर बद्र पर चढ़ाई करके शुरु किया। उस 'लड़ाई में कितने ही लोग मारे गये, कितने कैद कर लिए गये। जो कैद होकर आये वे दो-दो, चार-चार करके गुलामों के रूप में मुसलमान सैनिकों में बाँट दिये गये।' बद्र की लड़ाई में जीतने के बाद मुहम्मदसाहब ने अपने सिपाहियों को सम्बोधित करते हुए कहा था—"तुमने उन्हें (बद्र के लोगों को) कत्ल नहीं किया, बल्कि अल्लाह ने उन्हें कत्ल किया"—सूरते अनफाल, आयत १७। ग्रन्थकार की आलोचना कितनी सटीक है कि 'कुरान का खुदा और पैगम्बर दोनों लड़ाईबाज थे'। मुसलमानों का पवित्र स्थान मक्का में स्थित काबा पहले देवालय था। हजरत मुहम्मद ने रमजान सन् ८ हिजरी में दस हजार मुसलमानों की सेना के साथ मक्का पर आक्रमण किया, खून की नदियाँ बहाकर मक्का पर विजय पाई और सब मूर्तियों को बाहर फेंक दिया। परन्तु रसूलिल्लाह के अत्याचारों की साक्षी देने के लिए एक मूर्ति बची रह गई। पहले वह शिवलिंग के रूप में पूजी जाती थी। अब मुसलमान उसी को 'संगे असवद' के नाम से पूजते और अपना जीवन सफल मानते हैं।

यह निर्विवाद है कि दुनिया में जहाँ भी इसलाम है, वह तलवार की उपज है। स्वामी विवेकानन्द ने मुसलमान आक्रान्ताओं के विषय में लिखा है—"The Mohammadons came upon the people, slaughtering and killing, slaughtering and killing they overran them."

—Teachings of Swami Vivekananda

आज भी वे यही सब कुछ कर रहे हैं।

[अल्लाह और रसूल के भक्तों को ही बहिश्त]

५७—ये अल्लाह की हद्दें हैं, जो अल्लाह और उसके रसूल का कहा मानेगा, वह बहिश्त में पहुँचेगा, जिनमें नहरें चलती हैं, और यही बड़ा प्रयोजन है ।। जो अल्लाह की और उसके रसूल की आज्ञा भङ्ग करेगा, और उसकी हद्दों से बाहर हो जायगा, वो सदैव रहनेवाली आग में जलाया जायगा, और उसके लिये खराब करनेवाला दुःख है । —मं० १ । सि० ४ । सू० ४ । आ० १३, १४

[बहिश्त में रसूल की भी साझेदारी, तो खुदा स्वतन्त्र नहीं]

समीक्षक— खुदा ही ने मुहम्मद साहब पैगम्बर को अपना शरीक कर लिया है, और खुद कुरान ही में लिखा है । और देखो, खुदा पैगम्बर साहब के साथ कैसा फसा है, कि जिसने बहिश्त में रसूल का साझा कर दिया है ? किसी एक बात में भी मुसलमानों का खुदा स्वतन्त्र नहीं, तो लाशरीक कहना व्यर्थ है । ऐसी-ऐसी बातें ईश्वरोक्त पुस्तक में नहीं हो सकतीं ।।५७।।

[अल्लाह अन्याय नहीं करता]

५८—और एक त्रसरेणु की बराबर भी अल्लाह अन्याय नहीं करता, और जो भलाई होवे उसका दुगुण करेगा उसको । —मं० १ । सि० ५ । सू० ४ । आ० ४०

---

५७. खुदा को लाशरीक मानते (कहते) हुए भी दोनों की एक-साथ अधीनता मानने की बात कुरान में अनेक बार आई है । यथा—'और फरमाबरदारी करो अल्ला की और कहा मानो रसूल का' (सूरते मायदा, आयत ९२) । 'फरमाबरदारी' भी तो आज्ञापालन ही है । सूरते आल इमरान में आदेश है—'कह, अगर हो तुम चाहते अल्ला को, पस पैरवी करो मेरी । चाहे तुमको अल्ला और बख्शे वास्ते तुम्हारे गुनाह तुम्हारे और अल्लाह बखशनेवाला मेहरबान' (आयत ३१) । यहाँ तो पैगम्बर के विना ईश्वर तक पहुँचना असम्भव निरूपित कर दिया गया है । सूरते निसा आयत १५०-१५१ में खुदा और रसूल में भेद करनेवाले को काफिर घोषित करके उसके लिए अपमानजनक यातना का विधान किया गया है । अल्ला ने तो दुनिया बनाई, बहिश्त और दोजख बनाये, अर्थात् जो कुछ भी लोक-परलोक में है, वह सब उसका बनाया है, उसकी सम्पत्ति है और मुहम्मदसाहब कुछ भी किये विना बराबर के भागीदार (Partner) बन बैठे । धीरे-धीरे स्थिति यह हो गई है कि फैक्टरी को लगानेवाले को कोई नहीं पूछता । खुदा के बन्दे अब यह कहने लग गये हैं—

अल्लाह के पल्ले में वहदत के सिवा क्या है ।
लेना है जो ले लेंगे हम अपने मुहम्मद से ।।

इस प्रकार व्यवहार में रसूल मुख्य हैं, खुदा मालिक होते हुए भी गौण हो गया है । वस्तुतः कुरान में जो कुछ लिखा है, वह सब मुहम्मदसाहब का चाहा और लिखवाया हुआ है, खुदा को उसकी जानकारी तक नहीं दी गई । मुहम्मदसाहब ने अपने विचार खुदा पर आरोपित करके उसे नाहक बदनाम कर रक्खा है ।

५८. श्री अशरफ अली थानवी ने इसका अनुवाद इस प्रकार किया है—'बिला शुबह अल्ला ताला एक जर्रा भर भी जुल्म न करेंगे और अगर एक नेकी हो तो उसको कई गुना कर देंगे' । इसमें 'करता है' के स्थान में 'करेंगे' और 'त्रसरेणु' के स्थान में 'जर्रा' तथा 'दुगुणा' के स्थान में 'कई गुना' कर देने से तात्पर्य में कोई अन्तर नहीं पड़ता । बात तो हिसाब की है । जिसका जितना 'देय' (Due) है,

[कम या अधिक फल देने से खुदा अन्यायी हो जावेगा]

समीक्षक—जो एक त्रसरेणु भी खुदा अन्याय नहीं करता, तो पुण्य का द्विगुण फल क्यों देता है? और मुसलमानों का पक्षपात क्यों करता है? वास्तव में द्विगुण वा न्यून फल कर्मों का देवे, तो खुदा अन्यायी हो जावे ॥५८॥

[खुदा के गुमराह किये को मार्ग नहीं]

५९—जब तेरे पास से बाहर निकलते हैं, तो तेरे कहने के सिवाय=विपरीत सोचते हैं, अल्लाह उनकी सलाह को लिखता है।

अल्लाह ने उनकी कमाई वस्तु के कारण से उनको उलटा किया। क्या तुम चाहते हो कि अल्लाह के गुमराह किये हुए को मार्ग पर लाओ? बस जिसको अल्लाह गुमराह करे, उसको कदापि मार्ग न पावेगा। —मं० १। सि० ५। सू० ४। आ० ८१, ८८

[गुमराह करने से खुदा भी शैतान क्यों नहीं?]

समीक्षक—जो अल्लाह बातों को लिख वहीखाता बनाता जाता है, तो सर्वज्ञ नहीं। जो सर्वज्ञ है, तो लिखने का क्या काम? और जो मुसलमान कहते हैं कि शैतान ही सबको बहकाने से दुष्ट हुआ है, तो जब खुदा ही जीवों को गुमराह करता है, तो खुदा और शैतान में क्या भेद रहा? हाँ इतना भेद कह सकते हैं कि खुदा बड़ा शैतान, वह छोटा शैतान। क्योंकि मुसलमानों ही का कौल है कि जो बहकाता है, वही 'शैतान' है। तो इस प्रतिज्ञा से खुदा को भी शैतान बना दिया ॥५९॥

[काफिरों को मारो; मुसलमानों को नहीं]

६०—और अपने हाथों को न रोकें, तो उनको पकड़ लो, और जहाँ पाओ मार डालो। मुसलमान को मुसलमान का मारना योग्य नहीं। जो कोई अनजाने से मार डाले, बस एक गर्दन मुसलमान का छोड़ना है।[1] और जो खून बहा उन लोगों की ओर से हुई जो सन्धि उस कौम से होवे,

---

उससे न्यून या अधिक देना अन्याय है और पक्षपात पर आधारित है। कैशियर के कैश बाक्स में हिसाब से अधिक राशि निकलना उतना ही बुरा है, जितना कम निकलना। इसी प्रकार रेलगाड़ी का समय से पूर्व आना भी अपराध है और बाद देरी से आना भी। कर्म के अनुसार ही फल मिलना चाहिए।

५९. अर्थात्—'तुम्हारे सामने तो आज्ञा पालन की बात करते हैं, फिर जब तुम्हारे पास से हट जाते हैं तो अन्यथा सोचने लगते हैं'। अगली आयत में कहा है कि 'ऐसे लोगों को जहाँ पाओ, पकड़ो और उनका वध करो'। भला आदमी तो किसी को गलत रास्ते पर जाते देखता है तो स्वमेव उसे सावधान करके सही रास्ते पर डाल देता है। परन्तु मुसलमानों का खुदा लोगों को भटकाता है और कोई भला आदमी उसे सही मार्ग दिखाना चाहे तो उसे भी ऐसा करने से रोकता है। यह नीचता की पराकाष्ठा है।

६०. कुरान के इस जैसे उपदेशों-आदेशों का पालन करनेवालों के रहते संसार में सुख-शान्ति की कल्पना भी नहीं की जा सकती। भले-बुरे लोग तो सभी मत-मतान्तरों में मिलेंगे। किन्तु दुष्टों का

---

१. अर्थात् एक मुसलमान (=ईमानवाले गुलाम या लौण्डी) को गुलामी से आजाद कर देना चाहिये।

और तुम्हारे लिये दान कर देंगे, जो दुश्मन की कौम से हैं। और जो कोई मुसलमान को जानकर मार डाले, वह सदैव काल दोजख में रहेगा। उस पर अल्लाह का क्रोध और लानत है।

—मं १। सि० ५। सू० ४। आ० ६१-६३

[अन्य की हत्या से बहिश्त, मुसलमान की हत्या से दोजख ?]

समीक्षक—अब देखिये महापक्षपात की बात, कि जो मुसलमान न हो, उसको जहाँ पाओ मार डालो, और मुसलमानों को न मारना। भूल से मुसलमानों को मारने में प्रायश्चित्त, और अन्य को मारने से बहिश्त मिलेगा। ऐसे उपदेश को कुए में डालना चाहिये। ऐसे-ऐसे पुस्तक, ऐसे-ऐसे पैगम्बर, ऐसे-ऐसे खुदा और ऐसे-ऐसे मत से सिवाय हानि के लाभ कुछ भी नहीं, ऐसों का न होना अच्छा। और ऐसे प्रामादिक मतों से बुद्धिमानों को अलग रहकर वेदोक्त सब बातों को मानना चाहिये। क्योंकि उसमें असत्य किञ्चिन्मात्र भी नहीं है।

[अन्य मतवालों का इससे विपरीत मत]

और जो मुसलमान को मारे उसको दोजख मिले, और दूसरे मत-वाले कहते हैं कि मुसलमान को मारे तो स्वर्ग मिले। अब कहो इन दोनों मतों में से किसको मानें, किसको छोड़ें ? किन्तु ऐसे मूढ़ प्रकल्पित मतों को छोड़कर वेदोक्त मत स्वीकार करने योग्य सब मनुष्यों के लिये है, कि जिसमें आर्य-मार्ग अर्थात् श्रेष्ठ पुरुषों के मार्ग में चलना और दस्यु अर्थात् दुष्टों के मार्ग से अलग रहना लिखा है[१], सर्वोत्तम है॥६०॥

[रसूल का विरोधी दोजख में]

६१—और शिक्षा प्रकट होने के पीछे जिसने रसूल से विरोध किया, और मुसलमानों से विरुद्ध पक्ष किया, अवश्य हम उसको दोजख में भेजेंगे। —मं० १। सि० ५। सू० ४। आ० ११५

[ये सब बातें अनाप्त की हैं]

समीक्षक—अब देखिये खुदा और रसूल की पक्षपात की बातें। मुहम्मद साहब आदि समझते

स्तवन करते हुए उनके कुकृत्यों के उपलक्ष्य में पुरस्काररूप स्वर्गवास मिलने जैसी बात इसलाम के अतिरिक्त और कहीं नहीं मिलेगी। कंस ने अपने पिता उग्रसेन को कैद में डाल दिया था और औरंगजेब ने अपने पिता शाहजहाँ को कैद में डाल दिया था। किन्तु कंस को हिन्दू (आर्य) 'राक्षस' कहते हैं, वहाँ औरंगजेब को मुसलमान 'गाजी' की उपाधि से विभूषित करते हैं। यह सब कुरान की (कु) शिक्षा का परिणाम है।

६१. इसी आयत में 'विरुद्ध पक्ष लिया' के आगे इतना और आया है—'और ईमानवालों के सिवा किसी और मार्ग का अनुगमन करेगा'। तत्पश्चात् आयत ११७ में लिखा है—'जो अल्लाह के सिवा बस देवियों को पुकारते हैं'। इस वाक्य की व्याख्या (मुहम्मद फारुखखाँ कृत भाष्य) में लिखा है—'जो मुशरिक विभिन्न शक्तियों, गुणों आदि को देवताओं का नाम देकर अल्लाह का शरीक ठहराते हैं, वे

१. ऋ० १।५१।८ में कहा है "हे जगत् के रक्षक राजन्। तू आर्यों=श्रेष्ठमार्ग पर चलनेवालों और दस्युओं=दुष्टमार्ग पर चलनेवालों को जान=उनका भेद समझ। तथा श्रेष्ठकर्म करनेवालों की रक्षा के लिये असत्य चोरी छल-कपट करनेवाले दुष्टों को नष्ट कर—विजानीह्यार्यान् ये च दस्यवो बर्हिष्मते रन्धय शासदव्रतान्"। यहाँ दुष्ट मार्ग पर चलनेवालों को दण्डित करना लिखा है। कुरान के सदृश स्वमत से विपरीत व्यक्ति को दण्ड देना नहीं लिखा।

थे कि जो खुदा के नाम से ऐसी बात हम न लिखेंगे, तो अपना मजहब न बढ़ेगा, और पदार्थ न मिलेंगे, आनन्दभोग न होगा। इसी से विदित होता है कि वे अपने मतलब सिद्ध करने में पूरे थे, और अन्य के प्रयोजन बिगाड़ने में। इससे ये अनाप्त थे, इनकी बात का प्रमाण आप्त विद्वानों के सामने कभी नहीं हो सकता ॥६१॥

[गुमराह कौन ?]

६२—जो, अल्लाह फरिश्तों किताबों रसूल और कयामत के साथ कुफ्र करे, निश्चय वह गुमराह है। निश्चय जो लोग ईमान लाये, फिर काफिर हुए, फिर-फिर ईमान लाये पुनः फिर गये, और कुफ्र में अधिक बढ़े, अल्लाह उनको कभी क्षमा न करेगा, और न मार्ग दिखलावेगा।

—मं० १। सि० ५। सू० ४। आ० १३६, १३७

[फरिश्ते भी साथ हैं, तो खुदा लाशरीक कैसे ?]

समीक्षक—क्या अब भी खुदा लाशरीक रह सकता है ? क्या लाशरीक कहते जाना, और उसके साथ बहुत से शरीक भी मानते जाना, यह परस्पर विरुद्ध बात नहीं है ?

[पाप क्षमा करने से तो पाप और भी बढ़ेंगे]

क्या तीन बार क्षमा के पश्चात् खुदा क्षमा नहीं करता ? और तीन बार कुफ्र करने पर रास्ता

शैतान के बहकावे में आकर ऐसा करते हैं। वास्तव में लक्ष्मी, सरस्वती आदि सब मनगढ़न्त नामों के पीछे किसी का कोई वास्तविक अस्तित्व नहीं है। ये कुछ कल्पित नाम हैं, जो लोगों ने गढ़ लिए हैं'। क्या जिबरील, आदम, हव्वा और अनेकानेक फरिश्ते आदि की सत्ता इतिहास से सिद्ध की जा सकती है ? ये सब लोगों को डरा धमका कर, लालच देकर, धोखा देकर उन्हें अपने जाल में फँसाने की चालें हैं।

६२. सूरते मायदा में लिखा है—'खुदा क्षमा करता है जिसे चाहता है और पीड़ा पहुँचाता है जिसे चाहता है' (आयत १७)। इसका प्रमाण ? सूरते कसस में आया है—

'फिर मुक्का मारा मूसा ने और समाप्त किया उसका जीवन···(मूसा ने) कहा—मैंने अत्याचार किया, तू मुझे क्षमा कर दे। फिर उसने उसे क्षमा कर दिया' (आयत १४-१६)। 'सचमुच अल्लाह क्षमा करता है, सब पाप क्षमा करनेवाला वही है' (सूरते जमर ३)।

सूरते कसस में लिखा है—'मूसा ने दो आदमियों को लड़ते पाया। उनमें एक उसकी अपनी जाति का था और दूसरा उसके शत्रुओं से था। जिसे मूसा ने मुक्का मारा वह दूसरा था'। मूसा खुदा का अपना आदमी था। अपने ३०२ के अपराधी (हत्यारे) को क्षमा कर दिया। अपनों के लिए तो यहाँ तक किया जाता है कि 'बदल डालता है अल्लाह बुराइयाँ उनकी भलाइयों से' (सूरते फ़ुरकान आयत ५०)।

तफ़सीर जलालैन में लिखा है—'ऐसे (अपने) व्यक्ति की बुराइयों को न्याय के दिन नेकियों से बदलेगा'। बुराइयाँ तो कीं इस संसार में और उन्हें भलाइयों से बदल दिया न्याय के दिन। रिटायरमेंट के समय फाइल बदल दी गई ताकि वह पुरस्कार (ग्रैचुइटी=अनुग्रह राशि) का हकदार हो जाये। अब तक इतना ही था कि बुराइयाँ क्षमा हो रही थीं, अब बुराइयों को भलाइयों में बदल कर पुरस्कृत किया जाने लगा। इसीलिए शायद इसकी भूमिका में लिखा है—'यह सूरा (कसस) स्मरण कराती है कि अल्लाह 'अपने' बन्दों के लिए 'रहमान' (अत्यन्त कृपालु) और 'रऊफ' (करुणामय) हैं'। परन्तु जहाँ

दिखलाता है ? वा चौथी बार से आगे नहीं दिखलाता ? यदि चार-चार बार भी कुफ्र सब लोग करें, तो कुफ्र बहुत ही बढ़ जाये ॥६२॥

[काफिरों को दोजख, उन्हें मित्र न बनाओ]

६३—निश्चय अल्लाह बुरे लोगों और काफिरों को जमा करेगा दोजख में। निश्चय बुरे लोग धोखा देते हैं अल्लाह को, और उनको वह धोखा देता है। ऐ ईमानवालो ! मुसलमानों को छोड़ काफिरों को मित्र मत बनाओ।

—मं० १। सि० ५। सू० ४। आ० १४०, १४२, १४४

[जिनका खुदा धोखेबाज, वे धोखेबाज क्यों न हों ?]

समीक्षक—मुसलमानों के वहिश्त और अन्य लोगों के दोजख में जाने का क्या प्रमाण ? वाह जी वाह ! जो बुरे लोगों के धोखे में आता और अन्य को धोखा देता है, ऐसा खुदा हमसे अलग रहे। किन्तु जो धोखेबाज हैं उनसे जाकर मेल करे, और वे उससे मेल करें। क्योंकि—'यादृशी शीतला देवी तादृशः खरवाहनः'[1] जैसे को तैसा मिले तभी निर्वाह होता है। जिसका खुदा धोखेबाज है, उसके उपासक लोग धोखेबाज क्यों न हों ?

वेद का ईश्वर दया और न्याय को एक साथ लेकर चलता है, वहाँ कुरान का खुदा दया के नाम पर न्याय का खून कर देता है। जो अपनों की बुराइयों को भलाइयों में बदल देता है, वह अपने विरोधियों की भलाइयों को भी बुराइयों में बदल देता होगा, यह सहज संभाव्य है।

६३. जीवात्मा और परमात्मा दोनों स्वभाव से पवित्र हैं। परन्तु जीवात्मा अल्पज्ञ एवं अल्पशक्ति होने से प्रकृति तथा दुष्ट जनों के सम्पर्क में आने से दूषित हो जाता है—'संसर्गजा दोषगुणा भवन्ति'। किन्तु परमात्मा सर्वज्ञ एवं सर्वशक्तिमान् होने से नित्यपवित्र है। उसमें कभी दोष नहीं आ सकता। इसलिए बुरे लोग बुरे होने के कारण धोखेबाज हो सकते हैं, बदले में परमेश्वर भी धोखेबाज हो जाये, यह तो सोचा भी नहीं जा सकता। कुत्ता मनुष्य को काट लेता है, पर मनुष्य कभी कुत्ते को नहीं काटता, उसे दण्ड भले ही दे। इसी प्रकार धोखा देनेवालों को परमेश्वर का दण्ड देना तो समझ में आता है, पर उन्हीं की तरह वह (परमेश्वर) भी धोखेबाज हो जाये, यह कल्पनातीत है। किन्तु मुसलमानों के खुदा का बाबा आदम निराला है, वह जो न करे थोड़ा है। इस आपत्ति को टालने के लिए मौ० अशरफ़ अली ने टिप्पणी लिखी है—"इसमें शक नहीं कि अल्लाताला किसी दगा में नहीं आता, वह आलिमे सराइर है लेकिन मनाफिक अपने जेहल व किल्लते अक्ल से यह एतकाद रखते हैं, जैसे उनकी बात सामने लोगों की चल जाती, रिवाज पा जाती है, ऐसे ही उनकी बात कयामत में अल्लाताला के पास जायेगी, यह नामुमकिन है।" सुधार तो किया किन्तु अधूरा। परन्तु धोखे में आने से तो खुदा का स्वयं धोखेबाज हो जाना है। इस पर मौलाना खामोश हैं। सज्जन पुरुष तो ऐसा मानते हैं—'गुणा पूजास्थानं गुणिषु न च लिङ्गं न च वयः' अथवा 'जात-पात पूजे नहिं कोय हरि को भजे सो हरि का होय'। प्रत्येक मत में भले लोग मिल जाते हैं, सभी मतान्ध नहीं होते। हिन्दू तो सूफी सन्तों के प्रति भी श्रद्धावनत देखे जाते हैं। सर सय्यद अहमद खाँ आर्यसमाज के संस्थापक ऋषि दयानन्द के प्रति बड़ी श्रद्धा रखते थे। 'शत्रोरपि गुणा वाच्या दोषा वाच्या गुरोरपि' यह वैदिक आदर्श है।

---

१. यह एक लोकोक्ति है। इसका भाव यह है कि जैसी शीतला देवी है, वैसी उसकी सवारी खर=गदहा है। यहाँ 'तादृशो वाहनः खरः' पाठ होना चाहिये।

[क्या दुष्ट से मित्रता और श्रेष्ठ से शत्रुता उचित है ?]

क्या दुष्ट मुसलमान हो उससे मित्रता, और अन्य श्रेष्ठ[1] मुसलमान भिन्न से शत्रुता करना किसी को उचित हो सकती है ? ॥६३॥

[पैगम्बर पर ईमान लाओ]

६४—ऐ लोगो ! निश्चय तुह्मारे पास सत्य के साथ खुदा की ओर से पैगम्बर आया, बस तुम उन पर ईमान लाओ। अल्लाह माबूद अकेला है। —मं १। सि० ६। सू० ४। आ० १७०, १७१

[क्या खुदा का पैगम्बरों के विना काम नहीं चलता ?]

समीक्षक—क्या जब पैगम्बरों पर ईमान लाना लिखा, तो ईमान में पैगम्बर खुदा का शरीक अर्थात् साझी हुआ वा नहीं ? जब अल्लाह एकदेशी है, व्यापक नहीं, तभी तो उसके पास से पैगम्बर आते-जाते हैं। तो वह ईश्वर भी नहीं हो सकता। कहीं ईश्वर को सर्वदेशी लिखते हैं, कहीं एकदेशी। इससे विदित होता है कि कुरान एक का बनाया नहीं, किन्तु बहुतों ने बनाया है ॥६४॥

[मुर्दार; लोहू, सूअर का मांस हराम]

६५—तुम पर हराम किया गया मुर्दार, लोहू, सूअर का मांस, जिस पर अल्लाह के विना कुछ और पढ़ा जावे, गला घोटे, लाठी मारे, ऊपर से गिर पड़े, सींग मारे, और दरंदे का खाया हुआ।

—मं २। सि० ६। सू० ५। आ० ३

[हलाल हराम की कल्पना ईश्वरीय नहीं]

समीक्षक—क्या इतने ही पदार्थ हराम हैं ? अन्य बहुत से पशु तथा तिर्य्यक् जीव कीड़ी आदि

दोजख खुदा की बनाई है। उसे भरना तो उसे जरूर है। भरने के लिए गुनहगार चाहिए। गुनहगार नहीं मिले तो खुदा ने राह चलतों को पकड़ लिया। उन्होंने—

पूछा गुनाह क्या था ? कहा बल बे सादगी।
क्या यह गुनाह नहीं म हुए तुम गुनहगार ?

६४. निश्चय ही कुरान किसी एक व्यक्ति की एक समय की रचना नहीं है। हम अपने प्रारम्भिक वक्तव्य में लिख आये हैं कि कुरान २३ वर्ष की अवधि में आवश्यकतानुसार थोड़ी-थोड़ी उतरी है। कालान्तर में उसे इधर-उधर से संकलित किया गया है। यह भी निर्विवाद है कि हजरत मुहम्मद उम्मी अर्थात् अनपढ़ थे। फलतः उसमें विसंगतियों की भरमार होना स्वाभाविक है। यही कारण है जितनी बार खुदा को लाशरीक बताया है, न्यूनाधिक उतनी ही बार उसमें हजरत मुहम्मद के शिरक का उल्लेख हुआ है। जैसा कि हम पहले स्पष्ट कर चुके हैं कि मुसलमान बनने या इसलाम में प्रवेश पाने के लिए खुदा के साथ-साथ पैगम्बर पर ईमान लाना लाजिम (अनिवार्य) है। कलमे के शब्द इसमें साक्षी हैं। सातवें आसमान पर आठ फ़रिश्तों के सिर पर धरे तख्त पर बैठा हुआ अल्लाह निश्चय ही एकदेशी है। फ़रिश्तों का खुदा के पास जाना और वहाँ से ला-लाकर मुहम्मद साहब के पास उसके सन्देश को पहुँचाना आदि खुदा और पैगम्बर का समान रूप से एकदेशी होना सिद्ध करता है।

६५. इस विषय में समीक्ष्यांश संख्या ३४ के अन्तर्गत विचार हो चुका है।

---

१. इसका सम्बन्ध इस प्रकार समझें—'और मुसलमान से भिन्न अन्य श्रेष्ठ से शत्रुता करना'।

मुसलमानों को हलाल होंगे ? इस वास्ते यह मनुष्यों की कल्पना है, ईश्वर की नहीं। इससे इसका प्रमाण भी नहीं ॥६५॥

[अल्लाह को उधार दो]

६६—और अल्लाह को अच्छा उधार दो, अवश्य मैं तुह्मारी बुराई दूर करूँगा, और तुह्में बहिश्तों में भेजूंगा। —मं० २। सि० ६। सू० ५। आ० १२

[क्या खुदा का भी दिवाला निकल गया ?]

समीक्षक—वाहजी ! मुसलमानों के खुदा के घर में कुछ भी धन शेष नहीं रहा होगा। जो शेष होता, तो उधार क्यों माँगता ? और उनको क्यों बहकाता कि तुह्मारी बुराई छुड़ाके तुमको स्वर्ग में भेजूंगा ? यहाँ विदित होता है कि खुदा के नाम से मुहम्मद साहेब ने अपना मतलब साधा है ॥६६॥

[खुदा की मर्जी से क्षमा वा दण्ड]

६७—जिसको चाहता है क्षमा करता है, जिसको चाहे दुःख देता है। जो कुछ किसी को भी न दिया, वह तुह्में दिया। —मं० २। सि० ६। सू० ५। आ० १८, २०

[फिर तो बहिश्त वा दोजख में खुदा ही जाये]

समीक्षक—जैसे शैतान जिसको चाहता पापी बनाता है, वैसे ही मुसलमानों का खुदा भी शैतान का काम करता है। जो ऐसा है तो फिर बहिश्त और दोजख में खुदा जावे। क्योंकि वह पाप-पुण्य करनेवाला हुआ, जीव पराधीन हैं। जैसी सेना सेनापति के आधीन रक्षा करती और किसी को मारती है, उसकी भलाई-बुराई सेनापति को होती है, सेना पर नहीं ॥६७॥

[खुदा और रसूल साथ, तो खुदा लाशरीक कैसे ?]

६८—आज्ञा मानो अल्लाह की, और आज्ञा मानो रसूल की। —मं० २। सि० ७। सू० ५। आ० ९२

समीक्षक—देखिये यह बात खुदा के शरीक होने की है। फिर खुदा को 'लाशरीक' मानना व्यर्थ है ॥६८॥

[खुदा ने माफ किया, जो हो चुका]

६९—अल्लाह ने माफ किया जो हो चुका, और जो कोई फिर करेगा अल्लाह उससे बदला लेगा। —मं० २। सि० ७। सू० ५। आ० ९५

---

६६. इस विषय में समीक्ष्यांश संख्या ४० के अंतर्गत विचार हो चुका है। यहाँ इतना विशेष है कि हो सकता है कि धन की आवश्यकता स्वयं मुहम्मद साहब को हो और वह खुदा के नाम पर चंदा बटोर रहे हों, वरना 'रब्बुल आलमीन' को किस चीज की कमी हो सकती है। वैसे लोग न भी दें तो जब बहिश्त में पहुँचाने की गारंटी दी जायेगी तो अवश्य दे देंगे। इसलिए बुराई दूर करके बहिश्त भेजने का प्रलोभन है।

६७-६८. इन दोनों विषयों पर पहले ही पर्याप्त प्रकाश डाला जा चुका है।

६९. तोबा (Sorry) कहने मात्र से मनुष्य का अपराध क्षमा होता रहे तो पाप से निवृत्ति कैसे होगी। भय के बिना पाप से निवृत्ति संभव नहीं। 'नाभुक्तं क्षीयते कर्म'—कर्मफल भोगे बिना उससे

[पाप-क्षमा की बात खुदा की नहीं हो सकती]

समीक्षक—किये हुए पापों का क्षमा करना जानो पापों को करने की आज्ञा देके बढ़ाना है। पाप-क्षमा करने की बात जिस पुस्तक में हो, वह न ईश्वर और न किसी विद्वान् का बनाया है, किन्तु पापवर्द्धक है। हाँ, आगामी पाप छुड़ाने के लिये किसी से प्रार्थना, और स्वयं छोड़ने के लिये पुरुषार्थ तथा पश्चात्ताप करना उचित है। परन्तु केवल पश्चात्ताप करता रहे छोड़े नहीं, तो भी कुछ नहीं हो सकता ॥६६॥

[जाली पैगम्बर बनना पाप है]

७०—और उस मनुष्य से अधिक पापी कौन है, जो अल्लाह पर झूंठ बाँध लेता है, और कहता है कि मेरी और वही[1] की गई, परन्तु वही उसकी ओर नहीं की गई, और जो कहता है कि मैं भी उतारूँगा कि जैसे अल्लाह उतारता है। —मं० २। सि० ७। सू० ६। आ० ६४

[क्या किसी और ने भी पैगम्बर बनने का यत्न किया?]

समीक्षक—इस बात से सिद्ध होता है कि जब मुहम्मद साहब कहते थे कि मेरे पास खुदा की ओर से आयतें आती हैं, तब किसी दूसरे ने भी मुहम्मद साहब के तुल्य लीला रची होगी कि मेरे पास भी आयतें उतरती हैं, मुझको भी पैगम्बर मानो। इसको हठाने और अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाने के लिये मुहम्मद साहब ने यह उपाय किया होगा ॥७०॥

[खुदा और शैतान का झगड़ा]

७१—[2]अवश्य हमने तुमको उत्पन्न किया, फिर तुम्हारी सूरतें बनाईं, फिर फरिश्तों से कहा कि आदम को सिजदा करो, बस उन्होंने सिजदा किया, परन्तु शैतान सिजदा करनेवालों में से न हुआ। कहा जब मैंने तुझे आज्ञा दी, फिर किसने रोका कि तूने सिजदा न किया? [3]कहा, मैं उससे अच्छा हूं। तूने मुझको आग से और उसको मिट्टी से उत्पन्न किया।

छुटकारा नहीं मिलता। जब तक इस बात पर विश्वास नहीं होगा तब तक मनुष्य की उसमें प्रवृत्ति बनी रहेगी। इसलिए क्षमा करना अपराध को बढ़ाना है।

७०. ग्रन्थकार की सूझ बड़ी गहरी है। सचमुच ऐसा ही हुआ होगा। मुहम्मद साहब पर वही उतरने को सत्यापित (Verify) करने का कोई उपाय नहीं था। एकमात्र गवाह थीं उनकी दो बार विधवा हुई पूर्व पतियों से प्राप्त तीन बच्चों की माँ ४० वर्षीया पत्नी खदीजा बेगम। वह अपने पति के विरुद्ध गवाही क्यों देने लगीं? इसलिए मुहम्मद साहब ने अपने से भिन्न इलहाम का दावा करनेवाले सभी को पापी घोषित कर दिया।

७१. शैतान की उत्पत्ति—तफसीरे जलालैन के अनुसार जुमा (शुक्रवार) की पिछली रात को आदम का पुतला घड़ा गया था। सूरते हजर आयत २७ में कहा है—"उत्पन्न किया उसको मिट्टी से और बनाया मैंने दोनों हाथों से।" सूरते स्वाद रकूअ ५ के अनुसार खुदा ने 'शैतान को अग्नि से बनाया

---

१. वही=बही=पुस्तक।
२. इस समीक्ष्यांश का सारा विषय आगे पुनः आया है। द्र०—समीक्ष्यांश १३५।
३. अर्थात् शैतान ने कहा।

कहा, बस उसमें[1] से उतर, यह तेरे योग्य नहीं है कि तू उसमें अभिमान करे। कहा, उस दिन तक ढील दे कि लोग कब्रों में से उठाये जावें। कहा, निश्चय तू ढील दिये गयों से है। कहा, बस इसकी कसम है कि तूने मुझको गुमराह किया, अवश्य मैं भी उनके लिये तेरे सीधे मार्ग पर बैठूंगा। और प्राय: तू उनको धन्यवाद करनेवाला न पावेगा। कहा उससे दुर्दशा के साथ निकल। अवश्य जो कोई उनमें से तेरा पक्ष करेगा, तुम सबसे दोजख को भरूँगा। —मं० २। सि० ८। सू० ७। आ० ११-१८

[खुदा शैतान का कुछ भी न बिगाड़ सका]

समीक्षक—अब ध्यान देकर सुनो खुदा और शैतान के झगड़े को। एक फरिश्ता, जैसाकि चपरासी हो, था। वह भी खुदा से न दबा, और खुदा उसके आत्मा को पवित्र भी न कर सका। फिर ऐसे बागी को, जो पापी बनाकर गदर करनेवाला था, उसको खुदा ने छोड़ दिया। खुदा की यह बड़ी भूल है।

[क्या यह खुदा शैतान का भी शैतान नहीं ?]

शैतान तो सबको बहकानेवाला, और खुदा शैतान को बहकानेवाला होने से यह सिद्ध होता है कि शैतान का भी शैतान खुदा है। क्योंकि शैतान प्रत्यक्ष कहता है कि तूने मुझे गुमराह किया। इससे खुदा में पवित्रता भी नहीं पाई जाती। और सब बुराइयों का चलानेवाला मूल कारण खुदा हुआ। ऐसा खुदा मुसलमानों का ही हो सकता है, अन्य श्रेष्ठ विद्वानों का नहीं।

[जो फरिश्तों से बातें करे, वह देहधारी क्यों नहीं ?]

और फरिश्तों से मनुष्यवत् वार्त्तालाप करने से देहधारी, अल्पज्ञ, न्यायरहित मुसलमानों का खुदा है। इसी से विद्वान् लोग इस्लाम के मजहब को प्रसन्न[2] नहीं करते ॥७१॥

था।' मिट्टी से बननेवाले (पार्थिव) पुरुष से अग्नि से बननेवाला (आग्नेय) पुरुष निश्चय ही श्रेष्ठ होता है। इसी आधार पर शैतान ने अपने से निम्नस्तर के आदम को सिजदा करने से इन्कार कर दिया था। इस अभिमान (स्वाभिमान) के कारण ही खुदा ने उसे बहिश्त से निकल जाने का आदेश दिया। शैतान का आसन ऊँचा था। उसने अपने से निम्नस्तर को सिजदा करने से इन्कार करके सामान्य शिष्टाचार का ही पालन किया था। और यदि घमण्ड करना बुरा है तो शैतान को घमण्डी किसने बनाया ? शैतान स्वयंभू तो था नहीं। भला-बुरा, जैसा भी था, स्वयं खुदा का बनाया हुआ था। जब मनुष्यों में सर्वप्रथम (आदिम पुरुष=आदमी) मानव को, जिससे आगे सारी मानव-सृष्टि की रचना होनी थी, मिट्टी से बनाया था तो शैतान को अग्नि से बनाने की क्या जरूरत थी। और बना ही दिया था तो उसकी स्वाभाविक प्रकृति के अनुरूप किये गए उसके कृत्यों को सहन करना चाहिए था। जब सबको स्वामिभक्त बनाया तो अकेले शैतान को विद्रोही स्वभाव का क्यों बनाया ? यदि बन ही गया था तो सर्वशक्तिमान् परमेश्वर में इतना सामर्थ्य होना चाहिए था कि वह अपनी शक्ति का प्रयोग करके 'पुनर्मूषको भव' कह कर उसे अपने वश में कर लेता।

शैतान की इस प्रार्थना पर कि उसे कुछ दिन और बहिश्त में रहने की अनुमति दे दी जाये, उसे मुहलत देकर अपनी दयालुता का परिचय तो दिया ही, यदि उसे समझा-बुझाकर उसका हृदय

---

१. अर्थात् बहिश्त में से।

२. लेखक ने अपने ग्रन्थों में सर्वत्र 'पसन्द' के लिये 'प्रसन्न' शब्द का प्रयोग किया है। सं० २ से ३० तक यही पाठ है। सं० ३१ या ३२ में 'पसन्द' बदल गया। यही बदला हुआ शब्द सं० ३५ तक मिलता है।

[छः दिन में जगत् को बना पुनः आराम]

७२—निश्चय तुह्मारा मालिक अल्लाह है, जिसने आसमानों और पृथिवी को छः दिन में उत्पन्न किया, फिर करार पकड़ा[1] अर्श पर। दीनता से अपने मालिक को पुकारो।

—मं० २। सि० ८। सू ७। आ० ५४-५५

[जो सर्वशक्तिमान् और सर्वव्यापक नहीं, वह क्या खुदा ?]

समीक्षक—भला जो छः दिन में जगत् को बनावे, 'अर्श' अर्थात् ऊपर के आकाश में सिंहासन पर आराम करे, वह ईश्वर सर्वशक्तिमान् और व्यापक कभी हो सकता है ? इसके न होने से वह खुदा भी नहीं कहा सकता।

[क्या खुदा पुकारने पर ही सुनता है ?]

क्या तुह्मारा खुदा बधिर है, जो पुकारने से सुनता है ? ये सब बातें अनीश्वरकृत हैं। इससे कुरान ईश्वरकृत नहीं हो सकता।

परिवर्तन कर देता तो संसार में आज जो भी बुरा हो रहा है, वह न होता। देशनिकाले से चोट खाया हुआ शैतान जाते-जाते खुदा को सावधान कर गया था—'कहा—ए रब (खुदा) चूंकि पथभ्रष्ट किया है तूने मुझे, मैं गुनाहों से जमीन पर सबको पथभ्रष्ट करूँगा' (सूरते हजर आयत ४६ व सूरते ऐराफ १६-१८)।

७२. **छह दिन में**—यहाँ शंका हो सकती है कि जब अभी तक सूरज की उत्पत्ति नहीं हुई थी तो दिनों की गिनती कैसे की गई ? तफसीरे जलालैन में इसके उत्तर में कहा है कि छः दिन से आशय उतनी मात्रा से है। अहमदी मौ० मुहम्मद अली ने Period अर्थात् 'अवधि' या समय अर्थ किया है। स्पष्ट ही यह अनुवाद ग्रन्थकार की समीक्षा का निराकरण करने के लिये किया गया है। परन्तु कुरान शरीफ में तो अरबी का 'अय्याम' शब्द प्रयुक्त हुआ है। यह 'यौम' शब्द का बहुवचन है, जिसका अर्थ 'दिन' ही है, अवधि नहीं। यही अर्थ अरबी के कोशों में मिलता है। मौ० अशरफ अली ने भी 'दिन' शब्द का ही प्रयोग किया है। उन्होंने अपनी टिप्पणी में लिखा है कि 'जब अल्लाताला को जमीन व आसमान और मखलूकात का पैदा करना मकसूद हुआ तो छः दिन में इतवार से लेकर जुम्मा तक सब-कुछ पैदा किया।' अर्थात् मौलाना ने दिनों के नाम भी बता दिये।

जब खुदा के 'कुन' कहते ही सृष्टि बनकर तैयार हो जाती है तो छः दिन क्यों लगाये ? इसके उत्तर में कहते हैं कि अगर चाहता तो पलभर में बना डालता, 'यह कि आहिस्तगी व जल्दी न करना सिखलाया।' तफसीरे हुसैनी में लिखा है—

मकरे शैतानस्तताजीलोसिताब। खूए रहमानस्त बा सबरो हिसाब॥

तो यह 'कुन' (हो जा) भी जल्दी न कहा जाता होगा, अर्थात् 'कुन' कहने में धैर्य व हिसाब से (आलाप के द्वारा) छः दिन लग जाते होंगे। आगे सूरते हम सजदा (९-११) में फरमाया—"कह, क्या तुम कुफर करते हो उससे जिसने बनाया जमीनों को दो दिन में···और निश्चित किए उसमें भोज्यपदार्थ चार दिन में···फिर बनाये सात आसमान दो दिन में।" इस प्रकार दिनों की संख्या आठ है। तफसीरे

---

१. अर्थात् विश्राम किया सिंहासन पर। द्र०—पृ० ७७७, समीक्ष्यांश ४५। द्र०—बाइबल उत्पत्ति पुस्तक पर्व १ में '६ दिन में सृष्टि बनाना' लिखा है।

[आजकल खुदा क्या कर रहा है ?]

यदि छ: दिनों में जगत् बनाया, सातवें दिन अर्श पर आराम किया, तो थक भी गया होगा। और अब तक सोता है वा जागा[1] है ? यदि जागता है, तो अब कुछ काम करता है वा निकम्मा सैलसपट्टा और ऐश करता फिरता है ? ॥७२॥

[पृथिवी पर झगड़ते मत फिरो]

७३—मत फिरो पृथिवी पर झगड़ा करते। —मं० २। सि० ८। सू० ७। आ० ७४

[झगड़ा न करने और जिहाद की बात परस्पर विरुद्ध]

समीक्षक—यह बात तो अच्छी है, परन्तु इससे विपरीत दूसरे स्थानों में जिहाद करना और काफिरों को मारना भी लिखा है। अब कहो क्या यह पूर्वापर विरुद्ध नहीं है ? इससे विदित होता है कि जब मुहम्मद साहब निर्बल हुए होंगे, तब उन्होंने यह उपाय रचा होगा। और जब सबल हुए होंगे, तब झगड़ा मचाया होगा। इसीसे ये बातें परस्पर विरुद्ध होने से दोनों सत्य नहीं हैं ॥७३॥

जलालैन में इसकी व्याख्या इस प्रकार की गई है—'जमीन दो दिन में इतवार व सोमवार में बनाई गई, उसमें सब वस्तुएँ मंगल व बुध में और आसमान जुमेरात (बृहस्पतिवार) व जुमा (शुक्रवार) की पिछली रात को अचेतन सृष्टि की रचना पूरी हो जाने पर उसी रात को आदम (पहले मनुष्य) को मिट्टी से बनाया गया।' मुहम्मद अली इन्हें सृष्टिक्रम में दर्जे (Stages) मानते हैं, किन्तु अपने इस अर्थ की पुष्टि में कोई प्रमाण नहीं दिया, जबकि 'यौम या अय्याम' का 'दिन' अर्थ कोशसम्मत एवं निर्विवाद है।

७३. ग्रन्थकार की यह समीक्षा उनके कुरान के समग्रता में अध्ययन तथा गहन चिन्तन का परिणाम है। सूरते अलइमरान की २७वीं आयत की व्याख्या करते हुए तफसीरे जलालैन में कहा है—

"यदि किसी भय के कारण सहूलियत के रूप में (काफिरों के साथ) वाणी से मित्रता का वचन कर लिया जाये, किन्तु हृदय में उनसे ईर्ष्या व द्वेषभाव बना रहे तो इसमें कोई हानि नहीं।"

जहाँ इसलाम पूरी तरह शक्तिशाली नहीं होता वहाँ अब भी इस नीति का अनुसरण किया जाता है। अन्यथा सूरते अनफाल, आयत ३९ में उल्लिखित आदेश का पालन किया जाता है। वहाँ लिखा है—

"और लड़ो उनसे यहाँ तक कि न रहे फितना और होवे दीन तमाम वास्ते अल्लाह के।" शाहजी के अनुवाद में प्रान्त (Margin) में टिप्पणी है—"लड़ो जब तक फसाद रहे, यानि काफिरों का जोर न रहे कि ईमान से रोक सकें।" इत्यादि अनेक स्थलों में ऐसा आदेश है। मौ० अशरफ अली ने इसका अनुवाद इस प्रकार परिवर्तित कर दिया है—'और तुम उनसे इस हद तक लड़ो कि उनमें फसादे अकीदा न रहे और दीन अल्लाह ही का हो जावे।' किन्तु इस पर उनकी इस टिप्पणी ने समीक्षक की टिप्पणी की पुष्टि कर दी है—'अगर इसलाम न लावें तो उनसे लड़ो, जब तक कि इसलाम न लावें।' इसी सूरत की १२वीं आयत को भी ७९वें समीक्ष्य में देखें। इसी आयत की ६५वीं आयत में कहा है कि 'ऐ नबी ! रगबत दे मुसलमानों को ऊपर लड़ाई के।'

---

१. अर्थात् जागा हुआ।

[लाठी साँप बन गई]

७४—बस एक ही बार अपना असा[1] डाल दिया, और वह अजगर था प्रत्यक्ष[2] ।

—मं० २ । सि० ६ । सू० ७ । आ० १०७

[ऐसी झूठी बातों को मानना अविद्या है]

समीक्षक—अब इसके लिखने से विदित होता है कि ऐसी झूंठी बातों को खुदा और मुहम्मद साहब भी मानते थे। जो ऐसा है तो ये दोनों विद्वान् नहीं थे। क्योंकि जैसे आँख से देखने और कान से सुनने को अन्यथा कोई नहीं कर सकता। इसी से ये इन्द्रजाल की बातें हैं ॥७४॥

[एक को डुबोया; दूसरे को पार किया]

७५—बस हमने उन[3] पर मेह का तूफान भेजा, टीढ़ी चिचड़ी और मेंढक और लोहू। बस उनसे हमने बदला लिया और उनको डुबो दिया दरियाव में।[4]

और हमने बनी[5] इसराईल को दरियाव से पार उतार दिया। निश्चय वह दीन झूंठा है कि जिसमें ये हैं, और उनका कार्य्य भी झूंठा है।

—मं० २ । सि० ६ । सू० ७ । आ० १३३, १३६, १३८, १३६

[एक जाति को डुबोना, दूसरी को पार करना अधर्म]

समीक्षक—अब देखिये जैसा कोई पाखण्डी किसी को डरवावे[6] कि हम तुझ पर सर्पों को मारने

---

७४. प्रत्यक्ष का अपलाप नहीं हो सकता। लाठी, लाठी ही रहेगी, वह अन्यथा नहीं हो सकती अर्थात् अजगर में परिणत नहीं हो सकती। यदि कोई ऐसा कहता है तो वह मिथ्याभाषी अथवा मिथ्या ज्ञानी है।

७५. यहाँ यहूदी मत को झूठा कहा है। समीक्ष्यांश १४ के अनुसार यहूदी मत के प्रवर्त्तक हजरत मूसा को किताब (तौरेत) दी थी। इस प्रकार हजरत मुहम्मद की तरह मूसा भी पैगम्बर (सन्देश-वाहक) थे। उस आयत (२।५३) में स्पष्ट लिखा है कि 'निश्चय हमने (खुदा ने) मूसा को किताब दी।' मुसलमान भी मूसा को पैगम्बर मानते हैं। तब खुदा से प्राप्त किताब के अनुसार मूसा द्वारा प्रवर्तित दीन (मत) झूठा कैसे हो सकता है? मौ० अबुलकलाम आजाद ने अपने कुरान-भाष्य 'Tarjuman-Al-Quran' में लिखा है—'The Quran cites the recognition of one scripture by another scripture. This is a proof in favour of its contention that all revealed religions present but one and the same basic message' (Page 157). 'The Quran makes no differece between Abraham, Ismail, Jacob, Moses and Jerus' (P. 171). मौलाना द्वारा निर्दिष्ट स्थलों में हमें यह नहीं मिला। किन्तु स्वयं उन्हीं के द्वारा उद्धृत सूरते अल इमरान की १८वीं आयत में लिखा है—'The true religion with God is Islam' अर्थात् 'दीन तो खुदा के नजदीक इसलाम है।' अन्यत्र (६।३०) में कुरान में कहा है—

---

१. अर्थात् लाठी।
२. तुलना करो—समीक्ष्यांश ४० के साथ।
३. सं० २ में 'उस' अपपाठ है।
४. तुलना करो—समीक्ष्यांश १११ के उत्तरार्द्ध के साथ।
५. अर्थात् औलाद=सन्तान।
६. सं० ३४ में 'डरावे' पाठ बदला।

के लिए भेजेंगे, ऐसी यह भी बात है। भला जो ऐसा पक्षपाती, कि एक जाति को डुबा दे, और दूसरे को पार उतारे, वह अधर्मी खुदा क्यों नहीं ?

[दूसरे मतों को झूंठा बताना महामूर्खता है]

जो दूसरे मतों को, कि जिसमें हजारों क्रोड़ों मनुष्य हों, झूंठा बतलावे और अपने को सच्चा, उससे परे झूंठा दूसरा मत कौन हो सकता है ? क्योंकि किसी मत में सब मनुष्य बुरे और भले नहीं हो सकते। यह इकतर्फी डिगरी करना महामूर्खों का मत है।

[क्या तौरेत जबूर का मत झूठा था ?]

क्या तौरेत जबूर का दीन, जो कि उनका था, झूंठा हो गया ? वा उनका कोई अन्य मजहब था कि जिसको झूंठा कहा ? और जो वह अन्य मजहब था, तो कौन-सा था ? कहो कि जिसका नाम कुरान में हो ॥७५॥

[खुदा को देख मूसा का बेहोश होना]

७६—बस तू मुझको[1] अलबत्ता देख सकेगा, जब प्रकाश किया उसके मालिक ने पहाड़ की ओर उसको[2] परमाणु-परमाणु किया, गिर पड़ा मूसा बेहोश। —मं० २। सि० ६। सू० ७। आ० १४३

'और यहूद कहते हैं कि उजेरे खुदा के बेटे हैं और ईसाई कहते हैं कि मसीह खुदा के बेटे हैं। ये उनके मुंह की बातें हैं। पहले काफिर भी इसी तरह की बातें कहा करते थे। ये भी उन्हीं की रीस करने लगे हैं। खुदा इनको हलाक करे।'

इन दोनों उद्धरणों से मौलाना के कथन का खण्डन और ग्रन्थकार की समीक्षा की पुष्टि होती है।

न्याय-व्यवस्था के अनुसार अपराधियों को दण्ड देना उचित है, किन्तु बदले की भावना से किसी को पीड़ा देना सर्वथा अनुचित है—पाप है। ऐसे खुदा को 'रहमान' और 'रहीम' कौन मान सकता है ? और खुदा का दण्ड देने का प्रकार (मेंढक, चिचड़ी आदि भेजना) भी जंगलियों का-सा है, सभ्य पुरुषों जैसा नहीं। ऐसा व्यवहार परमेश्वर को शोभा नहीं देता। अंग्रेजी में ऐसे व्यक्ति को 'Sadist'= दूसरे को पीड़ा देकर प्रसन्न होनेवाला कहा जाता है।

७६. यह पूरी आयत इस प्रकार है—"और जब मूसा हमारे मुकर्रर किए हुए वक्त पर (कोहे तूर) पर पहुँचे और उनके परवरदिगार ने उनसे कलाम किया तो कहने लगे कि ऐ परवरदिगार ! तू मुझे (जलवा) दिखा कि मैं तेरा दीदार देख सकूं। परवरदिगार ने फरमाया कि तुम मुझे हरगिज न देख सकोगे। हाँ, पहाड़ की तरफ देखते रहो। अगर वह (पहाड़) अपनी जगह कायम रहा तो तुम मुझको देख सकोगे। जब उनका परवरदिगार पहाड़ पर प्रकट हुआ तो (रब के अन्वार की तजल्ली ने) उसको रेजा रेजा कर दिया और मूसा बेहोश होकर गिर पड़े। जब होश में आये तो कहने लगे कि तेरी जात पाक है और मैं तेरे हजूर में तौबा करता हूँ और जो ईमान लानेवाले हैं, उनमें मैं अव्वल हूँ।"

---

१. सं० २ में 'तुझको' पाठ है।
२. अर्थात् पहाड़ को।

[खुदा अब अपने चमत्कार क्यों नहीं दिखलाता ?]

समीक्षक—जो देखने में आता है, वह व्यापक नहीं हो सकता। और ऐसे चमत्कार करता फिरता था, तो खुदा इस समय ऐसा चमत्कार किसी को क्यों नहीं दिखलाता ? सर्वथा विद्याविरुद्ध होने से यह बात मानने योग्य नहीं ॥७६॥

[खुदा को सुबह शाम याद करो]

७७—और अपने मालिक को दीनता और डर से मन में याद कर धीमी आवाज से सुबह और शाम को।

[धीमी और ऊँची आवाज की पुकार में से कौन-सी सत्य ?]

समीक्षक—कहीं-कहीं कुरान में लिखा है कि बड़ी[1] आवाज से अपने मालिक को पुकार, और कहीं-कहीं धीरे-धीरे ईश्वर का स्मरण कर। अब कहिए कौन-सी बात सच्ची, और कौन-सी झूंठी ? जो एक दूसरी बात से विरोध करती है, वह बात प्रमत्तगीत के समान होती है। यदि कोई बात भ्रम से विरुद्ध निकल जाय, उसको मान ले, तो कुछ चिन्ता नहीं ॥७७॥

[अल्लाह और रसूल के लिए लूट का माल]

७८—प्रश्न करते हैं तुझको लूटों से[2]। कह, लूटें वास्ते अल्लाह के और रसूल के हैं, और डरो अल्लाह से। —मं० २। सि० ९। सू० ८। आ० १

जिस खुदा ने मूसा को पैगम्बर बनाकर भेजा था, उसे अपनी शक्ति का विश्वास दिलाने के लिए यह जादू का खेल दिखाना पड़ा। इससे पूर्व समीक्ष्यांश ७४ में मूसा द्वारा लाठी को अजगर बना देने का उल्लेख हुआ है। यह तमाशा मूसा को फिऔन की कौम को अपने पैगम्बर होने का विश्वास दिलाने के लिए करना पड़ा था और तब उन्होंने कहा था कि 'यह अल्लामा बड़ा जादूगर है।'

बच्चों के मनोरंजन के लिए लिखी गई कहानियों से भरी पुस्तक ईश्वरीय ज्ञान (इलहाम) होने का दावा करती है—'किमाश्चर्यमतः परम्।'

७७. **सुबह और शाम को**—खुदा को दो बार—सुबह और शाम को याद करना वैदिकों की सायं-प्रातः सन्ध्या करने के समान है। इससे मुसलमानों के दिन में पाँच बार नमाज पढ़ने का निषेध हो जाता है। ऊँची आवाज से अजान लगाना देखकर ही कबीर ने कहा था—

कंकड़ पत्थर जोड़के मस्जिद लई बनाय।
ता चढ़ मुल्ला बाँग दे क्या बहरा हुआ खुदाय ॥

७८. सभी मत-मतान्तरों के अनुयायियों में लुटेरे मिल सकते हैं, परन्तु लूट-मार करने का आदेश, वह भी खुदा की ओर से और वह भी अपने तथा अपने रसूल के लिए ! इस बात की कल्पना इसलाम को छोड़कर अन्य किसी मत में नहीं की जा सकती। अहमदी मौ० मुहम्मद अली ने आयत में आये 'अनफआल' का अर्थ 'Addition or accession to what is due' (प्राप्तव्य में वृद्धि या प्राप्ति) किया

---

१. अर्थात् ऊँची।
२. अर्थात् प्रश्न करते हैं लूटों के बारे में तुझसे।

[क्या डाका लूटमार आदि भी उत्तम काम हैं ?]

समीक्षक—जो लूट मचावें, डाकू के कर्म करें-करावें, और खुदा तथा पैगम्बर और ईमानदार भी बनें, यह बड़े आश्चर्य की बात है। और अल्लाह का डर बतलाते, और डाका आदि बुरे काम भी करते जायें, और 'उत्तम मत हमारा है' कहते लज्जा भी नहीं। हठ छोड़के सत्य वेदमत का ग्रहण न करें, इससे अधिक कोई बुराई दूसरी होगी ? ॥७८॥

[काफिरों को मारो, मैं मदद दूंगा]

७९—और काटे जड़ काफिरों की। मैं तुमको सहाय दूँगा, साथ सहस्र फ़रिश्तों[1] के पीछे-पीछे आनेवाले। अवश्य मैं काफिरों के दिलों में भय डालूँगा। बस मारो ऊपर गर्दनों के, मारो उनमें से प्रत्येक पोरी (=सन्धि) पर।   —मं० २। सि० ९। सू० ८। आ० ७, ९, १२

[मारकाट की बातें खुदा की नहीं हो सकतीं]

समीक्षक—वाह जी वाह ! कैसा खुदा और कैसे पैगम्बर दयाहीन, और मुसलमानी मत से भिन्न काफिरों की जड़ कटवावें। और खुदा आज्ञा देवे—'उनकी[2] गर्दन पर मारो'। और हाथ-पग के

है। समीक्षाकार (ग्रन्थकार) के आक्षेप को मिटाने के लिए यह अर्थ खींचतान करके बनाया गया है, क्योंकि कादियानी कुरान शरीफ के हिन्दी अनुवाद में इसका अर्थ 'लूट का माल' ही किया गया है। मौलाना अशरफ अली ने 'गनीमत' अर्थ किया है। 'गनीमत' का अर्थ है---लूट में प्राप्त शत्रु-सम्पत्ति। मौलाना अशरफ अली ने टिप्पणी में इस आयत के उतरने का हेतु लिखा है कि—'जंग में बाजे (कई) आगे बढ़े और बाजे पुश्त पर रहे। जब गनीमत (लूट का माल) जमा हुई तो आगे बढ़नेवालों ने कहा—यह हक्क हमारा है कि फतह हमने की। और पुश्तवालों ने कहा—तुम हमारी कुअत से लड़े। हक्कताला ने दोनों को खामोश किया—सो मालिक माल का अल्लाह है और उसका रसूल है।' इस व्याख्या या स्पष्टीकरण से ग्रन्थकार के आक्षेप की पुष्टि होती है।

७९. कुरान के भाष्यकारों का विचार है कि उसमें जहाँ-कहीं भी बलप्रयोग का निषेध हुआ है, वह परिस्थितियाँ अनुकूल न होने की दशा में हुआ है, अन्यथा सुन्नी सम्प्रदाय की प्रामाणिक संहिता 'हदाया' के अनुसार काफिरों से युद्ध करना मुसलमानों का कर्त्तव्य है, चाहे वे (काफिर) अपनी ओर से आरम्भ न भी करें। सर अब्दुल रहीम, जो किसी समय कलकत्ता हाईकोर्ट के जज रहे थे, ने एक पुस्तक लिखी थी—'Muslim Jurisprudence' अर्थात् इसलामी आचार-संहिता' जिसे न्यायालयों में इसलामी आचारसंहिता पर प्रामाणिक पुस्तक माना जाता था। उसमें लिखा है—

"मक्का के काफिरों ने जो व्यवहार हजरत रसूल से किया था, उससे अनुमान किया जाता है कि मुसलमानों को सदा अमुसलिमों से शत्रुता व पक्षपात से प्रतिशोध व खतरों की आशंका है। इसलिए इसलाम की सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए इसलामी राज्य यदि उसमें सामर्थ्य है तो किसी विरोधी या अमुसलिम के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर सकता है।"

प्रश्न उठता है कि मुसलमानों को ही सबसे खतरा क्यों है, अन्य सबको सबसे क्यों नहीं ? उत्तर कुरान की इस आयत में स्पष्ट किया है—

---

१. समीक्ष्यांश ५३ में तीन हजार फरिश्तों से सहाय देने का उल्लेख है।
२. सं० २ में 'उनको' पाठ है।

जोड़ों को काटने का सहाय और सम्मति देवे। ऐसा खुदा लङ्केश[1] से क्या कुछ कम है? यह सब प्रपञ्च कुरान के कर्त्ता[2] का है, खुदा का नहीं। यदि खुदा का हो, तो ऐसा खुदा हमसे दूर और हम उससे दूर रहें ॥७६॥

ऐ लोगों! जो ईमान लाये हो, मत चुनो काफिरों में से मित्र, केवल मुसलमानों को ही मित्र बनाओ। (सूरते निसा आयत १४१)

इतने पर ही बस नहीं की, आगे कहा—'और मार डालो उनको जहाँ भी पाओ' (बकर १९१)।

'जिन लोगों को अल्लाताला ने बनाया ही दोजख का ईंधन बनाने के लिए है, उनसे मित्रता का सम्बन्ध कैसे बनाया जा सकता है? वे तो ईश्वरीय क्रोध के पात्र हैं, उनके जीवन का मूल्य ही क्या है?' (तोबा २३)।

जिनके मन में इस प्रकार शत्रुभाव ही भरा हो, उन्हें सर्वत्र शत्रु ही दीख पड़ें तो क्या आश्चर्य है। और काफिरों की जड़ें काटने के लिए आवश्यक है कि—

लड़ो उनसे यहाँ तक कि न शेष रहे काफिरों का उपद्रव व उनका वर्चस्व समाप्त हो जाये और सारा समुदाय अल्लाह के दीन में मिल जाये। (सूरते अनफाल आयत ३८)।

इसपर जलालैन की टिप्पणी है—और काफिरों की हत्या करो यहाँ तक कि इसलाम-विरोधी कोई भी विचारधारा मतभेद का नामोनिशान तक न बच पाये और सर्वत्र अल्लाह का दीन ही फैल जाये। उसके सिवा और की पूजा न रहे।

मौलाना आजाद फरमाते हैं—"Why was there opposition to Quran? Because the followers of each faith desired that the Quran should declare the faith of rivals as false And since the Quran would not do that, no one was pleased with it." (M. Abul Kalam Azad: Tarjuman Al-Quran, P. 179) क्या उपर्युक्त आयत और उसपर तफसीरे जलालैन की टिप्पणी को देखने के बाद कोई मौलाना आजाद के वक्तव्य को स्वीकार कर सकता है?

इस उद्देश्य की पूर्त्ति के लिए अल्लाताला ने फरमाया है—

ऐ पैगम्बर! मुसलमानों को काफिरों से लड़ने के लिए उत्तेजित करो कि तुम बीस आदमी भी होगे तो उन (काफिर) दो सौ पर विजय प्राप्त कर लोगे। (टिप्पणी जलालैन)।

मौ० अशरफ अली थानवी ने टिप्पणी में जो लिखा है, उसका सार यह है—'बद्र के युद्ध के दिन पेगम्बर ने अपने सहायकों की ओर देखा तो तीन सौ कुछ ऊपर थे। मुशरिकों की ओर देखा तो वह हजार के लगभग थे। आपने अत्यन्त नम्रता से प्रार्थना की कि हे अल्ला! अपना वचन मुझसे पूरा कर। दोबारा भी इसी तरह प्रार्थना की। इसपर खुदा ने यह आयत उतारी। पहले पहल खुदा ने एक हजार फरिश्ते उतारे, फिर एक हजार और फिर एक हजार से पाँच हजार तक।' अगर सात हजार 'फरिश्तों' की सहायता से तीन सौ मुसलमानों ने एक हजार मुशरिकों को परास्त किया तो कौन-सा तीर मारा। ऐसे लड़ाईबाज खुदा और उसके बन्दों के रहते संसार में शान्ति कैसे रह सकती है?

---

१. अर्थात् रावण = राक्षस से।
२. सं० २ में 'करता' अपपाठ है।

[अल्लाह और रसूल को पुकारो; उनकी चोरी मत करो]

८०—अल्लाह मुसलमानों के साथ है। ऐ लोगो! जो ईमान लाये हो, पुकारना स्वीकार करो वास्ते अल्लाह के और वास्ते रसूल के।

ऐ लोगो! जो ईमान लाये हो, मत चोरी करो अल्लाह की रसूल की और मत चोरी करो अमानत अपनी की। और मकर करता था अल्लाह, और अल्लाह भला[1] मकर करनेवालों का है।

—मं० २। सि० ६। सू० ८। आ० १६, २४, २७, ३०

[क्या खुदा बधिर है, जो पुकारे विना नहीं सुनता ?]

समीक्षक—क्या अल्लाह मुसलमानों का पक्षपाती है ? जो है तो अधर्म करता है। नहीं तो ईश्वर सब सृष्टिभर का है। क्या खुदा विना पुकारे नहीं सुनता, बधिर है[2] ? और उसके साथ रसल को शरीक करना बहुत बुरी बात नहीं है ?

[खुदा और रसूल का कौन-सा खजाना भरा था, जिसे चुराते ?]

अल्लाह का कौन-सा खजाना भरा है, जो चोरी करेगा ? क्या रसूल और अपनी[3] अमानत की चोरी छोड़कर अन्य सबकी चोरी किया करें ? ऐसा उपदेश अविद्वान् और अधर्मियों का हो सकता है।

---

८०. मौ० अशरफ अली ने 'मुसलमानों' शब्द के स्थान में 'ईमानवालों' कर दिया है। 'अल्लाह की रसूल की' के स्थान में 'अल्लाह और रसूल के हकूक में' लिखा है, किन्तु मूल (अरबी) में 'हक्क' अर्थ का वाचक कोई शब्द नहीं है। इसी प्रकार 'अमानत' के सामान्य अर्थ को बदलकर 'काबिले हिफाजत चीजों' कर दिया है। 'अमानत' का अर्थ मौलाना ने 'खलल' और 'मकर' का 'तदबीर' कर दिया है। 'कुरानशरीफ का हिन्दी अनुवाद' में पूरी आयत के अर्थ में वाक्य इस प्रकार बना दिया गया है—'काफिर दाओ कपट बना रहे थे और ईश्वर (अपना) दाओ कर रहा था और ईश्वर सर्वयुक्तिमानों में अधिक युक्तिमान् है'। मौ० मुहम्मद अली का अंग्रेजी अनुवाद मौ० अशरफ अली से मिलता है। खुदा अपनी किताब में अपने को कपटी छली क्यों कहेगा ? निश्चय ही मुहम्मदसाहब ने अपने और अपनी उम्मत (अनुयायियों) के अपराधों को हल्का करने के लिए खुदा को अपने गैंग में शामिल कर लिया है ताकि कयामत के दिन (रात) वे सब मुहम्मदसाहब पर ईमान लाने के कारण एक साथ बरी होकर बहिश्त में पहुँचा दिये जायें। अन्यथा परमेश्वर तो सर्वथा 'अपापविद्धम्' (यजु:० ४०।८) निष्पाप है। वस्तुत: कुरान में जो कुछ है, वह खुदा के नाम से मुहम्मद साहब का ही लिखाया हुआ है।

मौ० अशरफ अली ने 'मुसलमानों' के स्थान में तो 'ईमानवालों' कर दिया, किन्तु अल्लाह को मुसलमानों का पक्षपाती होना तो कुरान में जगह-जगह लिखा है, जैसे—

अल्ला तुम्हारा ही काम बनानेवाला है—सूरते अल इमरान रकूअ १४।

आक्षेप तो इस वाक्य में आए इस वचन पर है कि जिससे अल्ला का मुसलमानों का ही रक्षक होना उसके पक्षपात की निशानी बन जाता है—

---

१. भला=उत्तम=अधिक।

२. तुलना करो—'ता चढ़ि मुल्ला बाँग दे, क्या बहरा हुआ खुदाय।' कबीर-वचन।

३. सं० २ में 'अपने' पाठ है।

[क्या मकर करनेवाला खुदा अधर्मी नहीं ?]

भला, जो मकर करता, और जो मकर करनेवालों का सङ्गी है, वह खुदा कपटी छली और अधर्मी क्यों नहीं ? इसलिए यह कुरान खुदा का बनाया हुआ नहीं है। किसी कपटी-छली का बनाया होगा। नहीं तो ऐसी अन्यथा बातें लिखित क्यों होतीं[1] ? ॥८०॥

[लूट के माल में खुदा वा रसूल का ५वाँ भाग]

८१—और लड़ो उनसे, यहाँ तक कि न रहे फ़ितना अर्थात् बल काफ़िरों का, और होवे दीन तमाम वास्ते अल्लाह के ॥

और जानो तुम यह कि जो कुछ तुम लूटो किसी वस्तु को[2] निश्चय वास्ते अल्लाह के है पाँचवाँ हिस्सा उसका और वास्ते रसूल के ॥ —मं० २। सि० ९। सू० ८। आ० ३९, ४१

[मजहब के नाम पर लड़ाई की बात सिखाना अच्छा नहीं]

समीक्षक—ऐसे अन्याय से लड़ने-लड़ानेवाला, मुसलमानों के खुदा से भिन्न शान्तिभङ्गकर्त्ता[3] दूसरा कौन होगा ?

[क्या लूट के माल में खुदा भी हिस्सा बटाने लगा ?]

अब देखिये यह मजहब, कि अल्लाह और रसूल के वास्ते सब जगत् को लूटना-लुटवाना लुटेरों का काम नहीं है ? और लूट के माल में खुदा का हिस्सेदार बनना जानो डाकू बनना है। और ऐसे लुटेरों का पक्षपाती बनना, खुदा अपनी खुदाई में बट्टा लगाता है।

काफिरों को मिटानेवाला है--वही रकूअ २।

और काफिरों की, अल्लाह जड़ें काटनेवाला है—सूरते अनफाल आयत ७।

जड़ कट जायेगी तो फिर दोजख किस काम आयेगी ? और यदि दोजख सदा बनी रहनेवाली है तो यह जड़ नहीं कट सकती। सूरते बकर में कहा है--

अतः खुदा काफिरों पर लानत फटकार करता है।—आयत ७९

ऐसा पक्षपाती खुदा 'रब्बुल आलमीन'—सारे संसार का मालिक कैसे कहला सकता है ?

८१. लूट के प्रसंग में कुरानशरीफ में अन्यत्र लिखा है—

'और वादा किया है तुमको अल्लाह ने बहुत लूटों का कि उनको प्राप्त करोगे।'

—सूरते फातिहा, रकूअ ३

'तुमसे लूटों के (माल) के सम्बन्ध में पूछते हैं, लूटें खुदा के लिए और रसूल के लिए हैं। इसलिए खुदा से डरो। अर्थात् खुदा व रसूल का हिस्सा दो और शेष तुम ले जाओ। यही नहीं, कुछ और भी है।' फरमाया है—

'और वह (लूटी हुई स्त्रियाँ) तुम्हारे दाएँ हाथ जिसके स्वामी बनें।'

यह कुरान की एक परिभाषा है, जिसका अनुवाद प्रत्येक भाष्यकार ने युद्धों में हाथ लगी स्त्रियाँ किया है। उन्हें लौंडियों (दासियों) के रूप में रक्खा जा सकता है।

---

१. अर्थात् क्यों लिखी जातीं ?

२. सं० २ में 'से' अपपाठ है।

३. सं० २ में 'करता' अपपाठ है।

[ऐसे मत न चलते तो संसार आनन्द में रहता]

बड़े आश्चर्य की बात है कि ऐसा पुस्तक, ऐसा खुदा और ऐसा पैगम्बर संसार में ऐसी उपाधि और शान्तिभङ्ग करके मनुष्यों को दुःख देने के लिये कहाँ से आया ? जो ऐसे-ऐसे मत जगत् में प्रचलित न होते, तो सब जगत् आनन्द में बना रहता ॥८१॥

[फरिश्तों द्वारा काफिरों का नाश]

८२—और कभी देखे जब काफ़िरों को फ़रिश्ते कब्ज[1] करते हैं, मारते हैं मुख उनके और पीठें उनकी, और कहते चखो अजाब जलने का ॥

हमने उनके पाप से उनको मारा, और हमने फिराओन की कौम को डुबा दिया ॥ और तैयारी करो वास्ते उनके जो कुछ तुम कर सको ॥ —मं० २ । सि० ६ । सू० ८ । आ० ५०, ५४, ६०

[वे फरिश्ते अब कहाँ सो गये ?]

समीक्षक—क्योंजी ! आजकल रूस ने रूम आदि, और इंगलैंड ने मिश्र की दुर्दशा कर डाली, फ़रिश्ते कहाँ सो गये ? और अपने सेवकों के शत्रुओं को खुदा पूर्व मारता डुबाता था, यह बात सच्ची हो तो आजकल भी ऐसा करे। जिससे ऐसा नहीं होता, इसलिए यह बात मानने योग्य नहीं ।

[विधर्मियों को मारने की आज्ञा ईश्वर की नहीं हो सकती]

अब देखिये, यह कैसी बुरी आज्ञा है कि—'जो कुछ तुम कर सको वह भिन्न मत-वालों के लिये दुःखदायक कर्म करो'। ऐसी आज्ञा विद्वान् और धार्मिक दयालु की नहीं हो सकती। फिर लिखते

कहाँ 'मा गृधः कस्य स्विद्धनम्' (यजुर्वेद ४०।१) तथा 'मातृवत् परदारेषु' जैसी वैदिक धर्म की उदात्त भावनाएँ और कहाँ कुरान की लूट-मार तथा परस्त्रीगमन जैसी निकृष्ट शिक्षा ! इस प्रकार की परस्परविरोधी प्रेरणा करनेवाले ईश्वर और अल्लाह एक कैसे हो सकते हैं ?

८२. शाहजी ने 'फरिश्ते' के स्थान में बन्धनी में 'रूहें' लिखा है, परन्तु मौ० अशरफ अली ने जानकर शब्दानुवाद में मिला दिया है, जो मूल में नहीं है। मौलाना अबुल कलाम आजाद ने अपने कुरान के भाष्य 'Tarjuman Al-Quran' में पृष्ठ ८३ पर लिखा है—

'The question may be asked : If the essential teaching of the Quran is one of mercy or Rahmat, how is it that the Quran is harsh on those who do not accept its message.' (यदि कुरान की मुख्य शिक्षा दयालुता की है तो कुरान उनके प्रति इतना कठोर क्यों है जो उसकी बात नहीं मानते)।

मौलाना इसके उत्तर में कहते हैं—

'There is no doubt that the Quran expresses itself in very strong terms here and there against those who had refused to accept its message in the time of the Prophet.' (इसमें सन्देह नहीं कि कुरान में उन लोगों के विरुद्ध अत्यन्त कठोर वचनों का प्रयोग किया है, जिन्होंने पैगम्बर के समय में कुरान की शिक्षा को मानने से इन्कार कर दिया था)। परन्तु 'In the time of the Prophet' शब्दों को मौलाना ने अपनी ओर से जोड़ा है। कुरान में सैकड़ों आयतें हैं, जिनमें 'काफिरों' 'मुशरिकों' आदि नामों से अमुसलिमों को कत्ल करने, आग में झोंकने, लूटने आदि का आदेश दिया गया है। संसार का इतिहास साक्षी है कि मुसलमान जहाँ भी गये; एक हाथ में कुरान और दूसरे में तलवार लेकर गये और जहाँ भी

---

१. अर्थात् कब्जे में लेते हैं वा बन्धन में डालते हैं।

हैं कि—'खुदा दयालु और न्यायकारी है'। ऐसी बातों से मुसलमानों के खुदा से न्याय और दयादि सद्गुण दूर बसते हैं ॥८२॥

[नबी को युद्ध भड़काने का आदेश; लूट का माल हलाल]

८३—ऐ नबी ! किफ़ायत है तुझको अल्लाह, और उनको जिन्होंने मुसलमानों से तेरा पक्ष किया ॥ ऐ नबी रगवत अर्थात् चाह चस्कावे[1] मुसलमानों को ऊपर लड़ाई के, जो हों तुममें से २० आदमी सन्तोष[2] करनेवाले, तो पराजय करें दो सौ का ॥ बस खाओ उस वस्तु को[3] कि लूटा है तुमने हलाल पवित्र, और डरो अल्लाह से। वह क्षमा करनेवाला दयालु है ॥

—मं० २। सि० १०। सू० ८। आ० ६४, ६५, ६६

[युद्ध भड़काने और लूटमार की बातें खुदा नहीं कह सकता]

समीक्षक—भला यह कौन-सी न्याय विद्वत्ता और धर्म की बात है कि जो अपना पक्ष करे, और चाहें अन्याय भी करे, उसी का पक्ष और लाभ पहुँचावे ? और जो प्रजा में शान्तिभङ्ग करके लड़ाई करे-करावे, और लूटमार के पदार्थों को हलाल बतलावे, और फिर उसी का नाम क्षमावान् दयालु लिखे, यह बात खुदा की तो क्या किन्तु किसी भले आदमी की भी नहीं हो सकती। ऐसी-ऐसी बातों से कुरान ईश्वरवाक्य कभी नहीं हो सकता ॥८३॥

[माँ-बाप को छोड़ दो; काफिरों से लड़ो]

८४—सदा रहेंगे बीच उसके, अल्लाह के समीप, है उसके पुण्य बड़ा ॥ ऐ लोगो ! जो ईमान

लोगों ने कुरान को मानने अर्थात् मुसलमान बनने से इन्कार किया, वहाँ विवेच्य या समीक्ष्य आयत के अनुसार 'जो कुछ वे कर सके' किया। और यह पैगम्बर के समय से लेकर आज तक सदा सर्वत्र होता आया है।

८३. किफायत है=काफी है; रगबत दे=जिहाद के लिए उभार दे अर्थात् लड़ाई के लिए प्रेरणा कर; सन्तोष करनेवाले=साबित कदम अर्थात् डटे रहनेवाले। मौ० अशरफ अली ने इसका अनुवाद इस प्रकार किया है—'ऐ पैगम्बर ! आप मोमनीन को जिहाद की तरगीब कीजिए। किन्तु मौ० मुहम्मद अली ने पुराना ही अनुवाद माना है—'O Prophet ! urge to believers to war.' 'लूटा है' का अर्थ शाहजी ने 'गनीमत' किया है, किन्तु मौ० अशरफ अली ने 'लिया है' कर दिया है। ग्रन्थकार की समीक्षा के कारण यह हेरफेर करने का प्रयास किया गया है। किन्तु सीधा अर्थ 'लूटा है' ही है। मौ० फतेह मुहम्मद खाँ ने २०-२०० आदि की व्याख्या यह की है कि जितना ईमान ज्यादा होता है, उतनी ही बहादुरी ज्यादा होती है। किन्तु जिहाद कहलानेवाली लड़ाई में मार-काट और लूटपाट ही होती है, उसमें ईमान कहाँ ?

८४. मौ० फतेह मुहम्मद खाँ ने इन आयतों का अनुवाद इस प्रकार किया है—"ऐ ईमान-वालो ! अगर तुम्हारे (माँ और) बाप और (बहन) भाई ईमान के मुकाबले में कुफ्र को पसन्द करें तो

---

१. अर्थात् उभार दे मुसलमानों को लड़ाई के वास्ते।
२. यहाँ 'सन्तोष करनेवाले' के स्थान में 'जमे रहनेवाले लड़ाई में' पाठ होना चाहिये।
३. सं० २ में 'से' अपपाठ है।

लाये हो मत पकड़ो बापों अपने को और भाइयों अपने को मित्र जो दोस्त रखें कुफ्र को ऊपर ईमान के[1] ॥

फिर उतारी अल्लाह ने तसल्ली अपनी ऊपर रसूल अपने के, और ऊपर मुसलमानों के। और उतारे लश्कर नहीं देखा तुमने उनको, और अजाब किया उन लोगों[2] को और यही सजा है काफिरों को।

फिर-फिर आवेगा अल्लाह पीछे उसके ऊपर जिसको चाहे ॥ और लड़ाई करो उन लोगों से जो ईमान नहीं लाते ॥ — मं० २। सि० १०। सू० ६। आ० २२, २३, २६, २७, २६

[सर्वव्यापक ईश्वर बहिश्तवालों के ही पास कैसे ?]

समीक्षक—भला जो बहिश्तवालों के समीप अल्लाह रहता है, तो सर्वव्यापक क्योंकर हो सकता है ? जो सर्वव्यापक नहीं, तो सृष्टिकर्त्ता[3] और न्यायाधीश नहीं हो सकता।

[माँ-बाप को छुड़वाना अन्याय]

और अपने माँ-बाप भाई और मित्र को छुड़वाना केवल अन्याय की बात है। हाँ, जो वे बुरा उपदेश करें उसे न मानना, परन्तु उनकी सेवा सदा करनी चाहिए।

[अब खुदा अपनी फौज लेकर क्यों नहीं आता ?]

जो पहिले खुदा मुसलमानों पर बड़ा सन्तोषी[4] था, और उनके सहाय के लिए लश्कर उतारता था, सच हो तो अब ऐसा क्यों नहीं करता ? और जो प्रथम काफिरों को दण्ड देता, और पुनः उसके

उनसे दोस्ती न करो और जो उनसे दोस्ती करेंगे, वे जालिम हैं। कह दो कि अगर तुम्हारे बाप और बेटे और भाई और औरतें और खानदान के आदमी और माल जो तुम कमाते हो और तिजारत जिसके बन्द होने से डरते हो और मकान जिनको पसन्द करते हो, खुदा और उसके रसूल से और खुदा की राह में जिहाद करने से, तुम्हें ज्यादा अजीज हों तो ठहरे रहो, यहाँ तक कि खुदा अपना हुक्म (यानी अजाब) भेजे। फिर खुदा ने अपने पैगम्बर पर और मौमिनों पर अपनी तरफ से तस्कीन नाजिल करवाई। (तुम्हारी मदद को फरिश्तों) के लश्कर, जो तुम्हें नजर नहीं आते थे, (आसमान से) उतारे और काफिरों को अजाब दिया। और कुफ्र करनेवालों की यही सजा है। फिर खुदा जिस पर चाहे मेहरबानी से जिस पर चाहे तवज्जोह फरमाये और खुदा बख्शनेवाला मेहरबान है। जो लोग अहले किताब में से खुदा पर ईमान नहीं लाते और न दीने हक को कबूल करते हैं, उनसे जंग करो, यहाँ तक कि जलील होकर अपने हाथ से जजिया दें।"

मौ० अशरफ अली ने यह अर्थ किया है—'फिर खुदाताला जिसको चाहें तोबा नसीब कर दें।' समीक्षा की आशंका से किया यह अर्थ निराधार है। मौलवी मुहम्मद अली ने लिखा है—'Then will

---

१. मोहम्मद फारूख खाँ ने इस आयत का हिन्दी-अनुवाद इस प्रकार किया है—'ऐ ईमान लानेवाले लोगो ! अपने बापों अपने भाइयों को अपना मित्र न बनाओ, यदि वे ईमान की अपेक्षा कुफ्र को पसन्द करें'। इसके अनुसार सारा भाव ही बदल गया है। श्री पं० रामचन्द्र देहलवी का अनुवाद सत्यार्थ-प्रकाश के अनुसार है।

२. अर्थात् जो काफिर हुए।

३. सं० २ में 'करता' अपपाठ है।

४. देखो—पूर्व समीक्ष्यांश सं० ८३, पृ० ८८८।

ऊपर आता था, तो अब कहाँ गया ? क्या विना लड़ाई के ईमान खुदा नहीं बना सकता ? ऐसे खुदा को हमारी ओर से सदा तिलांजलि है । खुदा क्या है एक खिलाड़ी है ॥८४॥

[खुदा के हुक्म की प्रतीक्षा]

८५—और हम बाट[1] देखनेवाले हैं वास्ते तुह्यारे यह कि पहुँचावे तुमको अल्लाह् अजाब अपने पास से वा हमारे हाथों से ॥ —मं० २ । सि० १० । सू० ६ । आ० ५२

[क्या मुसलमान ही ईश्वर की पुलिस बन गए हैं ?]

समीक्षक— क्या मुसलमान ही ईश्वर की पुलिस बन गए हैं, कि अपने हाथ वा मुसलमानों के हाथ से अन्य किसी मत-वालों को पकड़ा देता है ? क्या दूसरे क्रोड़ों मनुष्य ईश्वर को अप्रिय हैं ? मुसलमानों में पापी भी अप्रिय हैं ? यदि ऐसा है तो 'अन्धेर नगरी गवरगण्ड राजा'[2] की-सी व्यवस्था दीखती है । आश्चर्य है कि जो बुद्धिमान् मुसलमान हैं, वे भी इस निर्मूल अयुक्त मत को मानते हैं ॥८५॥

[मुसलमानों का बहिश्त; अल्लाह से हास्य-विनोद]

८६—प्रतिज्ञा की है अल्लाह् ने ईमानवालों से और ईमानवालियों से बहिश्तें, चलती हैं नीचे उनके से नहरें, सदैव रहनेवाली बीच उसके, और घर पवित्र बीच बहिश्तों अदन के, और प्रसन्नता अल्लाह् की, और सब से बड़ी है और यह कि वह है मुराद पाना बड़ा ॥ बस जो ठट्ठा करते हैं उनसे[3], ठट्ठा किया अल्लाह् ने उनसे ॥ —मं० २ । सि० १० । सू० ९ । आ० ७२, ७९

[बहिश्त का लालच देकर लोगों को बहकाना]

समीक्षक—यह खुदा के नाम से स्त्री-पुरुषों को अपने मतलब के लिए लोभ देना है । क्योंकि

God after thistiurn (mercifully) to whom he pleases.' अर्थात् इसके बाद अल्ला ताला जिसको चाहे उसकी तरफ दया से पलटेगा । आक्षेप का निराकरण करने के लिए ये मनमाने अर्थ किये गये हैं । मुहम्मद फारुख खाँ ने इस (२३) आयत का अनुवाद इस प्रकार किया है—'ऐ ईमान लानेवाले लोगों ! अपने बापों, अपने भाइयों को अपना मित्र न बनाओ यदि वे ईमान की अपेक्षा कुफ्र को पसन्द करें ।' इसके अनुसार सारा भाव बदल जाता है । कुरान के प्रामाणिक अध्येता पं० रामचन्द्र देहलवी ने ग्रन्थकार के अर्थ को ठीक सिद्ध किया है ।

८५. इससे स्पष्ट है कि मुसलमानों का खुदा न सर्वशक्तिमान् है और न न्यायकारी ।

८६. यह ठीक है कि मुहम्मद साहब ने लोगों को अपने मत में आकर्षित करने के लिए बहिश्त का प्रलोभन दिया है । परन्तु लोगों को सोचना चाहिए कि किसी को बहिश्त में पहुँचाना मुहम्मद साहब के वश में नहीं है, क्योंकि बनी इसराईल आयत १२ के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति के जन्म के साथ ही उसकी गर्दन में एक कागज लटका दिया जाता है, जिसमें उसके कर्मों के अनुसार भाग्य का निर्णय लिखा होता है और तफसीरे हुसैनी के अनुसार उस निर्णय को कोई अन्यथा नहीं कर सकता । और सूरते तौबा आयत ६९ में कहा है कि 'वादा किया है अल्लाह ने मुसलमान मर्दों व स्त्रियों से जन्नत का ।' भाग्य

---

१. सं० २ में 'वार' अपपाठ है ।

२. इसकी कथा देखो ग्रन्थकार कृत 'व्यवहारभानु' ग्रन्थ के अन्त में । द्र०—'दयानन्दीय लघुग्रन्थसंग्रह', पृ० ५३५-५४२ ।

३. अर्थात् स्वेच्छापूर्वक साधारण भेंट देनेवालों से ।

जो ऐसा प्रलोभन न देते तो कोई मुहम्मद साहब के जाल में न फसता। ऐसे ही अन्य मत-वाले भी किया करते हैं। मनुष्य लोग तो आपस में ठट्ठा किया ही करते हैं, परन्तु खुदा को किसी से ठट्ठा करना उचित नहीं है। यह कुरान क्या है, बड़ा खेल है ॥८६॥

[जिहाद करनेवाले अच्छे; काफिरों के दिलों पर मोहर]

८७—परन्तु रसूल और जो लोग कि साथ उसके ईमान लाये, जिहाद किया उन्होंने साथ धन अपने के तथा जान अपनी के। और इन्हीं लोगों के लिए भलाई है ॥

और मोहर रक्खी अल्लाह ने ऊपर दिलों उनके के, बस वे नहीं जानते ॥

—मं० २। सि० १०। सू० ६। आ० ८८, ९३

[ईमान न लानेवालों को बुरा बताना ठीक नहीं]

समीक्षक—अब देखिये, मतलबसिन्धु की बात ! कि वही भले हैं, जो मुहम्मद साहब के साथ ईमान लाये। और जो नहीं लाये, वे बुरे हैं। क्या यह बात पक्षपात और अविद्या से भरी हुई नहीं है ?

[भलाई करने से रोकना अन्याय]

जब खुदा ने मोहर ही लगा दी, तो उनका अपराध पाप करने में कोई भी नहीं, किन्तु खुदा ही का अपराध है। क्योंकि उन विचारों को भलाई से दिलों पर मोहर लगाके रोक दिये। यह कितना बड़ा अन्याय है !!! ॥८७॥

[माल के बदले पवित्रता; काफिरों से लड़नेवालों को बहिश्त]

८८—ले माल उनके से खैरात, कि पवित्र करे तू उनको अर्थात् बाहरी, और शुद्ध करे तू उनको साथ उसके अर्थात् गुप्त में ॥

निश्चय अल्लाह ने मोल ली हैं मुसलमानों से जानें उनकी और माल उनके बदले, कि वास्ते उनके बहिश्त हैं, लड़ेंगे बीच मार्ग अल्लाह के, बस मारेंगे और मर जावेंगे ॥

—मं० २। सि० ११। सू० ६। आ० १०३, १११

का निर्णय तो जन्म के साथ ही लिख दिया गया था। फिर मुसलमान होने पर किसी से जन्नत का वादा कैसे किया जा सकता था ? खुदा अपने लिखे फैसले को कैसे पलट सकता है। कुरान में ऐसी विसंगतियाँ पदे-पदे मिलेंगी।

८७. अपने-पराये का भेद करनेवाले खुदा और रसूल न दयालु हो सकते हैं और न न्यायकारी। इस प्रकार 'धर्म से धड़ा प्यारा' की कुनीति के प्रवर्तक मुहम्मद साहब हुए। जिहाद के नाम पर मारकाट और लूटपाट करनेवाले भले होंगे तो बुरा कौन होगा ? जो लोग खुदा द्वारा दिल पर मोहर लगा दिये जाने के कारण विवेकशून्य हो गये, उन्हें अपने कर्मों के लिए उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता। इस प्रसंग में समीक्ष्यांश ५ पर की गई आलोचना भी द्रष्टव्य है।

८८. 'हूरों पै मर रहे हैं जो शहवतपरस्त हैं' उनको फँसाने के लिए मुहम्मद साहब ने भोग-विलास का जाल बिछाया है। जहाँ मोटी-मोटी, काली-काली आँखोंवाली गोरी अप्सराएँ और बिखरे

[माल लेकर पवित्र करना पूरा पाखण्ड]

समीक्षक—वाह जी वाह मुहम्मद साहब ! आपने तो गोकुलिये गुसाँइयों की बराबरी कर ली। क्योंकि उनका माल लेना और उनको पवित्र करना, यही बात तो गुसाँइयों की है।

[मुसलमानों के हाथ से गरीबों को मरवाना कहाँ का धर्म है ?]

वाह खुदाजी ! आपने अच्छी सौदागरी लगाई कि मुसलमानों के हाथ से अन्य गरीबों के प्राण लेना ही लाभ[1] समझा। और उन अनाथों को मरवाकर उन निर्दयी मनुष्यों को स्वर्ग देने से दया और न्याय से मुसलमानों का खुदा हाथ धो बैठा। और अपनी खदाई में बट्टा लगाके बुद्धिमान् धार्मिकों में घृणित हो गया ॥८८॥

[पड़ोसी काफिरों को धोखे से मरवाना]

८९—ऐ लोगो ! जो ईमान लाये हो, लड़ो उन लोगों से कि पास तुम्हारे हैं काफिरों से, और चाहिए कि पावें बीच तुम्हारे दृढ़ता ॥

क्या नहीं देखते यह कि वे बलाओं में डाले जाते हैं हरवर्ष के एक वार वा दो वार, फिर वे नहीं तोबा: करते और न वे शिक्षा पकड़ते हैं॥ —मं० २। सि० ११। सू० ९। आ० १२३, १२६

[पड़ोसियों को धोखे से मारना विश्वासघात]

समीक्षक—देखिये ये भी एक विश्वासघात की बातें खुदा मुसलमानों को सिखलाता है, कि चाहें पड़ोसी हों वा किसी के नौकर हों, जब अवसर पावें तभी लड़ाई वा घात करें। ऐसी बातें मुसलमानों से बहुत बन गई हैं, इसी कुरान के लेख से। अब तो मुसलमान समझके इन कुरानोक्त बुराइयों को छोड़ दें, तो अच्छा है ॥८९॥

हुए मोती से लड़के हों और खुद अल्ला मियाँ शराब का प्याला हाथ में लिए बेताब इन्तजार में खड़े हों, शराब और शबाब के ऐसे आलम में पहुँचाये जाने का वादा हो तो अल्लाह की खातिर लड़ने के लिए कौन तैयार नहीं होगा ? मरनेवाले कौन हैं, इससे उन्हें क्या लेना-देना।

८९. संसार में दुष्ट लोग भी होते हैं, ऐसे दुष्ट भी जो समझाये जाने पर भी नहीं समझते। फिर भी भले लोग उन्हें सन्मार्ग पर लाने की चेष्टा करते हैं। ये कुरान के अल्लाताला हैं, जो पड़ौसी को पड़ौसी से लड़ने के लिए उकसाते हैं। शाहजी के अनुवाद में 'दृढ़ता' के स्थान में 'सख्ती' है, जो कठोरता का पर्यायवाची है। मौ० अशरफ अली ने टिप्पणी में लिखा है—'सख्ती मालूम करें, यानी कुवते जंग, यानी मामलात (व्यवहार) में बेरुखी पस काफिर से उल्फत या मुलायमत न करें।' मौ० मुहम्मद अली ने इसका अर्थ किया है—'Firmness' (दृढ़ता) और उस पर यह टिप्पणी लिखी है—'So that you do not yield to them' (ताकि तुम उनके आगे न झुको)।

---

१. सं० २-३०, ३४, ३५ में यही पाठ है। सं० ३१ या ३२ में 'लाभ' के स्थान के 'काम' पाठ बदला है। लेना ही लाभ= लेने में ही लाभ।

[६ दिन में जगत् की रचना, फिर विश्राम]

९०—निश्चय परवरदिगार तुह्मारा अल्लाह है, जिसने पैदा किया आसमानों और पृथिवी को बीच छः दिन के, फिर करार पकड़ा ऊपर अर्श के[1] तदवीर करता[2] है काम की ॥

—मं० ३ । सि० ११ । सू० १० । आ० ३

[आकाश अनादि है, उसे बनाने की बात अज्ञानता]

समीक्षक—आसमान=आकाश एक, और विना बना अनादि है। उसका बनाना लिखने से निश्चय हुआ कि वह कुरानकर्त्ता[3] पदार्थविद्या को नहीं जानता था।

[६ दिन में जगत् बनाया; 'होजा और होगया' में कौन सत्य ?]

क्या परमेश्वर के सामने[4] छः दिन तक बनाना पड़ता है ? तो जो 'हो मेरे हुक्म से, और हो गया'[5], जब कुरान में ऐसा लिखा है, फिर छः दिन कभी नहीं लग सकते। इससे छः दिन लगना झूंठ है।

[व्यापक होता तो ऊपर सिंहासन पर कैसे बैठता ?]

जो वह व्यापक होता, तो ऊपर आकाश[6] के क्यों ठहरता ? और जब काम की तदबीर करता है, तो ठीक तुह्मारा खुदा मनुष्य के समान है। क्योंकि जो सर्वज्ञ है, वह बैठा-बैठा क्या तदबीर करेगा ? इससे विदित होता है कि ईश्वर को न जाननेवाले[7] जङ्गली लोगों ने यह पुस्तक बनाया होगा॥९०॥

---

९०. इस आयत की समीक्षा इससे पूर्व समीक्ष्यांश संख्या ७२ के अन्तर्गत भी हो चुकी है। वहाँ (७।५४) 'अर्श' के बाद 'दीनता से पुकारो अपने मालिक को' आया है और यहाँ 'तदबीर करता है काम की' आया है। मुख्य अंश दोनों में समान है। 'आकाश' नित्य पदार्थ है, इसलिए न वह कभी उत्पन्न होता है और न कभी नष्ट होता है। जहाँ-कहीं उपनिषदादि में आकाश के उत्पन्न होने का उल्लेख मिलता है (जैसे—एतस्मादाकाशः सम्भूतः—तै० उ० १।१) वहाँ 'आकाश उत्पन्न हुआ-सा प्रतीत होता है' अर्थ समझना चाहिए। कुरान(सूरते बकर आयत ११७) में कहा है—'यकूलो लहो कुन् फयकूनो' अर्थात् 'हो मेरे हुक्म से और हो गया।' यह वाक्यखण्ड आगे सूरते अल इमरान कई सूरतों में आया है। जब 'हो' कहते ही संसार पैदा हो जाता है तो उसका छः दिन में पैदा होना उपपन्न नहीं होता। सिद्धान्ततः इसलाम खुदा को साकार या शरीरी नहीं मानता। परन्तु उसके सातवें आसमान पर तख़्त पर बैठने, हाथों से चराचर जगत् को बनाने, बागे अदन में आने-जाने आदि से उसका मनुष्य की भाँति शरीरी होना सिद्ध होता है। और जो शरीरी है वह न सर्वव्यापक हो सकता है, न सर्वज्ञ और न न्यायकारी।

---

१. द्र०—समीक्ष्यांश सं० ७२।
२. सं० २ में 'कर्त्ता' अपपाठ है।
३. सं० २ में 'करता' अपपाठ है।
४. यहाँ 'क्या परमेश्वर को' पाठ होना चाहिये।
५. द्र०—कुरान मं० १, सि० १, सू० २, आ० ११७, समीक्ष्यांश सं० २८।
६. सं० ३४ में 'अर्श' पाठ बनाया। यह युक्त है। अर्श=सिंहासन। द्र०—पूर्व समीक्ष्यांश सं० ७२।
७. सं० २ में 'जाननेवालों' है।

[क्या खुदा की शिक्षा और दया केवल मुसलमानों के लिए है ?]

६१—शिक्षा और दया वास्ते मुसलमानों के ॥ —मं० ३ । सि० ११ । सू० १० । आ० ५७

समीक्षक—क्या यह खुदा मुसलमानों ही का है, दूसरों का नहीं ? और पक्षपाती है, जो मुसलमानों ही पर दया करे, अन्य मनुष्यों पर नहीं। यदि मुसलमान ईमानदार को कहते हैं, तो उनके लिए शिक्षा की आवश्यकता ही नहीं। और मुसलमानों से भिन्नों को उपदेश नहीं करता, तो खुदा की विद्या ही व्यर्थ है ॥६१॥

[कर्मों की परीक्षा; मृत्यु के पीछे उठाया जाना]

६२—परीक्षा लेवे तुमको[1], कौन तुममें से अच्छा है कर्मों में। जो कहे तू अवश्य उठाये जाओगे तुम पीछे मृत्यु के ॥ —मं० ३ । सि० १२[2] । सू० ११ । आ० ७

[परीक्षा करता है, तो खुदा सर्वज्ञ नहीं]

समीक्षक—जब कर्मों की परीक्षा करता है, तो सर्वज्ञ ही नहीं। और जो मृत्यु पीछे उठाता है, तो दौड़ासुपुर्द रखता है ? और अपने नियम जो कि 'मरे हुए न जीवें', उसको तोड़ता है। यह खुदा को बट्टा लगाना[3] है ॥६२॥

[अल्लाह की निशानी ऊँटनी]

६३—और कहा गया, ऐ पृथिवी ! अपना पानी निगल जा, और ऐ आसमान ! बस कर, और पानी सूख गया ॥

---

६१. मौ० अशरफ अली ने 'मुसलमानों' के स्थान में 'ईमानवालों' कर दिया है। आयत में अरबी मूल का 'मुअ्मिनीन' शब्द प्रयुक्त हुआ है। 'मोमिन' और 'ईमानवाले' शब्दों का प्रयोग मुसलमानों के लिए ही किया जाता है। अतः समीक्ष्य आयत के अनुसार खुदा की शिक्षा और दयालुता वर्गविशेष के लोगों अर्थात् मोमिनों या मुसलमानों तक ही सीमित है। मौलाना आजाद ने अपने 'तर्जुमान अल-कुरान' में अल्लाह के तीन गुणों (Attributes) का उल्लेख करते हुए लिखा है—'Rabbul Almin (Lord of all Being); Al-Rahman (Compassionate) and Al-Rahim (Morciful).' इस प्रकार विवेच्य आयत का कुरान की पहली आयत (सूरत-अल फातिहा) से विरोध है। पर ऐसी परस्पर विरोधी बातों की तो कुरान में भरमार है। किन्तु कुरान की पहली सूरत में और मौलाना आजादकृत उसकी व्याख्या में शिक्षा का उल्लेख नहीं है, जबकि इलहाम या ईश्वरीय ज्ञान की आवश्यकता ही मनुष्यों की शिक्षा के लिए होती है। विवेच्य आयत में भी शिक्षा मुसलमानों तक सीमित है, जबकि खुदा 'रब्बुल आलमीन' है। मौलाना आजाद ने 'रब्ब' अर्थ 'Nourisher' अर्थात् पालक किया है। इसके विपरीत परमेश्वर ने अपनी कल्याण करनेवाली वाणी वेदों का उपदेश मनुष्यमात्र के लिए किया है—'यथेमां वाचं कल्याणी-मावदानि जनेभ्यः' (यजुर्वेद २६।२)।

६२. वस्तुतः कुरान में खुदा का न कोई कलाम है, न नियम। मुहम्मद साहब के मुंह में जो आया कह डाला और उसे खुदा के मत्थे मढ़ दिया। उसमें तर्क या तारतम्य खोजना व्यर्थ है।

६३. इसके आगे इस आयत का शेष यह है—"और मत हाथ लगाओ इसको साथ बुराई के,

---

१. सं० ३१ या ३२ में 'तुम'से' बनाया। यहाँ 'तुम्हारी' पाठ होना चाहिये।

२. सं० ३३ तक ११ संख्या छपी है। सं० ३४ में ठीक की है।

३. संस्करण २ से श० सं० तक 'लगना' पाठ है। सं० १८ में 'लगाना' शोधा। सं० ३४ में 'लगता' बनाया।

और ऐ कौम ! यह है निशानी ऊँटनी अल्लाह की वास्ते तुह्मारे, बस छोड़ दो उसको बीच पृथिवी अल्लाह के खाती फिरे ॥ —मं० ३ । सि० १२ । सू० ११ । आ० ४४, ६४

[खुदा के पास ऊँटनी है, तो हाथी घोड़े भी होंगे ?]

समीक्षक—क्या लड़केपन की बात है ? पृथिवी और आकाश कभी बात सुन सकते हैं ? वाहजी वाह ! खुदा के ऊँटनी भी है, तो ऊँट भी होगा ? तो हाथी घोड़े गधे आदि भी होंगे ? और खुदा का ऊँटनी से खेत खिलाना क्या अच्छी बात है ? क्या ऊँटनी पर चढ़ता भी है ? जो ऐसी बातें हैं, तो नवाबी की-सी घसड़-पसड़ खुदा के घर में भी हुई ॥६३॥

[सदा रहेंगे बहिश्त में]

६४—और सदैव रहनेवाले बीच उसके जब तक कि रहें आसमान और पृथिवी। और जो लोग सुभागी हुए बस बीच बहिश्त के सदा रहनेवाले हैं, जब तक रहें आसमान और पृथिवी ॥ —मं० ३ । सि० १२ । सू० ११ आ० १०८, १०६

[बहिश्त में सदा कैसे, जब कि वह सावधि है ?]

समीक्षक—जब दोजख और बहिश्त में कयामत के पश्चात् सब लोग जायेंगे, फिर आसमान और पृथिवी किसलिए रहेगी ? और जब दोजख और बहिश्त के रहने की आसमान पृथिवी के रहने तक

पस पकड़ेगा तुमको अजाब नजदीक।" इससे अगली आयत के 'पस पाँव काट डाले उनके' इन शब्दों से प्रतीत होता है कि 'आद' जाति ने इसके विपरीत आचरण किया। 'मवाजिह-उल्-कुरान' में इस पर लिखा है—'हजरत सालिह से कौम ने मोऽजजा (चमत्कार) माँगा, हक्कताला (परमेश्वर) ने उनकी दुआ से पत्थर में से ऊँटनी निकाली। उसी वक्त उसने बच्चा दिया। उसी वक्त माँ के बराबर हो गया। हजरत सालिह ने कहा—इसकी ताजीम (आदर) करते रहोगे जब तलक तब तक अजाब (संकट) न होगा। जहाँ वह जाती खाने को या पीने को, सब जानवर भाग जाते।' मौ० अशरफ अली ने लम्बी टिप्पणी लिखी है, जिसका सार यह है—'तबूत जाते वक्त आं हजरत (श्री मुहम्मद) का गुजर समूद की वीराना बस्ती पर हुआ तो आपने सहाबा (अपने साथियों) को हजरत सालिह के मोऽजजे की ऊँटनी की पैदायश और चलने-फिरने की जगह बताई और फरमाया—अंबिया (नबियों) से मोऽजजे चाहना अच्छा नहीं है। कौम सालिह ने मोऽजजा चाहा और फिर उस मोऽजजे की ऊँटनी की कद्र न की और आखिर तमाम हलाक (नष्ट) हुई।' मौलवी सनाउल्ला ने यहाँ अपने भाष्य की टिप्पणी में लिखा है—"इस ऊँटनी की बाबत किसी आयत या हदीस में मजकूर (उल्लेख) नहीं है कि किस तरह पैदा हुई। अलबत्ता इतना मालूम होता है कि इस ऊँटनी का हजरत सालिह की नबुव्वत से कुछ तअल्लुक है। पस जरूर है कि किसी ऐसी तरह हुई हो कि उससे हजरत सालिह की नबुव्वत का सबूत होता है।" मौ० अशरफ अली तथा मौ० सनाउल्ला दोनों पर ग्रन्थकार की समीक्षा का प्रभाव है। वरना अपने से पूर्ववर्त्ती शाह रफीउद्दीन की बात को चुपचाप क्यों पी जाते। अवश्य ही शाहजी की ऊँटनी की कथा किसी प्रामाणिक इसलामी ग्रन्थ में है। शाहजी कोई बात इसलामी साहित्य के विपरीत नहीं लिख सकते थे। वे इसलामी साहित्य के पारंगत विद्वान् थे।

६४. इसलाम की मान्यता के अनुसार न वर्त्तमान सृष्टि से पूर्व कोई सृष्टि थी, न कयामत के होने के पश्चात् कोई सृष्टि होगी। कयामत होने पर न पृथिवी रहेगी, न आकाश और उनके न रहने पर

अवधि हुई, तो 'सदा रहेंगे बहिश्त वा दोजख में' यह बात झूंठी हुई। ऐसा कथन अविद्वानों का होता है। ईश्वर वा विद्वानों का नहीं ॥९४॥

[बाप-बेटे का संवाद]

९५—जब यूसुफ ने अपने बाप से कहा कि—ऐ बाप मेरे! मैंने एक स्वप्न में देखा...॥

—मं० ३। सि० १२। सू० १२। आ० ४ से ५७ तक

जीवों के बहिश्त में रहने की अवधि भी समाप्त हो जायेगी। तब ये जीव कहाँ रहेंगे, इस विषय में कुरान में कुछ नहीं लिखा। 'सदा रहना' और 'जब तक आसमान और पृथिवी रहेगी—तब तक रहना' दोनों परस्पर विरोधी बातें हैं, क्योंकि आसमान और पृथिवी सदा रहनेवाले नहीं हैं।

९५. यूसुफ और उसके बाप के संवाद पर आधारित यह कहानी कुरान की सूरते यूसुफ में आयत ४ से १०४ तक में मिलती है। कहानी आरम्भ करने से पहले भूमिका के रूप में आयत १ और २ में बताया है कि "हमने इस कुरान को अरबी में नाजिल किया है, ताकि तुम समझ सको। हम इस कुरान के जरिये, जो हमने तुम्हारी तरफ भेजा है, तुम्हें एक बहुत अच्छा किस्सा सुनाते हैं।" इससे स्पष्ट है कि कुरान के रूप में अल्लाह की तरफ से नाजिल इलहाम उन्हीं के लिए है, जो अरबी जानते हैं, क्योंकि वे ही इसे समझ सकते हैं। इससे पूर्व समीक्ष्यांश ९१ में उद्धृत आयत के अनुसार भी कुरान की शिक्षा मुसलमानों के ही वर्गविशेष के लिए बतलाई गई है। इसलिए आयत १०४ में यह कहना कि 'कुरान तमाम दुनिया के लिए नसीहत है' वदतो व्याघात है। संसार भर के लोगों के लिए तो वेद का सन्देश है, जिसका आविर्भाव सृष्टि के आदि में किसी देशविशेष की भाषा में न होकर विश्वभाषा (वैदिक संस्कृत) में हुआ था। आज भी संसार की सभी भाषाओं में संस्कृत के तत्सम तथा तद्भव शब्द बड़ी संख्या में पाये जाते हैं, इसलिए वेद की शिक्षा सबको समान रूप से उपलब्ध है और सबके लिए उपादेय है। इसी कारण वैदिक ईश्वर पर पक्षपात का आरोप भी नहीं लग सकता।

मौ० सनाउल्लाह ने टिप्पणी में लिखा है—"शाने वजूल (सूरते यूसुफ) यहूदियों ने आंहजरत सलल्ला अलैहे व सल्लम से दरयाफ्त कि बनी इसराईल अपने वतन मालूफ (प्रिय देश) मिश्र में क्योंकर आये थे? उनके जवाब में नीज (तथा) अक्लमन्दों की एक इब्रतनाक (शिक्षादायक) किस्सा बताने को यह सूरत नाजिल हुई।" इतना लिखकर इसके आगे अपनी टिप्पणी करते हैं—'जिसने कुरान शरीफ का मुऽजजानुमा बयान सुनना या कुरान के मुबल्लिग़ (प्रचारक) फिदाहरुही (आत्मसमर्पक) की पाक तालीम का नमूना करना हो, वह बाइबल में भी हजरत यूसुफ का किस्सा पढ़े तो उसे मालूम हो जायेगा कि बाइबल के मुत्कल्लिम (प्रवक्ता) को महज किस्सा से मतलब है और कुरान के मुत्कल्लिम को नसीहत और इब्रत दिलाने से। दोनों की तर्जे तहरीर (लेखनशैली) यों बुज्द (अन्तर) आयेगा। किस्सा के मूल में किसी कद्र जुजवी (आंशिक) इख्तलाफ (भेद) अगर होगा तो बाइबल के मुसन्नफों (रचयिताओं) की गलती से है, जिसकी तसहीह (संशोधन) करने को कुरान नाजिल हुआ है।' मौलवी साहब ने इसमें दो बातें स्पष्ट रूप से स्वीकार की हैं—(१) यूसुफ की कथा किस्सा है और (२) वह बाइबल से लिया है। ग्रन्थकार ने अपनी समीक्षा में कुरान में किस्सों के होने से उसके ईश्वरोक्त होने से इन्कार किया है। किस्सों का इलहाम खुदा क्यों करे, वे तो पुस्तकों में होने से पढ़े या सुने जा सकते हैं। ग्रन्थकार ने यह भी लिखा है कि इसमें अधिक बातें बाइबल की हैं। मौलवी साहब ने इसे भी स्वीकार किया है। किन्तु हक्क प्रकाश में उन्होंने नाहक ग्रन्थकार पर गालियों की बौछार की है। बाइबल और कुरान में आये यसुफ के किस्से में कुछ अन्तर है। उस अन्तर का समाधान मौलवी साहब ने बाइबल के

[जिस पुस्तक में इतिहास भरा हो, वह ईश्वरीय कैसे ?]

समीक्षक—इस प्रकरण में पिता-पुत्र का संवादरूप किस्सा कहानी भरी है। इसलिए कुरान ईश्वर का बनाया नहीं, किसी मनुष्य ने मनुष्यों का इतिहास लिख दिया है ॥९५॥

[खुदा की सर्वशक्तिमत्ता]

९६—अल्लाह वह है कि जिसने खड़ा किया आसमानों को विना खम्भे के, देखते हो तुम उसको फिर ठहरा ऊपर अर्श के, आज्ञा वर्त्तनेवाला किया सूरज और चाँद को। और वही है जिसने विछाया पृथिवी को। उतारा आसमान से पानी, बस बहे नाले साथ अन्दाज अपने के। अल्लाह खोलता है भोजन को वास्ते जिसको चाहे और तङ्ग करता है॥[1] —मं० ३। सि० १३। सू० १३। आ० २, ३, १७, २६

[आकाश को खम्भों की क्या आवश्यकता ?]

समीक्षक—मुसलमानों का खुदा पदार्थ-विद्या कुछ भी नहीं जानता था। जो जानता तो गुरुत्व न होने से आसमान को खम्भे लगाने की कथा-कहानी कुछ भी न लिखता। यदि खुदा अर्शरूप एक स्थान में रहता है, तो वह सर्वशक्तिमान् और सर्वव्यापक नहीं हो सकता।

[यह खुदा वृष्टि-विज्ञान का ज्ञाता नहीं]

और जो खुदा मेघविद्या जानता, तो 'आकाश से पानी उतारा' लिखा, पुनः यह क्यों न लिखा कि 'पृथिवी से पानी ऊपर चढ़ाया'? इससे निश्चय हुआ कि कुरान का बनानेवाला मेघ की विद्या को भी नहीं जानता था। और जो विना अच्छे-बुरे कामों के सुखदुःख देता है, तो पक्षपाती अन्यायकारी, निरक्षरभट्ट है ॥९६॥

लेखकों की भूल वतलाकर किया है। इसके विपरीत ईसाई कहते हैं कि इसमें कुरानकार की भूल है। ईसाई और मुसलमान आपस में निपट लें, हम दालभात में मूसलचन्द बनना नहीं चाहते। मौ० अशरफ अली ने सयूती के प्रमाण से लिखा है कि—'यह सहावा की दरखास्त(प्रार्थना)पर नाजिल हुआ। इसलिए बुस्त और तमाम (पूर्णता एवं विस्तार) से बयान किया गया।' मौ० अशरफ अली भी इसे किस्सा कहते हैं। मौ० मुहम्मद अली इसे 'Story' (किस्सा) मानते हैं। जब सभी के मत में यह किस्सा है तो यही मानना चाहिए, जो इस पर ग्रन्थकार ने लिखा है कि 'किसी मनुष्य ने मनुष्यों का इतिहास लिख दिया है।'

९६. आकाश में भारीपन न होने से उसके गिरने की संभावना नहीं—विज्ञानसम्मत इतनी-सी बात को न जानने के कारण कुरान का लेखक आसमान के विना खम्भों के ठहरने को अलौकिक मानकर खुदा को जादूगर के रूप में प्रस्तुत कर रहा है। पृथिवी को चटाई की भांति विछा बतलाने तथा सूर्य और चन्द्रमा को आज्ञावर्ती कहने में भी उसकी अविद्या ही कारण है। ग्रन्थकार को आश्चर्य है कि जिसे आकाश से पानी उतरने (?) पर आश्चर्य हो रहा है, उसे आकाश में मेघ वनने पर आश्चर्य क्यों नहीं हुआ। अल्ला के पक्षपाती होने का विवेचन पूर्व पृष्ठों में अनेकत्र हो चुका है। कुरान की पहली आयत में अल्लाह को 'रब्बुल आलमीन' कहा है, जिसका अर्थ मौलाना आजाद के अनुसार प्राणिमात्र का पोषक है। विवेच्य आयत के अनुसार वह 'जिसको चाहे भोजन देता है और जिसको चाहे तंग करता है'—ऐसा अल्लाह 'रब्बुल-आलमीन' कहलाने का अधिकारी नहीं हो सकता।

---

१. 'चाहे जिसको' इतना अध्याहार करें।

[अल्लाह गुमराह भी करता है, और मार्ग भी दिखलाता है]

९७—कह, निश्चय अल्लाह गुमराह करता है जिसको चाहता है, और मार्ग दिखलाता है तर्फ अपनी उस मनुष्य को रुजू करता है ॥
—मं० ३ । सि० १३ । सू० १३ । आ० २७

[जो गुमराह करे वह खुदा नहीं, शैतान है]

समीक्षक—जब अल्लाह गुमराह करता है, तो खुदा और शैतान में क्या भेद हुआ? जबकि शैतान दूसरों को गुमराह अर्थात् बहकाने से बुरा कहाता है, तो खुदा भी वैसा ही काम करने से बुरा[1] शैतान क्यों नहीं? और बहकाने के पाप से दोजखी क्यों नहीं होना चाहिए? ॥९७॥

[कुरान को अर्बी में उतारना]

९८—इसी प्रकार उतारा हमने इस कुरान को अर्बी में, जो पक्ष करेगा तू उनकी इच्छा का पीछे इसके आई तेरे पास विद्या से ॥ बस सिवाय इसके नहीं कि ऊपर तेरे पैगाम पहुँचाना है, और ऊपर हमारे है हिसाब लेना ॥
—मं० ३ । सि० १३ । सू० १३ । आ० ३७, ४०

---

९७. अल्लाह द्वारा स्वेच्छापूर्वक इंसानों व शैतान के गुमराह किए जाने और बदले में शैतान द्वारा खुदा के बन्दों के गुमराह किए जाने से सम्बन्धित कई आयतों की पूर्व पृष्ठों में समीक्षा की जा चुकी है। यहाँ हम केवल दो आयतें (सूरत इब्राहीम ४) प्रस्तुत करते हैं—'खुदा जिसे चाहता है, गुमराह करता है और जिसे चाहता है, हिदायत देता है—मार्गदर्शन करता है।' जान-बूझकर किसी को गलत रास्ते पर डालकर परेशान करना दण्डनीय अपराध है। सूरते रअद आयत २६ में लिखा है—'वास्तव में खुदा गुमराह करता है, जिसे चाहता है और राह दिखाता है, अपनी ओर खींचता है।' इससे स्पष्ट है कि पथभ्रष्ट होना या सन्मार्ग पर आना अपने प्रयत्न पर नहीं, अल्लामियाँ की इच्छा पर आधारित है।

९८. कुरान के अनुसार अल्लाताला का ज्ञान लोहे महफूज में रहता है (सूरते बरूज आयत २१)। तफसीरे हुसैनी में लिखा है कि उसे एक फरिश्ता रक्खे है बगल में, अर्श (अल्लाह का सिंहासन) के दायें ओर। अन्यत्र इस लोहे महफूज को 'उम्मुल किताब' (पुस्तकों की जननी = विद्या का आदि स्रोत) कहा है। जब खुदा ने आदम को सारी वस्तुओं के नाम सिखाये तो वह लोहे महफूज ही पढ़ा दी होगी। 'सब वस्तुओं के नाम' से 'सम्पूर्ण ज्ञान' ही अभिप्रेत है। जब ऐसा हो गया तो हजरत आदम के बाद और कोई पैगम्बर (सन्देशवाहक) भेजने की क्या आवश्यकता थी? मगर कुरान शरीफ (सूरते बकर आयत ८७) में आया है कि 'मूसा को किताब (तौरत) दी और लाये बाद में रसूलों को।' तत्पश्चात् 'आये ईसामसीह युक्तियों के साथ' (सूरते जरवजफ आयत ५९)। 'और भेजे हैं हर समुदाय में रसूल' (सूरते नहल आयत २३)। इतना ही नहीं, 'इन सभी पैगम्बरों और उनके इलहाम पर ईमान लाना हर मुसलमान के लिए आवश्यक है। कहा है—'जो ईमान लाये उस पर जो तुझ पर उतारा गया और उस पर जो तुझसे पहले उतारा गया' (सूरते बकर ३)।

प्रश्न यह है कि अगर हजरत आदम को मिला इलहाम पूर्ण व सही था तो उसके पश्चात् और इलहामों की क्या आवश्यकता थी। हजरत मूसा की तौरेत और हजरत ईसा की बाइबल तब भी उपलब्ध थीं और आजकल भी मिलती हैं। हजरत मुहम्मद और उनके समकालीन लोगों का काम उन्हीं से क्यों नहीं चल गया? यदि मानवबुद्धि के विकासक्रम तथा परिस्थितियों से उत्पन्न आवश्यकता को इसका

---

१. यहाँ 'उससे बुरा' या 'बड़ा' पाठ उचित प्रतीत होता है।

[खुदा ऊपर रहता है, तो वह एकदेशी हुआ]

समीक्षक—कुरान किधर की ओर से उतारा ? क्या खुदा ऊपर रहता है ? जो यह बात सच है, तो वह एकदेशी होने से ईश्वर ही नहीं हो सकता। क्योंकि ईश्वर सब ठिकाने एकरस व्यापक है।

कारण माना जाय तो इसका तार्किक परिणाम यह होना चाहिए कि न हजरत मुहम्मद को अन्तिम पैगम्बर और कुरान शरीफ को आखिरी इलहाम स्वीकार न किया जाय, क्योंकि विकासक्रम तो कभी रुक नहीं सकता। वह हजरत मुहम्मद के साथ समाप्त हो गया नहीं माना जा सकता। कुरान में प्रत्येक पैगम्बर के इलहाम को परमात्मा की एकता का प्रतिपादक माना गया है। हजरत मूसा का यह सन्देश दूसरी आयतों के अतिरिक्त सूरते ताहा की ५०वीं आयत में लिखा है। हजरत ईसा का सूरते मायदा की १११वीं आयत में, हजरत यूसुफ का आयत १०१ में लिखा है। इसी प्रकार अन्य पैगम्बरों के भी प्रमाण दिये जा सकते हैं। और मौलाना आजाद के अनुसार—'The Quran cites the recognition of one scripture By another scripture is a proof in favour of its contention that all revealed religious present one and the same basic message.' इसका अभिप्राय है कि सभी इलहाम परस्पर अविरोधी हैं। ऐसा है तो बार-बार इलहाम की आवश्यकता क्यों हुई। यदि कुछ विद्वानों के अनुसार यह माना जाय कि कुछ इलहामी पुस्तकों में हेर-फेर हो गया था तो इस बात की क्या गारण्टी है कि कुरान में हेर-फेर नहीं हुआ या आगे नहीं होगा। सूरतुल हिज्र आयत ६ में लिखा है—'बेशक यह किताब (कुरान) हम ही ने उतारी है और हम ही इसके निगेहबान हैं।' प्रश्न होता है कि जब कुरान से पहले पैगम्बरों पर उतरी सब किताबें भी उसी परमात्मा की देन थीं, जिसकी देन कुरान है तो उनकी रक्षा का उत्तरदायित्व उसने क्यों नहीं लिया। वस्तुतः एक इलहाम मान लेने के पश्चात् किसी भी बाद के इलहाम की कल्पना करना या उसमें परिवर्तन मानना ईश्वर और उसके इलहाम को अपूर्ण मानना है। इलहाम एक ही हो सकता है। वह सृष्टि के आरम्भ में होगा और ईश्वरीय ज्ञान होने के कारण वह ईश्वर की तरह पूर्ण होगा—उसमें समय-समय पर होनेवाले संशोधनों या परिवर्त्तनों की कल्पना करना परमेश्वर को अल्पज्ञ मानना होगा।

कुरान का अरबी भाषा में उतारा जाना निश्चित है (द्रष्टव्य-रअद ३७, यूसुफ १)। क्या अरबी लोहे महफ्ज की भाषा थी ? यदि थी तो उसे मानव-समाज की पहली भाषा होना चाहिए, जिसका कोई ऐतिहासिक प्रमाण नहीं। अरबी के शब्दों को अन्य भाषाओं की उत्पत्ति के मूल के रूप में भी कोई भाषा-वैज्ञानिक स्वीकार नहीं करता। फिर हजरत मूसा और ईसा को प्राप्त इलहाम की भाषा इबरानी थी। यदि वह भी लोहे महफूज की नकल थे तो लोहे महफूज में सुरक्षित ईश्वरीय ज्ञान की मूल भाषा इबरानी ठहरती है और अरबी से पूर्ववर्त्ती होने के कारण वही भाषाओं की जननी सिद्ध होती है। यदि कुरान का इलहाम समस्त मानव समाज के लिये होता तो उसकी भाषा ऐसी होनी चाहिए थी, जो सबके लिए समान रूप से ग्राह्य होती। अरबी भाषा इलहाम के समय भी सारे संसार की भाषा नहीं थी और कुरान को भी अल्लाताला ने सारे संसार के लिए नहीं, केवल अरबवालों के लिए उतारा था। सूरते यूसुफ आयत १ में स्पष्ट लिखा है कि 'हमने इस कुरान में अरबी में नाजिल किया है, ताकि तुम समझ सको।' वास्तव में कुरान का उद्देश्य केवल अरब के लोगों का सुधार करना था, इसीलिए कुरान में आया है—'ताकि तू डरा सके उस जाति को, नहीं आया उनके (जिनके) पास डरानेवाला तुझसे पूर्व, जिससे उन्हें सन्मार्ग मिले' (सूरते सिजदा १)।

ये जातियाँ अरब निवासी हैं। हजरत मुहम्मद के सामने यहूदी और ईसाइयों की इस बात पर

[पैग़ाम पहुँचाना, हिसाब लेना-देना मानव-कार्य है]

पैगाम पहुँचाना हल्कारे का काम है। और हल्कारे की आवश्यकता उसी को होती है, जो मनुष्यवत् एकदेशी हो। और हिसाब लेना-देना भी मनुष्य का काम है, ईश्वर का नहीं। क्योंकि वह सर्वज्ञ है। निश्चय होता है कि किसी अल्पज्ञ मनुष्य का बनाया क़ुरान है ॥६८॥

[मनुष्य अन्यायी और पापी है]

६९—और किया सूर्य-चन्द्र को सदैव फिरनेवाले ॥ निश्चय आदमी अवश्य अन्याय और पाप करनेवाला है ॥

—मं० ३। सि० १३। सू० १४। आ० ३३, ३४

[क्या चन्द्र-सूर्य फिरते हैं; पृथिवी नहीं घूमती ?]

समीक्षक—क्या चन्द्र-सूर्य सदा फिरते, और पथिवी नहीं फिरती है ? जो पृथिवी नहीं फिरे, तो कई वर्षों का दिन-रात होवे।

गर्व था कि वे पैगम्बरों के अनुयायी हैं और उनके पास अपनी-अपनी किताबें हैं। अरब निवासी यह दावा नहीं कर सकते थे। हजरत मुहम्मद ने उनकी इस कमी को दूर कर दिया। प्रश्न हो सकता है कि क्या हजरत मुहम्मद के प्रकट होने से पूर्व अरब निवासी सर्वथा अशिक्षित थे। क़ुरान से तो यही ज्ञात होता है। वहाँ एक और स्थान पर लिखा है—'क्या ये लोग कहते हैं कि पैगम्बर ने इसको खुद से बना लिया है ? नहीं, वह तुम्हारे परवरदिगार की तरफ से बर-हक है ताकि तुम उन लोगों को हिदायत करो जिनके पास तुमसे पहले हिदायत करनेवाला कोई नहीं आया। हमने उतारा क़ुरान अरबी भाषा में ताकि तू भय बताये बड़े गाँव को और उसके पास-पड़ौसवालों को' (सूरते सिजदा ३)।

सभी भाष्यकारों ने 'बड़े गाँव' का अर्थ 'मक्का' किया है। उस समय अरब का सबसे बड़ा गाँव मक्का था और क़ुरान के शब्दों में मक्का और उसके आस-पास के क्षेत्र को मुसलमान बनाने का काम मुहम्मद साहब को सौंपा गया था। क़ुरान की मान्यता के अनुसार प्रत्येक जाति का अपना अलग धर्म होता है। सूरते अल-हज्ज रकूअ ९ में बताया है कि 'प्रत्येक समुदाय के लिए बनाई है प्रार्थनापद्धति और वह उसी प्रकार प्रार्थना करें।' तब मुसलमानों की यह जबरदस्ती है कि जो मजहब खुदा ने महज अरब के लोगों के लिए निश्चित किया है और जो अन्य देशों व जातियों के अनुकूल नहीं है, उसे उन पर थोपने (और वह भी बलात्) की चेष्टा करें।

आदि मानवजाति की उत्पत्ति हिमालय पर हुई थी। उस समय मनुष्यमात्र की एक ही भाषा थी और एक ही धर्म था। दोनों का आधार सृष्टि के आरम्भ में प्रदत्त वेदरूप ईश्वरीय ज्ञान था। इसलिए उन्हें क्रमशः वैदिक भाषा तथा वैदिक धर्म के नाम से अभिहित किया जाता है। किसी व्यक्ति, जाति या देश से उनका कोई सम्बन्ध नहीं था। कालान्तर में यत्र-तत्र-सर्वत्र फैले हुए वे लोग अपने साथ अपनी भाषा और धर्म को लेते गये। संसार-भर में प्रचलित भाषाओं तथा मत-मतान्तरों में उपलब्ध समानता उसी का परिणाम है। यह निर्विवाद तथ्य है कि समस्त धर्मों का आदि स्रोत वेद और समस्त भाषाओं की जननी वैदिक भाषा अथवा संस्कृत है।

६९. सूर्य और चन्द्र के फिरने से मनुष्य के अन्याय और पाप को जोड़ना सर्वथा असंगत है। वस्तु का स्वभाव उसका अपना रूप है। स्वभाव के न रहने पर वस्तु का अस्तित्व ही नहीं रहता। यदि मनुष्य स्वभाव से अन्याय और पाप करनेवाला हो तो उसे उपदेश या शिक्षा देना व्यर्थ है। क्योंकि

[संसार में पुण्यात्मा भी हैं, केवल पापी ही नहीं]

और जो मनुष्य निश्चय अन्याय और पाप करनेवाला है, तो कुरान से शिक्षा करना व्यर्थ है। क्योंकि जिनका स्वभाव पाप ही करने का है, तो उनमें पुण्यात्मा[1] कभी न होगा। और संसार में पुण्यात्मा और पापात्मा सदा दीखते हैं। इसलिए ऐसी बात ईश्वरकृत पुस्तक की नहीं हो सकती ॥९९॥

[आदम में खुदा की रूह; खुदा ने शैतान को बहकाया]

१००—बस ठीक करूँ मैं उसको, और फूंक दूं बीच उसके रूह अपनी से, बस गिर पड़ो वास्ते उसके सिजदा करते हुए ॥

कहा, ऐ रब मेरे! इस कारण कि गुमराह किया तूने मुझको अवश्य जीनत दूंगा मैं वास्ते उनके बीच पृथिवी के, और गुमराह करूँगा ॥ —मं० ३। सि० १४। सू० १५। आ० २९, ३९[2]

[फिर तो आदम भी खुदा का रूप हुआ?[

समीक्षक—जो खुदा ने अपनी रूह आदम साहब में डाली, तो वह भी खुदा हुआ। और जो वह खुदा न था, तो सिजदा अर्थात् नमस्कारादि भक्ति करने में अपना शरीक क्यों किया?

असम्भव कार्य के लिए किसी को कहना अथवा उसके सम्पादन के लिए प्रयास करना निष्फल है। इसीलिए ग्रन्थकार ने कहा है कि 'यदि मनुष्य निश्चय ही अन्याय और पाप करनेवाला है, तो कुरान से शिक्षा करना व्यर्थ है। वस्तुतः जीवात्मा स्वभाव से पवित्र है, किन्तु वह अल्पज्ञ तथा कर्म करने में स्वतन्त्र है। इसलिए वह पाप भी करता है और पुण्य भी। पाप का फल दुःख होता है और पुण्य का सुख। कोई भी मनुष्य न पूर्णतः सुखी है और न दुःखी। इसलिए कोई भी मनुष्य न केवल पुण्यात्मा है और न पापात्मा। अंग्रेजी के प्रसिद्ध कवि ऐलेग्जेण्डर पोप (Alexander Pope) ने ठीक कहा है—

Virtuous and vicious everyman must be, Few in the extreme but all in degree.

१००. आदम का मिट्टी से बनाया जाना तो प्रसिद्ध है। इसी सूरत (१५ हिज्र) की २६वीं आयत में लिखा है—'और हमने इन्सानों को खनखनाते सड़े हुए गारे से पैदा किया है।' पुनः २८वीं आयत में बताया है—'और तुम्हारे परवरदिगार ने फरिश्तों से फरमाया कि मैं खनखनाते हुए सड़े हुए गारे से एक इन्सान को बनानेवाला हूँ।' यही बात पुनः शैतान के मुख से ३३वीं आयत में कहलवाई गई है—'मैं ऐसा नहीं हूँ कि इन्सान को जिसे तूने खनखनाते हुए सड़े हुए गारे से बनाया···।' मौ० अशरफ अली ने टिप्पणी में लिखा है—'मिट्टी को पानी से तर किया और खमीर उठाया और खनखन बोलने लगी। वह बदन (शरीर) हुआ इन्सान का। उसकी खासियतें (विशेषताएँ) इसमें रह गईं सख्ती और बोझ।' सूरते रहमान की १४वीं आयत में कहा है—'उसी ने इन्सान को ठीकरे की तरह खनखनाती मिट्टी से बनाया।' कुरान में 'बजनेवाली' शब्द के लिए 'सलसाल' शब्द है। मौ० मुहम्मद अली ने इसका अर्थ

---

१. सं० ३४ में 'पुण्यात्मता कभी न होगी' पाठ बनाया गया है।

२. सं० २ से २५ तक पता 'आ० २९, ३९ से ४६ तक' ऐसा छपा है। इसी कारण सं० २६ में २९वीं आयत के 'करते हुये' के आगे···चिह्न दे दिया गया, तथा पता 'आ० २९ से ४६' बना दिया। यही पाठ सं० ३३ तक छपता रहा। सं० ३४ में आ० ३९ का पाठ निर्दिष्ट होने से पूर्व निर्दिष्ट···चिह्न वहाँ से हटाकर अन्त में दे दिया, और पता सं० २ के अनुसार बना दिया। वस्तुतः यहाँ आ० २९ तथा ३९ ही के उद्धृत होने और उनकी ही समीक्षा होने से 'से ४६ तक' पाठ युक्त नहीं है। और न 'आ० ३९' के पाठ के पीछे चिह्न की आवश्यकता है।

[खुदा ने शैतान को बहकाया, तो वह भी शैतान क्यों नहीं ?]

जब शैतान को गुमराह करनेवाला खुदा ही है, तो वह शैतान का भी शैतान बड़ा भाई गुरु क्यों नहीं ? क्यों तुम लोग बहकानेवाले को 'शैतान' मानते हो, तो खुदा ने भी शैतान को बहकाया। और प्रत्यक्ष शैतान ने कहा कि मैं बहकाऊँगा, फिर भी उसको दण्ड देकर कैद क्यों न किया, और मार क्यों न डाला ? ॥१००॥

[हर समुदाय में पैगम्बर भेजे; कहा 'हो जा' बस हो जाती है]

१०१—और निश्चय भेजे हमने बीच हर उम्मत[1] के पैगम्बर ॥ जब चाहते हैं हम उसको, यह

किया है—'Dried' अर्थात् सूखी हुई। सूखी हो या गीली या बजती हुई या खनखनाती—कोई भी अर्थ किया जाए, मिट्टी तो थी ही, जो प्रकृति अथवा पञ्चभूतों का उपलक्षण है। इसमें अभाव से भाव की उत्पत्ति का निषेध और स्पष्ट ही उपादानकारण एवं उपष्टम्भक का स्वीकार करना है।

वहीं आगे २९वीं आयत में कहा है—'जब मैं उसको (इन्सानी शक्ल) को ठीक कर लूं और उसमें अपनी रूह फूंक दूं तो उसके आगे सिजदे में गिर पड़ना। सब फरिश्ते सिज्द में गिर पड़े (३०)। किन्तु शैतान ने सिज्दा करनेवालों का साथ देने से इन्कार कर दिया (३१)। उसने कहा कि मैं ऐसा नहीं हूँ कि जिस इन्सान को तूने गारे से बनाया उसे सिज्दा करूँ (३३)। इस पर खुदा ने गाली देते हुए (मर्दूद कहकर) शैतान को आगे अदन से निकाल दिया (३४)। शैतान चला तो गया, किन्तु जाते-जाते खुदा को बदले की भावना से धमकी दे गया कि जैसे तूने मुझे बहकाया है, वैसे ही मैं भी तेरे बन्दों को बहकाऊँगा (३९)।' इसमें शैतान सर्वथा निर्दोष था। शैतान जैसा भी था, खुदा का बनाया हुआ था, इसलिए उसके दोषों या अपराधों के लिए वही (खुदा) जिम्मेदार था और इसलिए दण्डनीय था। और यदि शैतान सचमुच अपराधी था तो उसे गिरफ्तार करके सदा के लिए कैद में डाल देना चाहिए था। उसे खुला छोड़कर खुदा ने शैतान को इन्सानों को बहकाने—गुमराह करने का अवसर दिया। फिर, सर्वशक्तिमान् परमात्मा को धमकी देकर दनदनाता हुए उसके सामने से निकल जाय और खुदा देखता रह जाये—ऐसे खुदा की हकूमत कितने दिन चलेगी ?

यदि परमेश्वर (खुदा=अल्लाह) न्यायकारी होता तो उसे शैतान को उसकी सत्यनिष्ठा एवं सिद्धान्तप्रियता के लिए पुरस्कृत करना चाहिए था। इसलाम को अपने जिस सिद्धान्त पर सबसे अधिक गर्व है, वह यह है कि मुसलमान अल्लाह के सिवा अन्य किसी को सिजदा नहीं करता। शैतान ने अपनी आँखों के सामने मिट्टी से बने एक इन्सान (आदम) को सिजदा करने से इन्कार करके अल्लाह के प्रति अपनी अनन्य निष्ठा का परिचय दिया था। इस साहसपूर्ण कार्य के लिए उसे 'विश्वरत्न' या 'शाने बहिश्त' जैसी उपाधि से विभूषित न करके देशनिकाला दे दिया। क्या यही खुदा की दयालुता तथा न्यायप्रियता थी ?

ग्रन्थकार की एक अन्य आपत्ति इस प्रकार है—शरीर की अपेक्षा आत्मा का कहीं अधिक महत्त्व होता है। आदम का शरीर तो मिट्टी से बना था, परन्तु उसमें आत्मा तो परमात्मा की थी (आदम की उत्पत्ति तो खुदा ने उसमें अपनी रूह फूंक कर ही की थी)। इसलिए वह भी खुदा बन गया था। यदि खुदा नहीं बना था, अर्थात् इन्सान ही था तो स्वयं खुदा ने ही अपने पूर्व घोषित आदेश के विरुद्ध शैतान को इन्सान के सामने सिजदा करने को क्यों कहा ?

१०१. कुरान में कई स्थानों में अनेक पैगम्बर (विशेषतः इब्राहीम, मूसा, ईसा, याकूब आदि)

---

१. उम्मत अर्थात् गिरोह = समुदाय।

कहते हैं हम उसको 'हो', बस हो जाती है ॥ —मं० ३ । सि० १४ । सू० १६ । आ० ३६, ४०

[तो फिर अन्य पैगम्बरों की बात मान्य क्यों नहीं ?]

समीक्षक—जो सब कोमों पर पैगम्बर भेजे हैं, तो सब लोग जो कि पैगम्बर की राय पर चलते हैं, वे काफिर क्यों ? क्या दूसरे पैगम्बर का मान्य नहीं, सिवाय तुह्मारे पैगम्बर के ? यह सर्वथा पक्षपात की बात है। जो सब देश में पैगम्बर भेजे, तो आर्य्यावर्त्त में कौन-सा भेजा ? इसलिए यह बात मानने योग्य नहीं।

[किससे कहा कि—'हो जा', और कौन हो गया ?]

जब खुदा चाहता है और कहता है कि—'पृथिवी हो जा', वह जड़ कभी नहीं सुन सकती। खुदा का हुक्म क्योंकर बजा[1] सकेगी ? और सिवाय खुदा के दूसरी चीज नहीं मानते, तो सुना किसने ? और हो कौन-सा गया ? ये सब अविद्या की बातें हैं। ऐसी बातों को अनजान लोग मानते हैं ॥१०१॥

[अल्लाह के लिए बेटियाँ]

१०२—और नियत करते हैं वास्ते अल्लाह के बेटियाँ, पवित्रता है उसको, और वास्ते उनके है जो कुछ चाहै ॥ कसम अल्लाह की अवश्य भेजे हमने पैगम्बर ॥

—मं० ३ । सि० १४ । सू० १६ । आ० ५७,६३

[अल्लाह को बेटियों की क्या आवश्यकता ?]

समीक्षक—अल्लाह बेटियों से क्या करेगा ? बेटियाँ तो किसी मनुष्य को चाहियें। क्यों बेटे नियत नहीं किये जाते, और बेटियाँ नियत की जाती हैं ? इसका क्या कारण है, बताइए ?

भेजे जाने का उल्लेख हुआ है, किन्तु किसी-न-किसी आधार पर उन्हें अप्रासंगिक बताकर हजरत मुहम्मद को प्रामाणिक मानकर और कुरान के सन्देश को महत्त्व प्रदान करके इसलाम को ही एकमात्र सच्चा धर्म घोषित किया गया है। 'हो, और बस हो जाती है' का विवेचन समीक्ष्यांश ६० के अन्तर्गत हो चुका है।

१०२. पूर्वापर प्रसंग को देखते हुए बेटियों की चर्चा के लिए यहाँ कोई अवसर नहीं है। कुरान (७६।२-३) के आधार पर मौ० आजाद ने अपने भाष्य में पृष्ठ १५१ पर लिखा है—'We have created man from the union of sexes' अर्थात् हमने इन्सान को औरत और मर्द के मिले-जुले नुत्फे (रज-वीर्य) से पैदा किया। परन्तु—

एक से जब दो हुए तो लुत्फे यकताई नहीं।
इसलिए शादी खुदा ने भी तो करवाई नहीं ॥

जब खुदा की शादी ही नहीं हुई तो उसके बेटे-बेटियों के होने का तो प्रश्न ही नहीं उठता। 'कसम अल्लाह की भेजे हमने पैगम्बर'—पैगम्बर भेजनेवाला तो खुदा ही है तो कसम खानेवाला भी वही है और कसम भी अपनी ही खा रहा है। ऐसे खुदा की बातों का कौन यकीन करेगा ?

---

१. सं० २ में 'बना सकेगा' पाठ है। आगे 'बन सकेगा' बनाया। हुक्म के साथ 'बजाना' क्रिया का प्रयोग होता है।

[कसम खाना झूंठों का काम है; और कसम कौन खा रहा है ?]

कसम खाना झूंठों का काम है, खुदा की बात नहीं। क्योंकि बहुधा संसार में ऐसा देखने में आता है कि जो झूंठा होता है, वही कसम खाता है। सच्चा सौगन्द क्यों खावे ? ॥१०२॥

[दिल कान और आँख पर मोहर लगाना]

१०३—ये लोग वे हैं, कि मोहर रक्खी अल्लाह ने ऊपर दिलों उनके और कानों उनके और आँखों उनकी के, और ये लोग वे हैं बेखबर॥ और पूरा दिया जावेगा हर जीव को जो कुछ किया है, और वे अन्याय न किए जावेंगे॥ —मं० ३। सि० १४। सू० १६। आ० १०८, १११

[कान आदि पर मोहर लगा दी, तो खुदा ही फल भोगे ?]

समीक्षक—जब खुदा ही ने मोहर लगा दी, तो वे बिचारे विना अपराध मारे गए। क्योंकि उनको पराधीन कर दिया। यह कितना बड़ा अपराध है ? और फिर कहते हैं कि जिसने जितना किया है, उतना ही उसको दिया जायगा, न्यूनाधिक नहीं। भला उन्होंने स्वतन्त्रता से पाप किए ही नहीं, किन्तु खुदा के कराने से किए। पुनः उनका अपराध ही न हुआ, उनको फल न मिलना चाहिए। इसका फल खुदा को मिलना उचित है।

[पूरा फल मिलता है, तो क्षमा की बात समाप्त]

और जो पूरा दिया जाता है, तो क्षमा किस बात की जाती है ? और जो क्षमा की जाती है, तो न्याय उड़ जाता है। ऐसा गड़बड़ाध्याय ईश्वर का कभी नहीं हो सकता। किन्तु निर्बुद्धि छोकरों का होता है ॥१०३॥

[काफिरों के लिए दोजख; गर्दन में कर्मपत्र बाँधना]

१०४—और किया हमने दोजख को वास्ते काफिरों के घेरनेवाला स्थान॥ और हर आदमी

---

१०३. आँख, कान और दिल पर मोहर लगा दी जाने के कारण जो न देख सके, न सुन सके उसके किसी बात पर विचार करने का तो अवसर ही नहीं आ सकता। और जिसकी विचारशक्ति स्वयं खुदा ने छीन ली, उसे कृतकर्मों के लिए उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता।

दिलों पर मोहर लगाये जाने की बात कुरान शरीफ में कई बार आई है। उदाहरणार्थ—"बन्द लगा दिया है अल्लाताला ने उनके दिलों पर और उनके कानों पर और उनकी आँखों पर परदा है और उनकी सजा बड़ी है" (सू० २ आ० ७ मौ० अशरफ अली का कुरानानुवाद)। यहाँ 'मोहर' के स्थान में 'बन्द' तथा 'अजाब' के स्थान में 'सजा' है। समीक्षा के कारण यह परिवर्त्तन हुआ है। इसी के आगे १०वीं आयत में है—"उनके दिलों में बड़ा मर्ज है, और भी बढ़ा दिया अल्लाताला ने उनके मर्ज को और उनके लिए सजा दर्दनाक है" (मो० अशरफ अली का कुरानानुवाद)। यहाँ भी अनुवादक ने 'अजाब' के स्थान में 'सजा' कर दिया है। 'मर्ज' के साथ अपनी ओर से 'बड़ा' शब्द बढ़ा दिया है। ग्रन्थकार का आक्षेप तो फिर भी बना हुआ है। काफिरों के दिलों पर बन्द या मोहर अल्लाताला ने लगा दी। इससे वे काफिर बने रहे। इतना ही नहीं, प्रत्युत उनके रोग को और भी बढ़ा दिया। तो फिर वे अपराधी कैसे हुए ?

१०४. विवेच्य आयत की व्याख्या में तफसीरे जलालैन में लिखा है—'कोई बच्चा ऐसा नहीं कि जिसकी गर्दन में एक कागज न हो, जिसमें लिखा हुआ होता है उसके कर्मों का पूरा हिसाब-किताब

को लगा दिया हमने उसकी अमलनामा[1] उसका बीच गर्दन उसकी के, और निकालेंगे हम वास्ते उसके दिन कयामत के एक किताब, कि देखेगा उसको खुला हुआ ॥ और बहुत मारे हमने कुरनून से पीछे नूह के[2] ॥

—मं० ४। सि० १५। सू० १७। आ० ८, १३, १७

[केवल काफिरों के लिए ही दोजख की बात पक्षपात]

समीक्षक—यदि 'काफिर' वे ही हैं; कि जो कुरान पैगम्बर और कुरान के कहे खुदा, सातवें आसमान और नमाज आदि को न मानें, और उन्हीं के लिए दोजख होवे, तो यह बात केवल पक्षपात की ठहरे। क्योंकि कुरान ही के माननेवाले सब अच्छे, और अन्य के माननेवाले सब बुरे कभी हो सकते हैं ?

[हम तो किसी की गर्दन में कर्मपुस्तक बन्धी नहीं देखते]

यह बड़ी लड़कपन की बात है कि प्रत्येक की गर्दन में कर्मपुस्तक बाँधना। हम तो किसी एक की भी गर्दन में नहीं देखते। यदि इसका प्रयोजन कर्मों का फल देना है, तो फिर मनुष्यों के दिलों नेत्रों आदि पर मोहर रखना, और पापों का क्षमा करना, क्या खेल मचाया है ?

कि यह सौभाग्यशाली है या दुर्भाग्यशाली।' यही बात तफसीरे हुसैनी में इन शब्दों में लिखी है—'जो कुछ भाग्य में लिख दिया है पहले से ही उसके कर्मों के सम्बन्ध में निश्चित किया है उसकी गर्दन में। उससे बचने का कोई उपाय नहीं।' इस प्रकार खुदा पहले से ही हमारा भाग्य निश्चित कर देता है और हम उसके अनुसार कर्म करने को विवश होते हैं। अर्थात् कर्मों के अनुसार फल नहीं मिलता, पहले से निश्चित फल के अनुसार कर्म होते हैं। अल्लाताला हमारे स्वभाव जन्म के साथ निश्चित कर देता है और तदनुसार हमारे अतीत, वर्त्तमान और भविष्य तीनों कालों के कर्मों को लेखबद्ध करके उसकी एक प्रति लोहे महफूज (परमात्मा के पास सुरक्षित भाग्य-पुस्तक) में रख दी जाती है और एक बच्चे के जन्म के साथ उसकी गर्दन पर लटका दी जाती है। तदनुसार ही हम में से कुछ को बहिश्त के लिए और कुछ को दोजख के लिये नियत कर दिया जाता है। इस सिद्धान्त के रहते नेक कर्मों के करने और बुरे कर्मों से बचने का कोई अवसर नहीं रह जाता।

इसे हम कुरान व उसके भाष्यकारों के अपने शब्दों में प्रस्तुत कर रहे हैं—'मार्ग इन लोगों का जिन पर उपहार दिया है तूने, न कि उनका जिन पर अत्याचार किया गया, न उनका जो पथभ्रष्ट हैं।'

इस पर आगे तफसीरे हुसैनी में लिखा है—'न उन लोगों का मार्ग जिन पर तूने क्रोध किया, अर्थात् उत्पन्न होने से पूर्व ही तेरे क्रोध के पात्र बने और इस कारण काफिर (गैर मुसलिम) बने।'

यदि इसलाम व कुफ्र को अल्लाताला ने पहले से ही कुछ व्यक्तियों के लिए निर्धारित कर दिया है, तो फिर इसलाम का प्रचार करना व्यर्थ है। क्योंकि जो काफिर हैं, वे सदा काफिर ही रहेंगे। खुदा की व्यवस्था को अन्यथा करने का सामर्थ्य किसी में नहीं है। सूरते बकर की छठी आयत में स्पष्ट लिखा है—

'जो लोग काफिर हैं, उन्हें तुम नसीहत करो या न करो, उनके लिए बराबर है, वे ईमान नहीं लाने के।'

अमलनामा—मौलाना मुहम्मद अली की इसके सम्बन्ध में लिखी टिप्पणी का भाव यह है—"इस आयत ने एक सिद्धान्त का उद्घाटन किया है कि प्रत्येक कर्म का एक फल होता है, जो मनुष्य

१. अर्थात् कर्म का लेखा।

२. अर्थात्—और नूह के बाद हमने कितनी ही नस्लों को नष्ट कर दिया।

[आजकल वह खुदा की बही कहाँ है ?]

कयामत की रात को किताब निकालेगा खुदा, तो आजकल वह किताब कहाँ है ? क्या साहूकार की बही के समान लिखता रहता है ? यहाँ यह विचारना चाहिए कि जो पूर्वजन्म नहीं, तो जीवों के कर्म ही नहीं हो सकते। तो फिर कर्म की रेखा क्या लिखी ? और जो विना कर्म के लिखा, तो उन पर अन्याय किया। क्योंकि विना अच्छे-बुरे कर्मों के उनको दुःख-सुख क्यों दिया ?

[अपनी मर्जी से विना कर्म के फल देना अन्याय]

जो कहो कि खुदा की मरजी, तो भी उसने अन्याय किया। 'अन्याय' उसी को कहते हैं कि विना बुरे-भले कर्म किये दुःख-सुखरूप फल न्यूनाधिक देना। और उस समय खुदा ही किताब बाँचेगा, वा कोई सरिश्तेदार सुनावेगा ? जो खुदा ही ने दीर्घकाल सम्बन्धी[1] जीवों को विना अपराध मारा, तो वह अन्यायकारी हो गया। जो अन्यायकारी होता है, वह खुदा ही नहीं हो सकता ॥१०४॥

[समूद को ऊँटनी; दाहिने हाथ में अमलनामा]

१०५—और दिया हमने समूद को ऊँटनी प्रमाण[2] ॥ और बहका जिसको बहका सके। जिस

से चिमटा दिया जाता है और यह कि यह कर्मफल ही कयामत के दिन एक खुली पुस्तक के रूप में मिलेगा। अपना फल पीछे छोड़ने के कारण मनुष्य का प्रत्येक कर्म लिखा जाता है। यह कर्मफल ही मनुष्य के कर्मों की किताब है।" अर्थात् किताब का प्रयोग यहाँ लाक्षणिक है और उसका अर्थ है कर्मजन्य फलदायक संस्कार। यदि मौलवी मुहम्मद अली का यही भाव है तो हमें स्वीकार है। तफसीर अल् कुरान बिल्कुरान (कुरान से कुरान का भाष्य) का लेखक अब्दुल हकीमखाँ इस पर टिप्पणी में लिखता है—'गरदन में किस्मत लगाने से यह मुराद है कि जैसा करे वैसा पावे'।' इसके साथ ही उसने इस भाव का बोधक फारसी का एक पद्य भी लिखा है—'गन्दुम-अज-गन्दुम बिरोयद जौ-अज-जौ। वज मकाफाते अम्ल गाफिर मशौ' (गेहूँ-से-गेहूँ उपजता है और जौ-से-जौ। अतः कर्मफल से असावधान मत हो)। स्पष्ट ही यह व्याख्या ग्रन्थकार की समीक्षा से प्रभावित है। यदि इसी प्रकार कुरान की व्याख्या कर दी जाय और मुसलमानों को वह स्वीकार हो तो बहुत अच्छा हो। इससे समीक्षक का उद्देश्य पूरा हो जाये।

सरिश्तेदार—मौलवी मुहम्मद अली ने इस आक्षेप का समाधान इससे अगली आयत (पढ़ किताब अपनी किफायत है जान तेरी आज ऊपर तेरे हिसाब लेनेवाली) के आधार से एक टिप्पणी में इस प्रकार करने का प्रयत्न किया है—'नोट करो कि इस आयत के अनुसार कयामत के दिन अपने कर्मों का गिनना मनुष्य का अपना काम होगा।···इस जीवन में किये कर्मों के फलों के प्रकाश के अतिरिक्त यह और कुछ नहीं है।' मौलवी मुहम्मद अली ने समझा कि उसने बहुत बड़ा तीर मारा है। यह न सोचा कि मनुष्य क्यों अपने कर्मों को गिनने लगा। समीक्षक का आक्षेप बहुत गहरा है। वे कहना चाहते हैं कि कर्म करने में वह स्वतन्त्र नहीं रहा, परतन्त्र था। फिर उसको कर्म गिनवाने से लाभ ? यदि मनुष्य स्वयं गिनेगा तो क्या विशेषता ?लिखने-लिखाने का प्रयोजन स्मृति के लिए होता है। विस्मृतिशील अल्पज्ञ ही लिखा-लिखाया करता है। जिसने किताब लिखवाई वह स्वयं पढ़े या जिससे लिखवाई, उससे पढ़वाये। मनुष्य कैसे पढ़ेगा ? वह किस भाषा में है ?

१०५. 'ऊँटनी' सम्बन्धी समीक्षा के लिए द्रष्टव्य समीक्ष्यांस ८९। 'जिसको बहका सके।'

---

१. अर्थात् इजराएल की सन्तति से सम्बद्ध जीवों को।

२. अर्थात् ऊँटनी के रूप में खुली निशानी।

दिन बुलावेंगे हम सब लोगों को साथ पेशवाओं उनके के, बस जो कोई दिया गया अमलनामा उसका बीच दहिने हाथ उसके के ॥ —मं० ४। सि० १५। सू० १७। आ० ५६, ६४, ७१

[क्या केवल ऊँटनी ही खुदा के होने में प्रमाण है ?]

समीक्षक—वाहजी ! जितनी खुदा की साश्चर्य निशानी हैं, उनमें से एक ऊँटनी भी खुदा के होने में प्रमाण अथवा परीक्षा में साधक है ?

[शैतान के द्वारा बहकानेवाला स्वयं शैतान क्यों नहीं ?]

यदि खुदा ने शैतान को बहकाने का हुक्म दिया, तो खुदा ही शैतान का सरदार और सब पाप करानेवाला ठहरा। ऐसे को खुदा कहना केवल कम समझ की बात है।

[उत्तम न्यायाधीश तो सदा शीघ्र न्याय करते हैं]

जब कयामत की रात अर्थात् प्रलय ही में न्याय करने-कराने के लिए पैगम्बर और उनके उपदेश माननेवालों को खुदा बुलावेगा, तो जब तक प्रलय न होगा तबतक सब दौड़ासुपुर्द रहें ? और दौड़ासुपुर्द सबको दुःखदायक है, जबतक न्याय न किया जाय। इसलिए शीघ्र न्याय करना न्यायाधीश का उत्तम काम है।

[यह तो पोपांबाई का न्याय ठहरा; इसे न्याय नहीं कहते]

यह तो पोपाबाई[1] का न्याय ठहरा। जैसे कोई न्यायाधीश कहे कि जबतक पचास वर्ष तक के चोर और साहूकार इकट्ठे न हों, तब तक उनको दण्ड वा प्रतिष्ठा न करनी चाहिए। वैसा ही यह हुआ कि एक तो पचास वर्ष तक दौड़ासुपुर्द रहा, और एक आज ही पकड़ा गया। ऐसा न्याय का काम नहीं हो सकता। न्याय के लिए तो वेद और मनुस्मृति देखो, जिसमें क्षणमात्र भी विलम्ब नहीं होता। और अपने-अपने कर्मानुसार दण्ड वा प्रतिष्ठा सदा पाते रहते हैं।

—मौ० अशरफ अली ने आक्षेप निवारण करने के लिए अनुवाद ही बदल दिया है, उनका अनुवाद है—'और उसमें से जिस चीज पर तेरा काबू चले।' अनुवाद-परिवर्त्तन में सिद्धहस्त मौलवी मुहम्मद अली ने यहाँ 'Beguile' शब्द लिखा है, जिसका अर्थ है 'तू बहका।' इस आयत पर की टिप्पणी में मौलवी मुहम्मद अली ने लिखा है—'The forces of the devil are no other than the evil doers' अर्थात् कुकर्मियों से भिन्न शैतान की कोई सेना नहीं। 'पेशवाओं'—मौ० अशरफ अली ने यहाँ 'ब इमामहिम्' का अर्थ छोड़ दिया है, केवल आक्षेप से बचने के लिए। शाहजी ने 'साथ पेशवाओं उनके' और मौलवी मुहम्मद अली ने 'With their leaders' देकर मूल का अनुसरण किया है। दौरासुपुर्द = Under-trial.

दण्ड में विलम्ब—आधुनिक दण्डविधान के अनुसार 'Justice delayed is justice denied' अर्थात् न्याय में देरी होना मानो न्याय न मिलना है।

---

१. यह गुजराती भाषा का शब्द है। उसमें 'पोपाबाई नुं राज' उक्ति 'अंधेर नगरी अनबूझ राजा' या 'ढोलपोल की हाकिमी' के लिये प्रयुक्त होती है।

[पैगम्बरों की गवाही की ईश्वर को क्या आवश्यकता ?]

दूसरा—पैगम्बरों को गवाही के तुल्य रखने से ईश्वर की सर्वज्ञता की हानि है। भला ऐसा पुस्तक ईश्वरकृत, और ऐसे पुस्तक का उपदेश करनेवाला ईश्वर कभी हो सकता ? कभी नहीं ॥१०५॥

[मुसलमानों की बहिश्त]

१०६—ये लोग वास्ते उनके हैं बाग हमेशह रहने के, चलती हैं नीचे उनके से नहरें, गहिना पहिराये जावेंगे बीच उसके कङ्गन सोने के-से, और पोशाक पहनेंगे वस्त्र हरित लाही[1] की-से, और ताफ्ते की-से तकिये किए हुए बीच उसके ऊपर तख्तों के, अच्छा है पुण्य और अच्छी है बहिश्त लाभ उठाने की ॥

—मं० ४। सि० १५। सू० १८। आ० ३१

[उस बहिश्त में यहाँ से अधिक क्या है ?]

समीक्षक—वाहजी वाह ! क्या कुरान का स्वर्ग है, जिसमें बाग नहरें गहने कपड़े गद्दी तकिये आनन्द के लिए हैं। भला कोई बुद्धिमान् यहाँ विचार करे, तो यहाँ से वहाँ मुसलमानों के बहिश्त में अधिक कुछ भी नहीं है, सिवाय अन्याय के। वह यह है कि कर्म उनके अन्तवाले और फल उनका अनन्त।

न्याय कयामत के दिन होता है। वस्तुतः न्याय नहीं, न्याय का नाटक होता है। जैसा कि पहले लिखा जा चुका है, प्रत्येक व्यक्ति के कर्म तो प्रारम्भ से ही नियत होते हैं। उनमें हेरफेर तो हो नहीं सकता। उसके अनुसार ही प्रत्येक व्यक्ति ने कर्म किये होंगे, इसलिए निर्णय भी पहले ही लिख दिया जाता है। सबका हिसाब तैयार है। समीक्ष्यांश में निर्दिष्ट आयत (बनी इस्राईल ७१) में लिखा है कि बहिश्त में भेजे जानेवालों का हिसाब उनके दाएँ हाथ में और दोजख में भेजे जानेवालों का बाएँ हाथ में थमा दिया जाता है। हिसाब हाथ में आते ही निर्णय का आभास हो जाता है। जिसके दाएँ हाथ में हिसाब थमा दिया जायेगा वह खुशी से उछलता हुआ लोगों को अपना एमालनाम दिखाता है और जिसके बाएँ हाथ में थमाया जायेगा वह सिर पीट कर रह जायेगा—काश न मिलता मेरे कर्मों का हिसाब ! पर नाटक तो करना आवश्यक है। और उसके लिए गवाह बुलाये जाते हैं। वे गवाह भी खुदा के अपने ही हैं—पैगम्बर हजरत मुहम्मद और उनकी उम्मत। गवाह वही कहते हैं जो अल्लामियाँ चाहते हैं। हिसाब रखनेवाले भी खुदा के अपने हैं। अल्लामियाँ के निर्णय के विरुद्ध अपराधियों की ओर से न अपील, न वकील, न दलील। और अपराधियों को सदा के लिए दोजख में भेज दिया जायेगा।

१०६. स्वर्ग में उपलब्ध पदार्थों से सम्बन्धित ग्रन्थकार के आक्षेप को टालने के लिए इस आयत पर मौलवी मुहम्मद अली की टिप्पणी है—'यह मन में धारण कर लेना चाहिए। जैसाकि सूरत १३ आयत ३५ तथा अन्यत्र स्पष्ट लिखा है कि स्वर्ग के आभूषण, वस्त्र तथा तकिये इस संसार के पदार्थ नहीं हैं, प्रत्युत इस जीवन में की हुई भलाई के आत्मिक फल हैं। अगले जन्म के सौभाग्य को प्रकट करने के लिए शब्द इस जीवन से लिए गये हैं। किन्तु उनका स्वरूप भिन्न है। मनुष्य सुख-सुविधाओं के पीछे दौड़ते हैं। उनको कह दिया गया है कि शाश्वत सुख सुविधा केवल भलाई के प्रयत्न से प्राप्त हो सकते हैं।' मौलवीसाहब ने लक्षणा के सहारे बात बनाने का प्रयास किया, किन्तु उसका कोई आधार न खोज सके। लक्षणा निराधार नहीं होती। ये नहीं तो और स्वर्ग में क्या मिलेगा, इसका उल्लेख भी करना

---

१. हरित लाही = उत्तम रेशम; ताफ्ते = सुनहरी कढ़ाई।

[दुःख-भोग के विना सुख का मजा नहीं]

और जो मीठा नित्य खावे, तो थोड़े दिन में विष के समान प्रतीत होता है। जब सदा वे सुख भोगेंगे, तो उनको सुख ही दुःखरूप हो जायगा। इसलिए महाकल्पपर्यन्त मुक्तिसुख भोगके पुनर्जन्म पाना ही सत्य सिद्धान्त है ॥१०६॥

[बस्तियों का नाश करना]

१०७—और यह बस्तियाँ हैं कि मारा हमने उनको जब अन्याय किया उन्होंने, और हमने उनके मारने की प्रतिज्ञा स्थापन की ॥ —मं० ४। सि० १५। सू० १८। आ० ५६

[क्या कभी सारी बस्ती पापी हो सकती है?]

समीक्षक—भला सब बस्तीभर पापी भी हो सकती है? और पीछे से प्रतिज्ञा करने से ईश्वर सर्वज्ञ नहीं रहा। क्योंकि जब उनका अन्याय देखा तो प्रतिज्ञा की, पहिले नहीं जानता था? इससे दया-हीन भी ठहरा ॥१०७॥

[खुदा का डरना; सूर्य का कीचड़ के चश्मे में डूबना]

१०८—और वह जो लड़का, बस थे माँ-बाप उसके ईमानवाले, बस डरे हम यह कि पकड़े उनको सरकशी में और कुफ्र में ॥

चाहिए था। 'सुखं हि दुःखान्यनुभूय शोभते घनान्धकारेष्विव काचदीपिका'—जैसे लालटैन की शोभा गहरे अन्धेरे में होती है, वैसे ही दुःख के साथ ही सुख की सार्थकता होती है। महाकल्प की अवधि ३६००० बार सृष्टि की उत्पत्ति-प्रलय की अवधि के बराबर होती है।

१०७. संसार में सदा और सर्वत्र भले और बुरे दोनों प्रकार के मनुष्य रहे हैं, भले ही उनके अनुपात में विपर्यास रहा हो। इसलिए किसी बस्ती के सभी लोग अपराधी नहीं हो सकते। सभी को मार देना न्याय नहीं माना जा सकता।

१०८. इस आयत (१८।८०) और इसकी कथा को समझने के लिए इससे पूर्व की कुछ आयतों का सार-संक्षेप देना सहायक होगा, जो इस प्रकार है—"मूसा अपने नौकर के साथ जा रहा है। नौकर के हाथ में एक मछली है। नौकर मार्ग में एक स्थान में मछली रखकर भूल गया और अपने स्वामी को यह बतलाना भी भूल गया। मूसा मछली को खोजने के लिए अपने नौकर के साथ उलटे पाँव लौटा। लौटते हुए, दो नदियों के संगम पर जहाँ मछली रखकर उठाना उनका नौकर भूला था, एक महापुरुष मिले। मूसा ने उनसे उपदेश के लिए अनुरोध किया कि यदि आप मुझे अपना विशेष ज्ञान दें तो मैं आपके साथ रहना चाहता हूँ। उस महापुरुष (हजरत खिज्र) ने कहा कि आप में मेरे साथ रहने का धैर्य नहीं है। मूसा ने कहा कि मैं अवश्य धैर्य से रहूँगा। इसपर उस महापुरुष ने कहा कि आप मेरे साथ रहना चाहते हैं तो मैं जब तक स्वयं आपको कुछ न बताऊँ, आप मुझसे मेरे किसी कर्म के सम्बन्ध में न पूछेंगे। मूसा ने स्वीकार कर लिया। अब वे एक नौका में बैठ गये। उस महापुरुष ने नौका में एक छेद कर दिया। अधीर होकर मूसा पूछ बैठे, यह आपने क्या किया? क्या नौका में बैठों को डुबाना चाहते हैं? उस महापुरुष ने कहा कि मैंने पहले ही कहा था कि आप मेरे साथ

यहाँ तक कि पहुँचा जगह डूबने सूर्य्य की, पाया उसको डूबता था बीच चश्मे कीचड़ के ॥ कहा उनने ऐ जुलकरनैन ! निश्चय याजूज माजूज[1] फिसाद करनेवाले हैं बीच पृथिवी के ॥

—मं० ४। सि० १६। सू० १८। आ० ८०, ८६, ९४

रहने में धैर्य न धर सकेंगे। मूसा ने अपनी भूल स्वीकार की। इसके बाद आगे चलने पर उन्हें एक लड़का मिला, जिसे उस महापुरुष ने मार डाला। इसपर मूसा ने कहा कि आपने यह बड़ा अन्याय किया जो एक निरपराध बालक की हत्या कर डाली। इसपर उस महापुरुष ने उसे अपना साथ छोड़ने को कहा। मूसा ने पुनः क्षमा माँगी। पश्चात् वे आगे चले, एक ग्राम में पहुँचे। उन्होंने ग्रामवासियों से भोजन माँगा, ग्रामवासियों ने देने से इन्कार कर दिया। वहाँ एक दीवार गिरा चाहती थी। महापुरुष ने उसे सीधा कर दिया। मूसा बोल पड़े, आप चाहते तो इसकी कुछ मजूरी ले लेते। इसपर उस महापुरुष ने कहा, हमारा और आपका पृथक् होने का समय आ गया है। अब मैं आपको अपने उन कार्यों का रहस्य बतलाता हूँ" [आयत ६० से ७८ तक]। उनमें से लड़के की हत्या का रहस्य इस समीक्ष्य आयत में बतलाया गया है। अर्थात् महापुरुष को यह आशंका हुई कि लड़का बड़ा होकर काफिर हो जायेगा, इससे उसके मुसलमान माँ-बाप को दुःख होगा, अतः उसने उसे मार देना ठीक समझा। यह बहुत आपत्तिजनक बात है। अभी उस लड़के ने कोई अपराध नहीं किया था। भविष्य में अपराध करने की सम्भावना के कारण किसी को दण्डित करना कहाँ का न्याय है ? श्री फतह मुहम्मद खाँ कहते हैं कि लड़के के काफिर हो जाने पर उसकी मुहब्बत में अन्धे होकर माँ-बाप के भी काफिर हो जाने की आशंका थी, इसलिए उसे मार डालना ही ठीक था। यहाँ भी अपराधी न होते हुए भी भविष्य में उसके अपराध की कल्पना करके उसे मार डालना किसी भी न्याय-प्रक्रिया के अनुसार वैध नहीं माना जा सकता। मौलवी मुहम्मद अली का कहना है कि वह लड़का वास्तव में हत्या एवं डकैती जैसे गम्भीर अपराधों का अपराधी था। किन्तु कुरान में कहीं उसके अपराधी होने का उल्लेख नहीं है और मौ० मुहम्मद अली ने भी इसका कोई प्रमाण प्रस्तुत नहीं किया है। यदि वह सचमुच अपराधी था तो वह राजकीय व्यवस्था के अधीन दण्डनीय था, हजरत खिज्र को उसकी हत्या करने का कोई अधिकार नहीं था। इस अनधिकार चेष्टा के लिए वह स्वयं अपराधी ठहरते हैं। वस्तुतः लड़के के अपराधी होने की कल्पना कुरान के व्याख्याकारों ने की है। लड़के की हत्या निश्चय ही निर्दोष की हत्या थी।

चश्मे कीचड़—पौराणिक लोग उदयाचल (उदय होने का पर्वत) तथा अस्ताचल (अस्त होने का पर्वत) मानते हैं। इसी भाँति समुद्र से सूर्य का उदय और समुद्र में सूर्य का अस्त मानते हैं। सम्भवतः उन्हीं के अनुकरण में यह कथन है। मौ० अशरफ अली ने 'चश्मे कीचड़' के स्थान में 'काले पानी में' करके पौराणिकों से पूरा समझौता कर लिया है। परन्तु इससे समीक्षा में कोई अन्तर नहीं आता। मौ० मुहम्मद अली ने 'Black Sea' (काला सागर) मानकर मौ० अशरफ अली का अनुमोदन किया है।

जुलकरनैन—इसका शब्दार्थ है 'दो सींगोंवाला'। किन्तु प्रस्तुत प्रकरण में यह एक प्रसिद्ध सम्राट् का नाम है। मौ० अशरफ अली ने टिप्पणी में लिखा है—'जुलकरनैन उस बादशाह को कहते हैं जो दुनिया के दोनों सिरों पर फिर गया था, मशरिक (पूर्व) और मगरिब (पश्चिम) पर। बाजे कहते हैं कि यह सिकन्दर का एक लकब है। बाजे कहते हैं कि कोई बादशाह पहले गुजरा है। मौलवी मुहम्मद

१. ये याजूज माजूज असभ्य जातियाँ थीं, जो सदा लूटमार करती रहती थीं। इनके निवासस्थान के विषय में थोड़ा मतभेद है। इसके लिये महमूद फारूख खाँ कृत हिन्दी अनुवाद (रामपुर से छपा) पृ० ५३६, टि० ३६ देखें।

[भय की बात खुदा में कैसे हो सकती है ?]

समीक्षक—भला यह खुदा की कितनी बेसमझ है ? शङ्का से डरा कि लड़कों के माँ-बाप कहीं मेरे मार्ग से बहकाकर उलटे न कर दिये जावें। यह कभी ईश्वर की बात नहीं हो सकती।

[सूर्य किसी नदी झील वा समुद्र में कैसे डूब सकता है ?]

अब आगे की अविद्या की बात देखिये, कि इस किताब का बनानेवाला सूर्य्य को एक झील में रात्रि को डूबा जानता है, फिर प्रातःकाल निकलता है। भला सूर्य्य तो पृथिवी से बहुत बड़ा है, वह नदी वा झील वा समुद्र में कैसे डूब सकेगा ? इससे यह विदित हुआ कि कुरान के बनानेवाले को भूगोल-खगोल की विद्या नहीं थी। जो होती तो ऐसी विद्याविरुद्ध बात क्यों लिख देता[1] ? और इस पुस्तक के माननेवालों को भी विद्या नहीं है। जो होती तो ऐसी मिथ्या बातों से युक्त पुस्तक को क्यों मानते ?

[खुदा ने पृथिवी पर फसाद क्यों होने दिया ?]

अब देखिये खुदा का अन्याय। आप ही पृथिवी का बनानेवाला राजा न्यायाधीश है, और याजूज माजूज को पृथिवी में फसाद भी करने देता है। वह ईश्वरता की बात से विरुद्ध है। इससे ऐसी पुस्तक को जङ्गली लोग माना करते हैं, विद्वान् नहीं ॥१०८॥

[फरिश्ते से मर्यम का गर्भवती होना]

१०९—और याद करो बीच किताब के मर्यम को, जब जा पड़ी लोगों अपने से मकान पूर्वी में ॥ बस पड़ा उनसे इधर पर्दा, बस भेजा हमने रूह अपनी को अर्थात् फरिश्ता, बस सूरत पकड़ी वास्ते उसके आदमी पुष्ट की ॥

अली ने टिप्पणी में इसे ईरान का बादशाह दारा प्रथम माना है और इसके लिए ऐतिहासिक हेतु भी दिया है। याजूज, माजूज दो कबीलों या जातियों के नाम हैं। इनके निवासस्थान के विषय में थोड़ा मतभेद है। मौ० अशरफ अली ने २१वीं सूरत की एक आयत की टिप्पणी में लिखा है कि याजूज माजूज याफस बिन नूह की औलाद हैं। ये लोग अपने मुर्दों के शव को अपने आप ही खा जाते हैं।

१०९. मौ० अशरफ अली ने टिप्पणी में ईसामसीह की उत्पत्ति के बारे में लिखा है—"बनी इस्राईल में दस्तूर था कि अपने लड़कों को बैतुल मुकद्दस का खादिम (सेवक) बना दिया करते थे। हजरत मरयम की माँ हनः ने इस दस्तूर के मुताबिक नजर मानी कि उनके पेट में जो बच्चा है, उसके पैदा होने के बाद बैतुल मुकद्दस का खादिम बना देंगी। जब हजरत मरियम पैदा हुई तो लड़की के पैदा होने से उनको बड़ा रंज हुआ। मगर अल्ला ने मरियम का खादिम होना कबूल फरमाया। हजरत मरियम अपने खालू हजरत जकरिया के पास परवरिश पाकर बैतुल मुकद्दस की खिदमत किया करती थीं। सुरयानी जबान में मरियम के माने खादिमा (सेविका) के हैं। जब अल्लाह को मंजूर हुआ कि दुनिया में कुदरत का नमूना पेश करे तो हजरत जिब्राईल ने उनके जिस्म में हजरत ईसा की रूह फूंक दी और उनको हम्ल रह गया।" जैसे बाइबल में ईसा को कुमारी के पेट से उत्पन्न बतलाया गया है, वैसे ही कुरान में वर्णन किया गया है। किन्तु मौ० मुहम्मद अली ने अनुवाद में अनर्थ किया है। मूल में 'रूह' शब्द है, जिसका अर्थ स्पष्ट ही रूह या फरिश्ता है, जैसाकि मौ० अशरफ अली ने किया है। किन्तु

---

१. सं० २ से ३५ तक 'देते' पाठ है। कर्त्ता के एक होने से एकवचनान्त पद होना चाहिये।

कहने लगी, निश्चय मैं शरण पकड़ती हूँ रहमान की तुझसे जो है तू परहेजगार ॥ कहने लगा सिवाय इसके नहीं कि मैं भेजा हुआ हूँ मालिक तेरे के से[1] ता कि[2] दे जाऊँ मैं तुझको लड़का पवित्र। कहा, कैसे होगा वास्ते मेरे लड़का, नहीं हाथ लगाया मुझको किसी आदमी ने, नहीं मैं बुरा काम करने-वाली ॥ बस गर्भित हो गई साथ उसके और जा पड़ी साथ उसके मकान दूर अर्थात् जङ्गल में ॥

—मं० ४। सि० १६। सू० १६। आ० १६-२०, २२

[तब तो फरिश्ते भी खुदा ठहरे, क्योंकि वे खुदा की रूह हैं]

समीक्षक—अब बुद्धिमान् विचारलें कि फरिश्ते सब खुदा की रूह हैं, तो खुदा से अलग पदार्थ नहीं हो सकते।

[खुदा के हुक्म से मरियम को गर्भवती करना अन्याय]

दूसरा यह अन्याय कि वह मर्यम कुमारी के लड़का होना। किसी का संग करना नहीं चाहती थी, परन्तु खुदा के हुक्म से फरिश्ते ने उसको गर्भवती किया। यह न्याय से विरुद्ध बात है। यहाँ[3] अन्य भी असभ्यता की बातें बहुत लिखी हैं। उनको लिखना उचित नहीं समझा ॥१०६॥

[काफिरों को बहकाने को शैतान भेजा]

११०—क्या नहीं देखा तूने यह कि भेजा हमने शैतानों को ऊपर काफिरों के बहकाते हैं उनको बहकाने पर[4]।

—मं० ४। सि० १६। सू० १६। आ० ८३

मौ० मुहम्मद अली ने 'रूह' का अर्थ 'Inspiration' (इल्हाम) किया है, जो किसी प्रकार उपपन्न नहीं होता। मौ० मुहम्मद अली इस अर्थ के लिए कोई आधार या प्रमाण भी प्रस्तुत नहीं कर सके हैं। अगले वाक्य से भी इस अर्थ की संगति नहीं बैठती। अतः उसे टिप्पणियों में फरिश्ते का आना मानना पड़ा, जिसके मूल में न होने से यह कहना पड़ा कि उसे फरिश्ते के दर्शन स्वप्न में या कल्पना में हुए। यह सब ग्रन्थकार की समीक्षा से घबराकर लिखा। किन्तु मूल को देखनेवाला कोई इसे स्वीकार नहीं करेगा। 'फरिश्ते खुदा की रूह'—'रूह' का अर्थ टीकाकारों ने फरिश्ता किया है, जैसाकि यहाँ दर्शाया गया है। उसी के आधार पर यह आक्षेप है।

मौलाना आजाद ने कहा था—'We have created man from the union of sexes' (Quran 76.2-3), पर ईसा की उत्पत्ति तो स्त्री-पुरुष के संयोग के बिना कैसे हो गई, इसका कोई सन्तोषजनक समाधान मौलाना ने प्रस्तुत नहीं किया। इसका कोई वैज्ञानिक आधार हो ही नहीं सकता। इसलिए कोई बुद्धिजीवी इस पर विश्वास नहीं करेगा।

११०. बागे अदन में तो एक शैतान था, उसने स्वयं खुदा के दोनों हाथों से बने आदम को ऐसा बहकाया कि बेचारे को बागे अदन से निकलना पड़ा था। यहाँ तो शैतानों की पूरी सेना धरती के इन्सानों से बने इन्सानों को गुमराह करने के लिए छोड़ रक्खी है। वे गुमराह होने से कैसे बच सकते हैं? सर्वशक्तिमान् परमात्मा के किए को अन्यथा कौन कर सकता है? स्पष्ट है कि संसार में जितनी बुराई

---

१. 'से' व्यर्थ-सा है।
२. वै० यं० मुद्रित में 'तो कि' पाठ है।
३. अर्थात् आयत २१ में तथा २२ से आगे कई आयतों में।
४. यहाँ ऐसा सम्बन्ध समझें—'''काफिरों के उनको बहकाने पर, वे बहकाते हैं।'

[बहकाने का काम खुदा करवाता है, तो वही फल भी भोगे]

समीक्षक—जब खुदा ही शैतानों को बहकाने के लिए भेजता है, तो बहकानेवालों का कुछ दोष नहीं हो सकता। और न उनको दण्ड हो सकता, और न शैतानों को। क्योंकि यह खुदा के हुक्म से सब होता है। इसका फल खुदा को होना चाहिए। जो सच्चा न्यायकारी है, तो उसका फल दोजख आप ही भोगे। और जो न्याय को छोड़के अन्याय को करे, तो अन्यायकारी हुआ। अन्यायकारी ही 'पापी' कहाता है ॥११०॥

[तोबा: करने से पाप-क्षमा]

१११—और निश्चय क्षमा करनेवाला हूं वास्ते उस मनुष्य के, तोबा: की और ईमान लाया कर्म किए अच्छे फिर मार्ग पाया। —मं० ४। सि० १६। सू० २०। आ० ८२

[तोबा: से पाप-क्षमा की बात पाप बढ़ाती है]

समीक्षक—जो तोबा: से पाप-क्षमा करने की बात कुरान में है, यह सबको पापी करानेवाली[1] है। क्योंकि पापियों को इससे पाप करने का साहस बहुत बढ़ जाता है। इससे यह पुस्तक और इसका बनानेवाला पापियों को पाप कराने में हौसला बढ़ानेवाले हैं। इससे यह पुस्तक परमेश्वरकृत, और इसमें कहा हुआ परमेश्वर भी नहीं हो सकता ॥१११॥

[पृथिवी को थामने के लिये पहाड़]

११२—और किये हमने बीच पृथिवी के पहाड़, ऐसा न हो कि हिल जावे।
—मं० ४। सि० १७। सू० २१। आ० ३१

[तो भूकम्प आने पर पृथिवी क्यों हिलती है?]

समीक्षक—यदि कुरान का बनानेवाला पृथिवी का घूमना आदि जानता, तो यह बात कभी नहीं कहता कि पहाड़ों के धरने से पृथिवी नहीं हिलती। शंका हुई होगी कि जो पहाड़ नहीं धरता तो हिल जाती। इतने कहने पर भी भूकम्प में क्यों डिग जाती है ॥११२॥

है, वह सब परमात्मा की है। काफिरों को सही मार्ग दिखाकर मोमिन बनाने की बजाय उन्हें शैतानों के द्वारा उकसाकर बुराई में प्रवृत्त करने जैसा पवित्र कार्य कुरान का खुदा ही कर सकता है, वेद का परमात्मा नहीं, जो हर समय अपनी प्रेरणा के द्वारा मनुष्यों को शुभ कर्मों में प्रवृत्त तथा दुष्कर्मों से निवृत्त करने का प्रयत्न करता रहता है।

१११. जब तक अपराधियों को दण्ड नहीं दिया जाता तब तक वे निःशंक होकर प्रजा पर अन्याय व अत्याचार करते रहते हैं। मनुस्मृति में ठीक कहा है—'दण्डः शास्ति प्रजाः सर्वाः दण्डं धर्म विदुर्बुधाः।' क्षमा की अति अपराधवृत्ति को बढ़ावा देती है।

११२. मौ० फतेह मुहम्मद खाँ ने इस आयत का अनुवाद इस प्रकार किया है—'और हमने जमीन में पहाड़ बनाये ताकि लोगों (के बोझ) से हिलने (और झुकने) न लगे।' पहाड़ों में भी तो बोझ होता है। यदि लोगों के बोझ से जमीन के हिलने का डर है तो पहाड़ों के बोझ से तो यह डर बढ़ना चाहिए। कुरान की किसी बात के विज्ञान की कसौटी पर खरा उतरने की आशा तो करनी ही नहीं चाहिए।

१. यहाँ 'बनानेवाली' पाठ चाहिये, अथवा 'पापी' के स्थान पर 'पाप' पाठ होना चाहिये।

[औरत के बीच रूह फूंकना]

११३—और शिक्षा दी हमने उस औरत को, और रक्षा की उसने अपने गुह्य अंगों की, बस फूंक दिया हमने बीच उसके रूह अपनी को। —मं० ४। सि० १७। सू० २१। आ० ६१

[कुरान में अश्लील बातें भरी पड़ी हैं]

समीक्षक—ऐसी अश्लील बातें खुदा की पुस्तक में खुदा की क्या, और सभ्य मनुष्य की भी नहीं होती। जबकि मनुष्यों में ऐसी बातों का लिखना अच्छा नहीं, तो परमेश्वर के सामने[1] क्योंकर अच्छा हो सकता है? ऐसी-ऐसी बातों से कुरान दूषित होता है। यदि अच्छी बात होती, तो अति प्रशंसा होती, जैसी वेदों की ॥११३॥

[सूर्यादि का अल्लाह को प्रणाम; खुदा के घर की परिक्रमा]

११४—क्या नहीं देखा तूने कि अल्लाह को सिजदा करते हैं, जो कोई बीच आसमानों और पृथिवी के हैं सूर्य और चन्द्र तारे और पहाड़ वृक्ष और जानवर।

पहिनाये जावेंगे बीच उसके कंगन सोने के[2] और मोती और पहिनावा उनका बीच उसके रेशमी है।

और पवित्र रख घर मेरे को वास्ते गिर्द फिरनेवालों के और खड़े रहनेवालों के। फिर चाहिए कि दूर करें मैल अपने और पूरी करें भेंटें अपनी, और चारों ओर फिरें[3] घर कदीम के॥ ताकि[4] नाम अल्लाह का याद करें। —मं० ४। सि० १७। सू० २२। आ० १८, २३, २६, २६, ३४

---

११३ 'और शिक्षा दी हमने उस औरत को' ये शब्द मूल आयत में नहीं हैं। शाह साहब ने अर्थ को स्पष्ट करने के लिए अपनी ओर से ये शब्द बढ़ा दिए हैं—'और हिदायत दी उस औरत को।' मौ० फतेह मुहम्मद खां ने इस आयत का अनुवाद इस प्रकार किया है—'और उन (मरियम) को (भी याद करो) जिन्होंने अपनी पाकदामनी को बचाये रक्खा, तो हमने उनमें अपनी रूह फूंक दी और उनको और उनके बेटे को दुनियावालों के लिए निशानी बना दिया।' आक्षेप से बचने के लिए मौलवी मुहम्मद अली ने टिप्पणी में लिखा—'The guarding of chastity does not preclude the lawful union of husband and wife' अर्थात् गुह्यों की रक्षा पति-पत्नी के वैध संयोग का निषेध नहीं करती। पर कुरानोक्त 'कुन फयकुन' (हो और हो जाता है) इस सिद्धान्त के रहते मौलवी साहब ऐसी बात कैसे कह सकते हैं?

११४. पृथिवी, सूर्य, चन्द्र, तारे, पहाड़, वृक्ष आदि सभी जड़ पदार्थ हैं। न उनमें ज्ञान है, न पाप-पुण्यानुसारी कर्म, फिर वे उपासना या भक्ति को क्या जानें? जो अल्लाह को जानते तक नहीं वे उसे सिजदा कैसे कर सकते हैं? जानवर चेतन अवश्य हैं, किन्तु उनका बौद्धिक विकास इतना नहीं कि वे ईश्वर के प्रति अपने कर्त्तव्य को जानकर सिजदा करने लगें। इससे पूर्व इसी समुल्लास में मूर्त्तिपूजा (बुतपरस्ती) के प्रकरण में हम सिद्ध कर चुके हैं कि मुसलमानों से बढ़कर बुतपरस्त अन्य कोई नहीं है।

---

१. अर्थात् परमेश्वर के लिये।
२. सं० २ में 'से' पाठ है।
३. सं० २ में 'फिर' पाठ है।
४. वै० यं० मुद्रित में 'तो कि' पाठ है।

[जड़ पदार्थ किसी को प्रणाम नहीं कर सकते]

समीक्षक—भला जो जड़ वस्तु हैं, परमेश्वर को जान ही नहीं सकते, फिर वे उसकी भक्ति क्योंकर कर सकते हैं? इससे यह पुस्तक ईश्वरकृत तो कभी नहीं हो सकता, किन्तु किसी भ्रान्त का बनाया हुआ दीखता है।

[यहाँ के राजघरानों से बहिश्त में अधिक कुछ नहीं]

वाह! बड़ा अच्छा स्वर्ग है, जहाँ सोने-मोती के गहने और रेशमी कपड़े पहिरने को मिलें। यह बहिश्त यहाँ के राजाओं के घर से अधिक नहीं दीख पड़ता।

[खुदा का घर बनाकर परिक्रमा करना बुतपरस्ती है]

और जब परमेश्वर का घर है, तो वह उसी[1] घर में रहता भी होगा, फिर बुतपरस्ती क्यों न हुई? और दूसरे बुत्परस्तों का खण्डन क्यों करते हैं? जब खुदा भेंट लेता है, अपने घर की परिक्रमा करने की आज्ञा देता है, और पशुओं को मरवाके खिलाता है, तो यह खुदा मन्दिरवाले और भैरव दुर्गा के सदृश हुआ, और महाबुत्परस्ती का चलानेवाला हुआ। क्योंकि मूर्त्तियों से मस्जिद बड़ा बुत् है। इससे खुदा और मुसलमान बड़े बुत्परस्त, और पुराणी तथा जैनी छोटे बुत्परस्त हैं ॥११४॥

[कयामत के दिन मुर्दों को उठाना]

११५—फिर निश्चय तुम दिन कयामत के उठाये जाओगे।

—मं० ४। सि० १८। सू० २३। आ० १६

[कयामत तक कबर में पड़े सड़ने देना अन्याय है]

समीक्षक—कयामत तक मुर्दे कबर में रहेंगे, वा किसी अन्य जगह? जो उन्हीं में रहेंगे तो सड़े हुए दुर्गन्धरूप शरीर में रहकर पुण्यात्मा भी दुःख-भोग करेंगे? यह अन्याय है। और दुर्गन्ध अधिक होकर रोगोत्पत्ति करने से खुदा और मुसलमान पापभागी होंगे ॥११५॥

[हाथ पाँव आदि की गवाही; अल्लाह का तेज]

११६—उस दिन की गवाही देवेंगे, ऊपर उनके जबानें उनकी और हाथ उनके और पाँव उनके साथ वस्तु के कि थे करते[2]।

अल्लाह नूर है आसमानों का और पृथिवी का, नूर उसके कि मानिन्द ताक की है, बीच उसके दीप हो, और दीप बीच कंदील शीशों के हैं, वह कंदील मानों कि तारा है चमकता, रोशन किया जाता है दीपक वृक्ष मुबारिक जैतून के तेल से, न पूर्व की ओर है न पश्चिम की समीप है, तेल उसका रोशन

११५-११६. कयामत के दिन मुर्दों के कबरों में से उठने और हाथ-पैरों के गवाही देने आदि का विस्तृत विवेचन यथावसर पहले हो चुका है। क्योंकि प्रत्येक रूह के भाग्य का निर्णय उसके जन्म के साथ ही लिखकर उसकी गर्दन में लटका दिया जाता है, इसलिए हाथ-पैर आदि शरीरांग सरकारी

---

१. सं० २ में 'उस' पाठ है।
२. सं० २ में 'कर्त्ते' अपपाठ है।

हो जावे जो न लगे आग उसको, रोशनी ऊपर रोशनी के, मार्ग दिखाता है अल्लाह नूर अपने के, जिसको चाहता है।
—मं० ४। सि० १८। सू० २४। आ० २४, ३५

[जड़ हाथ पग कैसे गवाही दे सकते हैं?]

समीक्षक—हाथ-पग आदि जड़ होने से गवाही कभी नहीं दे सकते। यह बात सृष्टिक्रम से विरुद्ध होने से मिथ्या है।

[खुदा आग वा बिजली जैसा नहीं]

क्या खुदा आगी[1] बिजुली है? जैसाकि दृष्टान्त देते हैं, ऐसा दृष्टान्त ईश्वर में नहीं घट सकता। हाँ किसी साकार वस्तु में घट सकता है ॥११६॥

[जानवरों की पानी से उत्पत्ति; खुदा व रसूल की आज्ञा मानो]

११७—और अल्लाह ने उत्पन्न किया हर जानवर को पानी से, बस कोई उनमें से वह है कि जो चलता है पेट अपने के ॥

और जो कोई आज्ञा पालन करे अल्लाह की रसूल उसके की॥ कह आज्ञा पालन करै खुदा की रसूल उसके की ॥ और आज्ञा पालन करो रसूल की, ताकि[2] दया किए जाओ ॥
—मं० ४। सि० १८। सू० २४। आ० ४५, ५२, ५४, ५६

[सबकी पानी से उत्पत्ति बताना अज्ञानता]

समीक्षक—यह कौन-सी फिलासफी है कि जिन जानवरों के शरीर में सब तत्त्व दीखते हैं, और कहना कि केवल पानी से उत्पन्न किया? यह केवल अविद्या की बात है।

[खुदा और पैगम्बर साथ-साथ, तो खुदा लाशरीक कैसे?]

जब अल्लाह के साथ पैगम्बर का आज्ञा-पालन करना होता है, तो खुदा का शरीक हो गया वा नहीं? यदि ऐसा है, तो क्यों खुदा को लाशरीक कुरान में लिखा, और कहते हो? ॥११७॥

गवाहों की तरह अपनी गवाही में वही कहेंगे जो अल्लाताला कहलाना चाहेंगे। कितनी उपहासास्पद है अल्लाताला की न्यायप्रक्रिया। 'खुदा आग बिजुली'—आक्षेप को हटाने के लिए इसे आजकल के टीकाकारों ने अलंकार मान लिया है।

११७. प्रायः सभी जीवों के शरीर पाञ्चभौतिक होते हैं। तत्त्वविशेष की प्रधानता के कारण जलीय, वायव्य, पार्थिव आदि भेद होते हैं। परन्तु उन्हें केवल जल से उत्पन्न नहीं मानना चाहिए। कुरान में खुदा को एक बार लाशरीक कहा गया है तो दस बार उसके साथ पैगम्बर के शिरक की बात कही गई है। वास्तव में इसलाम का खुदा पैगम्बर के बिना एक कदम भी नहीं चल सकता। इसलिए खुदा के साथ पैगम्बर पर ईमान लाना और उसकी आज्ञा मानना हर मोमिन के लिए अनिवार्य है।

---

१. अर्थात् आग। सं० ५ में 'आग' बनाया, यही ३३ तक छपता रहा। सं० ३४ में फिर 'आगी' बदला।
२. वै० यं० मुद्रित में 'तो कि' पाठ है।

[काफिरों से लड़ो; तोबाः करने से पाप-क्षमा]

११८—और जिस दिन कि फट जावेगा आसमान साथ बदली के, और उतारे जावेंगे फरिश्ते। बस मत कहा मान काफिरों का और झगड़ा कर उनके[1] साथ झगड़ा बड़ा ॥

और बदल डालता है अल्लाह् बुराइयों उनकी को भलाइयों से ॥ और जो कोई तोबाः करे, और कर्म करे अच्छे, बस निश्चय आता है तर्फ अल्लाह् की ॥

—मं० ४। सि० १६। सू० २५। आ० २५, ५२, ७०, ७१

[आकाश अमूर्त्त पदार्थ है, वह कैसे फट सकता है ?]

समीक्षक—यह बात कभी सच नहीं हो सकती है कि आकाश बद्दलों के साथ फट जावे। यदि आकाश कोई मूर्त्तिमान् पदार्थ हो, तो फट सकता है।

[बुराई को भलाई से कैसे बदल सकते हैं ?]

यह मुसलमानों का कुरान शान्तिभङ्ग कर गदर झगड़ा मचानेवाला है। इसलिये धार्मिक विद्वान् लोग इसको नहीं मानते। यह भी अच्छा न्याय है कि जो पाप और पुण्य का अदला-बदला हो जाय ! क्या यह तिल और उड़द की-सी बात है[2], जो पलटा हो जावे ?

[तोबाः से पाप छूटे, तो पाप का बोलबाला हो जावेगा]

जो तोबाः करने से पाप छूटे और ईश्वर मिले, तो कोई भी पाप करने से न डरे। इसलिये ये सब बातें विद्या से विरुद्ध हैं ॥११८॥

[मूसा को वही देना; सबको खिलाना-पिलाना]

११९—वही की हमने तर्फ मूसा की, यह कि ले चल रात को बन्दों मेरे को, निश्चय तुम पीछा किए जाओगे ॥ बस भेजे लोग फिरोन ने बीच नगरों के जमा करनेवाले ॥

---

११८. मौ० अशरफ अली ने 'साथ बदली के' के स्थान में 'एक बदली पर से' कर दिया है। इससे आक्षेप दूर नहीं होता। बदली के फटने पर तो आपत्ति ही नहीं। वे तो फटती ही रहती हैं। 'फटना' सावयव पदार्थ के सन्दर्भ में सार्थक हो सकता है। आकाश कोई सावयव या मूर्त्तिमान् पदार्थ नहीं है, इसलिए उसका फटना सम्भव नहीं। समीक्ष्यांश में निर्दिष्ट ५२वीं आयत में कहा गया है—'तुम काफिरों कहा न मानो और कुरान के इस हुक्म के मुताबिक बड़े जोर से लड़ो।' वस्तुतः इसलाम का प्रचार-प्रसार एक हाथ में कुरान और एक में तलवार लेकर ही हुआ था। संसार का इतिहास इसका साक्षी है। अपनों (मुसलमानों) की बुराइयों को भलाइयों में बदल देना सरासर बेईमानी है। ऐसा अल्ला गैरों (अमुसलिमों) की भलाइयों को बुराइयों में भी बदल सकता है। इससे कुरान का परमेश्वर भ्रष्टाचारी सिद्ध होता है।

११९. इसलाम के अनुसार मनुष्य के जन्म के साथ ही उसकी आत्मा उत्पन्न होती है, परन्तु कयामत के बाद उसके सदा के लिए बहिश्त या दोजख में रहने का अर्थ है कि वह मरती कभी नहीं।

---

१. सं० २ में 'उससे' पाठ है।

२. द्र०—माषानस्मै तिलेभ्यः प्रतियच्छति (अ० १।४।९२; २।३।११ सूत्र का उदाहरण)। प्राचीन काल में (गाँवों में कुछ वर्ष पूर्व तक भी) एक-एक वस्तु देकर बदले में दूसरी वस्तु लेने का व्यवहार था।

और वह पुरुष कि जिसने पैदा किया मुझको, बस वही मार्ग दिखलाता है। और वह जो खिलाता है मुझको पिलाता है मुझको ॥

और वह पुरुष की आशा रखता हूँ मैं यह कि क्षमा करे वास्ते मेरे अपराध मेरा दिन कयामत के ॥

—मं० ५। सि० १६। सू० २६। आ० ५२, ५३, ७८, ७६, ८२

[जब मूसा पर बही भेजी, तो फिर अन्यों पर क्यों भेजी ?]

समीक्षक—जब खुदा ने मूसा की ओर बही भेजी, पुनः दाऊद ईसा और मुहम्मद साहेब की ओर किताब क्यों भेजी ? क्योंकि परमेश्वर की बात सदा एक-सी और बेभूल होती है। और उसके पीछे कुरान तक पुस्तकों का भेजना पहिली पुस्तक को अपूर्ण भूलयुक्त माना जायगा। यदि ये तीन पुस्तक सच्चे हैं, तो यह कुरान झूठा होगा। चारों का, जो कि परस्पर प्रायः विरोध रखते हैं, उनका सर्वथा सत्य होना नहीं हो सकता।

[जीव को पैदा किया, तो वह नष्ट भी अवश्य होगा]

यदि खुदा ने रूह अर्थात् जीव पैदा किए हैं, तो वे मर भी जायेंगे। अर्थात् उनका कभी नाश[1] वा कभी अभाव भी होगा।

[वही खिलाता-पिलाता है, तो भोजन में भेदभाव क्यों ?]

जो परमेश्वर ही मनुष्यादि प्राणियों को खिलाता-पिलाता है, तो किसी को रोग होना न चाहिए। और सबको तुल्य भोजन देना चाहिए। पक्षपात से एक को उत्तम और दूसरे को निकृष्ट, जैसा कि राजा और कंगले को श्रेष्ठ-निकृष्ट भोजन मिलता है, न होना चाहिए। जब परमेश्वर ही खिलाने-पिलाने और पथ्य करानेवाला है, तो रोग ही न होना चाहिए। परन्तु मुसलमान आदि को भी रोग होते हैं। यदि खुदा ही रोग छुड़ाकर आराम करनेवाला है, तो मुसलमानों के शरीरों में रोग न रहना चाहिए। यदि रहता है, तो खुदा पूरा वैद्य नहीं है। यदि पूरा वैद्य है, तो मुसलमानों के शरीर में रोग क्यों रहते हैं ? यदि वही मारता और जिलाता है, तो उसी खुदा को पाप-पुण्य लगता होगा। यदि जन्म-जन्मान्तर के कर्मानुसार व्यवस्था करता है, तो उसका कुछ भी अपराध नहीं।

यह युक्तियुक्त नहीं है। जिसका आदि होता है, उसका अन्त अवश्य होता है और जिसका अन्त नहीं होता, उसका आदि अर्थात् जन्म भी नहीं होता। 'न जायते वा म्रियते कदाचित्' (आत्मा न कभी उत्पन्न होता है, न कभी मरता है) यह वैदिक सिद्धान्त ही तर्कसंगत है। वास्तव में मूसा, दाऊद, ईसा और मुहम्मद में से किसी को भी खुदा ने किताब नहीं भेजी। इन सबने और इनके चेलों ने किताबें बनाईं या बनवाईं और उन्हें प्रामाणिकता प्रदान करने तथा उन्हें मनवाने के लिए खुदा की ओर से उतरी प्रसिद्ध किया। कुरान का २६ (मौलाना आजाद के अनुसार २३) वर्षों में उतरना सर्वमान्य है। अकेली कुरान को उतारने में ही जिस खुदा को इतने दिन लग गये, उसका अल्पज्ञ होना तो स्पष्ट ही है और उसमें पुनरावृत्ति तथा परस्पर विरुद्ध एवं असंगत बातों से भरपूर होने से उसका बेहद भुलक्कड़ होना भी सिद्ध है। यही स्थिति इलहाम कहानेवाली अन्य किताबों की है। यदि इलहाम देनेवाला खुदा सर्वज्ञ, त्रिकाल-दर्शी, निर्विकार और सर्वहितकारी होता तो सृष्टि के आरम्भ में ही पूर्ण ज्ञान देता। वस्तुतस्तु ये सभी

---

१. सं० ५ में 'कभी नाश' पद हटाये। सं० ३४ में पुनः रखे।

[कयामत की रात में ही न्याय से खुदा पापी होगा]

यदि वह पाप-क्षमा, और न्याय कयामत की रात में करता है, तो खुदा पाप बढ़ानेवाला होकर पापयुक्त होगा। यदि क्षमा नहीं करता, तो यह कुरान की बात झूँठी होने से बच नहीं सकती है ॥११९॥

[ऊँटनी की निशानी]

१२०—नहीं तू परन्तु[1] आदमी मानिन्द हमारी, बस ले आ कुछ निशानी जो है तू सच्चों से॥ कहा, यह ऊँटनी है। वास्ते उसके पानी पीना है एक बार॥

—मं० ५। सि० १९। सू० २६। आ० १५४, १५५

[ऊँटनी की निशानी देना जङ्गली व्यवहार है]

समीक्षक—भला इस बात को कोई मान सकता है कि पत्थर[2] से ऊँटनी निकले। वे लोग जङ्गली थे कि जिन्होंने इस बात को मान लिया। और ऊँटनी की निशानी देना केवल जङ्गली व्यवहार है, ईश्वरकृत नहीं। यदि यह किताब ईश्वरकृत होती, तो ऐसी व्यर्थ बातें इसमें न होतीं ॥१२०॥

[करामात का प्रदर्शन; सातवें आसमान का स्वामी]

१२१—ऐ मूसा! बात यह है कि निश्चय मैं अल्लाह हूँ गालिब॥ और डाल दे असा अपना, बस जबकि देखा उसको हिलता था मानो कि वह साँप है। ऐ मूसा! मत डर, निश्चय नहीं डरते समीप मेरे पैगम्बर॥

अल्लाह नहीं कोई माबूद, परन्तु वह मालिक अर्श बड़े का॥ यह कि मत सरकशी करो ऊपर मेरे, और चले आओ मेरे पास मुसलमान होकर॥

—मं० ५। सि० १९। सू० २७। आ० ९, १०, २६, ३१

किताबें किस्से-कहानियों की किताबें हैं, जिनमें बीच-बीच में कोई अच्छी बातें भी आ जाती हैं। क्योंकि मूर्ख-से-मूर्ख व्यक्ति भी कभी-कभी समझदारी की बात कहता है, जैसे कि झूठे-से-झूठा व्यक्ति भी कभी-कभी सच बोलता ही है।

१२०. इस आयत से सम्बन्धित विशेष जानकारी के लिए समीक्ष्यांश ९३ देखें।

१२१. **पुनरुक्त**—कुरान शरीफ में बहिश्त का वर्णन पचासों बार आया है, और वह भी प्रायः उन्हीं शब्दों में—मुहम्मद साहब को बार-बार उन्हीं शब्दों में रसूल घोषित किया गया है, और बार-बार खुदा के साथ रसूल पर ईमान लाने का आदेश दिया गया है, मानो कुरान की रचना मुहम्मदसाहब को खुदा के समकक्ष सिद्ध करने के लिए की गई हो। इसी प्रकार कातिलों को कत्ल करने और उनको नरक में भेजने और वहाँ उनको नरक की आग का ईंधन बनाने की धमकी भी बार-बार दी गई है। दोजख को भरने और बहिश्त में बड़ी-बड़ी आँखोंवालियों के मिलने की बात भी अनेक बार कही गई है।

---

१. 'परन्तु' सं० २, ३ में है, सं० ४ में हटाया, सं० ३५ तक नहीं है। यह अनावश्यक-सा है। पं० रामचन्द्र देहलवी का अनुवाद इस प्रकार है—'नहीं तू आदमी (परन्तु) मानन्द हमारी'।

२. इनसे ऊपर की आयतों से स्पष्ट है कि वह पहाड़ी क्षेत्र था। ऊँटनी की निशानी का वर्णन सू० ११ आ० ६४ तथा सू० १७ आ० ५९ में भी मिलता है। यह निशानी खुदा ने कई पैगम्बरों को दी। द्र०—समीक्ष्यांश संख्या ९३ १०५, पृ० सं० क्रमशः ७३२; ७४३।

[बाजीगरी के खेल दिखाना ईश्वर का काम नहीं]

समीक्षक—और भी देखिये, अपने मुख आप अल्लाह बड़ा जबरदस्त बनता है। अपने मुख से अपनी प्रशंसा करना श्रेष्ठ पुरुष का भी काम नहीं, तो खुदा का क्योंकर हो सकता है? तभी तो इन्द्रजाल का लटका दिखला जङ्गली मनुष्यों को वश कर आप जङ्गलस्थ खुदा बन बैठा। ऐसी बात ईश्वर के पुस्तक में कभी नहीं हो सकती।

[सातवें आसमान पर है, तो एकदेशी होने से ईश्वर नहीं]

यदि वह 'अर्श' अर्थात् सातवें आसमान का मालिक है, तो वह एकदेशी होने से ईश्वर नहीं हो सकता है।

[सरकशी बुरी है, तो कुरान में इनकी प्रशंसा क्यों?]

यदि सरकशी करना बुरा है, तो खुदा और मुहम्मद साहब ने अपनी स्तुति से पुस्तक क्यों भर दिये? 'मुहम्मद साहब ने अनेकों को मारे'[1], इससे सरकशी हुई वा नहीं? यह कुरान पुनरुक्त और पूर्वापरविरुद्ध बातों से भरा हुआ है ॥१२१॥

[पहाड़ों का बादलों की तरह चलना; खुदा खबरदार है]

१२२—और देखेगा तू पहाड़ों को, अनुमान करता है तू उनको जमे हुए, और वे चले जाते हैं मानिन्द चलने बादलों की[2], कारीगरी अल्लाह की कि जिसने दृढ़ किया हर वस्तु को, निश्चय वह खबरदार है उस वस्तु के कि करते हो ॥ —मं० ५। सि० २०। सू० २७। आ० ८८

[बादलों की तरह पहाड़ किसी ने चलते नहीं देखे]

समीक्षक—बद्दलों के समान पहाड़ का चलना कुरान बनानेवालों के देश में होता होगा, अन्यत्र नहीं।

पूर्वापर विरोध—कुरान में अनेक स्थानों में ऐसा हुआ है, तद्यथा—कुरान में अनेक बार पाप क्षमा करने, यहाँ तक कि पापों के पुण्यों से बदले जाने की बात कही गई है। परन्तु कहीं-कहीं यह भी कहा गया है कि पूरा न्याय किया जायेगा, उसमें त्रसरेणुभर का भी भेद नहीं किया जायेगा। ईश्वर को सर्वव्यापक मानते हुए भी अनेकत्र उसके सातवें आसमान पर रहने की बात कही गई है।

यह तो सर्वविदित है और स्वयं कुरान में अनेकत्र इस बात का उल्लेख हुआ है कि इसलाम का संसार में विस्तार सरकशी के द्वारा ही हुआ है और सरकशी करनेवालों को इसके बदले बहिश्त मिला है।

१२२. 'और देखेगा...जमे हुए'—मूल में इस प्रकार है—'और तुम पहाड़ों को देखते हो तो खयाल करते हो कि अपनी जगह पर खड़े हैं'। पहाड़ों का अपनी जगह पर खड़ा होना तो प्रत्यक्ष का अपलाप नहीं हो सकता। जिनका नाम ही 'अचल' है (उदयाचल-अस्ताचल-हिमाचल-मन्दराचल),

---

१. सम्भवतः यहाँ 'मारा' पाठ ठीक होवे।

२. वेद में बादलों के लिये भी पर्वत शब्द आता है (द्र०—निघण्टु १।१०)। इन्द्र = बिजुली उनके पक्षों = गमन-सामर्थ्य को नष्ट कर देती है। उससे वे बरस जाते हैं। इसी 'पर्वत' शब्द-साम्य से भ्रान्त होकर पुराणों में पर्वतों को पक्षियों की तरह उड़ता हुआ लिखा है। इन्द्र ने उनके पर काट दिये, वे एक जगह जम गये। परन्तु कुरान में पहाड़ों को बादलों की भाँति चलता हुआ बताया है, जो कि स्पष्ट ही कुरान के निर्माता की भूल को प्रकट करता है।

[शैतान के सामने सब खबरदारी धरी रह गई]

और खुदा की खबरदारी शैतान बागी को न पकड़ने और न दण्ड देने से ही विदित होती है, कि जिसने एक बागी को भी अब तक न पकड़ पाया, न दण्ड दिया। इससे अधिक असावधानी क्या होगी ? ।।१२२॥

[हत्यारे मूसा को क्षमा करना]

१२३—बस मुष्ट[1] मारा उसको मूसा ने, बस पूरी की आयु उसकी ॥ कहा, ऐ रब मेरे निश्चय मैंने अन्याय किया जान अपनी को, बस क्षमा कर मुझको। बस क्षमा कर दिया उसको। निश्चय वह क्षमा करनेवाला दयालु है ॥

और मालिक तेरा उत्पन्न करता है, जो कुछ चाहता है, और पसन्द करता है ॥

—मं० ५। सि० २०। सू० २८। आ० १५, १६, ६८

[हत्यारे मूसा को क्षमा करना कहाँ का न्याय था ?]

समीक्षक—अब अन्य भी देखिये, मुसलमान और ईसाइयों के पैगम्बर और खुदा, कि मूसा पैगम्बर मनुष्य की हत्या किया करे, और खुदा क्षमा किया करे। ये दोनों अन्यायकारी हैं वा नहीं ?

उनका चलना असम्भव है। मौलवी मुहम्मद अली ने 'जमे हुए' के बदले 'ठोस' शब्द का प्रयोग किया है। फिर इस आक्षेप का निराकरण करने के लिए टिप्पणी में लिखा है—'पर्वतों के चले जाने में उन शक्तिशाली लोगों के हटाये जाने का संकेत है, जो पैगम्बर का 'विरोध करते थे'। यदि ऐसा है तो उन्हें ठोस नहीं बताना चाहिए था। जो अल्लाताला फरिश्तों के रूप में असंख्य सहायकों के होते हुए भी घर में आये एक बागी (शैतान) को पकड़कर कैद में न डाल सके, उन्होंने पर्वत के समान जमे हुए पैगम्बर के असंख्य विरोधियों को भगा दिया, इसपर कौन विश्वास करेगा ?

१२३. कुरान शरीफ में इस घटना का वर्णन इस प्रकार मिलता है—"जिस वक्त मूसा शहर में दाखिल हुए कि वहाँ के लोग बेखबर हो रहे थे, तो देखा कि वहाँ दो शख्स लड़ रहे थे—एक तो मूसा की कौम का था और दूसरे उनके दुश्मनों में से। तो जो शख्स उनकी कौम में से था, उसने उनसे (मूसा से) मदद तलब की तो उन्होंने (मूसा ने) उसको मुक्का मारा और उसका काम तमाम कर दिया।... कहने लगे कि ऐ परवरदिगार ! यह काम तो शैतान के वहकावे से हुआ, मुझे बख्श दे, तो खुदा ने उनको बख्श दिया।"

मौलवी मुहम्मद अली ने इस आक्षेप का समाधान करने के लिए टिप्पणी में लिखा है—'Moses did not consider himself as one who had done an unjust deed or helped a quilty person'. अर्थात् 'मूसा अपने आपको ऐसा व्यक्ति नहीं मानता था, जिसने कोई अन्याय्य कार्य किया हो अथवा किसी अपराधी की सहायता की हो।' मूसा तो अपने आपको अपराधी मान रहे हैं और अपने दुष्कृत्य के लिए खुदा से क्षमा माँग रहे हैं। और मौलवी साहब उन्हें निर्दोष सिद्ध करने में लगे हैं। पैगम्बर जैसे उच्च-पदस्थ व्यक्ति का जातीय पक्षपात से प्रेरित होकर किसी की हत्या करना और खुदा का उसे दण्ड देकर क्षमा कर देना अन्याय और अत्याचार की पराकाष्ठा है।

स्वेच्छापूर्वक किसी को राजा और कंगाल उत्पन्न करना सरासर अन्याय है। पुनर्जन्म के

---

१. मुष्ट=मुट्ठी=घूँसा।

[अपनी इच्छा से ही किसी को राजा वा रङ्क बनाना अन्याय]

क्या अपनी इच्छा ही से जैसा चाहता है, वैसी उत्पत्ति करता है? क्या उसने अपनी इच्छा ही से एक को राजा दूसरे को कङ्गाल, और एक को विद्वान् और दूसरे को मूर्खादि किया है? यदि ऐसा है, तो न कुरान सत्य, और न अन्यायकारी[1] होने से यह खुदा ही हो सकता है ॥१२३॥

[माँ-बाप की सेवा का आदेश; नूह का असम्भव आयुमान]

१२४—और आज्ञा दी हमने मनुष्य को साथ माँ-बाप के भलाई करना[2], और जो झगड़ा करें तुझसे दोनों, यह कि शरीक लावे तू साथ मेरे उस वस्तु को कि नहीं वास्ते तेरे साथ उसके ज्ञान, बस मत कहा मान उन दोनों का, तर्फ मेरी है[3] ॥

और अवश्य भेजा हमने नूह को तर्फ कौम उसके की, बस रहा बीच उनके हजार वर्ष परन्तु पचास वर्ष कम ॥ —मं० ५। सि० २०। सू० २९। आ० ८, १४

[माता-पिता की सेवा की बात ठीक है]

समीक्षक—माता-पिता की सेवा करना तो अच्छा ही है। जो ख़ुदा के साथ शरीक करने के लिये कहे, तो उनका कहा न मानना, यह भी ठीक है। परन्तु यदि माता-पिता मिथ्याभाषणादि करने की आज्ञा देवें, तो क्या मान लेना चाहिए? इसलिये यह बात आधी अच्छी और आधी बुरी है।

[साढ़े नौ सौ वर्ष की आयु अब क्यों नहीं होती?]

क्या नूह आदि पैगम्बरों ही को खुदा संसार में भेजता है? तो अन्य जीवों को कौन भेजता है? यदि सबको वही भेजता है, तो सभी पैगम्बर क्यों नहीं? और प्रथम मनुष्यों की पचास कम हजार वर्ष की आयु होती थी, तो अब क्यों नहीं होती? इसलिये यह बात ठीक नहीं[4] ॥१२४॥

सिद्धान्त को माने विना इस आक्षेप का कोई समाधान सम्भव नहीं है। पूर्वजन्म में भले वा बुरे जैसे कर्म किसी ने किये, उनके अनुसार इस जन्म में विद्वान् वा मूर्ख अथवा धनवान् या निर्धन का जन्म मिल गया।

१२४. प्राचीनकाल में शिक्षाकाल की समाप्ति पर गुरुकुल से विदा होते समय आचार्य अपने विद्यार्थी को दीक्षान्त भाषण के द्वारा आदेश देता था—

यान्यस्माकं सुचरितानि तानि त्वयोपास्यानि नो इतराणि। यान्यनवद्यानि कर्माणि तानि त्वया सेवितव्यानि नो इतराणि ॥ (तैत्तिरीयोपनिषद् शिक्षावल्ली)

अन्यत्र कहा है—गुरोरप्यवलिप्तस्य कार्याकार्यमजानतः।
उत्पथप्रतिपन्नस्य न्याय्यो भवति शासनम् ॥—वाल्मीकि रामायण

'न्याय्यो भवति शासनम्' के स्थान पर 'परित्यागो विधीयते' के साथ यह श्लोक महाभारत में भी आया है।

---

१. सं० ११ से ३३ तक 'न्यायकारी' अपपाठ है। सं० ३४ में शोधा गया। श्री पं० भगवद्दत्त ने 'न्यायकारी' के आगे [न] बढ़ाया है। उससे भी अर्थ पूरा स्पष्ट नहीं होता।
२. सं० ३४ में विना कोष्ठक के बढ़ाया है।
३. अर्थात् मेरी ही ओर तुम्हें वापिस आना है।
४. बारहवें समुल्लास में भी इस पक्ष की आलोचना है।

[दो बार उत्पत्ति; ईमानवालों को बहिश्त]

१२५—अल्लाह पहिली बार करता है उत्पत्ति, फिर दूसरी बार करेगा उसको, फिर उसी की ओर फेरे[1] जाओगे ॥ और जिस दिन बर्पा अर्थात् खड़ी होगी कयामत, निराश होंगे पापी ॥

बस जो लोग कि ईमान लाये और काम किए अच्छे, बस वे बीच बाग के सिंगार किए जावेंगे॥ और जो भेज दें हम एबाव, बस देखें उस खेती को पीली हुई ॥ इसी प्रकार मोहर रखता है अल्लाह ऊपर दिलों उन लोगों के कि नहीं जानते।

—मं० ५। सि० २१। सू० ३०। आ० ११, १२, १५, ५१, ५६

[केवल दो बार ही उत्पत्ति करता है, तो फिर क्या करता है ?]

समीक्षक—यदि अल्लाह दो बार उत्पत्ति करता है, तीसरी बार नहीं, तो उत्पत्ति की आदि और दूसरी बार के अन्त में विकम्मा बैठा रहता होगा ? और एक तथा दो बार उत्पत्ति के पश्चात् उसका सामर्थ्य निकम्मा और व्यर्थ हो जायगा।

[पापियों का न्याय के दिन निराश होना अच्छा है]

यदि न्याय करने के दिन पापी लोग निराश हों, तो अच्छी बात है। परन्तु इसका प्रयोजन यह तो कहीं नहीं है कि मुसलमानों के सिवाय सब पापी समझकर निराश किए जायें ? क्योंकि कुरान में कई स्थानों में पापियों से औरों[2] का ही प्रयोजन है।

[बहिश्त में यहाँ से कुछ भी विशेषता नहीं]

यदि बगीचे में रखना और शृंगार पहिराना ही मुसलमानों का स्वर्ग है, तो इस संसार के तुल्य हुआ। और वहाँ माली और सुनार भी होंगे, अथवा खुदा ही माली और सुनार आदि का काम करता होगा ?

---

१२५. प्रश्न होता है कि पहली बार उत्पत्ति से पूर्व क्या था ? यदि शून्य था तो यह अभाव से भाव की उत्पत्ति मानना होगा। परन्तु ऐसा सृष्टिक्रम के विरुद्ध होने से सम्भव नहीं। इसी प्रकार जब दूसरी बार उत्पन्न हुई सृष्टि का अन्त हो जायेगा तो उसके पश्चात् क्या होगा। यदि शून्य हो जायेगा तो यह भाव का नाश होगा। यह भी सृष्टिक्रम के विरुद्ध होगा। वैज्ञानिक प्रक्रिया के अनुसार—'नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः।' अर्थात् असत् या अभाव से भाव नहीं हो सकता और जो है उसका नाश नहीं हो सकता। इसलिए जिस प्रकार दिन के बाद रात और रात के बाद दिन आते रहते हैं और इस क्रम का कभी अन्त नहीं होता, इसी प्रकार सृष्टि के बाद प्रलय और प्रलय के बाद सृष्टि के क्रम का कभी अन्त नहीं होगा और यह सब परमेश्वर के द्वारा होगा। वस्तुत: कुरान के अनुसार मुसलमानों के अतिरिक्त सबको पापी समझा जाता है। सूरते निसा की १४वीं आयत में लिखा है—

"और जो कोई नाफरमानी (आज्ञा का उल्लंघन) अल्लाह की और रसूल उसके की और गुजर जाये हद्दों उसकी से दाखिल करेगा, उसको आग में हमेशा रहनेवाली बीच इसके और वास्ते उसके अजाब (कष्ट) है जलील (तिरस्कृत) करनेवाला।"

---

१. सं० २ से ३३ तक 'फेर' अपपाठ है।

२. अर्थात् मुसलमानों से भिन्न का।

[गहनों की चोरी पर फिर दोजख में डालता होगा]

यदि किसी को कम गहना मिलता होगा, तो चोरी भी होती होगी ? और बहिश्त से चोरी करनेवालों को दोजख में डालता होगा ? यदि ऐसा होता होगा, तो सदा बहिश्त में रहेंगे, यह बात झूँठ हो जायगी।

[किसानों की खेती पर खुदा की दृष्टि]

जो किसानों की खेती पर भी खुदा की दृष्टि है, सो यह विद्या खेती करने के अनुभव ही से होती है। और यदि माना जाय कि खुदा ने अपनी विद्या से सब बात जान ली है, तो ऐसा भय देना अपना घमण्ड प्रसिद्ध करना है।

[दिलों पर मोहर लगाई, तो पाप का भागी भी खुदा होगा]

यदि अल्लाह ने जीवों के दिलों पर मोहर लगा पाप कराया, तो उस पाप का भागी वही होवे, जीव नहीं हो सकते। जैसे जय-पराजय सेनाधीश का होता है, वैसे ये पाप खुदा ही को प्राप्त होवें ॥१२५॥

[अल्लाह की कुछ विशेष निशानियाँ]

१२६—ये आयतें हैं किताब हिक्मतवाले की ॥ उत्पन्न किया आसमानों को विना सुतून अर्थात् खम्भे के, देखते हो तुम उसको। और डाले बीच पृथिवी के पहाड़, ऐसा न हो कि हिल जावे ॥

क्या नहीं देखा तूने यह कि अल्लाह प्रवेश कराता है, रात को बीच दिन के, और प्रवेश कराता है कि दिन को बीच रात के ॥

क्या नहीं देखा कि किश्तियाँ चलती हैं बीच दर्या के, साथ निआमतों अल्लाह के, ताकि[1] दिखलावें तुमको निशानियाँ अपनी ॥ —मं० ५। सि० २१। सू० ३१। आ० २, १०, २६, ३१

[आकाश की उत्पत्ति आदि बातें विद्याविरुद्ध हैं]

समीक्षक—वाहजी वाह ! हिक्मतवाली किताब, कि जिसमें सर्वथा विद्या से विरुद्ध आकाश

इत्यादि अनेक आयतों से अमुसलिमों के लिए ही नरक और उसकी आग का भय दिखलाया गया है। शराब और शबाब का चोली-दामन का साथ है और जहाँ चोली-दामन की बात होगी वहाँ सिंगार तो आयेगा ही। कुरान का बहिश्त यही सब दे सकता है। 'खुदा उन लोगों के दिलों पर मुहर लगाता है जो समझ नहीं सकते' तो क्या मोहर लगने पर वे समझने लग जायेंगे ? उस नासमझी की अवस्था में वे जो भी पाप करेंगे, उनके लिए वे दण्ड के पात्र नहीं होंगे, क्योंकि अनजाने में किए गये अपराध के लिए दण्ड नहीं दिया जाता। दिया भी जाता है तो बहुत हलका। कम-से-कम आग में तो उन्हें नहीं झोंका जा सकेगा।

१२६. हिकमतवाला=फिलासफी या ज्ञानवाला। मूर्खतापूर्ण बातों से भरी यह किताब किसी हिकमतवाले की नहीं हो सकती। आसमान कोई भारी वस्तु नहीं है, जिसे थामने के लिए खम्भे लगाने पड़ें। इसलिए इसमें न कोई चमत्कार है और न कारीगरी। हाँ, अज्ञानी पुरुष के लिए यह आश्चर्यजनक

१. वै० यं० मुद्रित में 'तो कि' पाठ है।

की उत्पत्ति, और उसमें खम्भे लगाने की शङ्का, और पृथिवी को स्थिर रखने के लिये पहाड़ रखना! थोड़ी-सी विद्यावाला भी ऐसा लेख कभी नहीं करता, और न मानता।

[रात और दिन का एक-दूसरे में प्रवेश बताना अज्ञानता]

और हिक्मत देखो कि जहाँ दिन है वहाँ रात नहीं, और जहाँ रात है वहाँ दिन नहीं। उसको एक-दूसरे में प्रवेश कराना लिखता है। यह बड़े अविद्वानों की बात है। इसलिये यह क़ुरान विद्या की पुस्तक नहीं हो सकती।

[पानी में नाव चलाने में खुदा की क्या कृपा ?]

क्या यह विद्याविरुद्ध बात नहीं है कि नौका मनुष्य और क्रिया-कौशलादि से चलती हैं, वा खुदा की कृपा से ? यदि लोहे वा पत्थरों की नौका बनाकर समुद्र में चलावें, तो खुदा की निशानी डूब जाय वा नहीं ? इसलिये यह पुस्तक न विद्वान् और न ईश्वर का बनाया हुआ हो सकता है ॥१२६॥

[आसमान से आना-जाना; मौत का फरिश्ता; दोजख भरना]

१२७—तदबीर करता है काम की आसमान से तर्फ पृथिवी की, फिर चढ़ जाता है तर्फ उसकी बीच एक दिन के, कि है अवधि उसकी सहस्र वर्ष उन वर्षों से कि गिनते हो तुम ॥ वह[1] है जाननेवाला गैब का और प्रत्यक्ष का, गालिब दयालु ॥

फिर पुष्ट किया उसको, और फूँका बीच[2] उसके रूह अपनी से ॥ कह, कब्ज करेगा तुमको फरिश्ता मौत का, वह जो नियत किया गया है साथ तुम्हारे ॥

हो सकता है। पहाड़ों के विवेचन के लिए द्रष्टव्य समीक्ष्यांश १२२। दिन के बीच में यदि रात और रात के बीच में दिन प्रवेश करेंगे तो दिन की रात हो जाएगी और रात का दिन हो जायेगा। दोनों एक साथ कभी नहीं रहेंगे। हाँ ईश्वर द्वारा नियत प्रकृति की व्यवस्था में दिन के बाद रात और रात के बाद दिन सदा आते रहे हैं और आते रहेंगे। इसे अन्यथा कोई नहीं कर सकता। ऐसी ही असंगत बात नौका के सम्बन्ध में लिखी है।

१२७. शाहजी ने अनुवाद में 'पुष्ट' के स्थान में 'तन्दुरुस्त' कर दिया है। मौ० अशरफ अली ने इस प्रकार लिखा—'फिर उसके अजा (अंग-प्रत्यंग) दुरुस्त किये। मौ० मुहम्मद अली ने लिखा है—'Then he made him complete' (तब उसने उसे पूर्ण किया)।

रूह अपनी—मौ० मुहम्मद अली ने यहाँ टिप्पणी में लिखा है—'इससे प्रकट होता है कि पारमात्मिक 'Spirit' (भावना) प्रत्येक मनुष्य में फूँकी जाती है। इस रीति से प्रत्येक मनुष्य परमात्मा की ओर से एक 'Spirit' है और उसका कलाम भी। किन्तु यह ध्यान भी रहना चाहिए कि यह 'Spirit' प्राणियों का आत्मा नहीं है कि यह स्वतन्त्रता है जो मनुष्य को प्रदान की है, अथवा यह विवेकशक्ति (जमीर=conscience) है, जिससे मनुष्य भले-बुरे की पहचान कर सकता है।' क़ुरान में जगह-जगह अल्ला के द्वारा रूह फूँकने का उल्लेख हुआ है। इसका यदि यही भाव है, जो मौ० मुहम्मद अली ने लिखा है तो इसके लिए दूसरा उपयुक्त शब्द होना चाहिए था। पर मौ० मुहम्मद अली लिखने को तो लिख गये

---

१. सं० २ में 'यह' पाठ है।
२. सं० २ में 'बीज' अपपाठ है।

और जो चाहते हम अवश्य देते हम हर एक जीव को शिक्षा[1] उसकी, परन्तु सिद्ध हुई बात मेरी ओर से कि अवश्य भरूँगा मैं[2] दोजख को, जिनों और आदमियों से इकट्ठे॥

—मं० ५। सि० २१। सू० ३२। आ० ५, ६, ९, ११, १३

[चढ़ने-उतरने का काम एकदेशी कर सकता है, व्यापक नहीं ?

समीक्षक—अब ठीक सिद्ध हो गया कि मुसलमानों का खुदा मनुष्यवत् एकदेशी है। क्योंकि जो व्यापक होता, तो एकदेश से प्रबन्ध करना और उतरना-चढ़ना नहीं हो सकता।

[फरिश्तों से काम लेवे, तब भी कई दोष आते हैं]

यदि खुदा फरिश्ते को भेजता है, तो भी आप एकदेशी हो गया। आप आसमान पर टँगा बैठा है, और फरिश्तों को दौड़ाता है। यदि फरिश्ते रिश्वत लेकर कोई मामला बिगाड़ दें, वा किसी मुर्दे को छोड़ जायें, तो खुदा को क्या मालूम हो सकता है। मालूम तो उसको हो कि जो सर्वज्ञ तथा सर्वव्यापक हो, सो तो है ही नहीं। होता तो फरिश्तों के भेजने, तथा कई लोगों की कई प्रकार से परीक्षा लेने का क्या काम था ? और एक हजार वर्षों में, तथा आने-जाने, प्रबन्ध करने से सर्वशक्तिमान् भी नहीं।

[मौत का फरिश्ता है, तो उसका मृत्यु कौन है ?]

यदि मौत का फरिश्ता है तो उस फरिश्ते का मारनेवाला कौन-सा मृत्यु है ? यदि वह नित्य है, तो अमरपन में खुदा के बराबर शरीक हुआ। एक फरिश्ता एक समय में दोजख को भरने के लिये जीवों को शिक्षा नहीं कर सकता।

कि खुदा ने प्रत्येक मनुष्य को विवेक दिया, किन्तु इसके आगे की १३वीं आयत का अनुवाद करते समय इस बात को भूल गये। वहाँ उन्होंने लिख दिया—'And if we had pleased, we would have given to every soul his guidance' यहाँ उन्होंने 'guidance' (विवेक शक्ति) से 'soul' को पृथक् माना है। आदम का शरीर बनाकर उसमें रूह फूंकी थी। विवेक शक्ति तो उसे शैतान के द्वारा प्राप्त हुई थी, उसकी प्रेरणा से खुदा द्वारा निषिद्ध वृक्ष का फल खाने पर। खुदा नहीं चाहता था कि आदम को विवेक शक्ति प्राप्त हो। जब खुदा ने आदि पुरुष के विवेकशक्ति प्राप्त करने पर प्रतिबन्ध लगा रक्खा था तो मौलवी मुहम्मद अली का यह कथन कि 'खुदा ने प्रत्येक मनुष्य को भले-बुरे की पहचान करने के लिए विवेक शक्ति प्रदान की है' अन्यथा सिद्ध हो जाता है, कुरान की मान्यता के विरुद्ध तो वह है हो।

उतरना-चढ़ना—ग्रन्थकार के इस आक्षेप को हटाने के लिए मौ० अशरफ अली ने अर्थ ही बदल दिया—'वह आसमान से लेकर जमीन तक हर काम की तदवीर (इन्तजाम) करता है और फिर हर उम्र उसी के हजर में पहुँच जाता है।' पर चढ़ना-उतरना तो चेतन कर्त्ता का ही हो सकता है, जड़ कार्य का नहीं।

खुदा कहता है कि 'जो चाहते हम अवश्य देते हम हर जीव को शिक्षा।' परन्तु हम शिक्षा नहीं देते, क्योंकि 'अवश्य भरूँगा मैं दोजख को आदमियों से।' इस प्रकार मुहम्मद साहब (वास्तव में कुरान उन्हीं का कलाम है) को लोगों के हित का विचार नहीं, अपनी दोजख को भरने की चिन्ता है। उन्हें

---

१. अर्थात् मार्गदर्शन।

२. सं० २ में 'जो' अपपाठ है।

[विना पाप किए दोजख में भेजना अन्याय है]

और उनको विना पाप किए अपनी मर्जी से दोजख भरके उनको दुःख देकर तमाशा देखता है, तो वह खुदा पापी, अन्यायकारी और दयाहीन है। ऐसी बातें जिस पुस्तक में हों, न वह विद्वान् और न ईश्वरकृत। और जो दया-न्याय-हीन है, वह ईश्वर कभी नहीं हो सकता ॥१२७॥

[लड़ाई से न भागो; नबी की बीवियों को डरावा]

१२८—कह, कि कभी न लाभ देगा भागना तुमको, जो भागो तुम मृत्यु वा कतल से ॥

ऐ बीवियो नबी की ! जो कोई आवे तुममें से निर्लज्जता प्रत्यक्ष के, दुगुणा किया जावेगा वास्ते उसके अजाब, और है यह ऊपर अल्लाह के सहल ॥ —मं० ५। सि० २१। सू० ३३। आ० १६, ३०

[लड़ाई कराना शिष्टजनों का काम नहीं]

समीक्षक—यह मुहम्मद साहब ने इसलिये लिखा-लिखवाया होगा कि लड़ाई में कोई न भागे, हमारा विजय होवे, मारने से भी न डरे, ऐश्वर्य बढ़े, मजहब बढ़ा लेवें।

[नबी के घरेलू मामलों में खुदा का पक्षपात]

और यदि बीवी निर्लज्जता से न आवे, तो क्या पैगम्बर साहब निर्लज्ज होकर आवें ? बीवियों पर अजाब हो, और पैगम्बर साहब पर अजाब न होवे, यह किस घर का न्याय है ? ॥१२८॥

[नबी की बीवियों पर पाबन्दी; बेटे की औरत से निकाह]

१२९—और अटकी रहो बीच घरों अपने के, आज्ञापालन करो अल्लाह और रसूल की, सिवाय इसके नहीं ॥

डर है कि यदि सब लोगों को शिक्षा दी जायेगी और उसके परिणामस्वरूप लोग शुभकर्मों में प्रवृत्त होने लगेंगे तो पाप न होने या कम हो जाने से उसकी दोजख खाली पड़ी रह जायेगी। इसके विपरीत समीक्षक ग्रन्थकार का परमेश्वर 'सब की भलाई, सबका सुख चाहता है' (स० प्र० समु० ७)। इसलिए वह सबको शिक्षा देता है, जिससे कोई दुष्कर्मों में प्रवृत्त न हो। उसका शिक्षा देने का प्रकार क्या है, इसकी व्याख्या में ग्रन्थकार ने लिखा है—'जिस क्षण जीव किसी कार्य में प्रवृत्त होता है, उसी क्षण में आत्मा के भीतर से बुरे काम करने में भय, शंका और लज्जा तथा अच्छे काम करने में अभय, निःशंकता और आनन्दोत्साह उठता है। वह जीवात्मा की ओर से नहीं, किन्तु परमात्मा की ओर से है।'

१२८. मौ० अशरफ अली ने 'निर्लज्जता प्रत्यक्ष' के स्थान में 'खुली हुई बेहूदगी' अर्थ किया है। मौ० मुहम्मद अली अपनी टिप्पणी में लिखता है कि 'यह आदेश प्रत्येक स्त्री के लिए है।' परन्तु प्रत्येक स्त्री पैगम्बर की बीवी कैसे हो सकती है ? जब तक मुहम्मद साहब के चरित्र को दृष्टि में रखते हुए यह न सोचा जाये कि पता नहीं कब कौन स्त्री उनकी बीवी बन जाय। हमारी इस कल्पना को अगले समीक्ष्य में निर्दिष्ट घटना से समर्थन मिलता है। ग्रन्थकार की आपत्ति तो यहाँ मुख्यतः इस कारण है कि निर्लज्जता को स्त्री के लिए ही अपराध क्यों माना जाये ? पुरुष को इसकी छूट क्यों हो ? चारित्रिक दृष्टि से प्रायः स्त्री की अपेक्षा पुरुष अधिक दोषी होता है। छान्दोग्य उपनिषद् में तो यहाँ तक कहा है—'न स्वैरी, स्वैरिणी कुतः ?'—जहाँ पुरुष व्यभिचारी नहीं होते, वहाँ स्त्रियों के व्यभिचारिणी होने का प्रश्न ही नहीं उठता।

१२९. जैद मूलतः गुलाम था, जो मुहम्मद साहब की पहली बीवी खदीजा के साथ मानो दहेज में आया था। कालान्तर में मुहम्मद साहब ने उसे अपना दत्तक पुत्र बना लिया। मुहम्मद साहब ने

बस जब अदा करली जैद ने हाजित[1] उससे, ब्याह दिया हमने तुझसे उसको, ताकि न होवे ऊपर ईमानवालों के तंगी बीच बीवियों[2] लेपालकों उनके के, जब अदा करलें उनसे हाजित। और है आज्ञा खुदा की की गई[3]। नहीं है ऊपर नबी के कुछ तङ्गी बीच उस वस्तु के। नहीं है मुहम्मद बाप किसी मर्द[4] का। और हलाल की स्त्री ईमानवाली, जो देवे विना मिहर[5] के जान अपनी वास्ते नबी के।

ढील देवे तू जिसको चाहे उनमें से, और जगह देवे तर्फ अपनी जिसको चाहे, नहीं पाप ऊपर तेरे॥ ऐ लोगो! जो ईमान लाये हो, मत प्रवेश करो घरों में पैगम्बर के॥

—मं० ५। सि० २२। सू० ३३। आ० ३३, ३७, ३८, ४०, ५०, ५१, ५३

[स्त्रियों को घर में बन्द रखना अन्याय है]

समीक्षक—यह बड़े अन्याय की बात है कि स्त्री घर में कैद के समान रहे, और पुरुष खुल्ले रहें। क्या स्त्रियों का चित्त शुद्ध वायु, शुद्ध देश में भ्रमण करना, सृष्टि के अनेक पदार्थ देखना नहीं चाहता होगा? इसी अपराध से मुसलमानों के लड़के विशेषकर सयलानी और विषयी होते हैं।

[अपनी स्वार्थसिद्धि के लिये खुदा को भी साथ ले लिया]

अल्लाह और रसूल की एक अविरुद्ध आज्ञा है, वा भिन्न-भिन्न विरुद्ध? यदि एक है, तो 'दोनों की आज्ञा पालन करो' कहना व्यर्थ है। और जो भिन्न-भिन्न विरुद्ध हैं, तो एक सच्ची और दूसरी झूंठी। एक खुदा दूसरा शैतान हो जायगा। और शरीक भी होगा। वाह कुरान का खुदा और पैगम्बर तथा कुरान को! जिसको[6] दूसरे का मतलब नष्ट कर अपना मतलब सिद्ध करना इष्ट हो, ऐसी लीला अवश्य रचता है।

अपनी फुफेरी बहन जैनब से उसका विवाह करना चाहा। जैनब अच्छे सम्पन्न व प्रतिष्ठित घराने की लड़की थी। उसने उससे विवाह करने से इन्कार कर दिया, यह कहकर कि जैद अब भले ही जैद मुहम्मद साहब का पुत्र बन गया हो, मूलतः तो वह गुलाम था। तभी आयत नाजिल हुई कि पैगम्बर का हुक्म बजाना हर मुसलमान के लिए लाजिम (अनिवार्य) है। विवश होकर जैनब को जैद से शादी करनी पड़ी। कुछ समय बाद जैद और जैनब में तलाक हो गया और जैनब से मुहम्मद साहब का निकाह हो गया। मौलवी मुहम्मद अली ने तलाक का कारण पति-पत्नी का आपसी मनमुटाव बताया है। फतेह मुहम्मदखाँ साहब ने आपसी मनमुटाव का कारण भी बताया है। जैद के साथ जैनब की शादी उसकी मर्जी के खिलाफ मंजबूरी में हुई थी। जैनब आखिर औरत थीं और पुराने खयाल उनके दिल में बैठे हुए थे। अपनी और जैद की पारिवारिक पृष्ठभूमि में अन्तर के कारण वह हमेशा अपने को जैद से अफजल

---

१. पं० रामचन्द्र देहलवी के अनुवाद में 'हाजत' शब्द है।
२. सं० २ से ३३ तक 'बीबियों से' पाठ है। सं० ३४ में 'से' हटाया। यहाँ 'से' असम्बद्ध है। पं० रामचन्द्र देहलवी के अनुवाद में भी नहीं है।
३. इससे पूर्व अरब में अपने मुंह बोले बेटे की तलाक दी हुई पत्नी से विवाह कर लेने की प्रथा न थी।
४. सं० २ में 'मुर्दे' अपपाठ है।
५. मिहर=वह रकम या माल, जो पति को विवाह के समय अपनी पत्नी को देना पड़ता है।
६. सं० १० या ११ में 'को' विभक्ति मुद्रण में छूट गई। ११ से १४ तक 'जिसे दूसरे का'। सं० १६ में 'जिस' को 'जिसे' बनाया। ३३ तक यही पाठ रहा। सं० ३४ में 'जिसको' पुनः बनाया गया।

[बेटे की स्त्री को अपनी पत्नी बनाना अधर्म]

इससे यह भी सिद्ध हुआ कि मुहम्मद साहब बड़े विषयी थे। यदि न होते, तो (लेपालक) बेटे की स्त्री को, जो पुत्र की स्त्री थी, अपनी स्त्री क्यों कर लेते ? और फिर ऐसी बातें करनेवाले का खुदा भी पक्षपाती बना, और अन्याय को न्याय ठहराया। मनुष्यों में जो जङ्गली भी होगा, वह भी बेटे की स्त्री को छोड़ता है।

[नबी किसी का बाप न था, तो जैद किसका बेटा था ?]

और यह कितनी बड़ी अन्याय की बात है कि नबी को विषयासक्ति की लीला करने में कुछ भी अटकाव नहीं होना ! यदि नबी किसी का बाप न था, तो जद (लेपालक) बेटा किसका था, और क्यों लिखा ? यह उसी मतलब की बात है कि जिससे बेटे की स्त्री को भी घर में डालने से पैगम्बर साहब न बचे, अन्य से क्योंकर बचे होंगे ? ऐसी चतुराई से भी बुरी बात में निन्दा होना कभी नहीं छूट सकता।

[अनेक औरतें रखना दुःखदायी]

क्या जो कोई पराई स्त्री भी नबी से प्रसन्न होकर निकाह करना चाहे, तो वह भी हलाल है ? और यह महा अधर्म की बात है कि नबी तो[1] जिस स्त्री को चाहे छोड़ देवे, और मुहम्मद साहब की स्त्री-लोग यदि पैगम्बर अपराधी भी हों, तो कभी न छोड़ सकें ?

[व्यभिचार कोई भी करे, वह बुरा है]

जैसे पैगम्बर के घरों में अन्य कोई व्यभिचार-दृष्टि से प्रवेश न करें, तो वैसे पैगम्बर साहब भी किसी के घर में प्रवेश न करें। क्या नबी जिस-किसी के घर में चाहें निश्शङ्क प्रवेश करें, और माननीय भी रहें ?

और जैद को अपने से कमतर समझती थीं। इस कारण दोनों में खटपट रहती थी। इसलिए जैद जैनब को तलाक देने पर मजबूर हो गये। किन्तु इस हेतु का कहीं भी उल्लेख नहीं मिलता। 'अदा करली जब जैद ने हाजत' का अर्थ मौ० अशरफ अली ने 'जब जैद का उससे जी भर गया' किया है। मुहम्मद साहब की विषयासक्ति की लीलाएँ सर्वविदित हैं। इसलिए यह भी कहा जाता है कि मुहम्मद साहब ने जैनब के रूप पर आसक्त होकर उससे शादी करने का फैसला कर लिया तो उन्होंने ही मियाँ-बीवी में तलाक की स्थिति पैदा की। इसके दो प्रमाण कुरान में उपलब्ध हैं—

(१) पैगम्बर का अपने मुँह बोले (दत्तक) बेटे की पत्नी (पुत्रवधू) से विवाह होना उस समय के लोगों को अखरा। उनका समाधान करने के लिए यह आयत उतरी कि 'नहीं है बाप किसी का' (३३।४०)। इसी के साथ कुछ आयतें और उतरीं, जिनमें कहा गया—'ऐ पैगम्बर ! हमने तुम्हारे लिए तुम्हारी सब बीबियाँ, तुम्हारे चचा की बेटियाँ, फूफियों की बेटियाँ, खालाओं की बेटियाँ और कोई भी मोमिन औरत जो तुमसे निकाह करना चाहे और लौंडिया व रखैल हलाल कर दीं। जिन बीबियों को तुम तलाक देदो या अलहदा कर दो, अगर तुम उनको तलब करना चाहो तो इसमें भी गुनाह नहीं है।'

(२) जैनब से जैद का तलाक होते ही बिना पूर्व सूचना के मुहम्मद साहब उसके घर जा पहुँचे। जैनब ने आपत्ति की कि निकाह से पहले आपको यहाँ नहीं आना चाहिए था। तब आयत नाजिल हुई कि

---

१. सं० २ से ६ तक 'तो' नहीं है। सं० ७ या ८ में बढ़ाया।

[कुरान की बातें युक्ति-शून्य और धर्मविरुद्ध हैं]

भला कौन ऐसा हृदय[1] का अन्धा है, कि जो कि इस कुरान को ईश्वरकृत और मुहम्मद साहब को पैगम्बर, और कुरानोक्त ईश्वर को परमेश्वर मान सके ? वड़े आश्चर्य की बात है कि ऐसे युक्ति-शून्य धर्मविरुद्ध बातों से युक्त इस मत को अर्बदेशनिवासी आदि मनुष्यों ने मान लिया !! ॥१२६॥

[रसूल को दुःख न दो; उसकी बीवियों से निकाह करना पाप]

१३०—नहीं योग्य वास्ते तुह्मारे यह कि दुःख दो रसूल को, यह कि निकाह करो बीवियों उसकी को पीछे उसके कभी, निश्चय ही यह हैं समीप अल्लाह के वड़ा पाप ॥ निश्चय जो लोग कि दुःख देते हैं अल्लाह को और रसूल उसके को, लानत की है उनको अल्लाह ने ॥

और वे लोग कि दुःख देते हैं मुसलमानों को और मुसलमान औरतों को विना इसके बुरा किया है उन्होंने, बस निश्चय उठाया उन्होंने बोहतान अर्थात् झूँठ और प्रत्यक्ष पाप ॥ लानत मारे जहाँ पाये जावें[2] पकड़े जावें, कतल किये जावें, खूब मारा जाना[3] ॥ ऐ रब हमारे ! दे उनको द्विगुणा अजाव से, और लानत से बड़ी लानत कर ॥ —मं० ५ । सि० २२ । सू० ३३ । आ० ५३, ५७, ५८, ६१ ६८

[सबको ही दुःख देने की मनाई क्यों न की ?]

समीक्षक—वाह ! क्या खुदा अपनी खुदाई को धर्म के साथ दिखला रहा है ? जैसे रसूल को दुःख देने का निषेध करना तो ठीक है, परन्तु[4] दूसरे को दुःख देने में रसूल को भी रोकना योग्य था, सो क्यों न रोका ? क्या किसी के दुःख देने से अल्लाह भी दुःखी हो जाता है ? यदि ऐसा है, तो वह ईश्वर ही नहीं हो सकता । क्या अल्लाह और रसूल को दुःख देने का निषेध करने से यह नहीं सिद्ध होता, कि अल्लाह और रसूल जिसको चाहें दुःख देवें ? अन्य सब को दुःख देना चाहिए ?

[केवल मुसलमानों को दुःख न दो, की बात पक्षपात]

जैसा मुसलमानों और मुसलमानों की स्त्रियों को दुःख देना बुरा है, तो इनसे अन्य मनुष्यों को दुःख देना भी अवश्य बुरा है । जो ऐसा न माने, तो उसकी यह बात भी पक्षपात की है ।

[अन्य लोगों को मारने की बात महा अधर्म]

वाह गदर मचानेवाले खुदा और नबी !! जैसे ये निर्दयी संसार में हैं, वैसे और बहुत थोड़े

पैगम्बर को औरत का समर्पण ही निकाह है । जैसा कि हम आरम्भ में लिख चुके हैं, समूचे कुरान की रचना समय-समय पर मुहम्मद साहब की आवश्यकता के अनुरूप उतरी आयतों से हुई है । वास्तव में उनका कथन ही आयत का उतरना कहा और समझा जाता था ।

१३०. मौ० अशरफ अली ने हदीस के हवाले से टिप्पणी में लिखा है कि यह आयत उस शख्स की वजह से नाजिल हुई, जिसने कसद किया था कि हजरत मुहम्मद की वफाद (मृत्यु) के बाद मैं आपकी

---

१. अर्थात् जिसे हृदय=अन्तःकरण की ज्ञानरूपी आँख नहीं है ।
२. सं० २ में 'जहाँ पर दे आवे पकड़ने' अपपाठ है ।
३. अर्थात् खूब मारे जावें ।
४. पूर्व वाक्य में 'जैसे' होने से यहाँ 'वैसे' पाठ होना चाहिये ।

होंगे। जैसा यह कि 'अन्य लोग जहाँ पाये जावें मारे जावें पकड़े जावें' लिखा है, वैसी ही मुसलमानों पर कोई आज्ञा देवे, तो मुसलमानों को यह बात बुरी लगेगी वा नहीं ? वाह क्या हिंसक पैगम्बर आदि हैं ? कि जो परमेश्वर से प्रार्थना करके अपने से दूसरों को दुगुण दुःख देने के लिए प्रार्थना करना लिखा है। यह भी पक्षपात, मतलब सिन्धुपन और महा अधर्म की बात है। इसी से अबतक भी मुसलमान लोगों में से बहुत से शठ लोग ऐसा ही कर्म करने में नहीं डरते। यह ठीक है कि शिक्षा के विना मनुष्य पशु के समान रहता है ॥१३०॥

[मुर्दों को जिलाना; अविनाशी घर]

१३१—और अल्लाह वह पुरुष है कि भेजता है हवाओं को, बस उठाती हैं बादलों को। बस हाँक लेते हैं तर्फ शहर मुर्दे की[1], बस जीवित किया हमने साथ उसके पृथिवी को, पीछे मृत्यु उसकी के। इसी प्रकार कबरों में से निकालना है[2] ॥

जिसने उतारा बीच घर सदा रहने के दया अपनी से, नहीं लगती हमको बीच उसकी मेहनत, और नहीं लगती बीच उसके मांदगी[3] ॥ —मं० ५। सि० २२। सू० ३५। आ० ६, ३५

[मुर्दों को जिन्दा करने की बात अवैज्ञानिक और असम्भव]

समीक्षक—वाह क्या फिलासफी खुदा की है ? भेजता है वायु को, वह उठाता फिरता है बद्दलों को। और खुदा उससे मुर्दों को जिलाता फिरता है। यह बात ईश्वर-सम्बन्धी कभी नहीं हो सकती, क्योंकि ईश्वर का काम निरन्तर एक-सा होता रहता है।

[अनेक स्त्रियों से संभोग दुःखदायी; नित्य घर कैसे ?]

जो घर होंगे[4], वे विना बनावट के नहीं हो सकते। और जो बनावट का है, वह सदा नहीं रह सकता। जिसके शरीर है, वह परिश्रम के विना दुःखी होता। और शरीरवाला रोगी हुए विना कभी नहीं बचता। जो एक स्त्री से समागम करता है, वह विना रोग के नहीं बचता, तो जो बहुत स्त्रियों[5] से

बीवी से निकाह करूँगा। परन्तु किसी भी अवस्था में परमात्मा के दुःखी होने का प्रश्न नहीं उठता। वह तो 'क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्ट' पुरुषविशेष है।

१३१. इसका सरल अर्थ इस प्रकार है—'और खुदा ही तो है जो हवाएँ चलाता है और वे बादलों को उभारती हैं, फिर हम उनको एक बेजान शहर की तरफ चलाते हैं, फिर उससे जमीन को मुरदे से जिन्दा कर देते हैं। इसी तरह मुर्दों को जी उठना होगा।

मौलवी मुहम्मद अली ने शहर के स्थान में 'Country' (देश) अर्थ किया है। मूल में 'बल दिम्मैयतिन्' शब्द है, जिसका अर्थ 'मुर्दा नगर वा प्रदेश' होता है। मौ० अशरफ अली ने 'खुश्क कितआ

---

१. अर्थात् निर्जीव भू भाग की ओर।
२. इस आयत का भाव यह है कि—जैसे 'अल्लाह से भेजी गई हवाएँ बादल उठाकर निर्जीव भूभाग की ओर ले जाती हैं, उससे निर्जीव पृथिवी जीवित हो उठती है। इसी प्रकार कबरों में पड़े मुर्दे जीवित हो उठते हैं।
३. अर्थात् थकावट।
४. सं० २ में 'होगा' पाठ है।
५. यहाँ अभिप्राय बहिश्त में मिलनेवाली स्त्रियों से है, आगे बहिश्त का निर्देश होने से।

विषयभोग करता है, उसकी क्या ही दुर्दशा होती होगी ? इसलिये मुसलमानों का रहना बहिश्त में भी सुखदायक सदा नहीं हो सकता ॥१३१॥

[खुदा द्वारा कुरान की कसम]

१३२—कसम है कुरान दृढ़[1] की ॥ निश्चय तू भेजे हुओं से है ॥ उस पर मार्ग सीधे के ॥ उतारा है गालिब दयावान् ने ॥ —मं० ५। सि० २३। सू० ३६। आ० २-५

[खुदा कुरान की कसम क्यों खाता है]

समीक्षक—अब देखिए यह कुरान खुदा का बनाया होता, तो वह इसकी सौगन्द क्यों खाता ? यदि नबी खुदा का भेजा होता, तो (लेपालक) बेटे की स्त्री पर मोहित क्यों होता ?

[कुरान-प्रोक्त मार्ग सीधा मार्ग नहीं है]

यह कथनमात्र है कि कुरान के माननेवाले सीधे मार्ग पर हैं। क्योंकि 'सीधा मार्ग' वही होता है, जिसमें सत्य मानना, सत्य बोलना, सत्य करना, पक्षपातरहित न्यायधर्म का आचरण करना आदि हैं। और इसके विपरीत का त्याग करना। सो न कुरान में, न मुसलमानों में, और न इनके खुदा में ऐसा स्वभाव है।

[महाविद्वान् और गुणी ही सब पर प्रबल हो सकता है]

यदि सब पर प्रबल पैगम्बर मुहम्मद साहब होते, तो सब से अधिक विद्यावान् और शुभगुण-युक्त क्यों न होते ? इसलिए जैसी कूंजड़ी अपने बेरों को खट्टा नहीं बतलाती, वैसी यह बात भी है ॥१३२॥

[कबरों से निकलकर भागना; कहनेमात्र से सृष्टि रचना]

१३३—और फूंका जावेगा बीच सूर के[2], बस नागहाँ, वह कबरों में से मालिक अपने की ओर दौड़ेंगे ॥ और गवाही देंगे पाँव उनके साथ उस वस्तु के कमाते थे ॥

जमीन' अर्थ किया है। मौ० मुहम्मद अली 'Country' के स्थान में 'Country side' लिखते तो अधिक उपयुक्त होता। कबरों में पड़े मुर्दों के जीवित हो उठने का तो प्रश्न ही नहीं उठता।

१३२. ग्रन्थकार की समीक्षा को सामने रखकर मौ० मुहम्मद अली ने अनुवाद को बदल कर लिखा है—'Consider the Quran full of wisdom' (कुरान को ज्ञान से भरपूर समझो)। पर जिसका अधिकांश किस्से-कहानियों तथा असंगत, विसंगत, सृष्टिक्रम के विरुद्ध, मिथ्या, पूर्वापर-विरुद्ध, पुनरुक्त बातों से भरा हो, उसे 'Full of wisdom' कैसे माना जा सकता है ? 'दृढ़'—शाहजी ने अपने अनुवाद में 'महकम' लिखा है, जिसका अर्थ 'दृढ़' होता है। मौ० अशरफ अली ने 'वाहिकमत' लिखा है।

१३३. मौ० फतेहमुहम्मदखाँ के अनुसार सूर दो बार फूंका जायेगा। पहली बार के बाद सब लोग बेहोश हो जायेंगे और उन पर नींद की हालत छा जायेगी। दूसरी बार के बाद सब जिन्दा हो जायेंगे। क्योंकि पहली बार के बाद उनकी हालत यह होगी कि गोया सो रहे हों, इसलिए दूसरे सूर के

---

१. अर्थात् हिकमतवाले। २. अर्थात् बिगुल बजेगा।

सिवाय इसके नहीं कि आज्ञा उसकी, जब चाहे उत्पन्न करना किसी वस्तु को[1], यह कि कहता वास्ते उसके कि—'हो जा', बस हो जाता है ॥ —मं० ५ । सि० २३ । सू० ३६ । आ० ५१, ६५,८२

[क्या पैर गवाही दे सकते हैं ?; किसे आज्ञा दी, और कौन बना ?]

समीक्षक—अब सुनिये ऊँटपटाँग बातें । पग कभी गवाही दे सकते हैं ? खुदा के सिवाय उस समय कौन था, जिसको आज्ञा दी ? किसने सुनी ? और कौन बन गया ? यदि न थी तो यह बात झूँठी, और जो थी तो वह बात, जो 'सिवाय खुदा के कुछ चीज नहीं थी, और खुदा ने सब कुछ बना दिया' वह झूँठी ॥१३३॥

[बहिश्त में शराब और बीवियाँ; लूत को मुक्ति]

१३४—फिराया जावेगा उसके ऊपर पियाला शराब शुद्ध का ॥ सफेद मजा देनेवाली वास्ते पीनेवालों के ॥ समीप उनके बैठी होंगी नीचे आँख रखनेवालियाँ, सुन्दर आँखोंवालियाँ ॥ मानो कि वे अण्डे हैं छिपाये हुए ॥ क्या बस हम नहीं मरेंगे ॥

और अवश्य लूत निश्चय पैगम्बरों से था ॥ जबकि मुक्ति दी हमने उसको और लोगों उसके को सब को । परन्तु एक बुढ़िया[2] पीछे रहनेवालों में है । फिर मारा हमने औरों को ॥

—मं० ६ । सि० २३ । सू० ३७ । आ० ४५, ४६, ४८, ४९, ५८, १३३-१३६

बाद यह खयाल करेंगे कि नींद से जागे हैं । तब कहेंगे कि हमें किसने जगा दिया । कबरों का अर्थ यहाँ भाष्यकारों ने कबरों में लेटे मुर्दे किया है । इसलाम के अनुयायिय्नों का सिद्धान्त है कि ये मुर्दे शरीर के साथ उठेंगे । पर शरीर तो जर्जरित हो चुका होगा और यह कब्र में मिलजुल गया होगा । तब कब्र का उठना या शरीर का उठना एक ही बात है । पर तब कब्र ही कहाँ होगी । हम देख रहे हैं कि भारत में ही नहीं, दुनिया भर में एक-दो कब्रें क्या, कब्रिस्तान के कब्रिस्तान बुलडोजरों के द्वारा नष्ट हो रहे हैं और उनके स्थान पर बहुमंजिले मकान बन कर शहर बसते जा रहे हैं । जब कब्रें ही नहीं रहेंगी तो उनमें से मुर्दों के उठकर मालिक अपने की तरफ दौड़ने का प्रश्न ही नहीं उठता । जहाँ तक हाथ-पाँवों की गवाही देने का सम्बन्ध है, वे होंगे ही कहाँ जबकि न कब्रें रहेंगी और न उनमें दफन शरीर । फिर भी, मानो अपनी खीज मिटाने के लिए, सूरते यासीन आयत ६५-६७ में लिखा है—'आज हम उनके मुहों पर मुहर लगा देंगे और जो कुछ वे करते रहे थे, उनके हाथ हमसे बयान कर देंगे और उनके पाँव गवाही देंगे । और हम चाहें तो उनकी आँखों को मिटाकर अन्धा कर दें । फिर ये दौड़ेंगे तो कहाँ देख सकेंगे । और हम चाहें तो उनकी जगह उनकी शक्लें बदल दें । फिर वहाँ से न आगे जा सकें, न पीछे लौट सकें ।' लीजिए, गवाही का अवसर ही नहीं आयेगा ।

१३४. यहाँ तो ग्रन्थकार की समीक्षा ने पूरी आयत का अर्थ बदलने पर ही विवश कर दिया । मौ० अशरफ अली ने बदलकर अर्थ किया है—'उनके पास ऐसा जामे शराब लाया जायेगा जो बहती हुई शराब से भरा जायेगा ।' यह अनुवाद निर्मूल है । मौ० मुहम्मद अली ने इसका अर्थ किया है—'चश्मों में से बहते जल का प्याला फिराया जायेगा ' शराब को मौ० मुहम्मद अली ने जल बना दिया ।

---

१. सं० २ में 'का' अपपाठ है ।

२. यह बुढ़िया हजरत 'लूत' की पत्नी थी; उसने अपने पति का साथ नहीं दिया था ।

[स्वर्ग में शराब और बीवियों के कारण दुर्गति]

समीक्षक—क्योंजी, यहाँ तो मुसलमान लोग शराब को बुरा बतलाते हैं, परन्तु इनके स्वर्ग में तो नदियाँ की नदियाँ बहती हैं ? इतना अच्छा है कि यहाँ तो किसी प्रकार मद्य पीना छुड़ाया, परन्तु यहाँ के बदले वहाँ उनके स्वर्ग में बड़ी खराबी है। मारे स्त्रियों के वहाँ किसी का चित्त स्थिर नहीं रहता होगा ? और बड़े-बड़े रोग भी होते होंगे ? यदि शरीरवाले होंगे, तो अवश्य मरेंगे। और जो शरीरवाले न होंगे, तो भोगविलास ही न कर सकेंगे। फिर उनका[1] स्वर्ग में जाना व्यर्थ है।

[लूत जैसा शराबी और पतित भी पैगम्बर ?]

यदि लूत को पैगम्बर मानते हो, तो जो बाइबल में लिखा है कि 'उससे उसकी लड़कियों ने समागम करके दो लड़के पैदा किये'[2] इस बात को भी मानते हो, वा नहीं ? जो मानते हो, तो ऐसे को पैगम्बर मानना व्यर्थ है।

[लूत जैसों को मुक्ति का दाता खुदा भी वैसा ही है]

और जो ऐसे और ऐसे के सङ्गियों को खुदा मुक्ति देता है, तो वह खुदा भी वैसा ही है। क्योंकि बुढ़िया की कहानी करनेवाला, और पक्षपात से दूसरों को मारनेवाला खुदा कभी नहीं हो सकता। ऐसा खुदा मुसलमानों ही के घर में रह सकता है, अन्यत्र नहीं ॥१३४॥

[बहिश्त का दृश्य; शैतान ने खुदा का हुक्म न माना]

१३५—बहिश्तें हैं सदा रहने की, खुले हुए हैं दर उनके वास्ते उनके ॥ तकिये किये हुए बीच उनके, मँगवावेंगे बीच इसके मेवे और पीने की वस्तु ॥ और समीप होंगी उनके नीचे रखनेवालियाँ दृष्टि और दूसरों से समायु ॥

पर फतेह मुहम्मद खाँ साहब अभी वहीं खड़े हैं। उनके अनुसार 'शराबे लतीफ का दौर चल रहा होगा, जो रंग की सफेद और पीनेवालों के लिए लज्जतदार होगी। न उससे सर दर्द हो और न वे उससे मतवाले हों और उनके पास औरतें होंगी जो निगाहें नीची रखती होंगी और आँखें बड़ी-बड़ी।' इसी में आगे लिखा है—'मेरा एक साथी था, जो कहता था कि भला तुम भी ऐसी बातों पर यकीन करते हो ? भला जब हम मर गये और मिट्टी और हड्डियाँ हो गये तो क्या हमको बदला मिलेगा ? क्या यह नहीं कि हम आगे कभी मरने के नहीं। हाँ, पहली बार मरना था सो मर चुके और हमें अजाब भी नहीं होने का। बेशक यह बड़ी कामयाबी है।' तात्पर्य स्पष्ट नहीं है। लूत की कथा के लिए द्रष्टव्य—तेरहवें समुल्लास के अन्तर्गत समीक्ष्यांश संख्या २३ अथवा तौरेत, उत्पत्ति पर्व अध्याय १९।

१३५. इस आयत से सम्बन्धित विषयों का विवेचन इससे पूर्व अनेकत्र हो चुका है। 'दो हाथ वाला' से सम्बन्धित आपत्ति का निराकरण करते हुए मौ० अशरफ अली ने टिप्पणी में लिखा है—'इससे मालूम हुआ कि दोनों हाथों से मुराद कुव्वत (शक्ति) और कुदरत (सामर्थ्य) नहीं, बल्कि ये दो सिफ्तें हैं अल्लाताला की।' किन्तु 'मिट्टी (सूखी, गीली, खमीर उठी, बजनेवाली या खनखन बोलनेवाली) से बनाया था' से स्पष्ट है कि ये हाथ वैसे ही थे, जैसे लोक में मिलनेवाले कारीगरों के होते हैं। अगली आयत में 'मुट्ठी' और 'दाहिने' हाथ का उल्लेख होने से खुदा का निश्चित रूप से साकार होना सिद्ध होता है।

---

१. सं० २ में 'उनके' अपपाठ है।

२. द्र०—समु० १३, समीक्ष्यांश संख्या २३।

'बस सिजदा किया फरिश्तों ने सब ने ।। परन्तु शैतान ने न माना, अभिमान किया और था काफिरों से ।। ऐ शैतान ! किस वस्तु ने रोका तुझको, यह कि सिजदा करे वास्ते उस वस्तु के कि बनाया मैंने साथ दोनों हाथ अपने के, क्या अभिमान किया तूने, वा था बड़े अधिकारवालों[2] से ? ।। कहा, कि मैं अच्छा हूँ उस वस्तु से, उत्पन्न किया तूने मुझको आग से, उसको मिट्टी से ।। कहा, बस निकल इन आसमानों में से, बस निश्चय तू चलाया गया है ।। निश्चय ऊपर तेरे लानत है मेरी दिन जजा तक ।। कहा ऐ मालिक मेरे ! ढील दे उस दिन तक कि उठाये जावेंगे, मुर्दे ।। कहा, कि बस निश्चय तू ढील दिये गयों से है ।। उस दिन समय ज्ञात तक ।। कहा, कि बस कसम है प्रतिष्ठा तेरी की[3], कि अवश्य गुमराह करूँगा उनको मैं इकट्ठे[1] ।। —मं ६ । सि० २३ । सू० ३८ । आ० ५०-५२, ७३-८२

[बाग-बगीचे आदि अनित्य होने से बहिश्त भी अनित्य]

समीक्षक—यदि वहाँ जैसे कि कुरान में बाग-बगीचे-नहरें-मकानादि लिखे हैं, वैसे हैं तो वे न। सदा से थे, न सदा रह सकते हैं। क्योंकि जो संयोग से पदार्थ होता है, वह संयोग के पूर्व न था अवश्यंभावी वियोग के अन्त में न रहेगा। जब वह बहिश्त ही न रहेगा, तो उसमें रहनेवाले सदा क्यों कर रह सकते हैं ? क्योंकि लिखा है कि 'गादी तकिये मेवे और पीने के पदार्थ वहाँ मिलेंगे'। इससे यह सिद्ध होता है कि जिस समय मुसलमानों का मजहब चला, उस समय अर्ब देशविशेष धनाढ्य न था। इसीलिए मुहम्मद साहब ने तकिये आदि की कथा सुनाकर गरीबों को अपने मत में फसा लिया।

[जहाँ स्त्रियाँ हैं, वहाँ निरन्तर सुख कभी नहीं]

और जहाँ स्त्रियाँ हैं, वहाँ निरन्तर सुख कहाँ ? वे स्त्रियाँ वहाँ कहाँ से आई हैं ? अथवा बहिश्त की रहनेवाली हैं ? यदि आई हैं तो जावेंगी। और जो वहीं की रहनेवाली हैं, तो कयामत के पूर्व क्या करती थीं ? क्या निकम्मी अपनी उमर को बहा रही थीं ?

[खुदा शैतान का कुछ भी न बिगाड़ सका]

अब देखिये खुदा का तेज कि जिसका हुक्म अन्य सब फरिश्तों ने माना, और आदम साहब को नमस्कार किया और शैतान ने न माना।

[आदम को बनानेवाला खुदा दो हाथवाला मनुष्य था]

खुदा ने शैतान से पूछा, और कहा कि मैंने उसको अपने दोनों हाथों से बनाया, तू अभिमान मत कर। इससे सिद्ध होता है कि कुरान का खुदा दो हाथवाला मनुष्य था। इसलिए वह व्यापक वा सर्वशक्तिमान् कभी नहीं हो सकता। और शैतान ने सत्य कहा कि मैं आदम से उत्तम हूँ। इस पर खुदा ने गुस्सा क्यों किया ?

[क्या आसमान ही में खुदा का घर है, पृथिवी में नहीं ?]

क्या आसमान ही में खुदा का घर है, पृथिवी में नहीं ? तो काबे को खुदा का घर प्रथम क्यों लिखा ? भला परमेश्वर अपने में से वा सृष्टि में से अलग कैसे निकाल सकता है ? और वह सृष्टि सब परमेश्वर की है। इससे विदित हुआ कि कुरान का खुदा बहिश्त का जिम्मेदार था।

१. यही उल्लेख पहले भी आया है। द्र०—समीक्ष्यांश संख्या ७१।
२. अर्थात् तू सिर उठानेवालों=विरोध करनेवालों में से है।
३. सं० २ से ३३ तक 'तेरी कि' पाठ है। सं० ३४ में 'कि' को 'की' बनाकर अल्प विराम दिया। वस्तुत: 'तेरी' के पश्चात् 'को' पाठ भी होना चाहिये। द्र०—पं० रामचन्द्र देहलवी का अनुवाद।

[खुदा और शैतान में वाद-विवाद]

खुदा ने उसको लानत-धिक्कार दिया, और कैद कर लिया। और शैतान ने कहा कि हे मालिक! मुझको कयामत तक छोड़ दे। खुदा ने खुशामद से कयामत के दिन तक छोड़ दिया। जब शैतान छूटा तो खुदा से कहता है कि अब मैं खूब बहकाऊँगा और गदर मचाऊँगा। तब खुदा ने कहा कि जितने को तू बहकावेगा, मैं उनको दोजख में डाल दूँगा, और तुझको भी।

[शैतान को बहकानेवाला खुदा स्वयं शैतान]

अब सज्जन लोगो! विचारिये कि शैतान को बहकानेवाला खुदा है, वा आपसे वह बहका? यदि खुदा ने बहकाया, तो वह शैतान-का-शैतान ठहरा। यदि शैतान स्वयं बहका, तो अन्य जीव भी स्वयं बहकेंगे, शैतान की जरूरत नहीं।

[जो स्वयं चोरी कराके दण्ड देवे, वह महा अन्यायी]

और जिससे इस शैतान बागी को खुदा ने खुला छोड़ दिया, इससे विदित हुआ कि वह भी शैतान का शरीक अधर्म कराने में हुआ। यदि स्वयं चोरी कराके दण्ड देवे, तो उसके अन्याय का कुछ भी पारावार नहीं ॥१३५॥

[पापों का क्षमा होना; एक साथ सब का फैसला]

१३६—अल्लाह क्षमा करता है पाप सारे, निश्चय वह है क्षमा करनेवाला दयालु॥ और पृथिवी सारी मूठी में है उसकी दिन कयामत के, और आसमान लपेटे हुए हैं बीच दाहिने हाथ उसके के॥ और चमक जावेगी पृथिवी साथ प्रकाश मालिक अपने के, और रक्खे जावेंगे कर्मपत्र और लाया जावेगा पैगम्बरों को और गवाहों को, और फैसला किया जावेगा॥

—मं० ६। सि० २४। सू० ३९। आ० ५३, ६७, ६९

[पाप क्षमा करने से अपराधों का बोलबाला होगा]

समीक्षक—यदि समग्र पापों को खुदा क्षमा करता है, तो जानो सब संसार को पापी बनाता है, और दयाहीन है। क्योंकि एक दुष्ट पर दया और क्षमा करने से वह अधिक दुष्टता करेगा, और अन्य

'गदर मचाऊँगा'—मौ० अशरफ अली ने यहाँ टिप्पणी में लिखा है—'आँ हजरत (मुहम्मद साहब) ने फरमाया—'शैतान ने कसम खाकर अल्लाह से कहा कि इन्सान के जिस्म में जब तक जान रहेगी, तब तक बहकाने में कोताही नहीं करूँगा।' अल्लाह ने कसम खाकर जवाब में फरमाया कि 'जब तक इन्सान के जिस्म में जान रहेगी और गुनाह करके तोबा करता रहेगा तब तक मैं भी उसके गुनाह माफ करता रहूँगा।' इस हदीस को इस आयत की तफसीर समझना चाहिए। क्योंकि यहाँ फकत शैतान का कौल है और अल्लाह ने उस मलऊन (धिक्कृत) के कौल की कसम खाकर जो जवाब दिया है, वह भी मौजूद है। मौलाना ने हदीस का नाम नहीं दिया। शैतान जैसे आतंकवादी को खुला छोड़कर खुदा ने कौनसी अक्लमन्दी थी। एक खुशामदी के अनुरोध को स्वीकार कर उस पर दया करके छोड़ दिया, किन्तु सारी मनुष्य जाति को सदा के लिए उसके चंगुल में फँसाकर क्या करोड़ों-अरबों पर अन्याय और अत्याचार नहीं किया?

१३६. कुरान में थोड़ा-सा सत्य और अधिकतर असत्य होने से वह विषयुक्त अन्न की भाँति त्याज्य है।

बहुत धर्मात्माओं को दुःख पहुँचावेगा। यदि किञ्चित् भी अपराध क्षमा किया जावे, तो अपराध-ही-अपराध जगत् में छा जावे।

[पैगम्बरों के भरोसे खुदा न्याय करता है, तो वह असमर्थ है]

क्या परमेश्वर अग्निवत् प्रकाशवाला है? और कर्मपत्र कहाँ जमा रहते हैं, और कौन लिखता है? यदि पैगम्बरों और गवाहों के भरोसे खुदा न्याय करता है, तो वह असर्वज्ञ और असमर्थ है।

[न्याय होगा, तो क्षमा करना वा दिलों पर मोहर लगाना अन्याय]

यदि वह अन्याय नहीं करता, न्याय ही करता है, तो कर्मों के अनुसार करता होगा। वे कर्म पूर्वापर वर्त्तमान जन्मों के हो सकते हैं। तो फिर क्षमा करना, दिलों पर ताला[1] लगाना, और शिक्षा न करना[2] शैतान से बहकवाना[3], दौड़ा सुपुर्द रखना[4] केवल अन्याय है॥१३६॥

[खुदा की ओर से कुरान का उतारना; तोबाः से पाप क्षमा]

१३७—उतारना किताब का अल्लाह गालिब जाननेवाले की ओर से है॥ क्षमा करनेवाला पापों का, और स्वीकार करनेवाला तोबाः का॥ —मं० ६। सि० २४। सू० ४०। आ० २, ३

[भोले लोगों को फँसाने के लिए खुदा का नाम साथ में]

समीक्षक—यह बात इसलिये है कि भोले लोग अल्लाह के नाम से इस पुस्तक को मान लेवें, कि जिसमें थोड़ा-सा सत्य छोड़ असत्य भरा है। और वह सत्य भी असत्य के साथ मिलकर बिगड़ा-सा है।

[इसी से मुसलमान पाप करने में कम डरते हैं]

इसीलिये कुरान और कुरान का खुदा और इसको माननेवाले पाप बढ़ानेहारे और पाप करने-करानेवाले हैं। क्योंकि पाप का क्षमा करना अत्यन्त अधर्म है। किन्तु इसी से मुसलमान लोग पाप और उपद्रव करने में कम डरते हैं॥१३७॥

---

१३७. तोबा करना ऐसा ही है जैसे आजकल बात-बात में 'Sorry' या 'Excuse me' कहना। एक शब्द कहते ही अजाब से—दोजख की आग से आदमी बच जाये तो पाप करने में क्यों संकोच करेगा? पाप से बचने के लिए भय का होना आवश्यक है, चाहे वह अपने से हो, चाहे समाज से या राजकीय दण्ड से अथवा परमेश्वर से। प्रायश्चित्त अथवा पश्चात्ताप भविष्य में पापकर्मों से निवृत्त करने में सहायक हो सकता है, किन्तु कृतकर्मों का फल तो अवश्य मिलना ही चाहिए। अन्यथा समाज-व्यवस्था भंग हो जायेगी।

---

१. द्र०—समीक्ष्यांश संख्या १०३, मोहर लगाना।
२. द्र०—समीक्ष्यांश संख्या ९१, यहाँ मुसलमानों के लिये ही शिक्षा देनेवाला कहा गया है।
३. इसका निर्देश बहुत स्थानों पर हैं।
४. अर्थात् कयामत तक मरे हुओं को कर्मफल न देना।

[सात आसमानों की दो दिन में रचना; आँख आदि की गवाही]

१३८—बस नियत किया[1] उसने[2] साथ आसमान बीच दो दिन के और डाल दिया बीच हमने उसके काम उसका ॥ यहाँ तक कि जब जावेंगे उसके पास, साक्षी देंगे ऊपर उनके, कान उनके और आँखें उनकी और चमड़े उनके, उनके कर्म से ॥ और कहेंगे वास्ते चमड़े अपने के—क्यों साक्षी दी तूने ऊपर हमारे ? कहेंगे कि—बुलाया है हमको अल्लाह ने, जिसने बुलाया हर वस्तु को ॥ अवश्य जिलानेवाला है मुर्दों को ॥

—मं ६ । सि० २४ । सू० ४१ । आ० १२, २०, २१, ३९

[वह क्या सर्वशक्तिमान्, जिससे सात आसमान दो दिन में बने ?]

समीक्षक—वाह जी वाह मुसलमानो ! तुह्मारा खुदा, जिसको तुम सर्वशक्तिमान् मानते हो, वह सात आसमानों को दो दिन में बना सका । और[3] जो सर्वशक्तिमान् है, वह क्षणमात्र में सब को बना सकता है ।

[जड़ कान आँख आदि क्या गवाही देंगे ?]

भला कान आँख और चमड़े को ईश्वर ने जड़ बनाया है, वे साक्षी कैसे दे सकेंगे ? यदि साक्षी दिलावे, तो उसने प्रथम जड़ क्यों बनाये ? और अपना पूर्वापर[4] नियम विरुद्ध क्यों किया ?

[जीवों को अपने चमड़ों से पूछना सफेद झूठ]

एक इससे भी बढ़कर मिथ्या बात यह है कि जब जीवों पर साक्षी दी, तब वे जीव अपने-अपने चमड़े से पूँछने लगे कि तूने हमारे पर साक्षी क्यों दी ? चमड़ा बोलेगा कि खुदा ने दिलाई, मैं क्या करूँ ? भला यह बात कभी हो सकती है ? जैसे कोई कहे कि बन्ध्या के पुत्र का मुख मैंने देखा । यदि पुत्र है, तो वन्ध्या क्यों ? जो बन्ध्या है, तो उसके पुत्र ही होना असम्भव है । इसी प्रकार की यह भी मिथ्या बात है ।

---

१३८. सूरते सजदा में इसका विस्तार इस प्रकार दिया है—'यह क्या तुम कुफ्र करते हो उससे जिसने बनाया जमीनों को दो दिन में···और निश्चित किये भोज्य पदार्थ चार दिन में···फिर बनाये सात आसमान दो दिन में' (आयत ९, १०, १२) । इस प्रकार अचेतन सृष्टि की रचना में कुल मिलाकर आठ दिन लगे । परन्तु कुरान के अनुसार तो सारी सृष्टि की रचना 'कुन' (हो जा) कहते ही हो गई थी । तफसीरे हुसैनी में इसका समाधान यह कहकर किया है कि 'यह कुन जल्दी न कहा जाता होगा, धैर्य व हिसाव से कहा जाता होगा' (अर्थात् आठ दिन में) । मौ० मुहम्मद अली ने 'चमड़े' की जगह 'देह' अनुवाद किया है और मौ० फतेह मुहम्मद खाँ ने 'दूसरे अंग', जो प्रकरण में अधिक उपयुक्त है । परन्तु सबके जड़ होने से ग्रन्थकार के आक्षेप में कोई अन्तर नहीं पड़ता । 'हमारे ऊपर' से तात्पर्य है 'हमारे खिलाफ' । यह पूछे जाने पर कि 'तुमने हमारे खिलाफ गवाही क्यों दी ?' देहांगों ने बड़ा माकूल जवाब दिया कि 'बुलाया हमको अल्लाह ने ।' अल्लाह ने बुलाया था तो निश्चय ही वे अल्लाह के गवाह थे

---

१. अर्थात् पूरा कर दिया ।
२. सं० २ में 'उसको साथ' अपपाठ है ।
३. सं० ३ में 'और' के स्थान में 'वस्तुतः' पाठ बनाया । यही सं० ३३ तक छपता रहा । यह परिवर्तन चिन्त्य है । क्योंकि वैदिक ईश्वर सर्वशक्तिमान् होते हुए भी क्षणमात्र में सृष्टि नहीं बनाता । सृष्टि की क्रमशः रचना में करोड़ों वर्ष लगते हैं । वस्तुतः यह वाक्य कुरान के सर्वशक्तिमान् खुदा की दृष्टि से लिखा गया है । अतः यहाँ 'और' पाठ ही संगत है ।
४. सं० ३४ में इसके आगे 'काम' पद बढ़ाया है ।

[मुर्दा कभी जीवित नहीं हो सकता]

यदि वह मुर्दों को जिलाता है, तो प्रथम मारा ही क्यों ? क्या अब[1] भी मुर्दा जीवित हो सकता है वा नहीं ? यदि नहीं हो सकता है, तो मुर्देपन को बुरा क्यों समझता है ?

[जीवों का शीघ्र न्याय क्यों न किया ?]

और कयामत की रात तक मृतक जीव किस मुसलमान के घर में रहेंगे ? और दौड़ासुपुर्द खुदा ने विना अपराध क्यों रक्खा ? शीघ्र न्याय क्यों न किया ? ऐसी-ऐसी बातों से ईश्वरता में बट्टा लगता है ॥१३८॥

[सब कुछ खुदा की मर्जी से]

१३९—वास्ते उसके कुञ्जियाँ हैं आसमानों की और पृथिवी की, खोलता है भोजन जिसके वास्ते चाहता है, और तंग करता है ॥ उत्पन्न करता है जो कुछ चाहता है, और देता है जिसको चाहे बेटियाँ, और देता है जिसको चाहे बेटे ॥ वा मिला देता है उनको बेटे और बेटियाँ, और कर देता है जिसको चाहे बाँझ ॥ और नहीं है शक्ति किसी आदमी की कि बात करे उससे अल्लाह, परन्तु जी में डालने कर, वा पीछे परदे* के से, वा भेजे फरिश्ते पैगाम लानेवाला ॥

—मं० ६ । सि० २५ । सू० ४२ । आ० १२, ४९-५१

और इसलिए वे वही कहेंगे जो अल्लाह उनसे कहलवाना चाहेगा और अल्लाह अपने पहले से लिखे रक्खे या गर्दनों में लटकाये फैसले की पुष्टि में अपनी इच्छानुसार उनसे बयान दिलवायेगा । इसमें देहांगों का कोई दोष नहीं था ।

लौकिक कानून के अनुसार तो असाधारण रूप से देर तक दौरा सुपुर्द (Under trial) रक्खे गये अपराधियों को प्राय: मुक्त कर दिया जाता है । फिर इन लोगों को तो बैरकों में रक्खा जाता है और आवश्यकतानुसार भोजन-छादन की व्यवस्था की जाती है । पर खुदा के यहाँ तो उन्हें छः फुट की कबरों में बन्द कर दिया जाता है, जहाँ भूखे प्यासे रहकर बेचारे गल सड़ जाते हैं । फिर भी लाखों करोड़ों वर्ष तक उस हालत में रहने के बाद कयामत के दिन उनकी पेशी होती है और उनके कर्म करने से पहले पैदायश के साथ ही नियत सजा सुना दी जाती है । इससे बढ़कर अन्याय और अत्याचार की कल्पना कौन कर सकता है ?

१३९. कुरान में उपलब्ध अनेक वचनों से यह तो सिद्ध है कि उसका खुदा सर्वथा स्वेच्छाचारी है, विधि-विधान का उसके यहाँ कोई मूल्य नहीं है । परन्तु आत्महत्या करके अपने स्थान पर दूसरा ईश्वर न वह बनाना चाहेगा और न बना सकेगा । इंगलैंड के प्रसिद्ध दार्शनिक बर्टरण्ड रसेल ने कहा है—'He cannot make another God or make himself not exist' (History of Western Philosophy

---

*इस आयत के भाष्य 'तफसीर हुसैनी' में लिखा है कि—"मुहम्मद साहब दो पर्दों में थे । और खुदा की आवाज सुनी । एक पर्दा जरी का था, दूसरा श्वेत मोतियों का । और दोनों परदों के बीच सत्तर वर्ष चलने योग्य मार्ग था ।" बुद्धिमान् लोग इस बात को विचारें कि यह खुदा है वा परदे की ओट बात करनेवाली स्त्री ? इन लोगों ने तो ईश्वर ही की दुर्दशा कर डाली । कहाँ वेद तथा उपनिषदादि सद्ग्रन्थों में प्रतिपादित शुद्ध परमात्मा, और कहाँ कुरानोक्त परदे की ओट से बात करनेवाला खुदा ? सच तो यह है कि अरब के अविद्वान् लोग थे । उत्तम बात लाते किसके घर से ? द० स०

---

१. सं० ३ में 'आप' बनाया, यही पाठ आगे भी छप रहा है ।

[ताले और कुञ्जियों की खुदा को क्या जरूरत थी ?]

समीक्षक—खुदा के पास कुञ्जियों का भण्डार भरा होगा। क्योंकि सब ठिकाने के ताले खोलने होते होंगे ? यह लड़कपन की बात है।

[विना पाप-पुण्य के फल देना अन्याय]

क्या जिसको चाहता है, उसको विना पुण्य कर्म के ऐश्वर्य देता है ? और विना पाप के तंग करता है ? यदि ऐसा है, तो वह बड़ा अन्यायकारी है।

[बेटे-बेटियाँ देने की बात औरतों को फँसाने की चाल]

अब देखिये कुरान बनानेवाले की चतुराई कि जिससे स्त्रीजन भी मोहित होके फसें। यदि जो कुछ चाहता है उत्पन्न करता है, तो दूसरे खुदा को भी उत्पन्न कर सकता है वा नहीं ? यदि नहीं कर सकता तो सर्वशक्तिमत्ता यहाँ पर अटक गई। भला मनुष्यों को तो जिसको चाहे बेटे बेटियाँ खुदा देता है, परन्तु मुरगे मच्छी सूअर आदि, जिनके बहुत बेटा-बेटियाँ होती हैं, कौन देता है ? और स्त्री-पुरुष के समागम विना क्यों नहीं देता ? किसी को अपनी इच्छा से बाँझ रखके दुःख क्यों देता है ?

[तब तो फरिश्ते और पैगम्बर खूब स्वार्थ साधते होंगे]

वाह ! क्या खुदा तेजस्वी है कि उसके सामने कोई बात ही नहीं कर सकता ? परन्तु उससे पहिले कहा है कि परदा डालके बात कर सकता है, वा फरिश्ते लोग खुदा से बात करते हैं, अथवा पैगम्बर। जो ऐसी बात है, तो फरिश्ते और पैगम्बर खूब अपना मतलब सिद्ध करते होंगे ?

P. 480). और प्लेटो का कथन है—'Well, but can you imagine God will be willing to put forth a plantom of himself'. (See Plato in Five Great Dialogues, P. 285).

ईसाई और मुसलमान दोनों यह मानते हैं कि ईसामसीह का जन्म कुंवारी मरियम से पुरुष के उससे समागम के विना हुआ था, यद्यपि सृष्टिक्रम के विरुद्ध होने से यह नितान्त मिथ्या है। परन्तु इन लोगों ने स्वयं ईश्वर को स्वनिर्मित नियमों के विपरीत आचरण करने का दोषी बना दिया है। मुसलमान पुनर्जन्म को नहीं मानते, इसलिए पूर्वजन्म में किये कर्मों के फलस्वरूप किसी स्त्री का बाँझ होना उपपन्न नहीं होता। स्त्री का बाँझ होना उसके लिए जीवन का सबसे बड़ा अभिशाप है। इसके लिए दोषी खुदा महापापी है। मुसलमानों का खुदा स्वयं इतना गुनहगार है कि वह इन्सान का सामना करने का साहस नहीं जुटा पाता। इसलिए वह मुँह छिपाकर परदे के पीछे से या फरिश्तों के माध्यम से बात करता है। बिचौलियों का काम तो दोनों पक्षों को वहका-सिखाकर अपना उल्लू सीधा करना होता है। परिणामतः दोनों परेशान रहते हैं।

इस आयत के भाष्य तफसीर हुसैनी में लिखा है कि 'मुहम्मद साहब दो परदों में थे और खुदा की आवाज सुनी। एक परदा जरी का था और दूसरा श्वेत मोतियों का और दोनों परदों के बीच में सत्तर वर्ष चलने योग्य (इसका खुलासा नहीं किया) मार्ग था।' बुद्धिमान् लोग इस बात को विचारें कि यह खुदा है या परदे की ओट बात करनेवाली स्त्री ? इन लोगों ने तो ईश्वर का स्वरूप ही बिगाड़ दिया। कहाँ वेद तथा उपनिषदादि सद्ग्रन्थों में प्रतिपादित 'शुद्धमपापविद्धम्' ब्रह्म, कहाँ परदे की ओट में बात करनेवाला खुदा। ग्रन्थकार का बार-बार यह लिखना कि, अरब के लोग जंगली और अविद्वान्

[खुदा सर्वव्यापक है, तो परदे से बात करना व्यर्थ]

यदि कोई कहे खुदा सर्वज्ञ सर्वव्यापक है, 'तो परदे से बात करना अथवा डाक के तुल्य खबर मँगाके जानना' लिखना व्यर्थ है। और जो ऐसा है तो वह खुदा ही नहीं। किन्तु कोई चालाक मनुष्य होगा। इसलिये यह कुरान ईश्वरकृत कभी नहीं हो सकता ॥१३९॥

[ईसा का प्रमाण के साथ आना]

१४०—और जब आया ईसा साथ प्रमाण प्रत्यक्ष के ॥

—मं० ६। सि० २५। सू० ४३। आ० ६३

[फिर कुरान इंलील में परस्पर विरोध क्यों ?]

समीक्षक—यदि ईसा भी भेजा हुआ खुदा का है, तो उसके उपदेश से विरुद्ध कुरान खुदा ने क्यों बनाया ? और कुरान से विरुद्ध इञ्जील[1] है। इसीलिए ये किताबें ईश्वरकृत नहीं हैं ॥१४०॥

[दोजख में घसीटना; विवाह कराना]

१४१—पकड़ो उसको बस घसीटो उसको बीचों-बीच दोजख के ॥ इसी प्रकार रहेंगे और ब्याह देंगे उनको साथ गोरियों अच्छी आँखवालियाँ के ॥ —मं० ६। सि० २५। सू० ४४। आ० ४७, ५४

[ये काम तो मनुष्य के हैं, खुदा इन्हें कैसे कर सकता है ?]

समीक्षक—वाह क्या खुदा !! न्यायकारी होकर प्राणियों को पकड़ाता और घसीटवाता है ? जब मुसलमानों का खुदा ही ऐसा है, तो उसके उपासक मुसलमान अनाथ निर्बलों को पकड़ें-घसीटें, तो इसमें क्या आश्चर्य है ? और वह संसारी मनुष्यों के समान विवाह भी कराता है ? जानो कि मुसलमानों का पुरोहित ही है ॥१४१॥

थे, अक्षरशः सत्य है। इसलिए वे 'अन्धेनैव नीयमाना यथान्धाः' की तरह भेड़चाल चल रहे थे। मुहम्मद साहब उनकी अज्ञानता को भुनाकर पैगम्बर बन बैठे।'

१४०. कुरान और बाइबल में बहुत-सी बातों में समानता होने पर भी अनेक बातों में विरोध है। सबसे बड़ा अन्तर तो इस बात में है कि बाइबल के अनुसार ईसामसीह खुदा का इकलौता बेटा था, कुरान में इसका जोरदार खण्डन किया गया है। बाइबल का पैगम्बर आजीवन ब्रह्मचारी रहा, किन्तु कुरान के पैगम्बर ने एक दर्जन के लगभग विवाह किये। रखैलों और लौंडियों की संख्या इनसे अतिरिक्त थी।

१४१. यह आदेश किसे दिया गया, इसका वर्णन नहीं। नरक की पीड़ा का वर्णन करते-करते अनायास यह हुक्म आ गया (सम्भवतः यह आदेश फरिश्तों को किया गया होगा और दण्ड की उग्रता के जोश में अल्लामियाँ स्वयं भी घसीटने लग गये होंगे)। यहाँ मुसलिमों और अमुसलिमों में अन्तर करते हुए खुदा ने जहाँ अमुसलिमों को दोजख में घसीटा जाने का हुक्म दिया है, वहाँ मुसलिमों के विवाह कराने का आश्वासन दिया है। न मुसलिमों ने पुरस्कार के योग्य कोई कार्य किया और न अमुसलिमों ने दण्ड के योग्य कोई अपराध। वस्तुतः कुरान के खुदा के यहाँ विवेक और न्याय के लिए स्थान नहीं।

---

१. सं० २ में 'अञ्जील' पाठ है।

[काफिरों की गर्दन काटो; बहिश्त में क्या कुछ है]

१४२—बस जब तुम मिलो उन लोगों से कि काफिर हुए, बस मारो गर्दन उनकी, यहाँ तक कि जब चूर कर दो उनको, बस दृढ़ करो कैद करना ॥

और बहुत बस्तियाँ हैं कि वे बहुत कठिन थीं शक्ति में बस्ती तेरी से, जिसने[1] निकाल दिया तुझको, मारा हमने उसको, बस न कोई हुआ सहाय देनेवाला उनका ॥

तारीफ उस बहिश्त की कि प्रतिज्ञा किये गये हैं परहेजगार बीच उसके नहरें हैं बिन बिगड़े पानी की, और नहरें हैं दूध की कि नहीं बदला मजा उनका, और नहरें हैं शराब की मजा देनेवाली पीनेवालों को[2], और नहरें हैं[3] शहद साफ किये गये की[4], और वास्ते उनके बीच उसके मेवे हैं प्रत्येक प्रकार के[5], दान[6] मालिक उनके से ॥ —मं० ६ । सि० २६ । सू० ४७ । आ० ४, १३, १५

[काफिरों को मारने की बातें अशान्ति फैलानेवाली हैं]

समीक्षक—इसीसे यह कुरान खुदा और मुसलमान गदर मचाने, सबको दुःख देने, और अपना मतलब साधनेवाले दयाहीन हैं। जैसा यहाँ लिखा है वैसा ही दूसरा कोई दूसरे मत-वाला मुसलमानों पर करे, तो मुसलमानों को वैसा ही दुःख, जैसा कि अन्य को देते हैं, हो वा नहीं ?

[मुहम्मद साहब के विरोधियों को मारना पक्षपात]

और खुदा बड़ा पक्षपाती है कि जिन्होंने मुहम्मद साहब को निकाल[7] दिया, उनको खुदा ने मारा।

[उस बहिश्त में यहाँ से विशेष कुछ नहीं]

भला जिसमें शुद्ध पानी दूध मद्य और शहद की नहरें हैं, वह संसार से अधिक हो सकता है ? और दूध की नहरें कभी हो सकती हैं, क्योंकि वह थोड़े समय में बिगड़ जाता है। इसीलिए बुद्धिमान् लोग कुरान के मत को नहीं मानते ॥१४२॥

[पृथिवी का हिलाना, पहाड़ का उड़ाना; बहिश्त में क्या मिलेगा ?]

१४३—जबकि हिलाई जावेगी पृथिवी हिलाये जाने पर ॥ और उड़ाए जावेंगे पहाड़ उड़ाये

---

१४२. इसी (सूरते मुहम्मद) में लिखा है—'जो मोमिन हैं उनका खुदा कारसाज है और काफिरों का कोई कारसाज नहीं' (आयत ११)। ऐसे खुदा को 'रब्बुल आलमीन' कहना इस शब्द का अपमान करना है।

१४३. 'गिरने तारों के'—मौ० मुहम्मद अली ने अनुवाद सर्वथा बदल दिया है—'किन्तु, नहीं,

---

१. समीक्षा इसी पाठ के अनुसार है। कुरान के अनुसार 'जिससे'।
२. सं० २ से ७ तक 'को' शुद्ध पाठ है। सं० ८ से ३५ तक 'के' अपपाठ है।
३. 'और नहरें हैं' पाठ सं० २ से ३३ तक नहीं है। पाठ आवश्यक है।
४. सं० २ से ८ तक 'की' शुद्ध पाठ है। सं० ९ से ३३ तक 'कि' अपपाठ है।
५. सं० २ में 'से' पाठ है।
६. अर्थात् क्षमा ईश्वर की।
७. अर्थात् जिन शत्रुओं ने मक्के से निकाल दिया।

जाने पर ।। बस हो जावेंगे भुनगे टुकड़े-टुकड़े ।। बस साहब दाहिनी ओर वाले, क्या हैं साहब दाहिनी ओर के ।। और बाईं ओरवाले, क्या हैं बाईं ओर के ।।

ऊपर पलङ्ग सोने के तारों से बुने हुए हैं ।। तकिये किये हुए हैं ऊपर उनके आमने-सामने ।। और फिरेंगे ऊपर उनके लड़के सदा रहनेवाले ।। साथ आबखोरों के और आफताबों के, और प्यालों के शराब साफ से ।। नहीं माथा दुखाये जावेंगे उससे, और न विरुद्ध बोलेंगे ।। और मेवे उस किस्म से कि पसन्द करें ।। और गोश्त जानवर पक्षियों के उस किस्म से कि पसन्द करें ।।

और वास्ते उनके औरतें हैं अच्छी आँखोंवाली ।। मानिन्द मोतियों छिपाये हुओं की ।। और लगे हुए बिछौने बड़े ।। निश्चय हमने उत्पन्न किया है औरतों को, एक प्रकार का उत्पन्न करना है।[1] बस किया है हमने उनको कुमारी ।। सुहागवालियाँ बराबर अवस्थावालियाँ ।।

बस भरनेवाले हो उससे पेटों को ।। बस कसम खाता हूँ मैं साथ गिरने तारों के ।।

—मं० ७ । सि० २७ । सू० ५६ । आ० ४-६, ८, ९, १५-२३, ३४-३७, ५३, ७५

[क्या पृथिवी स्थिर है ? पहाड़ क्या पक्षी हैं, जो उड़ेंगे ?]

समीक्षक—अब देखिये, कुरान बनानेवाले की लीला को। भला पृथिवी तो हिलती[2] ही रहती है, उस समय भी हिलती रहेगी। इससे यह सिद्ध होता है कि कुरान बनानेवाला पृथिवी को स्थिर जानता था। भला पहाड़ों को क्या पक्षीवत् उड़ा देगा ? यदि भुनगे हो जावेंगे, तो भी सूक्ष्म शरीरधारी रहेंगे, तो फिर उनका दूसरा जन्म क्यों नहीं ?

[खुदा के दायें-बायें कैसे खड़े हुए हैं ?]

वाहजी ? जो खुदा शरीरधारी न होता, तो उसके दाहिनी ओर और बाईं ओर कैसे खड़े हो सकते ?

[फिर तो बहिश्त में बड़ी दुर्गति होती होगी ?]

जब वहाँ पलङ्ग सोने के तारों से बुने हुए हैं, तो बढ़ई-सुनार भी वहाँ रहते होंगे ? और खटमल काटते होंगे, जो उनको रात्रि में सोने भी नहीं देते होंगे ? क्या वे तकिये लगाकर निकम्मे बहिश्त में बैठे ही रहते हैं, वा कुछ काम किया करते हैं ?

[अपच से रोग भी बढ़ते होंगे]

यदि बैठे ही रहते होंगे, तो उनको अन्न-पचन न होने से वे रोगी होकर शीघ्र मर भी जाते होंगे ? और जो काम किया करते होंगे, तो जैसे मेहनत-मजदूरी यहाँ करते हैं, वैसे ही वहाँ परिश्रम करके निर्वाह करते होंगे। फिर यहाँ से वहाँ बहिश्त में विशेष क्या है, कुछ भी नहीं ?।

मैं (कुरान के) भाग साक्ष्य के लिए बुलाता हूँ। 'नज्म' का अर्थ 'तारा' के स्थान में 'कुरान का भाग' किया है। मूल में आये 'कसम' शब्द का अर्थ 'बुलाता हूँ' किया है और 'मवाकेऽ' शब्द का अर्थ छोड़ दिया है। मौलवी साहब ने यह सब प्रपंच आक्षेप का समाधान करने के लिए किया है। किन्तु थेगलियाँ लगाने से

---

१. इसका भाव यह है कि हमने ऐसी औरतों को उत्पन्न किया है, जिनके शरीर का उठान विशेष प्रकार का है।

२. अर्थात् घूमती रहती है।

[उन लड़कों के माँ-बाप भी होंगे, और रिश्तेदार भी ?]

यदि वहाँ लड़के सदा रहते हैं, तो उनके माँ-बाप भी रहते होंगे, और सासू-श्वसुर भी रहते होंगे ? तब तो बड़ा भारी शहर बसता होगा ? फिर मलमूत्रादि के बढ़ने से रोग भी बहुत-से होते होंगे ?

[वहाँ कसाइयों की दुकानें भी होंगी; पशु-पक्षी भी होंगे ?]

क्योंकि जब मेवे खावेंगे, गिलासों में पानी पीवेंगे, और प्यालों में मद्य पीवेंगे, न उनका सिर दूखेगा, और न कोई विरुद्ध बोलेगा, यथेष्ट मेवा खावेंगे और जानवरों तथा पक्षियों के माँस भी खावेंगे, तो अनेक प्रकार के दुःख, पक्षी, जानवर वहाँ होंगे, हत्या होगी और हाड़ जहाँ-तहाँ बिखरे रहेंगे। और कसाइयों की दुकानें भी होंगी। वाह ! क्या कहना इनके बहिश्त की प्रशंसा ? कि वह अरब देश से भी बढ़कर दीखती है !!!

[मद्यमाँस खायेंगे तो स्त्रियाँ और लौंडे भी वहाँ होने ही चाहियें]

और जो मद्य-माँस पी-खाके उन्मत्त होते हैं, इसीलिए अच्छी-अच्छी स्त्रियाँ और लौंडे भी वहाँ अवश्य रहने चाहियें। नहीं तो ऐसे नशेबाजों के सिर में गर्मी चढ़के प्रमत्त हो जावें। अवश्य बहुत स्त्री-पुरुषों के बैठने-सोने के लिए बिछौने बड़े-बड़े चाहियें। जब खुदा कुमारियों को बहिश्त में उत्पन्न करता है, तभी तो कुमारे लड़कों को भी उत्पन्न करता है।

[वहाँ के लड़कों का विवाह कुमारियों से क्यों न किया ?]

भला कुमारियों का तो विवाह जो यहाँ से उम्मेदवार होकर गये हैं उनके साथ खुदा ने लिखा, पर उन सदा रहनेवाले लड़कों का किन्हीं कुमारियों के साथ विवाह न लिखा। तो क्या वे भी उन्हीं उम्मेदवारों के साथ कुमारीवत् दे दिये जायेंगे ? इसकी व्यवस्था कुछ भी न लिखी। यह खुदा में बड़ी भूल क्यों हुई ?

[स्त्री पुरुष की बराबर आयु में शादी होना ठीक नहीं]

यदि बराबर अवस्थावाली सुहागिन स्त्रियाँ पतियों को पाके बहिश्त में रहती हैं, तो ठीक नहीं हुआ। क्योंकि स्त्रियों से पुरुष का आयु दूना ढाईगुना[1] चाहिए। यह तो मुसलमानों के बहिश्त की कथा है।

[दोजख में कटीले वृक्षों के काँटे भी लगते होंगे ?]

और नरकवाले सिहोड़ अर्थात् थोर के वृक्षों को खाके पेट भरेंगे, तो कण्टक वृक्ष भी दोजख में होंगे, तो काँटे भी लगते होंगे। और गर्म पानी पीयेंगे, इत्यादि दुःख दोजख में पावेंगे।

क्या आदिमध्यान्तशून्य थान की सिलाई हो सकती है ? 'सिंहोड़'—यहाँ ५६वीं सूरत की ५३वीं आयत की ओर संकेत है—'अलबत्ता खानेवाले हो दरख्त मेंडके से, पस भरनेवाले हों उससे पेटों को, फिर पीनेवाले हों ऊपर उसके गर्म पानी।

---

१. निश्चय ही यहाँ पाठ-भ्रष्ट हुआ है। ग्रन्थकार ने इसी ग्रन्थ में तथा 'संस्कारविधि' में कन्या से वर की आयु ड्योढ़ी से दूनी तक ही लिखी है—१६ वर्ष की कन्या २५ वर्ष का वर,.. २४ वर्ष की कन्या ४८ वर्ष का वर।

[कसम खाना झूंठों का काम है]

कसम का खाना प्रायः झूंठों का काम है, सच्चों का नहीं। यदि खुदा ही कसम खाता है, तो वह भी झूंठ से अलग नहीं हो सकता ॥१४३॥

[अल्लाह के मित्र]

१४४—निश्चय अल्लाह मित्र रखता है उन लोगों को कि लड़ते हैं बीच मार्ग उसके के ॥
—मं० ७। सि० २८। सू० ६१। आ० ४

[मजहब के नाम पर लड़ाई कराना अनुचित]

समीक्षक—वाह! ठीक है ऐसी-ऐसी बातों का उपदेश करके बिचारे अरब देशवासियों को सब से लड़ाके शत्रु बनाकर परस्पर दुःख दिलाया। और मजहब का झण्डा खड़ा करके लड़ाई फैलावे[1]। ऐसे को कोई बुद्धिमान् ईश्वर कभी नहीं मान सकते। जो जाति में विरोध बढ़ावे, वही सबको दुःखदाता होता है ॥१४४॥

[रसूल के घरेलू मामलों में हस्तक्षेप]

१४५—ऐ नबी! क्यों हराम करता है उस वस्तु को, कि हलाल किया है खुदा ने तेरे लिए, चाहता है तू प्रसन्नता बीबियों अपनी की। और अल्लाह क्षमा करनेवाला दयालु है ॥

जल्दी है मालिक उसका[2] जो वह तुमको छोड़ देवे तो, यह कि उसको तुमसे अच्छी मुसलमान और ईमानवालियाँ बीबियाँ बदल दे, सेवा करनेवालियाँ, तोबाः करनेवालियाँ, भक्ति करनेवालियाँ, रोजा रखनेवालियाँ, पुरुष देखी हुई और बिन देखी हुई ॥ —मं० ७। सि० २८। सू० ६६। आ० १, ५

[पैगम्बर के घरेलू झगड़े से खुदा भी चिन्तित]

समीक्षक—ध्यान देकर देखना चाहिए कि खुदा क्या हुआ, मुहम्मद साहब के घर का भीतरी और बाहरी प्रबन्ध करनेवाला, भृत्य ठहरा!!

[पहली आयत पर दो रोचक कहानियाँ]

प्रथम आयत पर दो कहानियाँ हैं। **एक तो यह कि**—मुहम्मद साहब को शहद का शर्बत प्रिय था। उनकी कई बीबियाँ थीं। उनमें से एक के घर पीने में देर लगी, तो दूसरियों को असह्य प्रतीत हुआ। उनके कहने-सुनने के पीछे मुहम्मद साहब सौगन्द खा गये कि हम न पीवेंगे।

---

१४४. जो लड़ाई में हार जाने पर आगे की लड़ाइयों में मुहम्मद साहब की ओर से लड़ने को तैयार हो जाते थे, उन्हें मुहम्मद साहब कत्ल न करके अपने लश्कर में शामिल करके साथ ले लेते थे (द्रष्टव्य—बद्र की लड़ाई)। इसलाम का प्रसार दुनिया भर में इसी प्रकार हुआ था।

१४५. 'जल्दी' का अर्थ यहाँ 'जल्दी करनेवाला' होना चाहिए। इस आयत की समीक्षा में उद्धृत अवतरणों से सिद्ध है कि ग्रन्थकार ने केवल कुरानानुवाद से ही इसलाम को नहीं जाना, प्रत्युत कुरानी आयतों की 'शाने नजूल' (अवतरण हेतु) का भी गहराई से अध्ययन किया था। मौ० अशरफ अली ने बुखारी मुसलिम के आधार पर पहली कहानी का कुछ विस्तार से उल्लेख किया है। संक्षेप में वह इस प्रकार है—

---

१. 'फैलाई' चाहिये।

२. अर्थात् उसके खुदा को क्या देर लगेगी?

दूसरी यह कि—उनकी कई बीवियों में से एक की बारी थी। उसके यहाँ रात्रि को गये, तो वह न थी। अपने बाप के यहाँ गई थी। मुहम्मद साहब ने एक लौंडी अर्थात् दासी को बुलाकर पवित्र किया। जब बीवी को इसकी खबर मिली, तो अप्रसन्न हो गई। तब मुहम्मद साहब ने सौगन्द खाई कि मैं ऐसा न करूँगा। और बीवी से भी कह दिया कि तुम किसी से यह बात मत कहना। बीवी ने स्वीकार किया कि न कहूँगी। फिर उन्होंने दूसरी बीवी से जा कहा। इस पर यह आयत खुदा ने उतारी—"जिस वस्तु को हमने तेरे पर हलाल किया, उसको तू हराम क्यों करता है?"

[अनेक स्त्रियों के कारण पैगम्बर साहब की दुर्दशा]

बुद्धिमान् लोग विचारें कि भला कहीं खुदा भी किसी के घर का निमटेरा करता फिरता है? और मुहम्मद साहब के तो आचरण इन बातों से प्रगट ही हैं। क्योंकि जो अनेक स्त्रियों को रक्खे, वह ईश्वर का भक्त वा पैगम्बर कैसे हो सके?

[अपनी औरतों को छोड़ बाँदियों में फँसना लज्जाजनक]

और जो एक स्त्री का पक्षपात से अपमान करे, और दूसरी का मान्य करे, वह पक्षपाती होकर अधर्मी क्यों नहीं? और जो बहुत-सी स्त्रियों से भी सन्तुष्ट न होकर बाँदियों के साथ फँसे, उसको लज्जा भय और धर्म कहाँ से रहे? किसी ने कहा है कि—'कामातुराणां न भयं न लज्जा'। जो कामी मनुष्य हैं, उनको अधर्म से भय वा लज्जा नहीं होती।

[खुदा पैगम्बर के घरेलू झगड़े में सरपंच]

और इनका खुदा भी मुहम्मद साहब की स्त्रियों और पैगम्बर के झगड़े का फैसला करने में जानो सरपंच बना है। अब बुद्धिमान् लोग विचार लें कि यह कुरान विद्वान् वा ईश्वरकृत है, वा किसी अविद्वान् मतलबसिन्धु का बनाया? स्पष्ट विदित हो जायेगा।

[पैगम्बर के लिये नयी बीवियाँ लाने की पेशकश]

और दूसरी आयत से प्रतीत होता है कि मुहम्मद साहब से उनकी कोई बीवी अप्रसन्न हो गई होगी। उस पर खुदा ने यह आयत उतारकर उसको धमकाया होगा, कि यदि तू गड़बड़ करेगी, और मुहम्मद साहब तुझे छोड़ देंगे, तो उनको उनका खुदा तुझसे अच्छी बीवियाँ देगा, कि जो पुरुष से न मिली हों। जिस मनुष्य की तनिक-सी बुद्धि है, वह विचार ले सकता है कि ये खुदा-बुदा के काम हैं, वा अपने प्रयोजन-सिद्धि के? ऐसी-ऐसी बातों से ठीक सिद्ध है कि खुदा कोई नहीं कहता था, केवल देशकाल देखकर

'अच्छी बीवियाँ देगा'—एक बार मुहम्मद साहब की सभी बीवियों ने अधिक और अच्छे भोजन, वस्त्र आदि की माँगों को लेकर हड़ताल कर दी थी और घर को छोड़कर मसजिद में रहने लगीं थीं। तब अल्लाताला ने बीच में पड़कर हड़ताल तुड़वाई थी। अल्लाताला ने अपने पैगम्बर का पक्ष लिया और बीवियों को हुक्म सुना दिया कि मुहम्मद साहब तुम्हें जिस हाल में रक्खें, उसी हाल में तुम्हें उनके पास रहना होगा। विवश होकर बीवियों ने अपनी हड़ताल बिना शर्त वापस ले ली। हड़ताल का नेतत्व मुहम्मद साहब की सबसे छोटी और सुन्दर बीवी हजरत आयशा ने किया था। मौ० अशरफ अली ने इसे शाने नजूल टिप्पणी में इस प्रकार लिखा है—'उम्नरा से बायत है कि रसूल-अल्लाह सललल्ला अलैह व सल्लम् पर गैरत के सबब सब बीवियाँ आपकी इकट्ठी हो गईं तो मैंने कहा कि

अपने प्रयोजन के सिद्ध होने के लिये खुदा की तरफ से मुहम्मद साहब कह देते थे। जो लोग खुदा की तर्फ लगाते हैं, उनको हम क्या सब बुद्धिमान् यही कहेंगे कि—खुदा क्या ठहरा, मानो मुहम्मद साहब के लिये बीवियाँ लानेवाला नाई[1] ठहरा ॥१४५॥

[काफिरों से झगड़ने की आज्ञा]

१४६—ऐ नबी ! झगड़ा कर काफिरों और गुप्त शत्रुओं से, और सख्ती कर ऊपर उनके ॥
—मं० ७। सि० २८। सू० ६६। आ० ६

[लड़ाई के लिये मुसलमानों को उकसाना अदूरदर्शिता]

समीक्षक—देखिये मुसलमानों के खुदा की लीला ! अन्य मतवालों से लड़ने के लिये पैगम्बर और मुसलमानों को उचकाता है। इसीलिये मुसलमान लोग उपद्रव करने में प्रवृत्त रहते हैं। परमात्मा मुसलमानों पर कृपादृष्टि करे, जिससे ये लोग उपद्रव करना छोड़के सबसे मित्रता से वर्त्तें ॥१४६॥

[आठ जनों द्वारा खुदा का तख्त उठाना; हाथों में कर्मपत्र देना]

१४७—फट जावेगा आसमान बस वह उस दिन सुस्त होगा ॥ और फरिश्ते होंगे ऊपर किनारों उसके के, और उठावेंगे तख्त मालिक तेरे का ऊपर अपने, उस दिन आठ जन ॥

उस दिन सामने लाये जाओगे तुम, न छिपी रहेगी कोई बात छिपी हुई ॥ बस जो कोई दिया गया कर्मपत्र अपना बीच दाहिने हाथ अपने के, बस कहेगा—लो पढ़ो कर्मपत्र मेरा ॥ और जो कोई दिया कर्मपत्र बीच बायें हाथ अपने के, बस कहेगा—हाय न दिया गया होता मैं कर्मपत्र अपना ॥
—मं० ७। सि० २९। सू० ६९। आ० १६-१९, २५

अगर हजरत तुमको तलाक दे दें तो अल्ला तुम्हारे एवज (बदले) में तुमसे अच्छी बीवियाँ अता कर देगा। तब यह आयत नाजिल हुई।'

१४६. 'मित्रस्य चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्'—प्राणिमात्र के प्रति अपनी मित्रवत् दृष्टि से प्रेरित ग्रन्थकार का परमेश्वर से मुसलमानों को हिंसक वृत्ति से विरत करने की प्रार्थना करना उनकी उदार एवं उदात्त भावना का परिचायक है।

१४७. इसके विवेचन के लिए द्रष्टव्य समीक्ष्यांश संख्या १३६। 'आठ कहारों से उठवाना'—मौलवी मुहम्मद अली ने टिप्पणी में लिखा है—'अर्श को उठानेवालों की आठ संख्या से तात्पर्य सूरते फातिहा में वर्णित खुदा के चार मुख्य विशेषण प्रतीत होते हैं, जो कयामत दिन दुगने यानी आठ हो जाते हैं।' सूरते फातिहा में वर्णित खुदा के चार विशेषण हैं—

(१) Rabbul-Alamin (Lord of all Being=समस्त संसार का स्वामी)।
(२) Al-Rahman (The compassionate=दयालु)।
(३) Al-Rahim (The Merciful=दयावान्)।
(४) Malik-i-Yawmiddin (Master of the Day of Recompense=कयामत के दिन का

---

१. ५०-६० वर्ष पूर्व तक लड़के-लड़कियों का विवाह कराने में नाई प्रमुख भागीदार होते थे। नाइयों को स्वभावतः चतुर माना जाता था (नराणां नापितो धूर्तः)। अतएव विवाह-सम्बन्ध प्रायः नाई ही तय कर देते थे। उसी परिपाटी के अनुसार उक्त लेख है।

[क्या आसमान भी कभी फट सकता है ?]

समीक्षक—वाह ! क्या फिलासफी और न्याय की बात है ? भला आकाश भी कभी फट सकता है ? क्या वह वस्त्र के समान है, जो फट जावे ? यदि ऊपर के लोक को आसमान कहते हैं, तो यह बात विद्या से विरुद्ध है ।

[कुरान का खुदा निःसन्देह शरीरधारी है]

अब कुरान का खुदा शरीरधारी होने में कुछ सन्दिग्ध न रहा । क्योंकि तख्त पर बैठना, आठ कहारों से उठवाना, विना मूर्त्तिमान् के कुछ भी नहीं हो सकता । और सामने वा पीछे भी आना-जाना मूर्त्तिमान् ही का हो सकता है । जब वह मूर्त्तिमान् है, तो एकदेशी होने से सर्वज्ञ सर्वव्यापक सर्वशक्तिमान् नहीं हो सकता । और सब जीवों के सब कर्मों को कभी नहीं जान सकता ।

[कर्मपत्र बाँचके न्याय करना सर्वज्ञ का काम नहीं]

यह बड़े आश्चर्य की बात है कि पुण्यात्माओं के दाहने हाथ में पत्र देना, बचवाना, बहिश्त में भेजना । और पापात्माओं के बाँये हाथ में देना कर्मपत्र का, नरक में भेजना कर्मपत्र बाँचके न्याय करना, भला यह व्यवहार सर्वज्ञ का हो सकता है ? कदापि नहीं । यह सब लीला लड़केपन की है ॥१४७॥

[पचास हजार वर्ष का दिन; कबरों में से निकलकर दौड़ना]

१४८—चढ़ते[1] हैं फरिश्ते और रूह तर्फ उसकी, वह अजाब होगा बीच उस दिन के कि है परिमाण उसका पचास हजार वर्ष ॥ जब निकलेंगे कबरों में से दौड़ते हुए, मानों कि वह बुतों के स्थानों की ओर दौड़ते हैं ॥ —मं० ७ । सि० २९ । सू० ७० । आ० ४, ४३

मालिक) । मौलवी साहब का कहना है कि कयामत के दिन ये आठ हो जाते हैं । परन्तु मौ० अब्बुल कलाम आजाद का कहना है कि ये चार के तीन हो जाते हैं । वह अपने तरजुमान-अलकुरान में फरमाते हैं—Since Al-Rahman and Al-Rahim are but two facets of one and the same attribute, the above four attributes may be reduced to three, viz. Rububiyat (Providence), Rahmat (Mercy) and adalat (Justice). किसकी बात सही माने ? यदि दुर्जनतोष न्याय से हम यह मान भी लें कि आठ कहार दुगुंने हुए चार गुण हैं (चार गुणों के नाम दिये हैं, शेष चार के नाम मौ० मुहम्मद अली ने नहीं दिये, जबकि मौलाना आजाद ने चार के तीन बनाकर उनके नाम भी दिये हैं और तदर्थ युक्ति भी दी है) तो प्रश्न उठता है कि वह तख्त है, जिस पर अल्लाताला बैठे हैं ? गुणों द्वारा उठाये जाने का क्या अर्थ है ? फिर खुदा के श्रेष्ठ गुणों की उपमा कहारों से देना क्या उसका अपमान करना नहीं है । वास्तव में मौ० मुहम्मद अली का यह कथन सर्वथा निराधार और युक्तिशून्य है ।

१४८. यहाँ (सूरते नआरिज आयत ४) में पचास हजार वर्ष अवधि बताई है । परन्तु अन्यत्र (सूरते सिजदा आयत ४) लिखा है—'एक दिन में जिसकी अवधि हजार वर्ष है, तुम्हारे हिसाब से । तफसीरे जलालैन में इस आयत पर लिखा है—'आशय हजार बरस के दिन से कयामत का दिन है ।'

---

१. सं० ३२-३३ में 'कहते' अपपाठ छपा है ।

[पचास हजार वर्ष तक खुदा फरिश्ते आदि क्या करेंगे ?]

समीक्षक—यदि पचास हज़ार वर्ष दिन का परिमाण है, तो पचास हजार वर्ष की रात्रि क्यों नहीं ? यदि उतनी बड़ी रात्रि नहीं है, तो उतना बड़ा दिन कभी नहीं हो सकता। क्या पचास हजार वर्षों तक खुदा फरिश्ते और कर्मपत्रवाले खड़े वा बैठे वा जागते ही रहेंगे ? यदि ऐसा है, तो सब रोगी होकर पुनः मर ही जायेंगे।

[क्या आजकल खुदा की कचहरी बन्द है ?]

क्या कबरों से निकलकर खुदा की कचहरी की ओर दौड़ेंगे ? उनके पास सम्मन कबरों में क्योंकर पहुँचेंगे ? और उन विचारों को, जो कि पुण्यात्मा वा पापात्मा हैं, इतने समय तक सभी को कबरों में दौरेसुपुर्द कैद क्यों रक्खा ? और आजकल खुदा की कचहरी बन्ध होगी, और खुदा तथा फरिश्ते निकम्मे बैठे होंगे ? अथवा क्या काम करते होंगे ? अपने-अपने स्थानों में बैठे इधर-उधर घूमते, सोते, नाच-तमाशा देखते वा ऐश-आराम करते होंगे। ऐसा अन्धेर किसी के राज्य में न होगा। ऐसी-ऐसी बातों को सिवाय जङ्गलियों के दूसरा कौन मानेगा ? ॥१४८॥

[ऊपर तले सात आसमान बनाना]

१४९—निश्चय उत्पन्न किया तुमको कई प्रकार से ॥ क्या नहीं देखा तुमने कैसे उत्पन्न किया अल्लाह ने सात आसमानों को ऊपर तले ॥ और किया चाँद को बीच उनके[1] प्रकाशक और किया सूर्य को दीपक ॥ —मं० ७। सि० २९। सू० ७१। आ० १४-१६

इन दो संख्याओं में भेद का निवारण कैसे हो ? हो सकता है जो अवधि मनुष्यों की गिनती में एक हजार वर्ष होती है, वह किसी और सृष्टि की गिनती में पचास हजार वर्ष हो जाती हो। तफसीरे जलालैन में इस गाँठ को यह कहकर खोला है—'पहली सूरत में पचास हजार साल फरमाया है, कयामत की यह लम्बाई काफिरों को अनुभव होगी। इन पचास हजार वर्षों में होगा क्या ?' मूजिह कुरान तो पचास हजार पर कहता है—'जब से मुर्दे निकलेंगे, जब तक दोजख बहिश्त भर जायेंगे। हो सकता है अलाटमेंट की कार्यवाही होने में वहाँ भी औपचारिकताएँ पूरी होने में काफी समय लगता हो।' तफसीरे हुसैनी में इस विषय में लिखा है– कयामत के मैदान में पचास ठहराव होंगे। लोगों को हर ठहराव पर एक हजार साल रोका जायेगा। इन ठहरावों का वर्णन जवाहरत्तफासीर में मिलता है। मो० फतेह मुहम्मद खाँ ने अपने अनुवाद में लिखा है—'उस दिन कबरों से निकलकर ये इस तरह दौड़ेंगे जैसे शिकारी शिकार के जाल की तरफ दौड़ते हैं।'

१४९. जो ऊपर नीला-नीला दिखाई देता है, वह आकाश नहीं है। उसे आकाश कहना अपनी मूर्खता का विज्ञापन करना है। जो वास्तव में आकाश है वह अनादि, अनुत्पन्न, निराकार तथा विभु (सर्वव्यापक) है। उपनिषद् में जब उसे उत्पन्न कहा जाता है (एतस्मादाकाशः सम्भूतः) तो इसलिए कि सर्गारम्भ में वह व्यवहार में आने के कारण उत्पन्न-सा प्रतीत होता है, वास्तव में वह उत्पन्न नहीं होता। निराकार, विभु और अनुत्पन्न होने के कारण उसके प्रसंग में संख्या का प्रयोग नहीं हो सकता। इसलिए सात आसमानों (आकाशों) का बनाया जाना उपपन्न नहीं होता। 'कई प्रकार से उत्पन्न होने' का अर्थ

---

१. सं० २ में 'उसके' पाठ है।

[जीवों को उत्पन्न किया, तो बहिश्त में सदा कैसे रहेंगे ?]

समीक्षक—यदि जीवों को खुदा ने उत्पन्न किया है, तो वे नित्य अमर कभी नहीं रह सकते। फिर बहिश्त में सदा क्योंकर रह सकेंगे ? जो उत्पन्न होता है, वह वस्तु अवश्य नष्ट हो जाता है।

[आकाश निराकार पदार्थ है, उसे ऊपर तले कैसे बनाया ?]

आसमान को खुदा ऊपर तले कैसे बना सकता है ? क्योंकि वह निराकार और विभु पदार्थ है। यदि दूसरी चीज का नाम आकाश रखते हो, तो भी उसका आकाश नाम रखना व्यर्थ है।

[सात आसमानों में प्रकाश कैसे ?]

यदि ऊपर-तले आसमानों को बनाया है, तो उन सबके बीच में चाँद सूर्य्य कभी नहीं रह सकते। जो बीच में रक्खा जाय, तो एक ऊपर और एक नीचे का पदार्थ प्रकाशित होता है।[1] दूसरे से लेकर सब में अन्धकार रहना चाहिए। ऐसा नहीं दीखता, इसलिये यह बात सर्वथा मिथ्या है ॥१४९॥

[अल्लाह के साथ किसी को मत पुकारो]

१५०—यह कि मस्जिदें वास्ते अल्लाह के हैं, बस मत पुकारो साथ अल्लाह के किसी को ॥

—मं० ७। सि० २९। सू० ७२। आ० १८

[कलमे में पैगम्बर का नाम खुदा के साथ कैसे ?]

समीक्षक—यदि यह बात सत्य है, तो मुसलमान लोग 'लाइलाह इल्लिल्ला: मुहम्मदरसूलल्ला:' इस कलमे में खुदा के साथ[2] मुहम्मद साहब को क्यों पुकारते हैं ? यह बात कुरान से विरुद्ध है। और जो विरुद्ध नहीं करते, तो इस कुरान की बात को झूंठ करते हैं।

[मस्जिदें खुदा का घर हैं, तो यह बुतपरस्ती है]

जब मस्जिदें खुदा के घर हैं, तो मुसलमान महाबुत्परस्त हुए। क्योंकि जैसे पुरानी जैनी छोटी-सी मूर्त्ति को ईश्वर का घर मानने से बुत्परस्त ठहरते हैं, वैसे ये लोग क्यों नहीं ? ॥१५०॥

कई रूपों या विभिन्न योनियों में उत्पन्न होना है तो ठीक है, अन्यथा नहीं। मौ० मुहम्मद अली ने इसका अर्थ 'Through various grades' (विविध प्रकार के स्तरों से) किया है और नीचे टिप्पणी में विकासवाद (Theory evolution) का समर्थन किया है। सृष्टि-रचना-विषयक इसलामी मान्यता के अनुसार तो 'कुनफयकुन' (हो, और हो गया) कहते ही तत्क्षण सृष्टि बनकर खड़ी हो जाती है। उसमें विकासवाद के लिए कोई स्थान नहीं है। वास्तव में विकासवाद और 'कुनफयकुन्' में ३६ का सम्बन्ध होने से वे एक-दूसरे के घोर विरोधी हैं।

१५०. जब तक 'मुहम्मदर्रसूलिल्लाह' न बोला या पढ़ा जाये तब तक कलमा आधा रहता है। सच तो यह है कि मुसलानों से अधिक बुत्परस्त और शिरक (प्रभुसत्ता में मिलावट) माननेवाला कोई नहीं है। 'मसजिदें वास्ते अल्लाह' सम्बन्धी आक्षेप से बचने के लिए मौ० अशरफ अली ने 'मसजिदें'

---

१. सं० २ से ३३ तक 'प्रकाशित है' पाठ है। सं० ३४ में 'है' को 'हो' बना दिया।

२. सं० २ में 'साथी' पाठ है। सं० ३४ में विना टिप्पणी के बदला।

[सूर्य चाँद को इकट्ठा करना]

१५१—इकट्ठा किया जावेगा सूर्य्य और चाँद ॥ —मं० ७। सि० २९। सू० ७५। आ० ९

[सूर्य और चाँद कभी इकट्ठे नहीं हो सकते]

समीक्षक—भला सूर्य्य-चाँद कभी इकट्ठे हो सकते हैं ? देखिये, यह कितनी बेसमझ की बात है। और सूर्य्य-चन्द्र ही के इकट्ठे करने में क्या प्रयोजन था ? अन्य सब लोकों को इकट्ठे न करने में क्या युक्ति है ? ऐसी-ऐसी असम्भव बातें परमेश्वरकृत कभी हो सकती हैं ? विना अविद्वानों के अन्य किसी विद्वान् की भी नहीं होतीं ॥१५१॥

[बहिश्त में लड़के; खुदा का उन्हें शराब पिलाना]

१५२—और फिरेंगे ऊपर उनके लड़के सदा रहनेवाले, जब देखेगा तू उनको, अनुमान करेगा तू उनको मोती बिखरे हुए॥ और पहनाये जावेंगे कंगन चाँदी के, और पिलावेगा उनको रब उनका शराब पवित्र ॥ —मं० ७। सि० २९। सू० ७६। आ० १९, २१

[बहिश्त में लड़के किसलिये हैं ?]

समीक्षक—क्योंजी मोती के वर्ण-से लड़के किसलिये वहाँ रक्खे जाते हैं ? क्या जवान लोग सेवा वा स्त्रीजन उनको तृप्त नहीं कर सकतीं ? क्या आश्चर्य है कि जो यह महा बुरा कर्म लड़कों के साथ दुष्टजन करते हैं, उसका मूल यही कुरान का वचन हो ?

[खुदा स्वयं शराब पिलावेगा, तो उसकी महत्ता समाप्त]

और बहिश्त में स्वामी-सेवक भाव होने से स्वामी को आनन्द और सेवक को परिश्रम होने से दु:ख तथा पक्षपात क्यों है ? और जब खुदा ही मद्य पिलावेगा, तो वह भी उनका सेवकवत् ठहरेगा। फिर खुदा की बड़ाई क्योंकर रह सकेगी ?

की जगह 'सिजदे' पाठान्तर करके इस प्रकार अर्थ किया है—'और जितने सिजदे हैं वे सब अल्लाह का हक्क हैं।' परन्तु मूल अरबी में 'मसाजिद' शब्द है, जो 'मसजिद' का बहुवचन है। और मसजिद का अर्थ है 'सिजदा करने का स्थान।' इसलिए मौ० अशरफ अली का अर्थ नितान्त अशुद्ध है।

१५१. मौ० अशरफ अली ने आक्षेप से बचने के लिए अर्थ किया है—'और सूरज और चाँद एक हालत के हो जायेंगे।' परन्तु मूल में 'जुमेअ' शब्द है, जिसका अर्थ 'इकट्ठा करना' ही होता है, एक-सा करना नहीं। फिर वे दोनों एक से कैसे हो सकते हैं ? सूरज आग का गोला है और इस प्रकार स्वतः प्रकाशस्वरूप है, जबकि चाँद सूरज का मोहताज है अर्थात् सूरज के प्रकाश से प्रकाशित होता है। चाँद तो पृथिवी से भी छोटा है जबकि सूरज पृथिवी से तेरह लाख गुणा बड़ा है। इसलिए सूरज और चाँद न एक हो सकते हैं, न एक जैसे। मौलवी मुहम्मद अली ने अर्थ तो ठीक किया है, किन्तु टिप्पणी में लिखा है—'अर्थात् काले पड़ जाते हैं।' यह अर्थ कैसे बना, यह नहीं बताया।

१५२. आक्षेप का परिहार करने के लिए मौ० अशरफ अली ने आयत के अर्थ में 'सदा रहने वाले' की जगह 'सदा लड़के रहनेवाले' कर दिया है। ग्रन्थकार के प्रश्न (आक्षेप) इतने सटीक हैं कि उनमें से किसी का भी समाधान सम्भव नहीं।

[वहाँ बाल-बच्चे भी होंगे, तो वे जीव कहाँ से आये ?]

और वहाँ बहिश्त में स्त्री-पुरुष का समागम और गर्भ स्थित और लड़केवाले भी होते हैं, वा नहीं ? यदि नहीं होते, तो उनका विषयसेवन करना व्यर्थ हुआ। और जो होते हैं, तो वे जीव कहाँ से आये ?

[विना खुदा की सेवा के बहिश्त की प्राप्ति अन्याय]

और विना खुदा की सेवा के बहिश्त में क्यों जन्मे ? यदि जन्मे तो उनको विना ईमान लाने और खुदा की भक्ति करने से बहिश्त मुफ्त मिल गया। किन्हीं विचारों को ईमान लाने और किन्हीं को विना धर्म के सुख मिल जाय, इससे दूसरा बड़ा अन्याय कौन-सा होगा ? ॥१५२॥

[कर्मानुसार फल]

१५३—बदला दिये जावेंगे कर्मानुसार। और प्याले भरे हुए हैं। जिस दिन खड़े होंगे रूह और फ़रिश्ते सफ बाँधकर। —मं० ७। सि० ३०। सू० ७८। आ० २६, ३४, ३८

[फरिश्तों हूरों और लड़कों को बहिश्त कैसे मिला ?]

समीक्षक—यदि कर्मानुसार फल दिया जाता, तो सदा बहिश्त में रहनेवाले हूरें, फरिश्ते और मोती के सदृश लड़कों को कौन कर्म के अनुसार सदा के लिए बहिश्त मिला ? जब प्याले भर-भर शराब पीयेंगे, तो मस्त होकर क्यों न लड़ेंगे ?

[क्या फरिश्ते जीवों को सजा देंगे ?]

रूह नाम यहाँ एक फरिश्ते का है,[1] जो सब फरिश्तों से बड़ा है। क्या खुदा रूह तथा अन्य फरिश्तों को पंक्तिबद्ध खड़े करके पलटन बाँधेगा ? क्या पलटन से सब जीवों को सजा दिलावेगा ? और खुदा उस समय खड़ा होगा वा बैठा ? यदि कयामत तक खुदा अपनी सब पलटन एकत्र करके शैतान को पकड़ ले, तो उसका राज्य निष्कण्टक हो जाय। इसका नाम खुदाई है !! ॥१५३॥

[सूर्य को लपेटना; आसमान की खाल उतारना]

१५४—जबकि सूर्य लपेटा जावे। और जब कि तारे गदले हो जावें॥ और जबकि पहाड़ चलाये जावें॥ और जब आसमान की खाल उतारी जावे॥

—मं० ७। सि० ३०। सू० ८१। आ० १-३, ११

---

१५३. कर्मानुसार—शाहजी ने यहाँ 'मुआफिक' शब्द लिखा है, जिसका अनुवाद होता है 'अनुकूल'। उसी को ग्रन्थकार ने 'कर्मानुसार' लिखा है। मौ० मुहम्मद अली ने 'Requittal corresponding' (कर्मानुसार बदला) लिखा है। बार-बार मोती जैसे लड़कों, बड़ी-बड़ी आँखोंवाली औरतों व शराब के प्यालों की चर्चा से कुरान भरी पड़ी है।

१५४. मौ० अशरफ अली ने अनुवाद बदलकर लिखा है—'जब आफताब (सूर्य) बेनूर हो जायेगा और सितारे टूटकर गिर जायेंगे।' यह परिवर्त्तन ग्रन्थकार की इस आपत्ति को देखकर किया है कि 'गोल सूर्य लपेटा कैसे जा सकता है और तारे गदले कैसे हो सकते हैं ?' परन्तु गुण-गुणी का समवाय

१. रूह=हज़रत जिबरईल। देखो—समीक्ष्यांश १६१ की समीक्षा पर टिप्पणी।

[ये सब बातें जङ्गलीपन की हैं]

समीक्षक—यह बड़ी बेसमझ की बात है कि—गोल सूर्यलोक लपेटा जावेगा ? और तारे गदले क्योंकर हो सकेंगे ? और पहाड़ जड़ होने से कैसे चलेंगे ? और आकाश को क्या पशु समझा कि उसकी खाल निकाली जावेगी ? यह बड़ी ही बेसमझ और जङ्गलीपन की बात है ॥१५४॥

[आसमान का फटना; तारों का झड़ना; दरिया को चीरना]

१५५—और जबकि आसमान फट जावे। और जब तारे झड़ जावें। और जब दर्या चीरे जावें। और जब कबरें जिलाकर उठाई जावें॥　　—मं० ७। सि० ३०। सू० ८२। आ० १-४

[ये सब बातें भी बालकों के सदृश हैं]

समीक्षक—वाहजी कुरान के बनानेवाले फिलासफर ! आकाश को क्योंकर फाड़ सकेगा ? और तारों को कैसे झाड़ सकेगा ? और दर्या क्या लकड़ी है, जो चीर डालेगा ? और कबरें क्या मुर्दे हैं, जो जिला सकेगा ? ये सब बातें लड़कों के सदृश हैं ॥१५५॥

सम्बन्ध होता है। सूर्य प्रकाशस्वरूप है, उसके रहते उसका गुण 'प्रकाश' उससे नहीं छूट सकता। फिर, जब सूरज लपेट दिया जायेगा तो प्रकाश न रहने से रात हो जायेगी। इसी विचार से ग्रन्थकार ने कयामत का दिन नहीं 'रात' लिखा है। जिनका नाम ही अचल है, वे पहाड़ चल कैसे सकते हैं ? अन्तिम आयत पर तफ्सीरे जलालैन में लिखा है—'आसमान की खाल ऐसे उतारी जायेगी जैसे बकरी का चमड़ा उतारा जाता है। किन्तु क्या जैसे बकरी की खाल दिखाई देती है, वैसे क्या आसमान की खाल दिखाई देती है ? जब आसमान का कोई शरीर ही नहीं है तो उस पर खाल कहाँ होगी जो उतारी जायेगी। मौ० अशरफ अली ने 'आसमान की खाल उतारी जायेगी' के बदले 'जब आसमान खुल जायेगा' अनुवाद किया है। परन्तु आक्षेप के शब्द भले ही बदल जायें, वह फिर भी बना हुआ है—क्या इस समय आसमान लिपटा हुआ है या बन्द पड़ा है, जो कयामत के दिन खुल जायेगा ?

१५५ कबरों का अर्थ यहाँ भाष्यकारों ने कबरों में लेटे मुर्दे किया है। वे मुर्दे शरीरों के साथ उठेंगे या उनके विना ? विना शरीर के उठने का कोई अर्थ नहीं बनता। इसलाम का सिद्धान्त तो यही कहता है कि शरीरों के साथ ही उठेंगे। परन्तु वे शरीर अब कहाँ धरे हैं ? वे तो कभी के मिट्टी हो चुके। और जब तक कयामत आयेगी तब तक कबरें भी नहीं रहेंगी। उनकी जगह खेत, सड़कें और मकान बन चुके होंगे। हाँ, कुछ ताजा दफनाये हुए शरीर जरूर मिल सकेंगे, जिनमें कीड़े चल रहे होंगे। वे शरीर खुदा के दरबार (अदालत) में पहुचेंगे तो बदबू के मारे खुदा उन्हें भगा देगा या चिढ़कर सीधे दोजख में भेज देगा।

जो चाँद और सूरज इकट्ठे किये गये थे, तफसीरे हुसैनी के अनुसार उन्हें चीरे हुए दरिया में डाल दिया जायेगा। पृथिवी से तेरह लाख गुणा बड़े सूर्य को जिस दरिया में डाला जायेगा, वह दरिया कितना बड़ा होगा और कहाँ होगा, कुरान का लेखक यह बताना भूल गया। जब सूरज, चाँद और सितारे नहीं रहे तो घुप अंधेरी रात हो जायेगी। इतनी अंधेरी रात में जब मुर्दे कबरों से उठकर खुदा के पास जाने के लिए दौड़ेंगे तो रास्ता न सूझने के कारण ठोकरें खाते हुए या एक-दूसरे से टकराते हुए गिरेंगे, जहाँ उन्हें उठानेवाला भी कोई नहीं होगा। क्या यह अच्छा न होता कि न्यायालय में फैसला सुनाने और फैसले के अनुसार रूहों को बहिश्त और दोजख में भेजने के बाद सूरज, चाँद आदि को दरिया में डाला जाता। परन्तु इसलाम में अक्ल का दखल कहाँ ?

[बुर्जोंवाला आसमान]

१५६—कसम है आसमान बुर्जोंवाले की ॥ किन्तु वह कुरान है बड़ा ॥ बीच लोह महफूफ (रक्षित) के ।
—मं० ७ । सि० ३० । सू० ८५ । आ० १, २१, २२

[आकाश को किले के समान बुर्जोंवाला बताना अज्ञानता]

समीक्षक—इस कुरान के बनानेवाले ने भूगोल-खगोल कुछ भी नहीं पढ़ा था। नहीं तो आकाश को किले के समान बुर्जोंवाला क्यों कहता ? यदि मेषादि राशियों को बुर्ज कहता है, तो अन्य बुर्ज क्यों नहीं ? इसलिये यह बुर्ज नहीं हैं, किन्तु सब तारे लोक हैं।

[फिर तो वह खुदा भी विद्यारहित ही होगा]

क्या वह कुरान खुदा के पास है ? यदि यह कुरान उसका किया है, तो वह भी विद्या और युक्ति से विरुद्ध अविद्या से अधिक भरा होगा ॥१५६॥

[खुदा का मकर के बदले मकर करना]

१५७—निश्चय वे मकर करते हैं एक मकर ॥ और मैं भी मकर करता हूँ एक मकर ॥
—मं० ८ । सि० ३० । सू० ८६ । आ० १५, १६

[क्या खुदा भी ठगी करने लगा ?]

समीक्षक—'मकर' कहते हैं ठगपन को। क्या खुदा भी ठग है ? और क्या चोरी का जवाब चोरी, और झूंठ का जवाब झूंठ है ? क्या कोई चोर भले आदमी के घर में चोरी करे, तो क्या भले आदमी को चाहिये कि उसके घर में जाके चोरी करे ? वाह वाहजी ! ! कुरान के बनानेवाले ॥१५७॥

[खुदा और फरिश्तों का आना]

१५८—और जब आवेगा मालिक तेरा, और फरिश्ते पंक्ति बाँधके। और लाया जावेगा उस दिन दोजख को।
—मं० ७ । सि० ३० । सू० ८६ । आ० २२, २३

---

१५६. 'बुर्ज' शब्द के दो अर्थ हैं—१. चाँद की मंजिलें, २. आसमान के दरवाजे। ग्रन्थकार ने 'तफसीरे हुसैनी' में दिये इन दोनों अर्थों के अनुसार अपनी आपत्ति प्रस्तुत की है, जो सर्वथा युक्तियुक्त और विज्ञानसम्मत है।

१५७. 'मकर' निश्चय ही ठगी या कपट को कहते हैं, किन्तु आलोचना से बचने के लिए भाष्यकारों ने इसका अर्थ 'तदबीर' किया है। परन्तु जब खुदा के बहुत से कारनामे ठगी, कपट, पक्षपात अन्याय और झूठ के हों तो शब्द का मनमाना अर्थ करके उसे कैसे बचाया जा सकता है।

१५८. 'दोजख को लाया जायेगा'—मौ० फतेह मुहम्मद खाँ ने इसका अनुवाद इस प्रकार किया है—'और दोजख उस दिन हाजिर की जायेगी।' सजा दिये जाने पर अपराधियों को जेलखाने में तो सब कहीं ले जाया जाता है, किन्तु अपराधियों की भाँति जेलखाने (दोजख) को अदालत में हाजिर होना पड़े, यह कहीं, कभी देखने-सुनने-पढ़ने में नहीं आया। ऐसी उपहासास्पद और बेहूदा बात जिस कुरान में भरी हों, वह अपने मुँह मियाँ मिट्ठू बनते हुए कहे—'यह किताब बकवास व झूठ नहीं, बल्कि यह कुरान अजीमुश्शान है' (सूरते अल बुरुज आयत २१) और 'यह कलाम (हक को बातिल से=सच

[क्या दोजख भी इधर-उधर ले जाने की वस्तु है ?]

समीक्षक—कहो जी, जैसे कोटवाल वा सेनाध्यक्ष अपनी सेना को लेकर पंक्ति बाँध फिरा करे, वैसा ही इनका खुदा है ? क्या दोजख को घड़ा-सा समझा है, कि जिसको उठाके जहाँ चाहे वहाँ ले जावे ? यदि इतना छोटा है, तो असंख्य कैदी उसमें कैसे समा सकेंगे ? ॥१५८॥

[खुदा की ऊँटनी; मरी डालना]

१५९—बस कहा था वास्ते उनके पैगम्बर खुदा के ने, रक्षा करो ऊँटनी खुदा की को, और पानी पिलाना उसके को ॥ बस झुठलाया उसको, बस पाँव काटे उसके, बस मरी डाली ऊपर उनके, रब उनके ने ॥ —मं० ७। सि० ३०। सू० ९१। आ० १३, १४

[खुदा ऊँटनी क्यों रखता है; कयामत से पूर्व ही मरी कैसे ?]

समीक्षक—क्या खुदा भी ऊँटनी पर चढ़के सैल किया करता है ? नहीं तो किसलिये रक्खी ? और विना कयामत के अपना नियम तोड़ उनपर मरी रोग क्यों डाला ? यदि डाला तो उनको दण्ड किया। फिर कयामत की रात में न्याय, और उस रात का होना झूँठ समझा जायेगा। इस ऊँटनी के लेख से यह अनुमान होता है कि अरब देश में ऊँट-ऊँटनी के सिवाय दूसरी सवारी कम होती हैं। इससे सिद्ध होता है कि किसी अरबदेशी ने कुरान बनाया है ॥१५९॥

को झूठ से) जुदा करनेवाला है, और बेहूंदा बात नहीं' (सूरते अल तारिक आयत १३-१४), इससे बड़ा झूठ और क्या होगा ?

१५९. कुरान की पहली सूरत की पहली आयत में खुदा को 'रब्बुल आलमीन'—सारे संसार के रब्ब कहा है और मौलाना अब्बुल कलाम आजाद ने 'रब्ब' का अर्थ 'Nourisher' (पालक) बताया है। इसकी व्याख्या में उन्होंने लिखा है—'Since the need for nourishment is the basic need of human life, the meaning given to the term Rabb as Nourisher may be regarded as a natural first approach to God'. समस्त संसार के पालक व रक्षक खुदा की ऊँटनी को दाना-पानी देकर उसकी रक्षा करने के लिए हजरत मुहम्मद को समूद कौम के कजाज नामक एक आदमी से प्रार्थना करनी पड़ी, यही अपने-आप में कम आश्चर्यजनक नहीं, किन्तु उस आदमी ने पैगम्बर के अनुरोध को ठुकराकर खुदा की ऊँटनी की टाँगे काट डालीं। सर्वशक्तिमान् खुदा और उनके पैगम्बर का इतना अपमान !

कहा जाता है, खुदा ने हजरत सालेह को एक ऊँटनी मोजजे के तौर पर दी थी, जो एक बड़े पत्थर में से निकाली गई थी। हजरत सालेह ने उन लोगों से कहा कि यह ऊँटनी खुदा की है। उसको बुरी तरह हाथ न लगाना और जो दिन उसके पानी पीने का हो, उससे छेड़खानी न करना। उन्होंने यह बात न मानी और एक बदबख्त आदमी ने उसके पाँव काट दिये। खुदा ने उनके गुनाह की वजह से उन पर अजाब नाजिल किया और सबको हलाक कर दिया।

कुर्बानी के नाम पर और अन्यथा एक-एक दिन में करोड़ों पशुओं की हत्या को इसलाम में धार्मिक कृत्य माना जाता है। परन्तु यह एक बड़े आदमी (खुदा) की ऊँटनी ठहरी, इसलिए उसकी हत्या का बदला एक पूरी कौम की हत्या करके लिया गया।

[बाल पकड़कर घसीटना]

१६०—यों जो न रुकेगा, अवश्य घसीटेंगे उसको हम साथ बालों माथे के। वह माथा कि झूंठा है और अपराधी। हम बुलावेंगे फरिश्ते दोजख के को।

—मं० ७। सि० ३०। सू० ९६। आ० १५, १६, १८

[माथा भी कहीं झूठा वा अपराधी होता है ?]

समीक्षक—इस नीच चपरासियों के काम घसीटने से भी खुदा न बचा। भला माथा भी कभी झूंठा और अपराधी हो सकता है, सिवाय जीव के ? भला यह कभी खुदा हो सकता है, कि जैसे जेलखाने के दरोगा को बुलावा भेजे ? ॥१६०॥

[कुरान को अँधेरी रात में उतारा]

१६१—निश्चय उतारा हमने कुरान को बीच रात कदर के ॥ और क्या जाने तू क्या है रात कदर की ॥ उतरते हैं फरिश्ते और पवित्रात्मा बीच उसके, साथ आज्ञा मालिक अपने के, वास्ते हर काम के ॥

—मं० ७। सि० ३०। सू० ९७। आ० १, २, ४

[एक ही रात में कुरान उतरने की बात असत्य]

समीक्षक—यदि एक ही रात में कुरान उतारा, तो वह आयत अर्थात् 'उस समय में उतरी और धीरे-धीरे उतारा'[1] यह बात सत्य क्योंकर हो सकेगी ? और रात्रि अन्धेरी है, इसमें क्या पूंछना है ?

[हर काम फरिश्तों से ही क्यों कराता है ?]

हम लिख आये हैं[2], ऊपर-नीचे कुछ भी नहीं हो सकता। और यहाँ लिखते हैं कि फरिश्ते और पवित्रात्मा खुदा के हुक्म से संसार का प्रबन्ध करने के लिए आते हैं। इससे स्पष्ट हुआ कि खुदा मनुष्यवत् एकदेशी है।

---

१६०. मनुष्य के अंगों ने कयामत के दिन न्यायलय में गवाही दी थी। सरकारी गवाह थे। जैसा उनको सिखाया गया वैसा उन्होंने वोल दिया। परम्परानुसार उन्हें मुक्त कर दिया गया। माथा बुद्धि का रूप है। उसे घसीट कर दण्ड दिये जाने से अनुमान होता है कि सम्भव है, नास्तिकों के सिद्धान्त के अनुसार वहाँ भी बुद्धि को कर्त्ता माना जाता हो, क्योंकि आत्मा के स्वरूप का स्पष्ट वर्णन कुरान में नहीं मिलता। तब यदि शरीर के दूसरे अंगों की भाँति पेशानी को भी आत्मा से पृथक् माना जाता हो तो अचेतन होने से उसे दण्ड नहीं दिया जाना चाहिए।

१६१. कुरान मजीद एक ही बार नाजिल नहीं हुआ, बल्कि पारा-पारा नाजिल हुआ है। पहले-पहल वह शबे कद्र में नाजिल हुआ। इस आयत (सूरते कद्र ३) से मालूम होता है कि शबे कद्र रमजान के महीने में होती है। यह मालूम नहीं कि यह रात किस तारीख को होती है। लेकिन सही हदीसों से इतना साबित है कि हजरत रमजान की आखिरी दहाई में एतिकाफ फरमाया करते थे और

---

१. इसका भाव यह है कि कुरान के व्याख्याता कौन-सी आयत कब उतरी, इसका वर्णन करते हैं। उससे जाना जाता है कि कुरान एक साथ नहीं उतरा, समय-समय पर उतरता रहा। यहाँ एक रात में कुरान उतारने का उल्लेख है।

२. यहाँ पाठ कुछ खण्डित-सा प्रतीत होता है।

[यह पवित्रात्मा चौथा और कहां से आ गया ?]

अब तक देखा था कि खुदा फरिश्ते और पैगम्बर तीन की कथा है। अब एक पवित्रात्मा चौथा निकल पड़ा। अब न जाने यह चौथा पवित्रात्मा क्या है[1] ? यह तो ईसाइयों के मत अर्थात् पिता पुत्र और पवित्रात्मा तीन के मानने से चौथा भी बढ़ गया।

[पवित्रात्मा पृथक् है, तो क्या शेष तीन वैसे नहीं हैं ?]

यदि कहो कि हम इन तीनों को खुदा नहीं मानते, ऐसा भी हो, परन्तु जब पवित्रात्मा पृथक् है, तो खुदा फरिश्ते और पैगम्बर को पवित्रात्मा कहना चाहिए वा नहीं ? यदि पवित्रात्मा है, तो एक ही का नाम पवित्रात्मा क्यों ? और घोड़े आदि जानवर[2], रात-दिन और कुरान आदि की[3] खुदा कसमें खाता है। कसमें खाना भले लोगों का काम नहीं ॥१६१॥

[कुरान के विषय में लेखक के संक्षिप्त विचार]

अब इस कुरान के विषय को लिखके बुद्धिमानों के सम्मुख स्थापित करता हूँ कि यह पुस्तक कैसा है ? मुझसे पूछो तो यह किताब न ईश्वर न विद्वान् की बनाई, और न विद्या की हो सकती है।

यह तो बहुत थोड़ा-सा दोष प्रकट किया। इसलिए कि लोग धोखे में पड़कर अपना जन्म व्यर्थ न गमावें। जो कुछ इसमें थोड़ा-सा सत्य है, वह वेदादि विद्यापुस्तकों के अनुकूल होने से जैसे मुझको ग्राह्य है,-वैसे अन्य भी मजहब के हठ और पक्षपातरहित विद्वानों और बुद्धिमानों को ग्राह्य है। इसके विना जो कुछ इसमें है, वह सब अविद्या भ्रमजाल[4] और मनुष्य के आत्मा को पशुवत् बनाकर शान्ति भङ्ग कराके उपद्रव मचा, मनुष्यों में विद्रोह फैला परस्पर दुःखोन्नति करनेवाला विषय है। और पुनरुक्तदोष का तो कुरान जानो भण्डार ही है।

परमात्मा सब मनुष्यों पर कृपा करे कि सबसे सब प्रीति, परस्पर मेल, और एक-दूसरे के सुख की उन्नति करने में प्रवृत्त हों। जैसे मैं अपना वा दूसरे मतमतान्तरों का दोष पक्षपातरहित होकर प्रकाशित करता हूँ, इसी प्रकार यदि सब विद्वान् लोग करें, तो क्या कठिनता है कि परस्पर का विरोध छूट, मेल होकर आनन्द में एकमत होके सत्य की प्राप्ति सिद्ध हो ?

यह थोड़ा-सा कुरान के विषय में लिखा। इसको बुद्धिमान् धार्मिक लोग ग्रन्थकार के अभिप्राय

जितना एहतिमाम इस दहाई में फरमाते, और में न फरमाते थे। ज्यादातर तफसीर लिखनेवालों का खयाल है कि इस रात का अमल हजार महीने के अमल से अफजल है। मौ० मुहम्मद फारूख खाँ के अनुसार पूरे कुरान के उतरने में २६ वर्ष का समय लगा। मौ० अब्बुल कलाम आजाद ने लिखा है— 'The Quran, be it remembered, was delivered piece-meal during the course of 23 years'. (Tarjuman Al-Quran, P. XXXIV).

---

१. मुहम्मद फारूखखाँ ने टिप्पणी में रूह (=पवित्रात्मा) से हजरत जिब्रईल का निर्देश करके स्वयं भी संशय व्यक्त किया है।
२. यहाँ भी पाठ खण्डित हुआ है।
३. सं० २ में 'के' अपपाठ है।
४. सं० २ में 'जान' अपपाठ है।

को समझ लाभ लेवें। यदि कहीं भ्रम से अन्यथा लिखा गया हो, तो उसको शुद्ध कर लेवें।[1]

[मुसलमान मत की बात तो वेदों में भी लिखी है ?]

अब एक बात यह शेष है कि बहुत-से मुसलमान ऐसा कहा करते, और लिखा वा छपवाया[2] करते हैं कि हमारे मजहब की बात अथर्ववेद में लिखी है। इसका यह उत्तर है कि अथर्ववेद में इस बात का नाम-निशान भी नहीं है।

प्रश्न—क्या तुमने सब अथर्ववेद देखा है ? यदि देखा है, तो अल्लोपनिषद् देखो। यह साक्षात् उसमें लिखी है। फिर क्यों कहते हो कि अथर्ववेद में मुसलमानों का नाम-निशान भी नहीं है ?

अथाऽल्लोपनिषदं व्याख्यास्यामः

अस्माल्लां इल्ले मित्रावरुणा दिव्यानि धत्ते।
इल्लल्ले वरुणो राजा पुनर्द्दुदुः।
हया मित्रो इल्लां इल्लल्ले इल्लां वरुणो मित्रस्तेजस्कामः ॥१॥
होतारमिन्द्रो होतारमिन्द्र महासुरिन्द्राः।
अल्लो ज्येष्ठं श्रेष्ठं परमं पूर्णं ब्रह्माणं अल्लाम् ॥२॥
अल्लोरसूल महामदरकबरस्य अल्लो अल्लाम् ॥३॥
आदल्लाबूकमेककम्। अल्लाबूक निखातकम् ॥४॥
अल्लो यज्ञेन हुतहुत्वा। अल्ला सूर्य्यचन्द्रसर्वनक्षत्राः ॥५॥
अल्ला ऋषीणां सर्वदिव्यां इन्द्राय पूर्वं माया परममन्तरिक्षाः ॥६॥
अल्लः पृथिव्या अन्तरिक्षं विश्वरूपम् ॥७॥

अल्लोपनिषद्—इस विषय में अभी तक भी भ्रान्ति बनी हुई है। सन् १९४७ के मई मास में महात्मा गाँधी दिल्ली में ठहरे हुए थे। उनकी प्रार्थना में वेद, उपनिषद्, गीता, बाइबल आदि के अंश नियमित रूप से बोले जाते थे। कुछ लोगों को यह अच्छा नहीं लगता था। गाँधी जी तक भी यह बात पहुँची। तब एक दिन उन्होंने प्रार्थनोपरान्त प्रवचन में कहा—'हिन्दू लोग मेरी प्रार्थना में कुरान शरीफ की आयतों के पढ़े जाने पर क्यों आपत्ति करते हैं, जबकि उनकी उपनिषदों में एक अल्लोपनिषद् भी है।' इस पर मैंने (भाष्यकार ने) गाँधीजी को भेजे अपने एक पत्र में लिखा—'आपका यह कहना ठीक नहीं है कि हिन्दुओं द्वारा मान्य उपनिषदों में एक अल्लोपनिषद् भी है। मेरे पास वर्त्तमान में उपलब्ध सभी १०८ उपनिषदें हैं। उनमें अल्लोपनिषद् नाम की कोई उपनिषद् नहीं है। उसका अता-पता देने की कृपा करें।'

---

१. सत्यार्थ-प्रकाश (संशोधित संस्करण) के इस सन्दर्भ से स्पष्ट है कि ग्रन्थकार इस सन्दर्भ पर १४वाँ समुल्लास पूर्ण कर चुके थे। पाण्डुलिपि (=रफ काफी) में इस सन्दर्भ के पश्चात् ही 'इसके आगे स्वमन्तव्यामन्तव्य का···' वाक्य है। अगला सन्दर्भ रफ कापी के पश्चात् बढ़ाया गया है। देखो—अगली टिप्पणी।

२. यहाँ 'लिखा वा छपवाया करते हैं' का संकेत 'भारतमित्र' (कलकत्ता) पत्र के संवत् १९४० श्रावणसुदि ६ गुरुवार के अंक में छपे एक समाचार की ओर है। जिसमें 'मुसलमानों के मजहब का मूल अथर्ववेद में है' लिखकर अल्लोपनिषद् का उल्लेख किया गया था। इस सम्बन्ध में ग्रन्थकार ने 'भारतमित्र' के सम्पादक को एक पत्र लिखा था। वह पत्र 'ऋ० द० के पत्र और विज्ञापन' के पृ० ४४७, ४४८ (संस्करण २) पर छपा है। उससे स्पष्ट है कि ग्रन्थकार ने यह 'अल्लोपनिषद्' समीक्षावाला अंश उक्त पत्र में छपे लेख को पढ़कर बढ़ाया था।

इल्लाँ कबर इल्लाँ कबर इल्लाँ इल्लल्लेति इल्लल्ला: ॥८॥
ओम् अल्लाइल्लल्ला अनादिस्वरूपाय अथर्वणाश्यामा हुं ह्रीं
जनानपशूनसिद्धान् जलचरान् अदृष्टं कुरु कुरु फट् ॥९॥
असुरसंहारिणी हुं ह्रीं अल्लोरसूलमहमदरकबरस्य अल्लो
अल्लाम् इल्लल्लेति इल्लल्ला: ॥१०॥ इत्यल्लोपनिषत् समाप्ता ॥

जो इसमें प्रत्यक्ष मुहम्मद साहब को रसूल लिखा है, इससे सिद्ध होता है कि मुसलमानों का मत वेदमूलक है।

[अथर्ववेद में कहीं भी पैगम्बर वा उसके मत का उल्लेख नहीं]

उत्तर—यदि तुमने अथर्ववेद न देखा हो, तो हमारे पास आओ, आदि से पूर्ति तक देखो। अथवा जिस-किसी अथर्ववेदी के पास बीस काण्डयुक्त मन्त्रसंहिता अथर्ववेद को देख लो। कहीं तुह्मारे पैगम्बर साहब का नाम वा मत का निशान न देखोगे।

[अल्लोपनिषद् की रचना अकबर के समय में हुई]

और जो यह अल्लोपनिषद् है, वह न अथर्ववेद में, न उसके गोपथब्राह्मण वा किसी शाखा में है। यह तो अकबरशाह के समय में अनुमान है कि किसी ने बनाई है। इसका बनानेवाला कुछ अरबी और कुछ संस्कृत भी पढ़ा हुआ दीखता है। क्योंकि इसमें अरबी और संस्कृत के पद लिखे हुए दीखते हैं।

[अरबी और संस्कृत शब्दों का निरर्थक मिश्रण]

देखो (अस्माल्लां इल्ले मित्रावरुणा दिव्यानि धत्ते) इत्यादि में जो कि दश अङ्क[1] में लिखा है। जैसे—इसमें 'अस्माल्लां' और 'इल्ले' अरबी, और मित्रावरुणा दिव्यानि धत्ते' यह संस्कृत पद लिखे हैं। वैसे ही सर्वत्र देखने में आने से किसी संस्कृत और अरबी के पढ़े हुए ने बनाई है। यदि इसका अर्थ देखा जाता है, तो यह कृत्रिम अयुक्त वेद और व्याकरण-रीति से विरुद्ध है।

[अन्य लोगों ने भी ऐसी ही उपनिषदें बना लीं]

जैसी यह उपनिषद् बनाई है, वैसी बहुत-सी उपनिषदें मतमतान्तरवाले पक्षपातियों ने बना ली हैं। जैसी कि स्वरोपोपनिषद्, नृसिंहतापनी, रामतापनी, गोपालतापनी बहुत-सी बनाली हैं।

गाँधीजी ने उत्तर में लिखा—'मुझे मेरे एक मित्र ने बताया था कि उसने किसी पुस्तक की भूमिका में लेखक द्वारा उद्धृत प्रमाण के आधार पर ऐसा कहा था।' मैंने प्रत्युत्तर में गाँधीजी को लिखा कि "आप जैसे महापुरुष को, जिनकी वाणी या लेखनी से निकला हुआ एक-एक शब्द महत्त्वपूर्ण होता है, सुनी-सुनाई बातों के आधार पर ऐसा वक्तव्य नहीं देना चाहिए। अब मैं आपको अल्लोपनिषद् की जानकारी देता हूँ। आप जानते हैं कि मुगल सम्राट् अकबर ने अपनी लोकप्रियता बढ़ाने के लिए 'दीने इलाही' के नाम से एक मत चलाया था। प्रत्येक मत का एक धर्मग्रन्थ भी होता है। 'अल्लोपनिषद्' अकबर द्वारा वनवाये गये ऐसे ही धर्मग्रन्थ का नाम है। अरबी और संस्कृत मिश्रित भाषा में रचित इस ग्रन्थ में अल्ला, ब्रह्म, ऋषि, मुहम्मद, अकबर, अथर्व, उपनिषद्, यज्ञ, अन्तरिक्ष, माया आदि शब्दों को देखकर आपाततः इसके हिन्दुओं और मुसलमानों में समानरूप से मान्य धर्मग्रन्थ होने का भ्रम हो सकता है, किन्तु वास्तव में इसका वेद, उपनिषद् आदि से कोई सम्बन्ध नहीं है।"

---

१. अर्थात् दश खण्डों में।

[अथर्ववेद की किसी शाखा में भी यह वर्णन नहीं]

प्रश्न—आज तक किसी ने ऐसा नहीं कहा, अब तुम कहते हो। हम तुह्मारी बात कैसे मानें?

उत्तर—तुह्मारे मानने वा न मानने से हमारी बात झूंठ नहीं हो सकती है। जिस प्रकार से मैंने इसको अयुक्त ठहराई है, उसी प्रकार से जब तुम अथर्ववेद गोपथ वा इसकी शाखाओं से प्राचीन लिखित पुस्तकों में जैसा-का-तैसा लेख दिखलाओ, और अर्थसंगति से भी शुद्ध करो, तब तो सप्रमाण हो सकती है।

[सभी अपने मतों को अच्छा बताते हैं, किसे सत्य मानें?]

प्रश्न—देखो, हमारा मत कैसा अच्छा है, कि जिसमें सब प्रकार का सुख और अन्त में मुक्ति होती है।

उत्तर—ऐसे ही अपने-अपने मतवाले सब कहते हैं कि—'हमारा ही मत अच्छा है, बाकी सब बुरे। विना हमारे मत के दूसरे मत में मुक्ति नहीं हो सकती'। अब हम तुह्मारी बात को सच्ची मानें, वा उनकी?

सत्यार्थप्रकाश पर प्रतिबन्ध

सिन्ध की मुसलिमलीगी सरकार ने १६ अक्तूबर १९४४ को सत्यार्थप्रकाश के चौदहवें समुल्लास के मुद्रण तथा प्रकाशन पर प्रतिबन्ध लगा दिया। पुनः भारत रक्षा कानून की धारा ४१ की उपधारा १ के अधीन आदेश जारी किया कि स्वामी दयानन्द द्वारा लिखित सत्यार्थप्रकाश नामक पुस्तक की कोई भी प्रति तब तक छापी वा प्रकाशित नहीं की जा सकेगी, जब तक कि उनमें से चौदहवाँ समुल्लास न निकाल दिया जाये। सिन्ध सरकार का कहना था कि इस समुल्लास में की गई क़ुरान की आलोचना से मुसलमानों की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँचती है। समाचारपत्रों में इस समाचार के प्रकाशित होते ही आर्यजगत् में सनसनी फैल गई। सार्वदेशिक सभा की ओर से सिन्ध के गवर्नर को तार भेजकर कहा गया कि आप हस्तक्षेप करके प्रतिबन्ध के आदेश को वापस करवायें। अन्यथा हैदराबाद के समान सिन्ध में आर्यों को संघर्ष करना पड़ेगा, जिसके लिए आपकी सरकार उत्तरदायी होगी। २०-११-४४ को सार्वदेशिक सभा द्वारा इस विषय में आवश्यक कार्यवाही करने के लिए श्री घनश्यामसिंह गुप्त की अध्यक्षता में 'सत्यार्थप्रकाश रक्षा समिति' बना दी गई। जब दो वर्ष तक वैधानिक उपायों से प्रतिबन्ध हटाने में सफलता न मिली तो १२-८-४६ को कराची में हुई बैठक में सत्याग्रह करने का निश्चय हो गया, तदनन्तर १३ नवम्बर १९४६ को दिल्ली में हुई बैठक के निर्णय के अनुसार महात्मा नारायण स्वामीजी अपने साथ प्रथम पाँच सत्याग्रहियों (महात्मा आनन्द स्वामी, स्वामी ध्रुवानन्द, स्वामी अभेदानन्द, स्वामी विद्यानन्द और कुँवर चाँदकरण शारदा) को लेकर कराची जा पहुँचे। और मकर संक्रान्ति के पवित्र दिवस १४-१-४७ को सत्याग्रह का श्रीगणेश हो गया। इस बीच सिन्ध सरकार को अपने सूत्रों से प्राप्त सूचनाओं के आधार पर यह विश्वास हो गया था कि भारत के कोने-कोने से भारी संख्या में, आर्यसमाजी ही नहीं, हिन्दू मात्र इस सत्याग्रह में भाग लेने कराची पहुँचेंगे। सत्याग्रह शुरू होने के पाँचवें दिन सिन्ध सरकार की ओर से प्रसारित की गई विज्ञप्ति में कहा गया कि "सिन्ध सरकार ने न केवल सत्याग्रहियों को गिरफ्तार नहीं किया है, अपितु जिला अधिकारियों को सूचित कर दिया गया है कि सत्यार्थप्रकाश के रखने, पढ़ने, उसमें से प्रवचन करने आदि के काम में

हम तो यही मानते हैं कि सत्यभाषण, अहिंसा, दया आदि शुभ गुण सब मतों में अच्छे हैं। और बाकी वादविवाद, ईर्ष्या-द्वेष मिथ्याभाषणादि कर्म सब मतों में बुरे हैं। यदि तुमको सत्यमत ग्रहण की इच्छा हो, तो वैदिकमत को ग्रहण करो॥

इसके आगे 'स्वमन्तव्यामन्तव्य का प्रकाश' संक्षेप से लिखा जायगा॥

इति श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीस्वामिनिर्मिते सत्यार्थप्रकाशे सुभाषाविभूषिते यवनमतविषये चतुर्दश-समुल्लासः सम्पूर्णः॥१४॥

कोई बाधा न डालें।" इस पर महात्मा नारायण स्वामी ने प्रतिबन्ध को 'Dead letter' घोषित करके सत्याग्रह को समाप्त कर दिया और हम सब पूर्ण सफल होकर २०-१-४७ को दिल्ली लौट आये।

सत्यार्थप्रकाश की रक्षार्थ किये गये इस सत्याग्रह में बाबू राजेन्द्र प्रसाद, पं० जवाहरलाल नेहरू, मौलाना अबुल कलाम आजाद, सरदार ब्रल्लभ भाई पटेल, डा० श्यामाप्रसाद मुकर्जी और खान अब्दुल गफ्फार खाँ जैसे राष्ट्रीय नेता आर्यसमाज के पक्षधर थे। केवल गाँधीजी विरोध में थे। उनका कहना था कि सत्यार्थप्रकाश के चौदहवें समुल्लास मे इसलाम की बहुत कटु और अनुचित आलोचना की गई है, जो अहिंसा की परिधि से कोसों दूर है। इसलिए आर्यसमाज को उसमें से चौदहवाँ समुल्लास निकाल देना चाहिए।

इस विषय में श्री घनश्यामसिंह गुप्त ने गाँधीजी को कहा था—"आप मन, वचन और कर्म से अहिंसा को अपनी आज की तराजू में चौदहवें समुल्लास को तोल रहे हैं, अतः आपको यह अनुचित प्रतीत होता है। किन्तु चौदहवाँ समुल्लास आपकी वर्त्तमान युग की भावनाओं को ध्यान में रखते हुए नहीं लिखा गया था। इसकी तुलना कुरान और हदीसों के उन अंशों से की जानी चाहिए, जिनमें इसलाम स्वीकार न करनेवालों को काफिर कहकर उनकी हत्या करना न केवल वैध, अपितु पवित्र धार्मिक कर्त्तव्य बताया गया है। आर्यसमाज सत्यार्थप्रकाश में से चौदहवाँ समुल्लास निकालने को इस शर्त पर तैयार है कि आप मुसलमान मुल्ला मौलवियों को इस बात के लिए सहमत कर लें कि वे कुरान शरीफ़ की उन आयतों और हदीसों को अपने धर्मग्रन्थों में से निकाल दें, जिनमें अन्य मतावलम्बियों को काफिर कहा गया है और उनकी हत्या करना वैध और पवित्र कर्त्तव्य बताया गया है।" इस पर महात्मा जी निरुत्तर होकर आर्यसमाज के दृष्टिकोण से सहमत हो गये और उन्होंने सिन्ध की मुसलिमलीगी सरकार के मुख्यमन्त्री को पत्र लिखा कि सत्यार्थप्रकाश के चौदहवें समुल्लास पर लगाये गये प्रतिबन्ध को हटा दिया जाय।

स्वमन्तव्यामन्तव्य-प्रकाशः

[सर्वतन्त्र-सिद्धान्त की परिभाषा]

'सर्वतन्त्र-सिद्धान्त' अर्थात् साम्राज्य सार्वजनिक धर्म, जिसको सदा से सब मानते आये, मानते हैं और मानेंगे भी, इसीलिए उसको 'सनातन नित्यधर्म' कहते हैं, कि जिसका विरोधी कोई भी न हो सके।

[कौन प्रमाण के योग्य और कौन अयोग्य ?]

यदि अविद्यायुक्त जन अथवा किसी मतवाले के भ्रमाये हुए जन जिसको अन्यथा जानें वा मानें, उसका स्वीकार कोई भी बुद्धिमान् नहीं करते। किन्तु जिसको 'आप्त' अर्थात् सत्यमानी सत्यवादी सत्यकारी परोपकारक पक्षपातरहित विद्वान् मानते हैं, वही सबको मन्तव्य होने से प्रमाण के योग्य और जिसको नहीं मानते, वह अमन्तव्य होने से प्रमाण के योग्य नहीं होता।

सर्वतन्त्र-सिद्धान्त—द्रष्टव्य—एकादश समुल्लास के अन्तर्गत जिज्ञासु-आप्त विद्वान् का वार्त्तालाप, जो इस प्रकार है—

आप्त विद्वान् (जिज्ञासु से)—देख, जिस बात में सब एकमत हों, वह वेदमत ग्राह्य है। और जिसमें विरोध हो, वह कल्पित झूंठा अधर्म अग्राह्य है।

जिज्ञासु—इसकी परीक्षा कैसे हो ?

आप्त विद्वान्—तू जाकर इन-इन बातों को पूंछ। सबकी एक सम्मति हो जाएगी।

तब वह सहस्रों की मण्डली के बीच जाकर बोला कि 'सुनो सब लोगो। सत्य भाषण में धर्म है वा मिथ्या भाषण में ?' सब एक स्वर से बोले—'सत्य भाषण में धर्म है और असत्य भाषण में अधर्म।' वैसे ही 'विद्या पढ़ने, ब्रह्मचर्य करने, पूर्ण युवावस्था में विवाह, सत्संग, पुरुषार्थ, सत्यव्यवहार आदि में धर्म है वा अविद्याग्रहण, ब्रह्मचर्य न करने, व्यभिचार करने, कुसंग, आलस्य, असत्यव्यवहार, छल-कपट, हिंसा, परहानि करने आदि कर्मों में ?' सबने एकमत होके कहा कि 'विद्यादि के ग्रहण करने में धर्म और अविद्यादि के ग्रहण करने में अधर्म है।'

तब जिज्ञासु ने सबसे कहा कि 'तुम सब जने एकमत हो सत्यधर्म की उन्नति और मिथ्यामार्ग की हानि क्यों नहीं करते ?' तो वे सब बोले—'जो हम ऐसा करें तो हमको कौन पूंछे ? हमारे चेले हमारी आज्ञा में न रहें, जीविका नष्ट हो जाय।'

आप्त और सत्यमानी—मनुस्मृति (२।१) में निर्देश किया है—

विद्वद्भिः सेवितः सद्भिर्नित्यमद्वेषरागिभिः।
हृदयेनाभ्यनुज्ञातो यो धर्मस्तन्निबोधत ॥

अर्थात्—जिसका सेवन राग-द्वेषरहित विद्वान् लोग नित्य करें और जिसको हृदय अर्थात् आत्मा से सत्कर्त्तव्य जानें, वही धर्म माननीय और करणीय है।

[मेरा अपना मन्तव्य क्या है ?]

अब जो वेदादि सत्यशास्त्र और ब्रह्मा से लेकर जैमिनिमुनि पर्यन्तों के माने हुए ईश्वरादि पदार्थ हैं, जिनको कि मैं भी मानता हूँ, सब सज्जन महाशयों के सामने प्रकाशित करता हूँ।

मैं अपना मन्तव्य उसी को जानता हूँ कि जो तीन काल में सबको एक-सा मानने योग्य है। मेरा कोई नवीन कल्पना वा मतमतान्तर चलाने का लेशमात्र भी अभिप्राय नहीं है। किन्तु जो सत्य है उसको मानना-मनवाना और जो असत्य है उसको छोड़ना और छुड़वाना मुझको अभीष्ट है।

[धर्मयुक्त बातों को छोड़ देना मनुष्यधर्म नहीं है]

यदि मैं पक्षपात करता तो आर्य्यावर्त्त में प्रचरित मतों में से किसी एक मत का आग्रही होता। किन्तु जो-जो आर्य्यावर्त्त वा अन्य देशों में अधर्मयुक्त चालचलन है उसका स्वीकार, और जो धर्मयुक्त बातें हैं उनका त्याग नहीं करता, न करना चाहता हूँ। क्योंकि ऐसा करना मनुष्यधर्म से बहिः है।

ब्रह्मा से जैमिनि पर्यन्त=ब्रह्मा से दयानन्द पर्यन्त—ग्रन्थकार ने अपने आपको किसी धर्म या मत के प्रवर्त्तक के रूप में प्रस्तुत न करके, ब्रह्मा से जैमिनि पर्यन्त ऋषियों द्वारा प्रतिपादित सत्य-सनातन वैदिक धर्म के पुनरुद्धारक रूप में ही प्रस्तुत किया है। यह उनकी निरभिमानता की पराकाष्ठा है। परन्तु इससे महत्त्व कम नहीं हो जाता। कभी प्रो० मैक्समूलर ने लिखा था—"He (Dayananda) was a scholar in a certain sense. In all his writings that could be quoted as original beyond his somewhat strange interpretations of words and whole passages of the veda." (A Real Mahatman or Shri Ramakrishna paramhansa by Pr. Maxmuller.) ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका को पढ़ने के बाद उसी मैक्समूलर ने लिखा—"We may divide the whole of sanskrit literature beginning with the Rigveda and ending with Dayananda's Introduction to his Commentary of the Rigveda." (India : what can it teach us ? P. 102). ऋग्वेद का सम्बन्ध ब्रह्मा से है और ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका का दयानन्द से। इस प्रकार जैसे ग्रन्थकार ऋषि-परम्परा का निर्देश 'ब्रह्मा से जैमिनि पर्यन्त' कहकर करते हैं, मैक्समूलर ने 'ब्रह्मा से दयानन्द पर्यन्त' कहकर उसी परम्परा का निर्वाह 'जैमिनि' के स्थान पर 'दयानन्द' को रखकर ग्रन्थकार को गौरव प्रदान कर मानो अपने पाप का प्रायश्चित्त किया है।

सत्य को मानना-मनवाना—ग्रन्थकार ने आर्यसमाज की विधिवत् स्थापना से पूर्व अपने भक्तों और अनुयायियों को सम्बोधित करते हुए कहा था—

"भाई ! हमारा कोई स्वतन्त्रमत नहीं है। मैं तो वेद के अधीन हूँ···मैं संन्यासी हूँ और मेरा कर्त्तव्य यही है कि जो आप लोगों का अन्न खाता हूँ, इसके बदले जो सत्य समझता हूँ, उसका निर्भयता से उपदेश करता हूँ। मैं कुछ कीर्त्ति का रागी नहीं हूँ। चाहे कोई मेरी स्तुति करे या निन्दा करे, मैं अपना कर्त्तव्य समझके धर्म का बोध कराता हूँ।

आप यदि समाज से पुरुषार्थ कर सकते हो तो आर्यसमाज को स्थापित कर लो। परन्तु इसमें यथोचित व्यवस्था करोगे तो आगे गड़बड़ाध्याय हो जाएगा। मैं तो जैसा अन्य को उपदेश देता हूँ, वैसा ही आपको भी करूँगा। मेरा अभिप्राय तो है कि इस भारतवर्ष में नाना प्रकार के मत-मतान्तर प्रचलित हैं, वे भी वेदों को मानते हैं। इससे वेद शास्त्ररूपी समुद्र में ये सभी नदी नाव पुनः मिला देने से धर्म-एकता होगी। और धार्मिक एकता से सांसारिक और व्यावहारिक सुधार होगा।

[सच्चा मनुष्य कौन कहलाता है ?]

'मनुष्य' उसी को कहना कि मननशील होकर स्वात्मवत् अन्यों के सुख-दुःख और हानि-लाभ को समझे। अन्यायकारी बलवान् से भी न डरे, और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे। इतना ही नहीं, किन्तु अपने सर्वसामर्थ्य से धर्मात्माओं, कि चाहे वे महा अनाथ निर्बल और गुणरहित क्यों न हों, उनकी रक्षा उन्नति प्रियाचरण, और अधर्मी चाहे चक्रवर्ती सनाथ महाबलवान् और गुणवान् भी हो, तथापि उसका नाश अवनति और अप्रियाचरण सदा किया करे। अर्थात् जहाँ तक हो सके, वहाँ तक अन्याय-कारियों के बल की हानि और न्यायकारियों के बल की उन्नति सर्वथा किया करे। इस काम में चाहे उसको कितना ही दारुण दुःख प्राप्त हो, चाहे प्राण भी भले ही जावें, परन्तु इस मनुष्यरूप धर्म से पृथक् कभी न होवे।

[भर्तृहरि जी आदि महापुरुषों का भी यही मत है]

इसमें श्रीमान् महाराजा भर्तृहरिजी आदि ने श्लोक कहे हैं। उनका लिखना उपयुक्त समझकर लिखता हूँ—

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु,
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।

मैं आर्यसमाज को असत्य की नींव पर स्थापित करना कदापि पसन्द नहीं करूँगा।"

मनुष्य—निरुक्त (३.२.७) में लिखा है—'मनुष्याः कस्मात् ? मत्वा कर्माणि सीव्यन्ति, मनस्यमानेन सृष्टाः—मनस्यतिः पुनर्मनस्वीभावे, मनोरपत्यं, मनुषी वा।' अर्थात् इनको मनुष्य इसलिए कहा जाता है कि (१) ये सोच-विचार कर कर्मों को करते हैं, बिना विचारे ही नहीं करते। 'मन' तथा 'षिवु' तन्तुसन्ताने—इन दोनों धातुओं के योग से बहुल द्वारा औणादिक् 'टचन्' प्रत्यय, मन्-ष्य=मनुष्य। (ख) प्रशस्त मनवाले से जो पैदा हुए हैं, वे मनुष्य हैं। मनस्यमानेन सृष्टाः—मनष्टाः—मनुष्याः। 'मनस्' धातु प्रशस्त मनवाला—इस अर्थ में है। (ग) मननशील की सन्तान मनुष्य होगी। 'मनु' और 'मनुष्'—ये दोनों शब्द मननशील के अर्थ में प्रयुक्त होते हैं।

शतपथ-ब्राह्मण के अनुसार मनुष्य प्रजापति के अनुरूप है—'पुरुषो (मनुष्यो) वै प्रजापतेर्नेदिष्ठम्' (२.५.१.१)। तदनुसार ही (शायद) बाइबल के उत्पत्ति-प्रकरण (Genises) में लिखा है—'God created man in his own image.'

स्वात्मवत्—महर्षि वेदव्यास ने 'आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्' तथा भगवान् मनु ने 'स्वस्य च प्रियमात्मनः' का निर्देश तथा वेदोपनिषद् में 'यस्मिन् सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद्विजानतः' (यजुः ४०.७; ईश० ७) की प्रेरणा इसी दृष्टि से की गई है।

अन्यायकारियों के बल की हानि—ऋग्वेद (१०.५३.४) में कहा है—'देवा अद्य वाचः तत् प्रथमं मंसीय'—हे विद्वानो ! आज मैं वाणी का वह श्रेष्ठ वीर्य समझता हूँ 'येन असुरान् अभि असाम'—जिससे हम दुष्ट जनों को पराजित करें। गीता के अनुसार महापुरुषों का जन्म दोनों कामों—सज्जनों की रक्षा और दुष्टों का दमन—के लिए होता है (परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्)। ग्रन्थकार ने यहाँ सर्वथा न्यायोचित व्यवहार का निर्धारण किया है। इसे अपनाये विना समाज में धर्म की स्थापना एवं अधर्म का नाश नहीं हो सकता।

निन्दन्तु नीतिनिपुणाः—नीतिनिपुण लोग चाहे निन्दा करें अथवा प्रशंसा; धन-ऐश्वर्य चाहे

अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा,
न्याय्यात् पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः ॥१॥—भर्तृहरि[1]
न जातु कामान्न भयान्न लोभाद्,
धर्मं त्यजेज्जीवितस्यापि हेतोः ।
धर्मो नित्यः सुखदुःखे त्वनित्ये,
जीवो नित्यो हेतुरस्य त्वनित्यः ॥२॥—महाभारते[2]
एक एव सुहृद्धर्मो निधनेऽप्यनुयाति यः ।
शरीरेण समं नाशं सर्वमन्यद्धि गच्छति ॥३॥—मनुः[3]
सत्यमेव जयते नानृतं सत्येन पन्था विततो देवयानः ।
येनाऽऽक्रमन्त्यृषयो ह्याप्तकामा यत्र तत्सत्यस्य परमं निधानम् ॥४॥[4]
नहि सत्यात्परो धर्मो नानृतात् पातकं परम् ।
नहि सत्यात् परं ज्ञानं तस्मात् सत्यं समाचरेत् ॥५॥—उ० नि०[5]

इन्हीं महाशयों के श्लोकों के अभिप्राय के अनुकूल सबको निश्चय रखना योग्य है ।

आये, चाहे चला जाये; आज ही मृत्यु हो जाये अथवा चिरकाल तक जीवनदान मिले, धीर पुरुष न्याय्य मार्ग से कभी भी विचलित नहीं होते ।

Some will hate thee, some will love thee,
Some will flatter, some will slight,
Cease from man, look upon thee,
Trust in god and do the right.

न जातु कामान्न—कामना से, भय से, लोभ से तथा जीवन के लिए भी कभी धर्म का त्याग न करे । धर्म नित्य है, किन्तु सुख-दुःख अनित्य है । जीव नित्य है, पर इसका कारण अनित्य है । 'त्यक्त्वा-नित्यं प्रतिष्ठस्व नित्ये' (अनित्य को छोड़कर नित्य में स्थित=प्रतिष्ठित हो) इतना अधिक है ।

एक एव—इस संसार में एक धर्म ही मित्र है, जो मृत्यु के पश्चात् भी मनुष्य के साथ जाता है, शेष सब पदार्थ शरीर के नाश के साथ ही नष्ट हो जाते हैं ।

सत्यमेव जयते—सदा सत्य की जय होती है, असत्य की कभी नहीं । देवयान=देव की ओर ले जानेवाला मार्ग सत्य से ही बना है । इस मार्ग का अनुसरण करनेवाला आप्तकाम ऋषि जहाँ पहुँचता है, वह परम धाम सत्य का ही है ।

न हि सत्यात्—निश्चय ही सत्य से बड़ा कोई धर्म नहीं है और झूठ से बड़ा कोई पाप नहीं है । इसी प्रकार सत्य से बढ़कर कोई ज्ञान भी नहीं है । इसलिए मनुष्य को चाहिए कि मन, वचन और कर्म से सदा सत्य का ही आचरण करे ।

---

१. नीतिशतक ८४ । विभिन्न संस्करणों में संख्या-भेद भी मिलता है ।
२. उद्योगपर्व ४०।११ उत्तरार्ध, १२ पूर्वार्ध ।
३. मनु० ८।१७ ।
४. मुण्डकोप० ३।१।६ ।
५. अनुपलब्धमूल ।

[ऋषि द्वारा स्वमन्तव्यों का संक्षेप में उल्लेख]

अब मैं जिन-जिन पदार्थों को जैसा-जैसा मानता हूँ, उन-उनका वर्णन संक्षेप से यहाँ करता हूँ, कि जिनका विशेष व्याख्यान इस ग्रन्थ में अपने-अपने प्रकरण में कर दिया है[1]। इनमें से प्रथम—

१—'**ईश्वर**'[2]—कि जिसके ब्रह्म परमात्मादि नाम हैं, जो सच्चिदानन्दादि-लक्षणयुक्त है, जिसके गुण कर्म स्वभाव पवित्र हैं, जो सर्वज्ञ निराकार सर्वव्यापक अजन्मा अनन्त सर्वशक्तिमान् दयालु न्यायकारी, सब सृष्टि का कर्त्ता धर्त्ता हर्त्ता, सब जीवों को कर्मानुसार सत्यन्याय से फलदाता आदि लक्षणयुक्त है, उसी को 'परमेश्वर' मानता हूँ।

२—'**चारों वेदों**'[3] (=विद्या-धर्मयुक्त ईश्वर-प्रणीत संहिता मन्त्रभाग[4]) को निर्भ्रान्त स्वतः

ग्रन्थकार के ये मन्तव्यामन्तव्य स्वरचित ग्रन्थों में प्रतिपादित सिद्धान्तों के निष्कर्षरूप हैं, अतः हम उनका विशदीकरण, स्पष्टीकरण तथा व्याख्यान यथासम्भव उन्हीं के शब्दों में कर रहे हैं—

१. ईश्वर—जिसके गुण, कर्म, स्वभाव और स्वरूप सत्य ही हैं, जो केवल चेतनमात्र वस्तु है, तथा जो एक अद्वितीय, सर्वशक्तिमान्, निराकार, सर्वत्र व्यापक, अनादि और अनन्त आदि सत्य गुण युक्त है और जिसका स्वभाव अविनाशी, ज्ञानी, आनन्दी, शुद्ध, न्यायकारी, दयालु और अजन्मादि है, जिसका कर्म जगत् की उत्पत्ति, पालन और विनाश करना तथा सब जीवों को पाप-पुण्य के ठीक-ठीक फल पहुँचाना है, उसको 'ईश्वर' कहते हैं। —आर्योद्देश्यरत्नमाला संख्या १

परमात्मा पूर्ण ज्ञानी है। क्योंकि 'ज्ञान' उसको कहते हैं कि जिससे ज्यों-का-त्यों जाना जाय। अर्थात् जो पदार्थ जिस प्रकार का हो, उसको उसी प्रकार का जानने का नाम 'ज्ञान' है। परमेश्वर अनन्त है तो उसको अनन्त ही जानना ज्ञान, उसके विरुद्ध जानना अज्ञान है। अर्थात् अनन्त को सान्त और सान्त को अनन्त जानना 'भ्रम' कहाता है। 'यथार्थदर्शनं ज्ञानमिति' जिसका जैसा गुण-कर्म-स्वभाव हो, उस पदार्थ को वैसा ही जानकर मानना 'ज्ञान और विज्ञान' कहाता है, उससे उलटा अज्ञान। इसलिए—

क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुषविशेष ईश्वरः। —योग० १।२४

जो अविद्यादि क्लेश, कुशल-अकुशल, इष्ट-अनिष्ट और मिश्र फलदायक कर्मों की वासना से रहित है, वह सब जीवों से विशेष 'ईश्वर' कहाता है। —स० प्र० ७, पृ० २९२

ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वाधार, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्त्ता है।

२. वेद—जो ईश्वरोक्त सत्य विद्याओं से युक्त ऋक्संहितादि चार पुस्तक हैं, जिनसे मनुष्यों को सत्यासत्य का ज्ञान होता है, उनको 'वेद' कहते हैं। —आर्य० रत्न० सं० ६५

---

१. इन विषयों का निर्देश ग्रन्थकार ने अपने जिन-जिन अन्य ग्रन्थों में भी किया है, उनका संकेत हम आगे टिप्पणी में दे रहे हैं।

२. आर्योद्देश्यरत्नमाला संख्या १; स० प्र० समु० ७, पृ० २९२; ऋ० भा० भूमिका पृ० १९२; आर्यसमाज के नियम संख्या २।

३. आर्योद्देश्य० सं० ६५।

४. यहाँ 'भाग' शब्द का प्रयोग लौकिक व्यवहारानुसार किया है। इससे मन्त्र-ब्राह्मण-समुदायरूप भागों की कल्पना नहीं करनी चाहिये। अथवा व्याख्येय-व्याख्यान दोनों का औपचारिक एकत्व मानकर 'भाग' शब्द का प्रयोग जानना चाहिये, न कि वस्तुतः।

प्रमाण मानता हूँ । वे स्वयं प्रमाणरूप हैं कि जिनका प्रमाण होने में किसी अन्य ग्रन्थ की अपेक्षा नहीं। जैसे सूर्य वा प्रदीप अपने स्वरूप के स्वतः प्रकाशक, और पृथिव्यादि के भी प्रकाशक होते हैं, वैसे 'चारों वेद' हैं ।

और चारों वेदों के ब्राह्मण, छः अङ्ग, छः उपाङ्ग, चार उपवेद, और ११२७ (=ग्यारह सौ सत्ताईस) वेदों की शाखा, जोकि वेदों के व्याख्यानरूप ब्रह्मादि महर्षियों के बनाये ग्रन्थ हैं, उनको परतः प्रमाण अर्थात् वेदों के अनुकूल होने से प्रमाण, और जो इनमें वेदविरुद्ध वचन हैं, उनका अप्रमाण करता हूँ ।

३—**धर्माधर्म**—जो पक्षपातरहित न्यायाचरण सत्यभाषणादियुक्त ईश्वराज्ञा वेदों से अविरुद्ध है उसको 'धर्म'[1]; और जो पक्षपातसहित अन्यायाचरण मिथ्याभाषणादि ईश्वराज्ञाभंग वेदविरुद्ध है, उसको 'अधर्म'[2] मानता हूँ ।

४—**जीव**—जो इच्छा द्वेष सुख दुःख और ज्ञानादि गुणयुक्त, अल्पज्ञ नित्य है, उसी को 'जीव'[3] मानता हूँ ।

---

३. **धर्माधर्म**—श्रुति=वेद, स्मृति=वेदानुकूल आप्तोक्त मनुस्मृत्यादि शास्त्र, सत्पुरुषों का आचार जो सनातन अर्थात् वेद द्वारा परमेश्वरप्रतिपादित कर्म, और अपने आत्मा में, प्रिय अर्थात् जिसको आत्मा चाहता है, जैसा कि सत्यभाषण—ये चार धर्म के लक्षण अर्थात् इन्हीं से धर्म-अधर्म का निश्चय होता है। जो पक्षपातरहित न्याय सत्य का ग्रहण, असत्य का सर्वथा परित्याग रूप आचार है, उसीका नाम 'धर्म' और इसके विपरीत जो पक्षपातसहित अन्यायाचरण, सत्य का त्याग और असत्य का ग्रहण रूप कर्म है, उसी को 'अधर्म' कहते हैं—स० प्र० ३, पृ० ६१ 'धर्म'—जिसका स्वरूप ईश्वर की आज्ञा का यथावत् पालन और पक्षपातरहित न्याय सर्वहित करना है, जो कि प्रत्यक्षादि प्रमाणों से सुपरीक्षित और वेदोक्त होने से सब मनुष्यों के लिए यही एक मानने योग्य है, उसको 'धर्म्म' कहते हैं। 'अधर्म'—जिसका स्वरूप ईश्वर की आज्ञा को छोड़कर और पक्षपातसहित अन्यायी होके विना परीक्षा करके अपना ही हित करना है, जो अविद्या हठ अभिमान क्रूरतादि दोषयुक्त होने के कारण वेद-विद्या से विरुद्ध है, और सब मनुष्यों को छोड़ने योग्य है, वह 'अधर्म' कहाता है । —आर्य० रत्न० २-३

जो पक्षपातरहित न्याय सत्य का ग्रहण, असत्य का परित्याग, पाँचों परीक्षाओं के अनुकूल आचरण, ईश्वराज्ञा का पालन, परोपकार करना रूप 'धर्म' और जो इसके विपरीत वह 'अधर्म' कहाता है । क्योंकि जो सबके अविरुद्ध वह 'धर्म' और जो परस्पर विरुद्धाचरण है, सो अधर्म क्यों न कहायेगा ?—व्यव्यहारभानु (व्य० भा०) पृ० ५१० ।

जो न्यायाचरण, सबके हित का करना आदि कर्म हैं, उनको 'धर्म' और अन्यायाचरण, सबके अहित के काम करने हैं, उनको 'अधर्म' जानो ।—(व्य० भा०) पृ० ५१७ ।

४. **जीव**—'इच्छाद्वेषप्रयत्नसुखदुःखज्ञानान्यात्मनो लिङ्गमिति ।' (न्याय० १।१।१०) अर्थात् जिसमें इच्छा=राग, द्वेष=वैर, प्रयत्न=पुरुषार्थ, सुख, दुःख, ज्ञान=जानना गुण हों, वह जीवात्मा है । 'वैशेषिक' में इतना विशेष है—'प्राणाऽपाननिमेषोन्मेषजीवनमनोगतीन्द्रियान्तर्विकाराः सुखदुःखेच्छाद्वेष-प्रयत्नाश्चात्मनो लिङ्गानि' (वै० ३।२।४) अर्थात् प्राण=भीतर से वायु को बाहर निकालना, अपान=

---

१. आर्योद्देश्य० सं० २; स० प्र० समु० ३, पृ० ६१; व्यवहारभानु पृ० ५१०, ५१७; ऋ० भा० भूमिका पृ० ११६।
२. आर्योद्देश्य० सं० ३; स० प्र० समु० ३, पृ० ६१; व्यवहारभानु पृ० ५१०, ५१७; ऋ० भा० भूमिका पृ० ११६।
३. आर्योद्देश्य० सं० ७७; स० प्र० समु० ३, पृ० १००; समु० ७, पृ० २६८।

५—**'जीव और ईश्वर'**—स्वरूप और वैधर्म्य से भिन्न, और व्याप्य-व्यापक और साधर्म्य से अभिन्न हैं। अर्थात् जैसे आकाश से मूर्त्तिमान् द्रव्य कभी भिन्न न था न है न होगा, और न कभी एक था न है न होगा, इसी प्रकार परमेश्वर और जीव को व्याप्य-व्यापक, उपास्य-उपासक, और पिता-पुत्र आदि सम्बन्धयुक्त मानता हूँ।

६—**'अनादि पदार्थ'**[1] तीन हैं—एक ईश्वर, द्वितीय जीव, तीसरा प्रकृति अर्थात् जगत् का कारण। इन्हीं को नित्य भी कहते हैं। जो नित्य पदार्थ हैं, उनके गुण कर्म स्वभाव भी नित्य हैं।

बाहर से वायु को भीतर लेना, निमेष=आँख को नीचे ढाँकना, उन्मेष=आँख को ऊपर उठाना, जीवन=प्राण का धारण करना, मनः=मनन विचार अर्थात् ज्ञान, गति=यथेष्ट गमन करना, इन्द्रिय=इन्द्रियों को विषयों में चलाना, उनसे विषयों को ग्रहण करना, अन्तर्विकार=क्षुधा, तृषा, ज्वर, पीड़ा आदि विकारों का होना, सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष और प्रयत्न—ये सब आत्मा के लिङ्ग अर्थात् कर्म और गुण हैं। —स० प्र० ३, पृ० १००

जीव का स्वरूप—जो चेतन, अल्पज्ञ, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, सुख, दुःख और ज्ञान गुणवाला तथा नित्य है, वह 'जीव' कहाता है। —आ० र० ७७

५. **जीव और ईश्वर**—दोनों चेतनस्वरूप हैं। स्वभाव दोनों का पवित्र, अविनाशी और धार्मिकता आदि है। परन्तु परमेश्वर के सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय, सबको नियम में रखना, जीवों को पाप-पुण्य के फल देना आदि धर्मयुक्त कर्म हैं। और जीव के सन्तानोत्पत्ति, उनका पालन, शिल्प-विद्या आदि अच्छे-बुरे कर्म हैं। —स० प्र० ७

६. **अनादि पदार्थ**—जो ईश्वर, जीव और जगत् का कारण है, ये तीन स्वरूप से अनादि हैं। —आ० रा० ५२

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्यो अभिचाकशीति॥ —ऋ० १।१६४।२०

(द्वा) जो ब्रह्म और जीव दोनों (सुपर्णा) चेतनता और पालनादि गुणों से सदृश, (सयुजा) व्याप्य-व्यापक भाव से संयुक्त, (सखाया) परस्पर मित्रतायुक्त सनातन अनादि हैं। और (समानम्) वैसा ही (वृक्षम्) अनादि मूलरूप कारण और शाखारूप कार्ययुक्त वृक्ष अर्थात् जो स्थूल होकर प्रलय में छिन्न-भिन्न हो जाता है, वह तीसरा अनादि पदार्थ है। इन तीनों के गुण कर्म स्वभाव भी अनादि हैं। इन जीव और ब्रह्म में से एक जो जीव है, वह इस वृक्षरूप संसार में पाप-पुण्यरूप फलों को अच्छे प्रकार भोगता है। और दूसरा परमात्मा कर्मों के फलों को (अनश्नन्) न भोगता हुआ चारों ओर अर्थात् बाहर-भीतर सर्वत्र प्रकाशमान हो रहा है। जीव से ईश्वर, ईश्वर से जीव और दोनों से प्रकृति भिन्नस्वरूप हैं। ये तीनों अनादि हैं।

प्रकृति, जीव और परमात्मा तीनों अज, अर्थात् जिनका जन्म कभी नहीं होता, और न कभी ये जन्म लेते अर्थात् ये तीन सब जगत् के कारण हैं, इनका कोई कारण नहीं। इस अनादि प्रकृति का भोग अनादि जीव करता हुआ फँसता है। और उसमें परमात्मा न कभी फँसता और न कभी भोग करता है। —स० प्र० ८, पृ० ३२५

---

१. आर्योद्देश्य० सं० ५२; स० प्र० समु० ८, पृ० ३२५।

७—**'प्रवाह से अनादि'**[1]—जो संयोग से द्रव्य गुण कर्म उत्पन्न होते हैं, वे वियोग के पश्चात् नहीं रहते। परन्तु जिससे प्रथम संयोग होता है, वह सामर्थ्य उनमें अनादि है। और उससे पुनरपि संयोग होगा तथा वियोग भी। इन तीनों को 'प्रवाह से अनादि' मानता हूँ।

८—**'सृष्टि'**[2] उसको कहते हैं—जो पृथक् द्रव्यों का ज्ञान युक्तिपूर्वक मेल होकर नानारूप बनना।

९—**'सृष्टि का प्रयोजन'** यही है कि—जिसमें ईश्वर के सृष्टि-निमित्त गुण कर्म स्वभाव का साफल्य होना। जैसे किसी ने किसी से पूछा कि—नेत्र किसलिए हैं? उसने कहा—देखने के लिये। वैसे ही सृष्टि करने के ईश्वर के सामर्थ्य की सफलता सृष्टि करने में है। और जीवों के कर्मों का यथावत् भोग कराना आदि भी।

१०—**'सृष्टि सकर्तृक'**[3] है, इसका कर्त्ता पूर्वोक्त ईश्वर है। क्योंकि सृष्टि की रचना देखने, और जड़ पदार्थ में अपने-आप यथायोग्य बीजादि स्वरूप बनने का सामर्थ्य न होने से 'सृष्टि का कर्त्ता' अवश्य है।

---

७. **प्रवाह से अनादि**—जो कार्य जगत्, जीव के कर्म और जो इनका संयोग-वियोग है, ये तीन 'परम्परा से अनादि' हैं। —आ० रा० ५३

८. **सृष्टि**—अनादि नित्यस्वरूप सत्त्व-रजस् और तमोगुणों की एकावस्थारूप प्रकृति से उत्पन्न जो परम सूक्ष्म पृथक्-पृथक् तत्त्वावयव विद्यमान हैं, उन्हीं का प्रथम ही जो संयोग का आरम्भ है, उन संयोग-विशेषों से अवस्थान्तर=दूसरी-दूसरी अवस्था को सूक्ष्म से स्थूल-स्थूल बनते-बनाते विचित्ररूप बनी है। इसी से यह संसर्ग होने से 'सृष्टि' कहाती है। —स० प्र० ८, पृ० ३४५

जो कर्त्ता की रचना से कारण द्रव्य किसी संयोगविशेष से अनेक प्रकार कार्यरूप होकर वर्त्तमान में व्यवहार करने योग्य होती है, वह 'सृष्टि' कहाती है। —आ० र० ३७

९. **सृष्टि का प्रयोजन**—योगदर्शन में सृष्टि का प्रयोजन बताया है—'भोगापवर्गार्थं दृश्यम्' अर्थात् सृष्टि की रचना पूर्वकृत कर्मों का फल भोगने और मोक्षलाभ के लिए अपेक्षित पुरुषार्थ का अवसर प्रदान करने के लिए की गई है।

१०. **सृष्टिकर्तृक**—विना कर्त्ता के कोई भी क्रिया वा क्रियाजन्य पदार्थ नहीं बन सकता। जो अनादि ईश्वर जगत् का कर्त्ता न हो तो साधनों से सिद्ध होनेवाले जीवों का आधार जीवनरूप जगत्, शरीर और इन्द्रियों के गोलक कैसे बनते? कोई भी योगी[4] आज तक ईश्वरकृत सृष्टिक्रम को बदलनेहारा नहीं हुआ है, और न होगा। अनन्त ज्ञान और सामर्थ्यवाला कभी कोई नहीं हो सकता।

जब कोई किसी पदार्थ को देखता है तो दो प्रकार का ज्ञान उत्पन्न होता है—एक, जैसा वह पदार्थ है, और दूसरा उसकी रचना को देखकर बनानेवाले का ज्ञान होता है। जैसे किसी पुरुष ने सुन्दर आभूषण जंगल में पाया। देखा तो विदित हुआ कि यह सुवर्ण का है, और किसी बुद्धिमान् कारीगर ने

---

१. आर्योद्देश्य० सं० ५३; ऋ० भा० भूमिका पृष्ठ २०।

२. आर्योद्देश्य० सं० ३७; स० प्र० समुल्लास ८, पृष्ठ ३४५-३४६।

३. स० प्र० समुल्लास ८, पृष्ठ ३४१, ३४७-३४८।

४. 'योगी' पद यहाँ आवश्यक है, क्योंकि योगदर्शन व्यासभाष्य में अणिमासिद्धि सम्पन्न योगी की शक्ति के उल्लेख से ऐसी भ्रान्ति हो सकती है। वस्तुतस्तु वहाँ वैसा उल्लेख उस (योगी) की शक्त्यतिशयता या प्रशंसापरक अर्थवाद मात्र है।

११—'बन्ध'—सनिमित्तक अर्थात् अविद्या-निमित्त से है। जो-जो पापकर्म ईश्वर-भिन्नोपासना अज्ञानादि सब दु:खफल करनेवाले हैं। इसीलिए यह बन्ध है, कि जिसकी इच्छा नहीं, और भोगना पड़ता है।

१२—'मुक्ति'[1]—अर्थात् सर्व दु:खों से छूटकर बन्धरहित सर्वव्यापक ईश्वर और उसकी सृष्टि में स्वेच्छा से विचरना, नियत समय पर्यन्त मुक्ति के आनन्द को भोग के पुन: संसार में आना।

१३—'मुक्ति के साधन'[2]—ईश्वरोपासना अर्थात् योगाभ्यास धर्मानुष्ठान, ब्रह्मचर्य्य से विद्या-प्राप्ति, आप्त विद्वानों का संग, सत्यविद्या सुविचार और पुरुषार्थ आदि हैं।

१४—'अर्थ'—वह है कि जो धर्म ही से प्राप्त किया जाय, और जो अधर्म से सिद्ध होता है, उसको 'अनर्थ' कहते हैं।

१५—'काम'—वह है कि जो धर्म और अर्थ से प्राप्त किया जाय।

१६—'वर्णाश्रम'[3]—गुण कर्मों की योग्यता से मानता हूँ।

बनाया है। इसी प्रकार इस नाना प्रकार की सृष्टि में विविध रचना बनानेवाले परमेश्वर को सिद्ध करती है। —स० प्र० ८, पृ० ३४१-३४२, ३४७-३४८

११. **बन्ध**—'बन्धो विपर्ययात्'—बन्धन का कारण विपरीत ज्ञान है।

१२. **मुक्ति**—अर्थात् जिससे सब बुरे कामों और जन्म-मरणादि दु:खसागर से छूटकर सुख-स्वरूप परमेश्वर को प्राप्त होके सुख ही में रहना है, वह मुक्ति कहाती है। —आ० र० २९

'मुञ्चन्ति पृथग्भवन्ति जना यस्यां सा मुक्तिः'—जिसमें (दुखों से) छूट जाना हो, उसका नाम 'मुक्ति' है। —स० प्र० ९, पृ० ३६६

१३. **मुक्ति के साधन**—जो मुक्ति चाहे वह जीवनमुक्त अर्थात् जिन मिथ्याभाषणादि पापकर्मों का फल दु:ख है, उनको छोड़ सुखरूप फल को देनेवाले सत्यभाषणादि धर्माचरण अवश्य करे। जो कोई दु:ख को छुड़ाना और सुख को प्राप्त होना चाहे, वह अधर्म को छोड़ धर्म अवश्य करे। क्योंकि दु:ख का पापाचरण और सुख का धर्माचरण मूल कारण है। —स० प्र० ९, पृ० ३७९

अर्थात् जो पूर्वोक्त ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना का करना, धर्म का आचरण और पुण्य का करना, सत्संग, विश्वास, तीर्थसेवन, सत्पुरुषों का संग और परोपकारादि सब अच्छे कामों का करना तथा सब दुष्ट कर्मों से अलग रहना है, ये सब 'मुक्ति' के साधन कहाते हैं। —आ० र० ३०

१४. **अर्थ**—सर्वेषामेव शौचानामर्थशौचं परमं स्मृतम्।

१५. **काम**—अर्थ और काम से पहले धर्म और बाद में मोक्ष को रखने का तात्पर्य यह है कि इनकी सार्थकता मोक्ष को लक्ष्य में रखकर धर्मपूर्वक सम्पन्न करने में है।

१६. **वर्णाश्रम**—जो गुण और कर्मों के योग से ग्रहण किया जाता है, वह 'वर्ण' शब्दार्थ से लिया जाता है। जिसमें अत्यन्त परिश्रम करके उत्तम गुणों का ग्रहण और श्रेष्ठ काम किए जायें, उनको 'आश्रम' कहते हैं।

---

१. आर्योद्देश्य० सं० २९; ऋग्वेदा० भूमिका पृष्ठ २१२।
२. आर्योद्देश्य० सं० ३०; ऋग्वेदादि० भूमिका पृष्ठ २१५।
३. आर्योद्देश्य० सं० ४३, ४४, ४५, ४६; ऋग्वेदादि० भूमिका पृष्ठ २७०-२७१।

१७—'**राजा**' उसी को कहते हैं—जो शुभ गुण कर्म स्वभाव से प्रकाशमान, पक्षपातरहित न्यायधर्म का सेवी, प्रजाओं में पितृवत् वर्त्ते। और उनको पुत्रवत् मान के उनकी उन्नति और सुख बढ़ाने में सदा यत्न किया करे।

१८—'**प्रजा**' उसको कहते हैं कि—जो पवित्र गुण कर्म स्वभाव को धारण करके, पक्षपातरहित न्यायधर्म के सेवन से राजा और प्रजा की उन्नति चाहती हुई राजविद्रोहरहित राजा के साथ पुत्रवत् वर्त्ते।

१९—**न्यायकारी**—जो सदा विचारकर असत्य को छोड़ सत्य का ग्रहण करे, अन्यायकारियों को हटावे, और न्यायकारियों को बढ़ावे, अपने आत्मा के समान सबका सुख चाहे, सो 'न्यायकारी'[1] है। उनको मैं भी ठीक मानता हूँ।

२०—'**देव**'—विद्वानों को, और अविद्वानों को 'असुर', पापियों को 'राक्षस', अनाचारियों को 'पिशाच' मानता हूँ।

२१—'**देवपूजा**'—उन्हीं विद्वानों, माता पिता आचार्य अतिथि, न्यायकारी राजा, और धर्मात्मा जन, पतिव्रता स्त्री, और स्त्रीव्रत पति का सत्कार करना 'देवपूजा'[2] कहाती है। इससे विपरीत 'अदेव-पूजा'। इसकी मूर्त्तियों को पूज्य, और इतर पाषाणादि जड़मूर्त्तियों को सर्वथा अपूज्य समझता हूँ।

२२—'**शिक्षा**'—जिससे विद्या सभ्यता धर्मात्मा जितेन्द्रियतादि की बढ़ती होवे, और अविद्यादि दोष छूटें, उसको 'शिक्षा' कहते हैं।

२३—'**पुराण**'[3]—जो ब्रह्मादि के बनाये ऐतरेयादि ब्राह्मण पुस्तक हैं, उन्हीं को पुराण इतिहास कल्प-गाथा और नाराशंसी नाम से मानता हूँ। अन्य भागवतादि को नहीं।

१७-२२ तथैव।

२३. **पुराण**—जो प्राचीन ऐतरेय, शतपथब्राह्मणादि ऋषि-मुनिकृत सत्यार्थपुस्तक हैं, उन्हीं को पुराण, इतिहास, कल्प, गाथा और नाराशंसी कहते हैं। —आ० र० ९६

जो ऐतरेय शतपथादि ब्राह्मण लिख आये, उन्हीं के इतिहास, पुराण, कल्प, गाथा और नाराशंसी ये पाँच नाम हैं। इतिहास=जैसे जनक और याज्ञवल्क्य का संवाद। पुराण=जगदुत्पत्ति आदि का वर्णन। कल्प=वेदशब्दों के सामर्थ्य का वर्णन, अर्थनिरूपण करना। गाथा=किसी का दृष्टान्त-दार्ष्टान्तरूप कथा प्रसंग कहना। नाराशंसी=मनुष्यों के प्रशंसनीय वा अप्रशंसनीय कर्मों का कथन करना। इन्हीं से वेदार्थ का बोध होता है। —स० प्र० ११, पृ० ५१५

'पुराण' शब्द से ब्रह्मवैवर्त्तादि अठारह पुराण और उपपुराण लेते हो, सो ठीक नहीं। क्योंकि 'पुराण' शब्द विशेषणवाचक होने से व्यावर्त्तक अर्थवाची होता है। जैसे पुराने प्राचीन आदि शब्द नवीन और अर्वाचीन आदि शब्दार्थों को निवृत्त करते वैसे पुराणादि शब्द नवीन आदि के वाच्य अर्थों को निवृत्त करते हैं। जैसे—किसी ने कहा कि पुराना घृत, पुराना गुड़, पुरानी साड़ी—इससे घृत आदि में नवीनपन की निवृत्ति हो गई। इस कारण पुराण शब्द से वेद और वेद के व्याख्यान ब्राह्मणग्रन्थों का ग्रहण होता है, ब्रह्मवैवर्त्तादि का नहीं।

---

१. अर्थात् न्यायाधीश।

२. तुलना करो—'पञ्चायतन-पूजा' आर्योद्देश्य० संख्या ६४; स. प्र. समुल्लास ११, पृष्ठ ४६३, ४६४।

३. आर्योद्देश्य० सं० ९६; स० प्र० समुल्लास ३, पृष्ठ १२१; समुल्लास ११, पृष्ठ ५१५। वेदविरुद्धमतखण्डन पृष्ठ ४००-४०१।

२४—'तीर्थ'[1]—जिससे दुःखसागर से पार उतरें, कि जो सत्य-भाषण विद्या सत्संग यमादि योगाभ्यास पुरुषार्थ विद्यादानादि शुभ कर्म हैं, उसी को 'तीर्थ' समझता हूँ। इतर जलस्थलादि को नहीं।

२५—'पुरुषार्थ प्रारब्ध से बड़ा' इसलिए है—कि जिससे संचित प्रारब्ध बनते, जिसके सुधरने से सब सुधरते, और जिसके बिगड़ने से सब बिगड़ते हैं। इसी से प्रारब्ध की अपेक्षा पुरुषार्थ बड़ा है।

२६—'मनुष्य'[2] को सबसे यथायोग्य स्वात्मवत् सुख-दुःख हानि-लाभ में बर्त्तना श्रेष्ठ, अन्यथा वर्त्तना बुरा समझता हूँ।

कल्पसूत्रकारों ने लिखा है कि 'ब्राह्मणग्रन्थ ही इतिहास पुराण नामक हैं'; 'अश्वमेध यज्ञ में दशमे दिन कुछ थोड़ी पुराण की कथा कहे-सुने'; 'पुराणविद्यावेद का व्याख्यान दशमे दिन सुने।' अर्थात् नव दिन तक यज्ञ में ऋग्वेदादि कहके दशमे दिन ब्रह्मज्ञान का प्रतिपादक ब्राह्मणान्तर्गत उपनिषद् भाग यजमान आदि कहें और सुनें। इस प्रकार 'पुराण' शब्द से ब्राह्मण और वेद का ही ग्रहण करना, अन्य का नहीं, ऐसी साक्षी है। और वेद ही सबसे पुराने हैं।

परन्तु हमारा मत वेद है, अन्य नहीं, यही सिद्धान्त है। ब्रह्मवैवर्त्तादि पुराण व्यासजी के नाम के छल से मतवादी जीविकार्थी लोगों ने मनुष्यों को भ्रान्तिवाले बनाये हैं। जैसे शिव आदि के नाम के छल से तन्त्र और याज्ञवल्क्यादि के नाम के छल से याज्ञवल्क्यादिस्मृति रची हैं, वैसे ही ब्रह्मवैवर्त्तादि पुराण जानो। —वेदविरुद्धमतखण्डनम्, पृ० ४०१

२४. तीर्थ—वेदादि सत्यशास्त्रों का पढ़ना-पढ़ाना, धार्मिक विद्वानों का सङ्ग, परोपकार, धर्मानुष्ठान, योगाभ्यास, निर्वैर, निष्कपट, सत्यभाषण सत्य का मानना सत्य करना, ब्रह्मचर्य, आचार्य, अतिथि, माता-पिता की सेवा, परमेश्वर की स्तुतिप्रार्थनोपासना, शान्ति, जितेन्द्रियता, सुशीलता, धर्म-युक्त पुरुषार्थ, ज्ञान-विज्ञान आदि शुभ गुण कर्म दुःखों से तारनेवाले होने से 'तीर्थ' हैं।

और जो जलस्थलमय हैं, वे तीर्थ कभी नहीं हो सकते। क्योंकि 'जना यैस्तरन्ति तानि तीर्थानि' —मनुष्य जिन करके दुःखों से तरें, उनका नाम 'तीर्थ' है। जल-स्थल तरानेवाले नहीं, किन्तु डुबानेवाले हैं। प्रत्युत नौका आदि का नाम 'तीर्थ' हो सकता है, क्योंकि उनसे भी समुद्र आदि को तरते हैं।

—स० प्र० ११, पृ० ५११

जितने विद्याभ्यास, सुविचार, ईश्वरोपासना, धर्मानुष्ठान, सत्य का संग, ब्रह्मचर्य, जितेन्द्रियतादि उत्तम कर्म हैं, वे सब 'तीर्थ' कहाते हैं।

२५ पुरुषार्थ प्रारब्ध से बड़ा—तथैव।

२६. मनुष्य—मैं भी जो किसी एक का पक्षपाती होता, तो जैसे आजकल के स्वमत की स्तुति मण्डन और प्रचार करते, और दूसरे मत की निन्दा, हानि और बन्ध करने में तत्पर होते हैं, वैसे मैं भी होता। परन्तु ऐसे बातें मनुष्यपन से बाहर हैं। क्योंकि जैसे पशु बलवान् होकर निर्बलों को दुःख देते और मार भी डालते हैं, अब मनुष्य जन्म पाके भी वैसा ही कर्म करते हैं, तो वे मनुष्यस्वभावयुक्त नहीं, किन्तु पशुवत् हैं। और जो बलवान् होकर निर्बलों की रक्षा करता है, वही मनुष्य कहाता है। और जो स्वार्थवश परहानि मात्र करता रहता है, वह जानो पशुओं का भी बड़ा भाई है। —स० प्र० भूमिका, पृ० ८

'मनुष्य उसी को कहना······धर्म से पृथक् कभी न होवे'। —स० प्र० स्वमन्तव्या, पृ० ६५२

'जो विचार के विना किसी काम को न करे, उसका नाम मनुष्य है।' —आ० र० ३६

---

१. आर्योद्देश्य० सं० २०। स० प्र० समुल्लास ११, पृष्ठ ५११; ऋग्वेदादि० भूमिका, पृष्ठ ३४०।

२. आर्योद्देश्य० सं० ३६। स० प्र० भूमिका पृष्ठ ८; स्वमन्तव्यामन्तव्य० पृष्ठ ६५२।

२७—**'संस्कार'** उसको कहते हैं—कि जिससे शरीर मन और आत्मा उत्तम होवे। वह निषेकादि श्मशानान्त सोलह प्रकार का है। इसको कर्त्तव्य समझता हूँ। और दाह के पश्चात् मृतक के लिए कुछ भी न करना चाहिए।

२८—**'यज्ञ'**[1] उसको कहते हैं—कि जिसमें विद्वानों का सत्कार, यथायोग्य शिल्प अर्थात् रसायन जोकि पदार्थविद्या उससे उपयोग, और विद्यादि शुभ गुणों का दान, अग्निहोत्रादि जिनसे वायु वृष्टि जल ओषधि की पवित्रता करके सब जीवों को सुख पहुँचाना है, उसको उत्तम समझता हूँ।

२९—जैसे **'आर्य'**[2] श्रेष्ठ, और 'दस्यु'[3] दुष्ट मनुष्यों को कहते हैं, वैसे ही मैं भी मानता हूँ।

३०—**'आर्य्यावर्त'**[4] —देश इस भूमि का नाम इसलिए है कि इसमें आदि-सृष्टि से आर्यलोग निवास करते हैं। परन्तु इसकी अवधि उत्तर में हिमालय, दक्षिण में विन्ध्याचल, पश्चिम में अटक, और पूर्व में ब्रह्मपुत्रा नदी है। इन चारों के बीच में जितना देश है, उसको 'आर्य्यावर्त्त' कहते हैं। और जो इसमें[5] सदा रहते हैं, उनको भी 'आर्य' कहते हैं।

---

२७. **संस्कार**—तथैव।

२८. **यज्ञ**—जो अग्निहोत्र से लेके अश्वमेध पर्यन्त, वा जो शिल्पव्यवहार और जो पदार्थविज्ञान है, जोकि जगत् के व्यवहार के लिए किया जाता है, उसको यज्ञ कहते हैं। —आ० र० ४७

२९. **आर्य व दस्यु**—श्रेष्ठों का नाम आर्य, विद्वान्, देव और दुष्टों के दस्यु अर्थात् डाकू, मूर्ख नाम होने से 'आर्य' और 'दस्यु' दो नाम हुए। 'उत शूद्रे उत आर्ये' यह अथर्ववेद १९।६२।१ का वचन है। आर्यों में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र चार भेद हुए। द्विज=विद्वानों का नाम 'आर्य' और मूर्खों का नाम शूद्र और अनार्य हुआ। —स० प्र० ८, पृ० ३५०

'आर्य' नाम धार्मिक, विद्वान्, आप्त पुरुषों का और इनके विपरीत जनों का नाम 'दस्यु' अर्थात् डाकू, दुष्ट, अधार्मिक और अविद्वान् है। तथा ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य द्विजों का नाम 'आर्य' और शूद्र का नाम 'अनार्य' है।

जो श्रेष्ठ स्वभाव, धर्मात्मा, परोपकारी, सत्यविद्या गुणयुक्त और आर्यावर्त्त देश में सब दिन से रहनेवाले हैं, उनको 'आर्य' कहते हैं। अनार्य अर्थात् जो अनाड़ी, आर्यों के स्वभाव और निवास से पृथक्, डाकू और हिंसक जोकि दुष्ट मनुष्य है, वह 'दस्यु' कहाता है। —आ० र० ४०, ४२

३०. **आर्यावर्त्त**—उत्तर में हिमालय, दक्षिण में विन्ध्याचल, पूर्व और पश्चिम में समुद्र। तथा सरस्वती पश्चिम में अटक नदी, पूर्व में दृषद्वती जो नेपाल के पूर्व भाग पहाड़ से निकल के बंगाल के आसाम के पूर्व और ब्रह्मा के पश्चिम ओर होकर दक्षिण के समुद्र में गिरती है, जिसको ब्रह्मपुत्रा कहते हैं और जो उत्तर के पहाड़ों से निकल के दक्षिण के समुद्र की खाड़ी में आकर मिलती है। हिमालय की मध्य रेखा से दक्षिण और पहाड़ों के भीतर और रामेश्वरपर्यन्त विन्ध्याचल के भीतर जितने देश हैं, उन सबको 'आर्यावर्त्त' इसलिए कहते हैं कि यह आर्यावर्त्त देव अर्थात् विद्वानों ने बसाया। और आर्यजनों के निवास करने से 'आर्यावर्त्त' कहाया है। —स० प्र० ८, पृ० ३५१

१. आर्योद्देश्य० सं० ४७।
२. स० प्र० समुल्लास ८, पृष्ठ ३५०, ३५२; आर्योद्देश्य० सं० ४०।
३. स० प्र० समुल्लास ८, पृष्ठ ३५०, ३५२, ३५३; आर्योद्देश्य० सं ४२।
४. स० प्र० समुल्लास ८, पृष्ठ ३५०, ३५१; आर्योद्देश्य० सं० ४१।
५. संस्करण २ में 'इनमें' पाठ है।

३१—**आचार्य**—जो साङ्गोपाङ्ग वेदविद्याओं का अध्यापक सत्याचार का ग्रहण और मिथ्याचार का त्याग करावे, वह 'आचार्य'[1] कहाता है।

३२—**'शिष्य'** उसको कहते हैं—कि जो सत्यशिक्षा और विद्या को ग्रहण करने योग्य धर्मात्मा, विद्याग्रहण की इच्छा और आचार्य का प्रिय करनेवाला है।

३३—**'गुरु'**[2]—माता-पिता, और जो सत्य का ग्रहण करावे और असत्य को छुड़ावे, वह भी 'गुरु' कहाता है।

३४—**'पुरोहित'**—जो यजमान का हितकारी सत्योपदेष्टा होवे।

३५—**'उपाध्याय'**—जो वेदों का एकदेश वा अङ्गों को पढ़ाता हो।

३६—**'शिष्टाचार'**[3]—जो धर्माचरणपूर्वक ब्रह्मचर्य से विद्याग्रहण कर, प्रत्यक्षादि प्रमाणों से सत्याऽसत्य का निर्णय करके सत्य का ग्रहण असत्य का परित्याग करना है, यही 'शिष्टाचार', और जो इसको करता है वह 'शिष्ट' कहाता है।

३७—प्रत्यक्षादि **'आठ प्रमाणों'**[4] को भी मानता हूँ।

हिमालय, विन्ध्याचल, सिन्धु नदी और ब्रह्मपुत्र नदी—इन चारों के बीच और जहाँ तक उनका विस्तार है, उनके मध्य में जो देश है, उसका नाम 'आर्यावर्त्त' है। —आ० र० ४१

३१. **आचार्य**—जो विद्यार्थियों को अत्यन्त प्रेम से धर्मयुक्त व्यवहार की शिक्षापूर्वक विद्या होने के लिए तन, मन और धन से प्रयत्न करे, उसको 'आचार्य' कहते हैं। – व्य० भा० ५०२

जो द्विज यज्ञोपवीत कराके कल्पसूत्र और वेदान्तसहित शिष्य को वेद पढ़ावे, उसको 'आचार्य' कहते हैं। —वेद० मत० ३८८

जो श्रेष्ठ आचार को ग्रहण कराके सब विद्याओं को पढ़ा देवे, उसे 'आचार्य' कहते हैं। —आ० र० ६१

३२. **शिष्य**—तथैव।

३३. **गुरु**—जो वीर्यदान से लेके भोजनादि कराके पालन करता है, इससे पिता को 'गुरु' कहते हैं। और जो सत्योपदेश से हृदय का अज्ञानरूपी अन्धकार मिटा देवे, उसको भी 'गुरु' अथवा आचार्य कहते हैं। —आ० र० ६२

जो विधिपूर्वक गर्भाधान आदि कर्मों को करता और अन्नादि से पालन करता है, वह ब्राह्मण 'गुरु' कहाता है। —वेद० मत० ३९०

३४. **पुरोहित;** ३५. **उपाध्याय**—तथैव

३६. **शिष्टाचार**—जिसमें शुभ गुणों का ग्रहण और अशुभ गुणों का परित्याग किया जाता है, वह 'शिष्टाचार' कहाता है।

३७. स० प्र० पृ० ९३-९७

---

१. स० प्र० समुल्लास ११, पृष्ठ ४९४; संस्कारविधि पृष्ठ ९९ पर टि०; व्यवहारभानु पृष्ठ ५०२; वेदविरुद्धमतखण्डन पृष्ठ ४८८; आर्योद्देश्य० सं० ६१।

२. वेदविरुद्धमतखण्डन पृष्ठ ३९०; शिक्षापत्रीध्वान्तनिवारण पृष्ठ ४३६; आर्योद्देश्य० सं० ६२।

३. आर्योद्देश्य० सं० ५८।

४. स० प्र० समुल्लास ३, पृष्ठ ९३; प्रमाणों के लक्षण—स० प्र० समुल्लास ३, पृष्ठ ९३—९७; ऋग्वेदादि० भूमिका पृष्ठ ६०-६१; व्यवहारभानु ५०६; आर्योद्देश्य० सं० ८३; ८६—९२।

३८—'आप्त'[1]—जो यथार्थवक्ता, धर्मात्मा, सबके सुख के लिए प्रयत्न करता है, उसी को 'आप्त' कहता हूँ।

३९—'परीक्षा'[2]—पाँच प्रकार की है। इसमें से प्रथम—जो ईश्वर, उसके गुण कर्म स्वभाव, और वेदविद्या। दूसरी—प्रत्यक्षादि आठ प्रमाण। तीसरी—सृष्टिक्रम। चौथी - आप्तों का व्यवहार।

प्रत्यक्षादि आठ प्रमाणों से परीक्षा करना उसको कहते हैं कि जो-जो प्रत्यक्षादि प्रमाणों से ठीक-ठीक ठहरे वह सत्य, और जो-जो विरुद्ध ठहरे वह मिथ्या समझना चाहिए। जैसे—किसी ने किसी से कहा कि यह क्या है? दूसरे ने कहा कि पृथिवी, यह 'प्रत्यक्ष' है। इसको देखकर इसके कारण का निश्चय करना, यह 'अनुमान'। जैसे—विना बनानेहारे के घर नहीं बन सकता, वैसे ही सृष्टि का वनानेहारा ईश्वर भी बड़ा कारीगर है, यह दृष्टान्त 'उपमान'। और सत्योपदेष्टाओं का उपदेश, यह 'शब्द'। भूत-कालस्थ पुरुषों की चेष्टा, सृष्टि आदि पदार्थों की कथा को 'ऐतिह्य'। एक बात को सुनकर विना कहे-सुने प्रसंग से दूसरी बात को समझ लेना, यह 'अर्थापत्ति'। कारण से कार्य होना आदि को 'सम्भव'। और आठवाँ 'अभाव' अर्थात् किसी ने किसी से कहा कि जल ले आ। उसने वहाँ जल के अभाव को जानकर तर्क से जाना कि जहाँ जल है, वहाँ से लाकर देना चाहिए, यह अभाव प्रमाण कहाता है। इन आठ प्रमाणों से जो-जो विपरीत न हो वह-वह सत्य, और जो-जो उलटा हो वह-वह मिथ्या है। —व्य० भा० ५०९

३८. **आप्त**—जो छलादिदोषरहित, धर्मात्मा, विद्वान्, सत्योपदेष्टा, सब प्रकार कृपादृष्टि से वर्त्तमान होकर, अविद्यान्धकार का नाश करके, अज्ञानी लोगों की आत्माओं में विद्यारूप सूर्य का सदा प्रकाश करे, उसको 'आप्त' कहते हैं। —आ० र० ८१

आप्त अर्थात् पूर्ण विद्वान्, धर्मात्मा, परोपकारप्रिय, सत्यवादी, पुरुषार्थी, जितेन्द्रिय पुरुष, जैसा अपने आत्मा में जानता हो और जिससे सुख पाया हो, उसी के कथन की इच्छा सें प्रेरित सब मनुष्यों के कल्याणार्थ उपदेष्टा हो। अर्थात् जो पृथिवी से लेके परमेश्वरपर्यन्त पदार्थों का ज्ञान प्राप्त कर उपदेष्टा होता है। —स० प्र० ३, पृ० ९५

३९. **परीक्षा**—जो प्रत्यक्षादि आठ प्रमाण, वेदविद्या, आत्मा की शुद्धि और सृष्टिक्रम से अनुकूल विचार के सत्यासत्य का ठीक-ठीक निश्चय करना है, उसको परीक्षा कहते हैं। —आ० र० ८२

परीक्षा पाँच प्रकार से होती है—

एक—जो-जो ईश्वर के गुण-कर्म-स्वभाव और वेदों के अनुकूल हो, वह-वह सत्य और उससे विरुद्ध असत्य है।

दूसरी—जो-जो सृष्टिक्रम के अनुकूल हो वह-वह सत्य और जो-जो सृष्टिक्रम से विरुद्ध है, वह-वह असत्य है। जैसे कोई कहे कि विना माता-पिता के संयोग के लड़का उत्पन्न हुआ, ऐसा कथन सृष्टि-क्रम से विरुद्ध होने से सर्वथा असत्य है।

तीसरी—'आप्त' अर्थात् जो धार्मिक विद्वान्, सत्यवादी, निष्कपटियों का संग उपदेश के अनुकूल है, वह-वह ग्राह्य और जो-जो विरुद्ध, वह-वह अग्राह्य है।

चौथी—अपने आत्मा की पवित्रता, विद्या के अनुकूल अर्थात् जैसा अपने को सुख प्रिय और दुःख अप्रिय है, वैसे ही समझ लेना कि 'मैं भी किसी को दुःख वा सूख दूंगा तो वह भी अप्रसन्न और प्रसन्न होगा।'

---

१. आर्योद्देश्य० सं० ८१।

२. स० प्र० समुल्लास ३, पृष्ठ ९२; व्यवहारभानु पृष्ठ ५०८-५१०; आर्योद्देश्य० सं० ८२।

और पाँचवीं—अपने आत्मा की पवित्रता, विद्या। इन पाँच परीक्षाओं से सत्याऽसत्य का निर्णय करके सत्य का ग्रहण, असत्य का परित्याग करना चाहिए।

४०—'परोपकार'[1]— जिससे मनुष्यों के दुराचार दुःख छूटें, श्रेष्टाचार और सुख बढ़ें, उसके करने को 'परोपकार' कहता हूँ।

पाँचवी—आठों प्रमाण अर्थात् प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्द, ऐतिह्य, अर्थापत्ति, सम्भव और अभाव।

—स० प्र० ३, पृ० ६२-६३

सत्यासत्य का निर्णय करने में निश्चित साधन पाँच हैं। उनमें से प्रथम—ईश्वर, उसके गुण कर्म स्वभाव और वेदविद्या। दूसरा—सृष्टिक्रम। तीसरा—प्रत्यक्षादि आठ प्रमाण। चौथा—आप्तों का आचार, उपदेश, ग्रन्थ और सिद्धान्त। पाँचवाँ—अपने आत्मा की साक्षी, अनुकूलता, पवित्रता और विज्ञान।

ईश्वरादि से परीक्षा उसको कहते हैं कि जो-जो ईश्वर, ईश्वर के न्याय आदि गुण, पक्षपात-रहित सृष्टि बनाने का कर्म और सत्य, न्याय, दयालुता, परोपकारता आदि स्वभाव और वेदोपदेश से सत्य और धर्म ठहरे, वही सत्य और धर्म है। और जो-जो असत्य और अधर्म ठहरे, वही असत्य और अधर्म है। जैसे—कोई कहे कि विना कारण और कर्त्ता के कार्य होता है, सो सर्वथा मिथ्या जानना। इससे यह सिद्ध होता है कि जो सृष्टि की रचना करनेहारा पदार्थ है, वही ईश्वर, और उसके गुण-कर्म-स्वभाव, वेद और सृष्टिक्रम से ही निश्चित जाने जाते हैं।

दूसरा सृष्टिक्रम उसको कहते हैं कि जो-जो सृष्टिक्रम अर्थात् सृष्टि के गुण, कर्म और स्वभाव से विरुद्ध हो वह मिथ्या और जो अनुकूल हो वह सत्य कहाता है। जैसे—कोई कहे कि (मैथुनी सृष्टि में) विना माँ-बाप के लड़का, कान से देखना, आँख से बोलना आदि होता है या हुआ है, ऐसी-ऐसी बातें सृष्टिक्रम के विरुद्ध होने से मिथ्या और माता-पिता से सन्तान, कान से सुनना और आँख से देखना आदि सृष्टिक्रम के अनुकूल होने से सत्य है।

तीसरा प्रत्यक्ष आदि आठ प्रमाणों से परीक्षा करना उसको कहते हैं कि जो-जो प्रत्यक्ष आदि प्रमाणों से ठीक-ठीक ठहरे वह सत्य और जो-जो विरुद्ध ठहरे वह मिथ्या समझना चाहिए। जैसे—किसी ने किसी से कहा कि यह क्या है? दूसरे ने कहा कि पृथिवी, यह प्रत्यक्ष है। इसको देखकर इसके कारण का निश्चय करना, यह 'अनुमान' है। जैसे विना बनाने हारे के घर नहीं बनता, वैसे ही सृष्टि का बनानेहारा ईश्वर भी बड़ा कारीगर है। यह दृष्टान्त 'उपमान'। और सत्योपदेष्टाओं का उपदेश, वह 'शब्द'। भूतकालस्थ पुरुषों की चेष्टा, सृष्टि आदि पदार्थों की कथा आदि को 'ऐतिह्य'। एक बात को सुनकर विना सुने-कहे प्रसंग से दूसरी बात को जान लेना, यह 'अर्थापत्ति'। कारण से कार्य होना आदि 'सम्भव' और आठवाँ 'अभाव' अर्थात् किसी-ने-किसी से कहा कि जल ले आ। वहाँ उसने जल के अभाव को जानकर तर्क से जाना कि जहाँ जल है, वहाँ से लाकर देना चाहिए, यह 'अभाव' प्रमाण कहाता है। इन आठ प्रमाणों से जो-जो विपरीत न हो, वह-वह सत्य और जो-जो उलटा हो, वह-वह मिथ्या है।

—व्य० भा० ५०८-५१०

४०. **परोपकार**—सब सामर्थ्य से दूसरे प्राणियों को सुख होने के लिए जो तन-मन-धन से प्रयत्न करना है, वह परोपकार कहाता है। —आ० र० ५७

---

१. आर्योद्देश्य० सं० ५७।

४१—**'स्वतन्त्र'**; **'परतन्त्र'**—जीव अपने कामों में स्वतन्त्र, और कर्मफल भोगने में ईश्वर की व्यवस्था से परतन्त्र। वैसे ही ईश्वर अपने सत्याचार आदि काम करने में स्वतन्त्र है।

४२—**'स्वर्ग'**[१]—नाम सुख-विशेष भोग और उसकी सामग्री की प्राप्ति का है।

४३—**'नरक'**[२]—जो दुःख-विशेष भोग और उसकी सामग्री को प्राप्त होना है।

४४—**'जन्म'**[३]—जो शरीर धारण कर प्रकट होना। सो पूर्व पर और मध्य भेद से तीनों प्रकार का मानता हूँ।

४५—**जन्म-मृत्यु**—शरीर के संयोग का नाम 'जन्म' और वियोगमात्र को 'मृत्यु'[४] कहते हैं।

४६—**'विवाह'**—जो नियमपूर्वक प्रसिद्धि से अपनी इच्छा करके पाणिग्रहण करना, वह 'विवाह' कहाता है।

४७—**'नियोग'**—विवाह के पश्चात् पति वा पत्नी के मर जाने आदि वियोग में, अथवा नपुंसकत्वादि स्थिर रोगों में, स्त्री वा पुरुष का आपत्काल में स्ववर्ण वा अपने से उत्तम वर्णस्थ स्त्री वा पुरुष के साथ सन्तानोत्पत्ति करना।

४८—**'स्तुति'**[५]—गुण-कीर्तन श्रवण और ज्ञान होना। इसका फल प्रीति आदि होते हैं।

---

४१. तथैव।

४२. **स्वर्ग**—जो विशेष सुख और सुख की सामग्री को जीव का प्राप्त होना है, वह 'स्वर्ग' कहलाता है। —आ० र० १४

४३. **नरक**—जो विशेष दुःख और दुःख की सामग्री को जीव का प्राप्त होना है, वह 'नरक' कहाता है। —आ० र० १५

४४. **जन्म**—जिसमें किसी शरीर के साथ संयुक्त होके जीव कर्म करने में समर्थ होता है, उसको 'जन्म' कहते हैं। —आ० र० १२

४५. **जन्म-मृत्यु**—जिस शरीर को प्राप्त होकर जीव क्रिया करता है, उस शरीर और जीव का किसी काल में जो वियोग हो जाना है, उसको 'मरण' कहते हैं। ('जन्म' की व्याख्या पूर्व हो चुकी है)।

४६. **विवाह**; ४७. **नियोग**—तथैव।

४८. **स्तुति**—गुणों में गुण और दोषों में दोषों का कथन करना 'स्तुति' कहाती है, अर्थात् सत्यभाषण का नाम 'स्तुति' है। —स० प्र० ४, पृ० १५६

जो ईश्वर वा किसी दूसरे पदार्थ के गुण ज्ञान कथन श्रवण और सत्यभाषण करना है, वह 'स्तुति' कहाती है। —आ० र० २१

स्तुति का फल—जो गणज्ञान आदि के करने से गुणवाले पदार्थों में प्रीति होती है, वह 'स्तुति का फल' कहाती है। —आ० र० २२

---

१. आर्योद्देश्य० सं० १४।
२. आर्योद्देश्य० सं० १५।
३. आर्योद्देश्य० सं० १२।
४. आर्योद्देश्य० सं० १३।
५. स० प्र० समुल्लास ४, पृष्ठ १५६; आर्योद्देश्य० सं० २१, २२।

४९—**'प्रार्थना'**[1]—अपने सामर्थ्य के उपरान्त ईश्वर के सम्बन्ध से जो विज्ञान आदि प्राप्त होते हैं, उनके लिए ईश्वर से याचना करना। और इसका फल निरभिमान आदि होता है।

५०—**'उपासना'**[2]—जैसे ईश्वर के गुण कर्म स्वभाव पवित्र हैं, वैसे अपने करना। ईश्वर को सर्वव्यापक, और अपने को व्याप्य जान के ईश्वर के समीप हम और हमारे समीप ईश्वर है, ऐसा निश्चय योगाभ्यास से साक्षात् करना 'उपासना' कहाती है। इसका फल ज्ञान की उन्नति आदि है।

५१—**'सगुणनिर्गुण-स्तुतिप्रार्थनोपासना'**[3]—जो-जो गुण परमेश्वर में हैं, उनसे युक्त, और जो-जो गुण नहीं हैं, उनसे पृथक् मानकर प्रशंसा करना 'सगुणनिर्गुण-स्तुति'। शुभ गुणों के ग्रहण की ईश्वर से इच्छा, और दोष छुड़ाने के लिए परमात्मा का सहाय चाहना 'सगुणनिर्गुण-प्रार्थना'। और सब गुणों से सहित, सब दोषों से रहित परमेश्वर को मानकर अपने आत्मा को उसके, और उसकी आज्ञा के अर्पण कर देना 'सगुणनिर्गुणोपासना' कहाती है।

[ये सिद्धान्त मेरे ग्रन्थों में यत्र-तत्र लिखे हैं]

ये संक्षेप से स्वसिद्धान्त दिखला दिये हैं। इनकी विशेष व्याख्या इसी 'सत्यार्थ-प्रकाश' के प्रकरण-प्रकरण में है, तथा 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' आदि ग्रन्थों में भी लिखी है। अर्थात् जो-जो बात सबके सामने माननीय है, उसको मानता। अर्थात् जैसे सत्य बोलना सबके सामने अच्छा, और मिथ्या बोलना बुरा है, ऐसे सिद्धान्तों को स्वीकार करता हूँ।

---

४९. **प्रार्थना**—अपने पूर्ण पुरुषार्थ के उपरान्त उत्तम कर्मों की सिद्धि के लिए परमेश्वर वा किसी सामर्थ्यवाले मनुष्य का सहाय लेने को 'प्रार्थना' कहते हैं।

प्रार्थना का फल—अभिमान का नाश, आत्मा में आर्द्रता, गुण ग्रहण में पुरुषार्थ और अत्यन्त प्रीति का होना 'प्रार्थना का फल' है। —आ० र० २५

५०. **उपासना**—जिससे ईश्वर ही के आनन्दस्वरूप में अपने आत्मा को मग्न करना है, उसको 'उपासना' कहते हैं।

५१. **सगुणनिर्गुण-स्तुतिप्रार्थनोपासना**—जिस-जिस गुण से सहित परमेश्वर की स्तुति करना वह 'सगुण' और जिस-जिस गुण से पृथक् मानकर परमेश्वर की स्तुति करना है, वह 'निर्गुण' स्तुति है। जिस-जिस गुण से युक्त परमेश्वर को मान तथा उन गुणों को अपने में धारण कराने के लिए और जिस-जिस दोष वा दुर्गुण से परमेश्वर और अपने को भी पृथक् मानके परमेश्वर की प्रार्थना की जाती है, वह विधि-निषेधमुख होने से 'सगुण-निर्गुण' प्रार्थना कहाती है। सर्वगुणों के साथ परमेश्वर की उपासना करना 'सगुण' और राग-द्वेष, रूप, रस, गन्ध, स्पर्शादि गुणों से पृथक् मान अतिसूक्ष्म आत्मा के भीतर-बाहर व्यापक परमेश्वर में दृढ़ स्थित हो जाना 'निर्गुणोपासना' कहाती है। —स० प्र० ७ पृष्ठ २८३

उपासना का फल—जैसे शीत से आतुर पुरुष का अग्नि के पास आने से शीत निवृत्त हो जाता है, वैसे परमेश्वर के समीप प्राप्त होने से सब दोष-दुःख छूटकर परमेश्वर के गुण-कर्म-स्वभाव के सदृश जीवात्मा के गुण-कर्म-स्वभाव पवित्र हो जाते हैं। इसलिए परमेश्वर की स्तुति प्रार्थना और उपासना अवश्य करनी चाहिए।

---

१. आर्योद्देश्य० सं० २४, २५।
२. आर्योद्देश्य० सं० २६।
३. स० प्र० समुल्लास ७, पृष्ठ २८२—२९०; आर्योद्देश्य० सं० २७, २८।

[मतमतान्तर के झगड़ों को मैं प्रसन्न नहीं करता]

और जो मतमतान्तर के परस्पर-विरुद्ध झगड़े हैं, उनको मैं प्रसन्न नहीं करता। क्योंकि इन्हीं मतवालों ने अपने मतों का प्रचार कर मनुष्यों को फँसाके परस्पर शत्रु बना दिये हैं। इस बात को काट, सर्वसत्य का प्रचार कर, सबको ऐक्यमत में करा, द्वेष छुड़ा, परस्पर में दृढ़ प्रीतियुक्त कराके, सबसे सबको सुखलाभ पहुँचाने के लिए मेरा प्रयत्न और अभिप्राय है।

सर्वशक्तिमान् परमात्मा की कृपा सहाय, और आप्तजनों की सहानुभूति से 'यह सिद्धान्त सर्वत्र भूगोल में शीघ्र प्रवृत्त हो जावें', जिससे सब लोग सहज से धर्मार्थ-काम मोक्ष की सिद्धि करके सदा उन्नत और आनन्दित होते रहें। यही मेरा मुख्य प्रयोजन है।

अलमतिविस्तरेण बुद्धिमद्वर्येषु ॥

ओम् शन्नो॑ मि॒त्रः शं वरु॑णः शन्नो॑ भवत्वर्य॒मा।
शन्न॒ इन्द्रो॒ बृह॒स्पतिः॒ शन्नो॒ विष्णु॑रुरुक्र॒मः ॥
नमो॒ ब्रह्म॑णे नम॑स्ते वायो॒ त्वमे॒व प्र॒त्यक्षं॒ ब्रह्मा॑सि।
त्वामे॒व प्र॒त्यक्षं॒ ब्रह्मा॑वादिषम् ऋ॒तम॑वादिषं स॒त्यम॑वादिषम्।
तन्मामा॑वी॒त् तद्व॒क्तार॑मावीद् आवी॒न्माम् आवी॑द्व॒क्तार॑म्[1] ॥
ओ३म् शान्ति॒ः शान्ति॒ः शान्ति॑ः ॥

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्याणां परमविदुषां श्रीविरजानन्द-सरस्वतीस्वामिनां शिष्येण श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीस्वामिना विरचितः स्वमन्तव्यामन्तव्यसिद्धान्तसमन्वितः सुप्रमाणयुक्तः सुभाषाविभूषितः सत्यार्थ-प्रकाशोऽयं ग्रन्थः सम्पूर्तिमगमत् ॥

१. तै० आ० ७।१२।
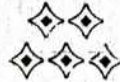
सत्यार्थप्रकाश का प्रथम संस्करण

लेखन की पृष्ठभूमि तथा सार-संक्षेप

—डा० भवानीलाल भारतीय

भारत के धार्मिक एवं सांस्कृतिक नवजागरण के अग्रदूत स्वामी दयानन्द सरस्वती की अद्वितीय साहित्यिक उपलब्धि उनके द्वारा रचित ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश है। इसे विश्व के धार्मिक विचारसमूह का नवनीत तथा दार्शनिक एवं आध्यात्मिक चिन्तन का सारसर्वस्व कहा जा सकता है। सत्यार्थप्रकाश दो भागों में विभक्त है—पूर्वार्द्ध तथा उत्तरार्द्ध, जिनमें क्रमशः १० तथा ४ समुल्लास (अध्याय) हैं। प्रथम दस समुल्लास मानव जीवन के विधायक कर्त्तव्यों का विवेचन करते हैं तथा वैदिक विचारधारा के अनुकूल जीवनयापन की एक आदर्श पद्धति का निरूपण करते हैं। इन दस समुल्लासों में क्रमशः ईश्वर तथा उसके अनेक नाम, बालकों का पालन एवं उनकी शिक्षा, उच्चतर शास्त्रीय शिक्षा-व्यवस्था तथा आर्ष ग्रन्थों की पठन-पाठन प्रणाली, गार्हस्थ्य धर्म और उसकी आनुषंगिक समस्यायें, वानप्रस्थ और परिव्राजकों के कर्त्तव्य कर्म, राजा और प्रजा के अन्योन्याश्रित धर्म एवं कर्त्तव्य, वैदिक धर्म में प्रतिपादित ईश्वर का स्वरूप तथा ईश्वरीय ज्ञान वेद, सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति एवं प्रलय विषयक वैदिक चिन्तन, जीवात्मा के बन्धन एवं मोक्ष का कारण तथा मुक्ति के साधन, आचार-अनाचार, भक्ष्य और अभक्ष्य जैसे विषय वर्णित एवं विवेचित हुए हैं।

ग्रन्थ के उत्तरार्द्ध के चार समुल्लासों में आर्यावर्त्तदेशान्तर्गत प्रचलित सम्प्रदाय एवं विभिन्न मतमतान्तर, चार्वाक, जैन तथा बौद्ध आदि एतद्देशीय अवैदिक (नास्तिक) मत, ईसाइयत तथा इस्लाम विषयक मान्यताओं तथा धारणाओं की सतर्क, सप्रमाण तथा पूर्वाग्रहमुक्त समीक्षा की गई है। इस प्रकार ग्रन्थ के पूर्वार्द्ध में मनुष्यमात्र के लिए आचरणीय धर्म का एक व्यापक एवं सार्वभौम रूप स्थापित करने के साथ-साथ लेखक ने उत्तरार्द्ध के खण्डनात्मक अध्यायों को लिखकर यह भी बता दिया है कि संसार में नाना प्रकार के विरोधी भावों को उत्पन्न करने का दायित्व विभिन्न मत-सम्प्रदायों पर ही है और वे ही मनुष्य में विद्यमान अज्ञान, हठ, दुराग्रह तथा अन्ध-धारणाओं के लिए उत्तरदायी हैं। स्वामी दयानन्द ने इस ग्रन्थ के अन्त में "स्वमन्तव्यामन्तव्य" शीर्षक प्रकरण लिखकर धर्म के उस सार्वजनिक रूप की स्थापना की है, जो उनके कथनानुसार इस देश में ब्रह्मा से लेकर जैमिनि मुनि पर्यन्त ऋषि मण्डली को मान्य रहा है।

ग्रन्थ-लेखन की प्रेरणा

सत्यार्थप्रकाश जैसे विश्वधर्म के अद्वितीय कोश रूपी ग्रन्थ को लिखने की प्रेरणा स्वामी दयानन्द को उनके अनुयायी राजा जयकृष्णदास से मिली। राजा साहब मुरादाबाद निवासी राणायनीय शाखा के सामवेदी, माथुर चतुर्वेदी ब्राह्मण थे। वे बिजनौर, वाराणसी, मुरादाबाद आदि स्थानों पर डिप्टी कलेक्टर के पद पर रहे थे। ब्रिटिश सरकार से उन्हें सी० आई० ई० की उपाधि भी प्राप्त हुई थी।

स्वामीजी से जब राजासाहब की काशी में भेंट हुई तो उन्होंने उनसे निवेदन किया कि वे अपने मान्य सिद्धान्तों और विचारों का निरूपण करते हुए एक ऐसा ग्रन्थ लिख दें, जो उन सभी लोगों के लिए उपयोगी सिद्ध होगा, जिन्हें कि स्वामीजी से साक्षात् उपदेश श्रवण करने का अवसर नहीं मिल सकता। फलत: स्वामीजी ने इस महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ के लेखन का संकल्प किया। राजा महोदय ने न केवल ग्रन्थ के मुद्रण तथा प्रकाशन का दायित्व वहन करना ही स्वीकार किया, अपितु पं० चन्द्रशेखर नामक एक महाराष्ट्रीय ब्राह्मण को भी स्वामीजी की सेवा में नियुक्त किया, जो ग्रन्थलेखन में उनकी सहायता करता था। उस समय तक स्वामीजी को हिन्दी भाषा का अच्छा अभ्यास नहीं था, अत: स्वामीजी द्वारा अभिव्यक्त विचारों को लेखबद्ध करने का भार पं० चन्द्रशेखर पर पड़ा।

सत्यार्थप्रकाश का लेखन १२ जून १८७४ को आरम्भ हुआ तथा सितम्बर १९७४ में समाप्त हुआ। लेखनकार्य समाप्त हो जाने पर इसे प्रकाशित करने के लिए राजा जयकृष्णदास को सौंपा गया। सत्यार्थप्रकाश का यह प्रथम संस्करण मुन्शी हरिवंशलाल के स्टार प्रेस में मुद्रित होकर १८७४ ई० में काशी से प्रकाशित हुआ। यह हम लिख चुके हैं कि सत्यार्थप्रकाश के प्रथम संस्करण के लिखे जाने तक स्वामी दयानन्द का हिन्दी भाषा पर विशेष अधिकार नहीं था। इस संस्करण को पढ़ने से प्रथम धारणा यही बनती है कि ग्रन्थकार ने प्रत्येक अध्याय के विषय से सम्बन्धित अपनी विचारधारा से पाण्डुलिपि-लेखक को परिचित करा दिया होगा। इसी सामग्री के आधार पर राजा जयकृष्णदास द्वारा नियुक्त पं०-चन्द्रशेखर ने ग्रन्थ की रूपरेखा तैयार कर उसे लिपिबद्ध कर डाला होगा। ग्रन्थ के प्रकाशन एवं मुद्रण की भी पूर्ण व्यवस्था राजासाहब ने ही की थी। स्वामी दयानन्द को तो इतना अवकाश भी नहीं मिला कि छपने के पूर्व वे प्रूफ देख सकते अथवा पाण्डुलिपि में समुचित संशोधन कर सकते। इसका परिणाम यह निकला कि सत्यार्थप्रकाश के प्रथम संस्करण में यत्र-तत्र ऐसे विचारों का समावेश हो गया, जो स्वामीजी को अभिप्रेत नहीं थे। कालान्तर में सत्यार्थप्रकाश के इस संस्करण के कतिपय जागरूक पाठकों द्वारा जब यह तथ्य स्वामीजी के समक्ष लाया गया तो उन्होंने अपना स्पष्टीकरण देते हुए एक विज्ञापन प्रकाशित कराया। इसमें उन्होंने यह स्पष्ट कर दिया कि "जो-जो मेरे बनाये सत्यार्थप्रकाश वा संस्कारविधि आदि ग्रन्थों में गृह्यसूत्र वा मनुस्मृति आदि पुस्तकों के वचन बहुत से लिखे हैं, उनमें से वेदार्थ के अनुकूल साक्षिवत् प्रमाण और विरुद्ध को अप्रमाण मानता हूँ।" इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि अपने ग्रन्थों में स्वामीजी ने विभिन्न प्रकरणों में जो मन्वादि स्मृतियों[1] तथा गृह्यादि सूत्रग्रन्थों के प्रमाण उद्धृत किये हैं, वे तत्-तत् आचार्यों का मत निर्दिष्ट करने की दृष्टि से ही दिये गये हैं। अन्य शास्त्रों से उद्धृत किये गये इन वचनों को स्वामी दयानन्द भी यथावत् स्वीकार करते हैं, यह मानना भ्रमपूर्ण ही है। स्वामीजी को तो वही मत स्वीकार्य है, जो वेदानुकूल है तथा युक्ति एवं तर्क से सिद्ध है।

एक अन्य बात भी थी। सत्यार्थप्रकाश तथा संस्कारविधि के प्रथम संस्करणों की पाण्डुलिपियाँ तैयार करनेवाले पण्डितगण स्वयं स्वामीजी की विचारधारा के अनुयायी नहीं थे। उनकी तो यह चेष्टा रहती थी कि यत्र तत्र इन ग्रन्थों में वे स्वविचारों को स्वामीजी के नाम से प्रक्षिप्त करते रहें।[2] यही

---

१. उदाहरणार्थ सत्यार्थप्रकाश के द्वितीय समुल्लास में मनुस्मृति के 'गुरोः प्रेतस्य शिष्यस्तु' श्लोक को स्वामीजी ने मृत शरीर को प्रेत शब्द से अभिहित करने के लिए ही उद्धृत किया।

२. स्वामीजी के जीवनचरित में पं० दिनेशराम का उल्लेख आता है। उसने कई लोगों के आगे कहा था कि वह दयानन्द के ग्रन्थों में पौराणिक बातों को प्रक्षिप्त करेगा।

कारण है कि सत्यार्थप्रकाश के प्रथम संस्करण में मृतकों का श्राद्ध व तर्पण एवं यज्ञ में पशुहिंसा आदि कई ऐसे प्रकरण भी समाविष्ट हो गये, जो स्वामीजी की मान्यता के विरुद्ध थे। कालान्तर में इस विषय का स्पष्टीकरण करते हुए स्वयं राजा जयकृष्णदास ने स्वामी दयानन्द के जीवनी-लेखक पं० देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय को कहा था—"सत्यार्थप्रकाश में जो मत स्वामीजी का लिखा गया वा जो कुछ पीछे परिवर्तित हुआ, उसके लिए स्वामीजी इतने उत्तरदाता नहीं हैं। स्वामीजी को उस समय प्रूफ देखने का अवकाश ही नहीं था। पहले-पहले स्वामीजी सभी लोगों को अच्छा समझकर उनका विश्वास कर लेते थे। हो सकता है कि लेखक वा मुद्रक द्वारा यह सब मत सत्यार्थप्रकाश में छापा गया हो, और यह भी हो सकता है कि उनका मत पीछे परिवर्तित हो गया हो।"

उपर्युक्त कथन से निम्न निष्कर्ष निकलते हैं—

१. स्वामीजी को इस संस्करण के प्रूफ देखने का अवसर नहीं मिला था।

२. पाण्डुलिपि-लेखक अथवा मुद्रक ने भी अपने मत को स्वामीजी के नाम पर पुस्तक में डाल दिया है।

३. अनेक बातों में स्वामीजी का मत भी कालान्तर में परिवर्तित हो गया था।

यहाँ यह लिख देना भी आवश्यक है कि केवल पुस्तक के लिपिकर्ता अथवा मुद्रक को ही दोषी ठहराना पर्याप्त नहीं है। सम्भावना तो यह भी दिखाई देती है कि सत्यार्थप्रकाश के प्रथम संस्करण में मृतक-श्राद्ध तथा पशुहिंसाविषयक जो प्रक्षेप हुए हैं, उनमें ग्रन्थ के सर्वाधिकारी प्रकाशक राजा जयकृष्ण दास की भी निश्चय ही सम्मति रही होगी। इस धारणा की पुष्टि भी हो जाती है और वह इस प्रकार कि राजाजी ने १९३९ वि० में नवलकिशोर प्रेस लखनऊ से पंचमहायज्ञविधि का एक संस्करण प्रकाशित कराया था, जिसे उन्होंने 'दयानन्द सरस्वती स्वामि विरचितेन भाष्येनानुगतः' कहा है। परन्तु आश्चर्य है कि इसमें स्वामी दयानन्द रचित पंचमहायज्ञविधि में उल्लिखित जीवित पितरों के श्राद्धविषयक वाक्यों के स्थान पर मृत पितरों के श्राद्ध एवं तर्पण का उल्लेख मिलता है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि राजासाहब का मृतकश्राद्ध के प्रति निश्चित आग्रह था। फलतः उन्होंने अपनी इन्हीं धारणाओं को अवसर मिलने पर स्वामीजी के ग्रन्थों में भी प्रक्षिप्त कराने में कोई कसर नहीं रक्खी।

परन्तु सत्यार्थप्रकाश के प्रथम संस्करण का अध्ययन करने पर राजासाहब के तृतीय कथन की भी पुष्टि हो जाती है कि कुछ बातों में तो स्वामीजी ने स्वयं के मत को भी द्वितीय संस्करण तक आते-आते बदल लिया होगा। आगे प्रथम संस्करण के विस्तृत विवेचन से यह बात स्पष्ट हो सकेगी।

सत्यार्थप्रकाश का प्रथम संस्करण अनेक दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण है। इसमें अनेक ऐसी बातें भी समाविष्ट हैं, जो महत्त्वपूर्ण होते हुए भी द्वितीय संस्करण में प्रवेश नहीं पा सकीं। सत्यार्थप्रकाश का लेखन स्वामीजी ने सुव्यवस्थित रूपरेखा बनाने के पश्चात् ही कराया था। इसके उत्तरार्द्ध में वर्तमान संस्करण की ही भाँति चार समुल्लास थे, किन्तु मुद्रण की शीघ्रता अथवा ग्रन्थ के प्रकाशक राजासाहब की अनिच्छा के कारण त्रयोदश और चतुर्दश समुल्लासों का समावेश प्रकाशित प्रथम संस्करण में नहीं हो सका, यद्यपि राजासाहब के परिवार में इस संस्करण की जो हस्तलिखित प्रति विद्यमान है, उसमें ये दोनों अध्याय मिलते हैं। सम्भवतः राजा जयकृष्णदास नहीं चाहते थे कि ईसाइयों और मुसलमानों के सम्बन्ध में लिखे गये ये आलोचनात्मक अध्याय उस पुस्तक में रहें, जिसका प्रकाशन "सी० आई० ई०" तथा "राजा" की उपाधि प्राप्त उस व्यक्ति ने किया है, जो अंग्रेजों का पूर्ण कृपापात्र है तथा डिप्टी कलक्टर के पद पर कार्य कर रहा है।

इस प्रारम्भिक विवेचना के पश्चात् हम प्रथम संस्करण की विस्तृत गवेषणा आरम्भ करते हैं। द्वितीय संस्करण की ही भाँति इस ग्रन्थ का प्रथम संस्करण भी पूर्वार्द्ध तथा उत्तरार्द्ध दो भागों में विभक्त है। प्रथमार्द्ध अथवा प्रथम भाग की समाप्ति दसवें समुल्लास के पश्चात् होती है, किन्तु द्वितीयार्द्ध में आर्यावर्तीय मतमतान्तरों की समालोचनायुक्त एकादश समुल्लास तथा जैन, बौद्ध आदि अवैदिक मतों की समीक्षावाला द्वादश समुल्लास ही सम्मिलित हो सका है। इस्लाम की समीक्षा से सम्बन्धित त्रयोदश तथा ईसाइयत की आलोचनायुक्त चतुर्दश समुल्लास प्रथम संस्करण में नहीं छप सके। यहाँ इन सभी समुल्लासों में प्रतिपादित विषयों का विस्तृत विश्लेषण करना हमें अभीष्ट है।

प्रथम समुल्लास—'शन्नो मित्र:' तैत्तिरीयआरण्यक के इस स्तुतिपरक मन्त्र को ग्रन्थारम्भ में उद्धृत कर लेखक ने ईश्वर के प्रमुख नाम 'ओम्' की व्याख्या की है। तदनन्तर उन्होंने ईश्वर के १०० नामों की व्युत्पत्ति तथा परिभाषा प्रस्तुत की है। यहाँ यह ध्यातव्य है कि परमात्मा के ये १०० नाम लेखक ने उपलक्षणार्थ ही दिये हैं, क्योंकि समग्र विवेचित नामों की संख्या १०० से बढ़ जाती है। प्रथम संस्करण में १९ नाम ऐसे हैं, जो संशोधित द्वितीय संस्करण में नहीं मिलते। ये नाम हैं—

(१) अचिन्त्य, (२) अहंकार, (३) आप:, (४) चक्षु:, (५) चित्त, (६) जीव, (७) नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वभाव, (८) निर्भय, (९) बुद्धि, (१०) मन, (११) वाणी, (१२) शिवशंकर, (१३) श्रोत्र, (१४) सर्वजगत्कर्त्ता, (१५) सूक्ष्म, (१६) महान्, (१७) अप्रमेय, (१८) अप्रमादी और (१९) होम।

प्रथम संस्करण के द्वितीय समुल्लास में बालकों की शिक्षा का विषय वर्णित हुआ है। द्वितीय संस्करण से यह अधिक भिन्न नहीं है। अध्ययन और अध्यापन की विधि से सम्बन्धित तृतीय समुल्लास अनेक दृष्टियों से द्वितीय संस्करण के इसी संख्यावाले समुल्लास से भिन्न है। यहाँ प्रथम गायत्री मन्त्र की व्याख्या प्रस्तुत करने के पश्चात् यह तो लिख दिया कि इस मन्त्र को पुत्रों एवं कन्याओं को कण्ठस्थ करा देना चाहिए परन्तु कन्याओं के यज्ञोपवीत का स्पष्ट निषेध कर दिया है। द्वितीय संस्करण में यह प्रकरण इस प्रकार लिखा गया है—"द्विज अपने घर में लड़कों का यज्ञोपवीत और कन्याओं का भी यथायोग्य संस्कार करके यथोक्त आचार्य कुल अर्थात् अपनी-अपनी पाठशाला में भेज दें।" सत्यार्थप्रकाश के विद्वान् सम्पादक पं० युधिष्ठिर मीमाँसक ने 'यथायोग्य' शब्द के आगे कोष्ठक में 'यज्ञोपवीत' शब्द रखकर पाद-टिप्पणी में यह स्पष्ट कर दिया है कि इस प्रसंग में स्वामी दयानन्द को कन्याओं का भी यज्ञोपवीत कराना ही अभीष्ट है। वे स्वामीजी के इस वाक्य को मनुस्मृति के 'अनेन क्रमयोगेन'[1] इस श्लोक की व्याख्या मानते हैं तथा 'यथायोग्य' शब्द का अभिप्राय उपनयनसंस्कारस्थ वस्त्रादिप्रदान की उन विधियों से ग्रहण करते हैं, जिनमें बालक-बालिका में भेद करना आवश्यक होता है।

तदनन्तर पंचमहायज्ञों की विधि का उल्लेख हुआ है। इसी प्रकरण में पितृयज्ञ की विधि लिखते हुए ग्रन्थकार के आशय के विपरीत लिपिकर्त्ता ने मृतकश्राद्धविधायक यह वाक्य प्रक्षिप्त किया है—'पित्रादिकों में जो कोई जीता होय, उसका तर्पण न करे और जितने मर गये होंय, उनका अवश्य करें।' इसी अभिप्राय को इसी अध्याय में आगे पुन: व्यक्त किया है—'तर्पण किसका नाम है कि तृप्ति का और श्राद्ध किसका नाम है जो श्रद्धा से किया जाता है। मरे भये पित्रादिकों का तर्पण और श्राद्ध करता है।' जैसा कि हम देख चुके हैं, मृतकश्राद्ध के इस उल्लेख के विषय में किन्हीं पाठकों द्वारा ध्यान आकृष्ट किये जाने पर स्वामीजी ने अपना वक्तव्य प्रसारित कर दिया था कि सत्यार्थप्रकाश में प्रकाशित ये पंक्तियाँ उनकी विचारधारा के प्रतिकूल हैं तथा लिखने और शोधनेवालों की भूल से छप गई हैं।

---

१. मनुस्मृति—२।१६४

मृतकश्राद्ध की ही भाँति एक अन्य विषय, जो सत्यार्थप्रकाश के इस संस्करण में प्रक्षिप्त किया गया, वह था यज्ञ में पशुहिंसा तथा मांसविधान। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रक्षेपकर्त्ता ने इस विषय को अत्यन्त चतुराई से एकाधिक स्थानों पर घुसेड़ने का प्रयास किया है। सर्वप्रथम तो इसी समुल्लास में जहाँ अग्निहोत्र में प्रयुक्त होनेवाले पदार्थों का उल्लेख किया गया है, वहाँ होम में डाले जानेवाले पुष्टि-कारक पदार्थों में दूध, घी के साथ 'मांसादिक' को भी सम्मिलित कर लिया गया है। इसी प्रकार चतुर्थ समुल्लास में पाराशर स्मृति के 'अश्वालम्भं गवालम्भं'[1] श्लोक की समीक्षा में भी याज्ञिकी हिंसा को स्वीकार किया गया है। यदन्नाः पुरुषा लोके तदन्नाः पितृदेवताः' महाभारत के इस वचन को उद्धृत करने के पश्चात् मनुस्मृति के एक श्लोक का आशय लेते हुए यहाँ लिखा है—'जो पदार्थ आप खाय उसी से पंच-महायज्ञ करे, अर्थात् पितृ-देव-पूजा भी उसी से करें। अर्थात् श्राद्ध और होम उसी का करे। मधुपर्क विवाहादिक और गोमेधादिक यज्ञ और देव-पितृ कार्य, इनमें मांस को जो खाता होय तो उसके वास्ते मांस के पिण्ड करने का विधान है। इससे मांस के पिण्ड देने में भी कुछ पाप नहीं।' आश्चर्य है कि यज्ञों और देव-पितृ कार्यों के नाम पर होनेवाली हिंसा का प्रारम्भ से ही प्रबल विरोध करने का अवसर इन लोगों को मिल गया। सत्यार्थप्रकाश के द्वितीय संस्करण में इस प्रसंग का पूर्ण परिमार्जन लेखक ने स्वयं कर दिया तथा स्पष्ट लिख दिया—'जब मांस का निषेध है तो सर्वदा ही निषेध है।'

संन्यासियों के कर्त्तव्यों का विधान करनेवाले पंचम समुल्लास में भी याज्ञिकी हिंसा को विधेय मानने के विचार को, सन्दर्भ न होने पर भी प्रविष्ट करने का प्रयत्न यह सिद्ध करता है कि सत्यार्थप्रकाश का यह लिपिकर्त्ता मानो ऐसा करने के लिए बद्धपरिकर ही था। तभी तो संन्यासियों के द्वारा आचरणीय मनुप्रोक्त दशलक्षणात्मक धर्म की व्याख्या करने के अनन्तर मनुस्मृति के द्वादशाध्याय में वर्णित शरीरकृत अशुभकर्मों का उल्लेख करते हुए—'हिंसा चैवाविधानतः' की व्याख्या में वह यह लिख देता है—'हिंसा नाम पशुओं का हनन करना, अपनी इन्द्रियों की पुष्टि के वास्ते मांस खाना और पशुओं का मारना। यह राक्षस विधान है। और यज्ञ के वास्ते जो पशुओं की हिंसा है, सो विधिपूर्वक हनन है।'

मनुस्मृति के श्लोक के आधार पर यज्ञों के नाम पर की जानेवाली पशुहिंसा को 'विधिपूर्वक हनन' कहनेवाले प्रक्षेपकर्त्ता को यह ध्यान नहीं रहा कि इस समुल्लास में तो संन्यासियों के कर्त्तव्यकर्मों का ही विधान किया गया है। शास्त्रों के अनुसार तो संन्यासी के लिये अब यज्ञ भी कर्त्तव्य कर्म नहीं रहा, फिर उसे 'विधिपूर्वक की गई हिंसा से भिन्न' हिंसा से बचने का उपदेश देने का क्या अर्थ है? संन्यासी के लिये तो सभी स्थितियों में अहिंसाचरण ही कर्त्तव्य माना गया है।

दशम समुल्लास तो भक्ष्याभक्ष्य से ही सम्बन्धित है, अतः मांसाहार के विधायक वाक्यों को इस अध्याय में डालना प्रक्षेपकर्त्ता के लिए अधिक सुविधाजनक था। भक्ष्याभक्ष्य का विचार करते हुए वह लिखता है—'जितने मनुष्यों के उपकारक पशु उनका मांस अभक्ष्य तथा विना होम से अन्न और मांस भी अभक्ष्य है।' अर्थापत्ति से मानो वह कहना चाहता है कि यज्ञ में प्रयुक्त मांस भक्ष्य है। इसी प्रसंग में प्रक्षेपकर्त्ता ने मांसाहार के समर्थन में एक ऐसी युक्ति भी दे दी है, जो प्रायः मांसाहार के समर्थक देते रहते हैं कि यदि कोई भी मांस न खाय तो जानवर, पक्षी, मत्स्य और जल जन्तु इतने हैं, उनसे शत सहस्र गुने हो जायें फिर मनुष्यों को भी मारने लगें आदि।

गोमेध यज्ञ में पशुहिंसा होती है, यह प्रक्षेपकर्त्ता का अभिप्राय है। इसे स्पष्ट करते हुए वह लिखता है 'जहाँ-जहाँ गोमेधादिक लिखे हैं, वहाँ-वहाँ पशुओं में नरों को मारना लिखा है···गौरनुबन्ध्यो-

---

१. उपलब्ध पाराशरस्मृति में यह श्लोक नहीं मिलता।

ऽजोग्नीषोमीयः' इस ब्राह्मणवाक्य को उद्धृत करने के पश्चात् प्रक्षेपकर्त्ता यह स्पष्ट कर देता है कि इस वाक्य में पुल्लिगनिर्देश से बैल के मारे जाने का विधान ही स्पष्ट होता है न कि गाय के मारने का। तथापि वह यह भी मान लेता है कि शास्त्रों में बंध्या गाय को मारने का भी विधान मिलता है। प्रक्षेप-कर्त्ता ने यज्ञ में पशुघात के समय मरनेवाले पशु की पीड़ा का ध्यान रखते हुए यह तो लिख दिया कि—जीव को मारने के समय पीड़ा होती है, उससे कुछ पाप भी होता है, परन्तु इसका समाधान वह यह कहकर देता है कि 'अग्नि में होम करने से जब सब जीवों को सुख पहुँचेगा तो एक जीव की पीड़ा से जो पाप हुआ था, वह भी थोड़ा ही गिना जायगा।' कहना नहीं होगा कि यह सारी दूषित तर्कप्रणाली उन लोगों द्वारा आविष्कृत की गई, जो यज्ञ में पशुहिंसा के समर्थक थे और मांस से हवन करना उचित मानते थे। स्वामी दयानन्द इन विचारों के प्रारम्भ से ही विरोधी थे, परन्तु आश्चर्य है कि उनके ही ग्रन्थ में 'याज्ञिकी हिंसा हिंसा न भवति' के दावेदारों को इस प्रकार के विचार मिश्रित कर देने का अवसर मिल गया।

सत्यार्थप्रकाश के इस संस्करण में मांस-विधान का अन्तिम प्रक्षेप द्वादश समुल्लास में किया गया है। जैनमतावलम्बियों की यज्ञविषयक आपत्तियों का उत्तर देते हुए सिद्धान्ती (वस्तुतः सत्यार्थ-प्रकाश का लिपिकर्त्ता पण्डित) कहता है—'पशुओं को मारने से थोड़ा-सा दुख होता है परन्तु यज्ञ में चराचर का अत्यन्त उपकार होता है, इसको जो जानते तो कभी यज्ञ के विषय में तर्क न करते।' उपर्युक्त कथन सत्यार्थप्रकाश के लेखक के अभिप्राय से नितान्त विपरीत है तथा प्रक्षेपकर्त्ता की शरारत-पूर्ण कार्यवाही है। यह बात तब और स्पष्ट हो जाती है जब हम आगे देखते हैं कि ग्रन्थकार ने यज्ञ में पशु-हिंसा से स्वर्ग की प्राप्ति के कथन को वेदविरुद्ध बताया है और स्पष्ट कर दिया है कि 'यज्ञ में पशु को मारने से स्वर्ग में जाता है, यह बात किसी मूर्ख के मुख से सुन ली होगी, ऐसी बात वेद में कहीं नहीं लिखी।' यदि यज्ञ में पशुहिंसा के विधान को स्वामी दयानन्द शास्त्रीय मानते तो वे यज्ञों में हिंसा-कृत्यों के समर्थक उन लोगों के विचारों से सहमति ही व्यक्त करते, जो यह कहते रहते हैं कि ज्योतिष्टोम आदि यज्ञ में पशुओं को मारकर होमने से यजमान को स्वर्ग-प्राप्ति होती है। परन्तु हम यह देखते हैं कि सत्यार्थप्रकाश के द्वितीय संस्करण में उद्धृत चार्वाक मत के प्रतिपादित विभिन्न श्लोकों की समीक्षा करते हुए भी स्वामी दयानन्द ने याज्ञिकी हिंसा तथा मृतकश्राद्ध के चार्वाककृत खण्डन को उचित ही ठहराया है। इससे भी यह स्पष्ट होता है कि यज्ञ में पशुहिंसा-विधान तथा उसके पश्चात् मांस-भक्षण स्वामीजी को कदापि अभिप्रेत नहीं था। यह सारा प्रकरण एक नियोजित षड्यन्त्रपूर्वक सत्यार्थप्रकाश के प्रथम संस्करण में यत्र-तत्र प्रक्षिप्त किया गया था।

तृतीय समुल्लास में विवेचित अन्य विषय बालकों की शिक्षा से सम्बन्धित हैं। लेखक का विचार है कि शिक्षा प्रत्येक बालक के लिए अनिवार्य होनी चाहिए। जो माता-पिता अपने सन्तानों को शिक्षित न करें, वे दण्ड के पात्र हैं। लेखक के मतानुसार शूद्रों के बालक यज्ञोपवीत के बिना सभी शास्त्रों के पढ़ने के अधिकारी घोषित किये गए हैं परन्तु निश्चय ही वे वेदसंहिताओं को पढ़ने के अधिकारी नहीं हैं। आगे चलकर स्वामी दयानन्द ने वेद के अध्ययनाधिकार विषय पर अधिक गम्भीरता से विचार किया तथा 'यथेमां वाचं' इस यजुर्मन्त्र (२६।२) के आधार पर मनुष्यमात्र को वेद के अध्ययन का अधिकारी घोषित किया।

इसी समुल्लास में प्रमाण-मीमांसा का विषय भी विवेचित हुआ है। यहाँ लेखक ने वैशेषिक, सांख्य तथा वेदान्तदर्शन में स्वीकृत प्रमाणों की विवेचना करने के पश्चात् न्यायदर्शन में स्वीकृत प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान और शब्द—इन चार को ही प्रमाणरूप में स्वीकार किया है, परन्तु साथ ही यह भी संकेत कर देता है कि ऐतिह्य, अर्थापत्ति, सम्भव और अभाव को मिला लेने से प्रमाणों की संख्या

आठ भी स्वीकार की जा सकती है। तदनन्तर पठन-पाठन-व्यवस्था और विभिन्न ग्रन्थों के प्रामाण्या-प्रामाण्य का विषय वर्णित हुआ है। इसी प्रसंग में लेखक ने यूरोपीय जातियों द्वारा की गई सम-सामयिक वैज्ञानिक उन्नति का भी उल्लेख किया है तथा इस नव विकसित शिल्पशास्त्र को भी पाठ्यक्रम में स्थान देने की बात कही है।[1]

षड्दर्शनों में अविरोध की चर्चा भी इसी समुल्लास में हुई है तथा यह स्पष्ट किया गया है कि विरोध तो एक विषय में परस्पर विरुद्ध कथन करने से होता है। ये शास्त्र तो परस्पर सहायकारी शास्त्र हैं। इन सबके द्वारा पदार्थविद्या समन्वितरूप से प्रकाशित हुई है। अन्त में विद्याप्राप्ति में आनेवाले विघ्नों की चर्चा करने के पश्चात् इस समुल्लास को समाप्त किया है।

विवाह और गृहस्थ आश्रम का विधान करनेवाले चतुर्थ समुल्लास में वर्ण-विधान, वर्ण-परिवर्तन, विवाह-विधान, शीघ्रबोध के बालविवाहपरक श्लोकों[2] का खण्डन, तथा सादगी के साथ विवाह सम्पन्न करने जैसे विषय आरम्भ में विवेचित हुए हैं। सत्यार्थप्रकाश का लेखक कितना दूरदर्शी तथा लोकहित का विधायक है, इस तथ्य की पुष्टि इसी बात से होती है कि वह बार-बार इस बात पर जोर देता है कि विवाहों के अवसर पर घर-फूँक तमाशा देखना या दिखाना अनुचित है।

नारी जाति के गौरव को प्रस्तुत करनेवाले मनुस्मृति के श्लोक को उद्धृत करने के अनन्तर लेखक 'पूजा' शब्द के वास्तविक अभिप्राय को स्पष्ट करता है। मनु के प्रसिद्ध श्लोक 'पति सेवा गुरौ वासो'[3] का अर्थ करते हुए लेखक ने लिखा—"विवाह की जितनी विधि हैं, सो वेदोक्त ही हैं। स्त्रियों का विवाह वेद की रीति से होना चाहिए और पति की सेवा अत्यन्त करनी चाहिए, यही स्त्री का मुख्य कर्म है और विवाह के पहले 'गुरौ वासो' नाम स्त्री लोग पढ़ने के लिए ब्रह्मचर्याश्रम करें और गृह कार्य जानने के लिए अवश्य विद्या पढ़ें। अग्निपरिक्रिया नाम अग्निहोत्रादिक यज्ञ करने के लिए अवश्य वेदों को पढ़ें।" निश्चय ही स्वामी दयानन्द कृत उक्त श्लोक का उपर्युक्त अर्थ टीकाकारों द्वारा किये गए अर्थों से प्रकृत्या भिन्न तथा लोक से हट कर है।

महायज्ञों के विधान के अन्तर्गत प्रथम संध्या का उल्लेख किया गया है। 'न तिष्ठति तु यः पूर्वाम्'[4] इस मनुस्मृति के आदेश की व्याख्या के प्रसंग में लेखक अपने मन्तव्य को प्रकट करते हुए लिखता है—"जो प्रातःकाल और सायंकाल कर्माधिकारों से निकाल देवें, अर्थात् यज्ञोपवीत को तोड़ के शूद्रकुल में कर देवें।" विवाह की चर्चा के प्रसंग में लेखक का ध्यान उन प्रचलित किन्तु गर्हित लोकाचारों तथा हानिकर सामाजिक विधानों की ओर भी अनायास ही चला जाता है, जो इस नितान्त निर्दोष सामाजिक विधि के साथ साम्प्रतिक काल में जुड़ गए हैं। यथा, कन्या के पिता से धन लेकर पुत्र का विवाह करना, बंगाल में प्रचलित कुलीन प्रथा, जिसके कारण एक ही कुलीन ब्राह्मण अपने जात्याभिमान के कारण अनेक स्त्रियों से विवाह करता है, आदि रिवाज उसकी आलोचना के पात्र बने हैं।

चतुर्थ समुल्लास में आपद्धर्म के रूप में नियोग की चर्चा भी हुई है और इस प्रथा के समर्थन में

---

१. स्वामी दयानन्द ने जर्मन शिक्षाशास्त्री डॉ० वाइज से पत्रव्यवहार कर उन्हें भारतीय युवकों को जर्मनी में कला-कौशल तथा शिल्पशास्त्र के अध्यापन की व्यवस्था करने का अनुरोध किया था। द्रष्टव्य—वेदवाणी-दयानन्द अंक (१) फरवरी १९८९ ई०।

२. शीघ्रबोध अ० १ श्लोक ५४, ६५।

३. मनु० २।६७।

४. मनु० २।१०३।

लेखक ने विभिन्न शास्त्रीय तथा ऐतिहासिक प्रमाण भी दिये हैं। इसी प्रसंग में लेखक ने अन्य स्मृतियों की तुलना में मनुस्मृति के महत्त्व का निरूपण किया है तथा इस स्मृति की वरीयता घोषित करने में अनेक प्रमाण भी दिये हैं। इस समुल्लास के अन्त में गार्गी, मैत्रेयी आदि पुराकालीन महिमामयी नारियों के ओज, तेज आदि गुणों की चर्चा करने के उपरान्त लेखक ने यह स्पष्ट कर दिया है कि भारतीय महिला वर्ग के गौरव की हानि मुसलमानी शासनकाल में हुई जब कि उनकी स्वतन्त्रता का हनन किया गया और उन्हें बलात् पर्दे के पीछे रहने के लिए विवश किया गया।

वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम के कर्त्तव्यों का विधायक पंचम समुल्लास मुख्यत: मनुस्मृति पर ही आधारित है। मनूक्त दशलक्षणात्मक धर्म को लेखक ने सभी आश्रमवासियों के लिए समानरूप से आचरण योग्य बताया है, परन्तु यहाँ भी उसने धृति, क्षमा आदि धर्म के दक्ष लक्षणों में 'अहिंसा' को अपनी ओर से जोड़कर एकादश लक्षणात्मक धर्म की व्याख्या की है। यह उसकी अपनी उद्भावना मानी जा सकती है। इस एकादश लक्षणवाले धर्म का संकेत उपदेशमंजरी में भी पाया जाता है।[1]

राजधर्मों का विवेचन करनेवाला छठा समुल्लास मुख्यत: मनुस्मृति से उद्धृत श्लोकों को आधार बना कर ही लिखा गया है। इसमें राजा की उत्पत्ति, राजा के लक्षण, सचिवों की नियुक्ति, शासन-प्रणाली में प्रजातन्त्र की स्वीकृति, दूत, दुर्ग, पुरोहित आदि की व्याख्या के पश्चात् युद्धों के नियम वर्णित किये हैं। पश्चात् राजाओं के लिये आचरणीय पुरुषार्थचतुष्टय की व्याख्या करने के उपरान्त लेखक अनिवार्य शिक्षा पर विशेष बल देता है। प्रसंगोपात्त लेखक राजा से यह भी अपेक्षा रखता है कि वह अपने राज्य में अनार्ष ग्रन्थों का प्रचलन बन्द कर देगा और वेदादि सत्य शास्त्रों को ही प्रचलित करेगा। लेखक का आक्रोश शैव, शाक्त, वैष्णव आदि विभिन्न सम्प्रदायों के प्रति भी व्यक्त हुआ, क्योंकि उसके विचारानुसार इन पाखण्ड मतों के प्रचलित होने से राजा और प्रजा की महती हानि हुई है। जो लोग मिथ्या वैराग्य के वशवर्ती होकर संन्यास लेने का झूठा दिखावा करते हैं और साधुओं तथा वैरागियों की मण्डलियाँ बाँधे निरर्थक इतस्तत: भ्रमण करते हैं, उनको इस कार्य से रोककर हल-ग्रहणादि कृषि कर्मों में लगाने की प्रेरणा देना भी लेखक अपना कर्त्तव्य समझता है।

पुन: राजा की दिनचर्या, दण्ड-विधान, अष्टादश व्यवहारों (मामलों) का निर्णय, साक्षी-विधान, दण्डभेद, कराधान, दायभाग, पशु-रक्षा, युद्ध-नीति आदि सभी विषय मनु के आधार पर ही वर्णित हुए हैं। लेखक ने बड़ी पीड़ा से इस बात को अनुभव किया है कि आज के युग में खान-पान-विषयक अनावश्यक तथा असहिष्णुतापूर्ण बंधनों तथा विवाह जैसी रीतियों में संकीर्णता वरतने के कारण आर्यावर्त के लोगों की दशा अत्यंत हीन हो गई है, जबकि प्राचीन काल में ऐसे बंधन सर्वथा नहीं थे। सत्यार्थप्रकाश के द्वितीय संस्करण में भोजनादि के नियमों की व्याख्या प्रधानत: दशम समुल्लास में की गई, परन्तु प्रथम संस्करण के षष्ठ समुल्लास में राजाओं के कर्त्तव्यों का विधान करते हुए लेखक ने भोजन में प्रचलित पाखण्डों और दुष्ट रीतियों को विच्छिन्न करने का दायित्व भी राजा का ही बताया है। लेखक अत्यन्त वेदनापूर्वक लिखता है—"भोजन के पाखण्डों से आर्यावर्त देश का नाश हो गया। ब्राह्मणादिक चौका देने लगे, ऐसा चौका दिया कि राज्य, धन और स्वतन्त्रतादिक सुखों के ऊपर चौका ही फेर दिया कि सब आर्यावर्तदेश को सफाचट कर दिया।"

दयानन्द सरस्वती द्वारा विवेचित इस राजधर्म-प्रकरण की एक अन्य विशेषता भी है, यों तो सामान्यत: यह सारा ही प्रसंग मनुस्मृति में शताब्दियों पूर्व लिखे गए विधानों का पुन: प्रस्तुतीकरणमात्र

१. उपदेश मंजरी—धर्माधर्मविषयक तृतीय प्रवचन।

ही दिखाई पड़ता है, परन्तु गहराई में जाने पर हम अनुभव करते हैं कि समसामयिक देश-दशा तथा समाज की स्थिति को ध्यान में रखते हुए ही लेखक ने इसमें कुछ ऐसे संकेत भी दिए हैं, जो उसकी मर्म-भेदी दृष्टि, वैचारिक प्रगतिशीलता तथा तत्कालीन परिस्थितियों के प्रति उसकी जागरूकता का प्रमाण हैं। उदाहरणतः चोरों को दण्ड देने के प्रकरण में लेखक ने दो प्रकार के चोरों का उल्लेख किया है। स्तेय वृत्ति को धारण करनेवाले प्रसिद्ध चोर तो हैं ही, लेखक उन पाखण्डियों को भी 'चोर' की संज्ञा प्रदान करता है, जो मन्दिरों की स्थापना कर जनता का धन हरण करते हैं अथवा मिथ्या वैराग्य का दिखावा कर चेले मूँडते हैं तथा लोगों को फुसलाते हैं। ग्रन्थकार के अनुसार ऐसे चोर भी राजा के द्वारा दण्डनीय होते हैं। उसके विचार में भागवत आदि पुराणों की कथा करनेवाले, जो इन कथाओं के माध्यम से धार्मिक अंध-विश्वासों का ही प्रचार करते हैं, मंदिरों के पुजारी तथा सम्प्रदायाभिमानी लोग भी वंचक या ठग हैं तथा राजाओं द्वारा दण्डित किए जाने योग्य हैं। अध्याय की समाप्ति पर लेखक ने इस बात पर बड़ा दुख प्रकट किया है कि जैन और मुसलमानों ने आर्य जाति के पुरातन गौरव को व्यक्त करनेवाले नाना इतिहास-ग्रन्थों को नष्ट कर दिया है। फलतः हम उस युग की अनेक बातों से अनभिज्ञ ही रह गये हैं, जबकि आर्यावर्त के राजाओं की आज्ञा और राज्य सब द्वीप-द्वीपान्तरों में था।

सप्तम समुल्लास का विषय ईश्वर और वेद की व्याख्या है। प्रारम्भ में 'हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे' इस यजुर्मन्त्र को उद्धृत करने के पश्चात् लेखक ने इसकी व्याख्या में लिखा "तस्मै एकस्मै परमेश्वराय देवाय हवि नाम प्राण, चित्त मनादिकों से स्तुति, प्रार्थना और उपासना हम लोग नित्य करें।" ध्यान देने की बात यह है कि पूर्वाचार्यों द्वारा किए गए वेदार्थ की तुलना में स्वामी दयानन्द का यह मन्त्रार्थ विशिष्टता लिए हुए है। सायणाचार्य जहाँ 'हविषा' का अर्थ "प्रजापति देवता के प्रीत्यर्थ मारे गये पशु की वपा रूप एककपालात्मक पुरोडाश"[1] करते हैं तथा इसी पाशवी हवि से प्रजापति की परिचर्या करना मानते हैं, वहाँ स्वामी दयानन्द ने चित्त मन एवं प्राण से एकमना होकर परमात्मा की स्तुति और भक्ति को ही सच्चा 'हवि अर्पण' माना है। इस प्रकार ईश्वर की विवेचनावाले अध्याय का आरम्भ ही लेखक ने प्रार्थनाविधायक वैदिक मन्त्र को उद्धृत कर किया है। मुख्य विषय की आलोचना के प्रसंग में ग्रन्थ-कार ने चार्वाक आदि अनीश्वरवादी दार्शनिकों द्वारा प्रस्तुत किए गये 'स्वभाववाद' को पूर्वपक्ष रूप में प्रस्तुत कर उसका समाधान किया है। पुनः त्रिविध प्रमाणों के आधार पर भी ईश्वरीय सत्ता की सिद्धि की गई है। लेखक की यह धारणा है कि न्यायदर्शन में स्वीकृत उपमान प्रमाण से तो परमात्मा की सिद्धि नहीं होती, क्योंकि परमेश्वर के सदृश कोई पदार्थ नहीं, जिसकी उपमा परमेश्वर में हो सके, किन्तु अलंकारशास्त्र में उल्लिखित 'अनन्वय' अलंकार का सहारा लेकर वह यह स्पष्ट कर देता है कि परमे-श्वर की उपमा परमेश्वर से ही की जा सकती है।

ईश्वर के स्वरूप, लक्षण आदि का विवरण देते हुए ग्रन्थकार मुख्यतः उपनिषद्-वाक्यों को ही प्रस्तुत करता है। वह इन्हें शब्दप्रमाण के अन्तर्गत उद्धृत करता है, जिनसे परमात्मा की सत्ता की पुष्टि होती है। जो उपनिषद्-वाक्य तथा मन्त्रों के प्रमाण यहाँ उद्धृत किए गये हैं, वे हैं—"दिव्यो ह्यमूर्तः"[2] न तत्र सूर्यो भाति,[3] अपाणिपादो,[4] अशब्दमस्पृश्यं,[5] समाधिनिर्धूतमलस्य,[6] आश्चर्योऽस्य वक्ता,[7] सर्वे

१. प्रजापति देवाय "हविषा प्राजापत्यस्य पशोर्वपारूपेणैककपालात्मकेन पुरोडाशेन वा विधेम वयमृत्विजः परिचरेम ॥ ऋ० १०।१२१।१ का सायणभाष्य।

२. मुण्डक उ० २।१।२।

३. मुण्डक उ० २।२।१७।

४. श्वेताश्वतर उ० ३।१९।

५. कठ० उ० ३।१५।

६. मैत्रायणी उ० ४।४।६।

७. कठ उ० २।७।

वेदा यत्पदं,[1] एको देवः[2] न तस्य काय,[3] एष सवषु भूतेषु,[4] तदेजति,[5] अनेजदेकं,[6] यस्मिन्सर्वाणि भूतानि,[7] वेदाहमेतं,[8] स पर्यगात्[9] ।" इस प्रकार संहिता तथा उपनिषद्-प्रमाणों को प्रस्तुत करने के पश्चात् लेखक ईश्वरविषयक कतिपय उन भ्रान्तियों का निराकरण करता है, जो जनसाधारण में प्रचलित हैं। उदाहरणार्थ—ईश्वर रागी है या विरक्त (उदासीन), वह दयालु है या न्यायकारी, वह सर्वशक्तिमान् और न्यायकारी किस प्रकार है ? वह विद्यावान् है या नहीं, वह जन्मधारण करता है या नहीं ? वह साकार है अथवा निराकार, वह चेतन है या जड़ ? इन प्रश्नों का उत्तर लेखक ने तर्कपूर्ण दृष्टि से दिया है । द्वितीय संस्करण में भी ये सभी विषय न्यूनाधिक रूप से चर्चित हुए हैं ।

सत्यार्थप्रकाश का प्रथम संस्करण स्वामी दयानन्द के दार्शनिक विचारों की विकसनशीलता तथा प्रवृद्धमानता की दृष्टि से भी विचारणीय है । ऐसा प्रतीत होता है कि अभी तक उनके दार्शनिक मन्तव्य पूर्णतया परिपक्व अथवा स्थिर नहीं हो सके थे । दूसरे संस्करण में उन्होंने ईश्वर, जीव तथा प्रकृति की तीन अनादि सत्ताओं की जिस प्रकार स्थापना की है तथा सृष्टि-रचना में प्रकृति को उपादान कारण तथा परमात्मा को कुलालवत् निमित्तकारण स्वीकार किया है, उसे देखते हुए प्रथम संस्करण में व्यक्त उनकी दार्शनिक धारणाएँ अभी निर्माणावस्था में ही प्रतीत होती हैं । उदाहरणार्थ, इस ग्रन्थ के रचनाकाल तक लेखक को जीव की अनादि सत्ता अभिप्रेत नहीं थी । उसकी मान्यता थी कि जीवों की रचना भी ईश्वर ने ही की है, किन्तु उन्हें स्वतन्त्र भी रक्खा है । यही बात वह प्रकारान्तर से भी लिखता है—'परमेश्वर ने जीव रचे हैं, सो केवल धर्माचरण और मुक्त्यादि सुख के वास्ते रचे हैं ।' निश्चय ही आगे चलकर स्वामी दयानन्द ईश्वर द्वारा जीवों के रचे जाने की धारणा का परित्याग कर देते हैं और जीवों को भी ईश्वर के तुल्य ही अज, अनादि और कर्म करने में स्वतन्त्र मानने लगते हैं । जैनमतावलम्बियों की भाँति वे इस सिद्धान्त को भी स्वीकार नहीं करते कि वैराग्ययुक्त, विद्यादिक शुद्ध गुणों तथा अणिमादि सिद्धियों से सम्पन्न पुरुष ही ईश्वर कहलाते हैं ।

वेद के विषय का प्रवर्तन करते हुए ग्रन्थकार ने अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा नामधारी आदि सृष्टि में उत्पन्न ऋषियों के माध्यम से वेद का ज्ञान ब्रह्मा, विराट्, मनु और प्रजापति आदि परवर्त्ती ऋषियों को प्राप्त होना स्वीकार किया है । 'यो ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं'[10] इस उपनिषद्-वाक्य को उक्त मत की पुष्टि में प्रस्तुत करते हुए लेखक ने इसे जो वेद का प्रमाण बताया है, उससे अनुमान होता है कि वे यदा-कदा उपनिषद्-वाक्यों को भी 'श्रुति' अथवा 'वेद' के नाम से ही सम्बोधित कर देते थे ।

वेदों की पौरुषेयता अथवा अपौरुषेयता के बहुत प्राचीन विवाद को स्वामी दयानन्द ने अत्यन्त

---

१. कठ उ० २।१५ ।
२. श्वेताश्वतर उ० ६।११ ।
३. श्वेताश्वतर उ० ६।८ ।
४. कठ उ० ३।१२ ।
५. ईशोपनिषद् ५ ।
६. ईशोपनिषद् ४ ।
७. ईशोपनिषद् ७ ।
८. श्वेताश्वतर उ० ३।८ ।
९. ईशोपनिषद् ८ ।
१०. श्वेताश्वतर उ० ६।१८ ।

सुगमता से निपटाया है। वे कहते हैं कि 'वेद देहधारी का रचा नहीं है किन्तु परमेश्वर ने ही रचा है, परन्तु वेद अपौरुषेय और पौरुषेय भी है, क्योंकि पुरुष देहधारी जीव का नाम है, और पूर्ण होने से परमेश्वर का भी (पुरुष नाम है)। अपौरुषेय तो इससे है कि कोई देहधारी जीव का रचा नहीं है और पौरुषेय इस वास्ते है कि पूर्णपुरुष जो परमेश्वर, उसने रचा है।' वेद के नित्य और सार्वजनीन होने का विचार करने के अनन्तर लेखक वेद के पठन-पाठन के अधिकार का निरूपण करता है। लेखक के एतद्विषयक विचार लगभग वही हैं, जो तृतीय समुल्लास में व्यक्त हो चुके हैं। वह यह मानता है कि मूर्ख होने के कारण शूद्र का पढ़ना या उसे पढ़ाना व्यर्थ ही है, परन्तु जिन मध्यकालीन ग्रन्थों ने शूद्रों के मन्त्र-श्रवण करने पर उनके कर्णच्छेद आदि का विधान किया था, उनके इन क्रूरतापूर्ण तथा अमानुषी आदेशों के प्रति अपनी तीव्र प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए व्यंग्यात्मक स्वर में स्वामी दयानन्द लिखते हैं—'जिसको कर्ण इन्द्रिय हैं और उसके समीप जो शब्द होगा, उसको अवश्य सुनेगा' अतः यदि शूद्र के कानों में भी वेदों का स्वर चला जाये तो उसे कोई अनर्थ होनेवाला नहीं है, यह स्वामी दयानन्द की स्पष्ट मान्यता है। व्यास द्वारा वेदों का चतुर्विध विभाजन किया जाना भी उन्हें अस्वीकार्य है।

वेदों की रचना संस्कृत भाषा में ही क्यों हुई, इस प्रश्न का उत्तर देते हुए स्वामी दयानन्द इस बात को स्पष्ट कर देते हैं कि संस्कृत किसी देश की भाषा नहीं है। यह सार्वजनीन और सार्वदेशिक भाषा है। इस प्रसंग में लेखक ने आधुनिक भाषाविज्ञान के कुछ सर्वप्रचलित सिद्धान्तों से भी अपना परिचय प्रदर्शित किया है। इसके अनुसार—

१. सब देशभाषाओं का मूल संस्कृत है।

२. संस्कृत जब बिगड़ती है तो अपभ्रंश कहलाती है और इन्हीं अपभ्रंश भाषाओं से विभिन्न देशभाषायें बनी हैं। तत्सम और उनसे बने तद्भव शब्दों के नाना उदाहरण देकर लेखक इस तथ्य को पुष्ट करता है।

३. देशभेद से संस्कृत भाषा के शब्दों का अर्थभेद, उच्चारणभेद आदि भी हो जाता है।

४. ध्वनि, रूप और अर्थपरिवर्त्तन के अनेक उदाहरण इस प्रसंग में दिए गये हैं।

द्वितीय संस्करण के सप्तम समुल्लास में लेखक ने कुछ ऐसे प्रकरण बढ़ाये हैं, जो प्रथम संस्करण में नहीं आ सके थे। यथा ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना का वास्तविक रूप, ईश्वर के त्रिकाल-दर्शित्व की मीमांसा, जीवेश्वर अभेद के सिद्धान्त की समीक्षा। इसी प्रकार वेदविचार के प्रकरण में वेद संज्ञा विचार तथा वैदिक-शाखाओं का विचार भी प्रथम संस्करण में सम्मिलित नहीं हो सका था।

जैसा कि हम पूर्व देख चुके हैं, इस संस्करण के लिखे जाने तक स्वामी दयानन्द के दार्शनिक विचारों में वैसी प्रौढ़ता और परिपक्वता नहीं आ सकी थी, जो उनके परवर्ती ग्रन्थों में देखने को मिलती है। इस धारणा की पुष्टि अष्टम समुल्लास में विवेचित विषयों के परीक्षण से भी होती है। जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय से सम्बन्धित यह अध्याय इस संस्करण में बहुत संक्षिप्त ही है। सृष्टि-रचना के कारणों का विचार करते हुए लेखक लिखता है कि वह परमेश्वर एक अद्वितीय था, दूसरा कोई नहीं था। उसके इस कथन से ध्वनि निकलती है कि लेखक को जीव तथा प्रकृति का अनादित्व उस काल में अभिप्रेत नहीं था। सृष्टि-रचना में परमात्मा का क्या प्रयोजन था, इस शंका के समाधान में लेखक कहता है कि जगद्रचना में ईश्वर के सामर्थ्य का सफल होना ही रचना का प्रयोजन है। यहाँ भी वह प्रकारान्तर से यह कहना नहीं भूलता कि सृष्टि की आदि में एक अद्वितीय परमात्मा ही था—सर्वव्यापक होने से (परमात्मा से) अत्यन्त भिन्न कोई पदार्थ नहीं।

प्रथम संस्करण की रचना होने तक स्वामी दयानन्द परमात्मा को सृष्टि का 'अभिन्ननिमित्तोपादान कारण' ही मानते थे। यह दूसरी बात है कि अभिन्ननिमित्तोपादान कारण की उनकी यह धारणा शंकराचार्य आदि अद्वैतवेदान्ताचार्यों से भिन्न कोटि की है। अष्टम समुल्लास के निम्न उद्धरणों के द्वारा यह स्पष्ट हो जायगा। हम यह देख चुके हैं कि कालान्तर में स्वामी दयानन्द ने परमात्मा को संसार का निमित्तकारण माना। परन्तु यहाँ वे इसी मत का इस प्रकार खण्डन करते हैं—'जो कोई (परमात्मा को) केवल निमित्तकारण माने तो (वह परमात्मा) जगत् का साक्षात् कर्त्ता नहीं होगा किन्तु शिल्पीवत् होगा, अथवा उसको महाशिल्पी कहो और उसके पास सामग्री भी अवश्य माननी चाहिए। फिर जो सामग्री मानेंगे तो जगत् भी नित्य होगा, क्योंकि जिससे जगत् बना है, वह सामग्री ईश्वर के पास सदा रहती ही है।' ध्यान देने की बात यह है कि लेखक को इस बात पर आपत्ति है कि ईश्वर को कुलालवत् संसार का रचयिता माना जाय। यदि कुलाल (कुम्हार) एक सामान्य शिल्पी है तो परमात्मा 'महाशिल्पी' हुआ ? परन्तु स्वामी दयानन्द की राय में उसे महाशिल्पी कहना भी उचित नहीं है। शिल्पी किसी-न-किसी सामग्री के द्वारा ही किसी वस्तु का निर्माण करता है। यदि यह कहा जाय कि जगत् की उपादानभूत प्रकृतिरूपी सामग्री भी उसी की भाँति नित्य थी, तो स्वामीजी को इस पर भी आपत्ति है। वे एक अद्वितीय ईश्वर से भिन्न किसी अनादि सत्ता की विद्यमानता उस समय स्वीकार नहीं करते थे। यह भिन्न बात है कि पश्चात्काल में उन्होंने जगत् की उपादान सामग्री को भी परमात्मा के तुल्य ही अनादि माना। सत्यार्थप्रकाश के इस संस्करण के लेखक ने ईश्वर को एकसाथ ही संसार का उपादान, निमित्त और साधारणकारण इस प्रकार कहा—'ईश्वर सर्वशक्तिमान् है, जो सर्वशक्तिमान् होता है, उसमें अनन्त सामर्थ्य सामग्री होती है। सो वह सामग्री स्वाभाविक है⋯सो परमेश्वर का अनन्त सामर्थ्य स्वाभाविक ही है, अन्य से नहीं लिया। वह सामर्थ्य अत्यन्त सूक्ष्म है⋯उसी में वह सामर्थ्य रहता है। उससे सब जगत् को ईश्वर ने रचा है। इससे क्या आया कि भिन्न पदार्थ न लेके जगत् के रचने से उपादान कारण जगत् का परमेश्वर ही हुआ, क्योंकि अपने से भिन्न दूसरा कोई पदार्थ नहीं है कि जिसे लेके जगत् को रचे।' उपर्युक्त उद्धरण में लेखक ने जो तर्क-सरणि अपनाई है, वह इस प्रकार है—

परमात्मा सर्वशक्तिमान् है।
इसलिये वह अनन्त सामर्थ्ययुक्त भी है।
अनन्त सामर्थ्यवाला अपनी सामर्थ्य सामग्री से ही जगत् की रचना करता है।

जब यह सृष्टि की उपादानभूत सामर्थ्य सामग्री परमात्मा की ही है, अथवा उससे भिन्न नहीं है तो परमात्मा को ही संसार का उपादान मानने में क्या आपत्ति है ?

एक और सूक्ष्म बात ध्यातव्य है। परमात्मा को सृष्टि का उपादानकारण मानते हुए भी स्वामी दयानन्द अद्वैतवेदान्तियों की भाँति यह नहीं मानते कि वह परमात्मा स्वयं ही जगत् रूप बन गया। परमात्मा को ही संसार का निमित्तकारण भी मानने में उन्हें कोई आपत्ति नहीं है। अपनी शक्ति से नाना प्रकार के जगत् रचने से तथा दूसरे की सहायता विना इसे बनाने के कारण उसे निमितकारण भी माना जा सकता है। वही परमात्मा इस सृष्टि का साधारणकारण भी है, क्योंकि किसी अन्य पदार्थ के सहाय से जगत् को ईश्वर ने नहीं रचा किन्तु अपनी सामर्थ्य से जगत् को रचा है। इस सारे विवेचन को पढ़कर लेखक के तर्कों की दुर्बलता की ओर अनायास ही ध्यान जा सकता है। 'अन्य किसी की सहायता न लेकर वह जगत् की रचना करता है,' यही तर्क समानरूप से लेखक ने ईश्वर को संसार के निमित्त तथा साधारण, दोनों कारणों के रूप में स्वीकार करने में दिया है। निष्कर्ष रूप में वह कह देता है कि जगत् के तीनों कारण परमेश्वर ही है, अन्य कोई नहीं।

इसी अध्याय में आगे लेखक यह स्वीकार कर लेता है कि प्रकृति परमात्मा द्वारा ही रचित है और इसी प्रकृति को अव्यक्त, अव्याकृत, प्रधान आदि नामों से जाना गया है। द्वितीय संस्करणस्थ अष्टम समुल्लास की तुलना में प्रथम संस्करण का यह विवेचन अत्यन्त साधारण प्रतीत होता है। सत्यार्थप्रकाश का पुनर्संस्कार करते समय लेखक ने इस अध्याय को सम्पूर्णतया संशोधित एवं परिवर्द्धित किया। प्रथम तो उन्होंने ऋग्वेद के नासदीयसूक्त के मंत्रों तथा कतिपय अन्य मन्त्रों के आधार पर सृष्टि-रचना के वैदिक दृष्टिकोण को स्पष्ट किया। पुनः प्रकृति के स्वरूप को सांख्यसूत्र[1] के आधार पर उल्लिखित कर उसे जगत् का उपादान सिद्ध किया। इसी प्रसंग में उपादान, निमित्त एवं साधारण कारण की व्याख्या एवं विवेचना करते हुए अद्वैत सिद्धान्त में मान्य ईश्वर के 'अभिन्ननिमित्तोऽपादन कारणवाद' का खण्डन भी किया गया है। सृष्टिरचना-विषयक अन्य मतों की मान्यताओं का खण्डन इसी संस्करण में आ सका है। कतिपय अन्य विषय जो प्रथम बार द्वितीय संस्करण के इस अध्याय में विवेचित हुए, वे हैं– प्रतिकल्प सृष्टि की समानता, सृष्टि के विषय में षट्शास्त्रों का अविरोध, सृष्टि का प्रवाह से अनादित्व, मनुष्य की प्रथम सृष्टि, आर्यों का भारत में आगमन, आर्यावर्त की प्राचीन सीमा, स्वराज्य (स्वदेशी राज्य) की महत्ता आदि। सृष्टि उत्पत्तिकाल, पृथिवी का सूर्य के चारों ओर भ्रमण आदि कतिपय खगोलशास्त्रीय विषय भी द्वितीय संस्करण के इस समुल्लास में आये हैं।

नवम समुल्लास विद्या-अविद्या तथा बन्ध-मोक्ष जैसे आध्यात्मिक विषयों में सम्बन्धित है। प्रारम्भ में ही पातञ्जलसूत्र के आधार पर विद्या एवं अविद्या की व्याख्या करने के अनन्तर ग्रन्थकार ने विवेक, वैराग्य, शम, दम, उपरति, तितिक्षा, श्रद्धा, समाधान और मुमुक्षत्व—इन नौ साधनों से मोक्ष-प्राप्ति बताई है। षट्दर्शनों के अविरोध को दर्शाने के लिए लेखक ने एक नवीन व्याख्या प्रस्तुत की है। उसके अनुसार इन दर्शनों में महाप्रलय की विभिन्न अवस्थाओं को पृथक्-पृथक् रीति से प्रस्तुत किया गया है। परन्तु इसी विवेचन से ग्रन्थकार के उन दार्शनिक मन्तव्यों की भी जानकारी मिल जाती है, जो आगे चलकर परिवर्तित हुए तथा जिसे आर्यसमाज के परवर्ती दार्शनिकों ने "वैदिक त्रैतवाद" का नाम दिया। सांख्याचार्य कपिल तथा मीमांसा के प्रवर्तक महर्षि जैमिनि को अनीश्वरवादी बताने का निराकरण करते हुए ग्रन्थकार सांख्यदर्शन के 'ईश्वरासिद्धेः' आदि सूत्रों का यथार्थ व्याख्यान किया है। कर्मफलों की व्यवस्था के अनुसार जीव को एकाधिक जन्म लेने पड़ते हैं, इस सिद्धान्त की पुष्टि नाना युक्तियों और प्रमाणों से की गई है। साथ ही यह भी प्रतिपादित किया गया है कि सृष्टि के प्रारम्भ में जो मानव-उत्पत्ति हुई, वह युवावस्था में हुई। इसी प्रसंग में मनुस्मृति के आधार पर विविध प्रकार के कर्मों से प्राप्त होनेवाली विभिन्न योनियों का उल्लेख हुआ है।

पश्चात्ताप तथा प्रायश्चित्त से पूर्वकृत पापकर्मों के फल की निवृत्ति तो नहीं होती, बल्कि यह लाभ अवश्य होता है कि जीव भविष्य में अनिष्टकर्मों के करने से बच जाता है। इसे ही पश्चात्ताप का लाभ माना जा सकता है। लेखक की अन्य धारणा यह भी है कि जब अत्यन्त प्रलय होगा तो उस समय न जीवों की सत्ता ही रहेगी और न प्रकृति की ही। एक परमेश्वर ही स्वसामर्थ्य से उस अवस्था में विद्यमान रहेगा। इस उल्लेख से भी यही बात पुष्ट होती है कि सत्यार्थप्रकाश के प्रथम संस्करण के लिखे जाने तक स्वामीजी को जीव की उत्पत्ति तथा उसका अत्यन्त प्रलय में विनाश मान्य था। कालान्तर में वे ईश्वर, जीव तथा सृष्टि की उपादानभूत प्रकृति को अनादि और अनश्वर मानने लगे। यह तो स्पष्ट ही है कि मुक्ति से पुनरावृत्ति की धारणा स्वामीजी द्वारा बहुत बाद में स्वीकार की गई थी। इसे सत्यार्थप्रकाश के द्वितीय संस्करण में ही स्थान मिल सका।

---

१. सांख्यदर्शन १।६१।

आचार-अनाचार और भक्ष्याभक्ष्य के विषय को सत्यार्थप्रकाश के दशम समुल्लास में लिया गया है। विदेशयात्रा के लाभों का वर्णन करने के पश्चात् लेखक ने इस बात पर बड़ा खेद प्रकट किया है कि आज भोजन के बखेड़े बहुत बढ़ गये हैं, जिससे समाज में विघटन की स्थिति उत्पन्न हो गई है। यहाँ लेखक ने स्पष्ट कर दिया है कि उत्तरभारत की अपेक्षा दक्षिण भारत के लोग भोजन में स्पृश्या-स्पृश्य का अधिक भेद करते हैं। इसी प्रकार उत्तरभारत के कान्यकुब्ज तथा सरयूपारीण ब्राह्मणों में पाये जानेवाले भोजनविषयक छूतछात को उन्होंने अनुचित ठहराया है। विषय का उपसंहार करते हुए लेखक ने स्पष्ट कर दिया है कि खान-पान का धर्म से कुछ भी सम्बन्ध नहीं होता। खान-पान आदि व्यवहार तो बाह्य हैं। भोजनादि में जो स्पृश्यास्पृश्य का भाव आर्यजाति में चल पड़ा, इसका कारण वे इस देश के लोगों की हठधर्मिता एवं मूर्खता को ही मानते हैं। लेखक ने इस अध्याय को समाप्त करते हुए स्पष्ट कर दिया कि भोजनादि के बखेड़ों को स्वीकार करने से ही आर्यावर्त्त के लोग बल, बुद्धि और पराक्रम से हीन होकर पराधीन बने।

सत्यार्थप्रकाश के प्रथम भाग की समाप्ति दशम समुल्लास के साथ ही हो गई। इस समुल्लास को समाप्त करने के साथ ही लेखक ने यह भी संकेत दे दिया है कि आगे के अध्यायों में क्रमशः आर्यावर्त में प्रचलित मत, जैन, इस्लाम तथा ईसाइमत के सम्बन्ध में विचार किया जायगा। दूसरे संस्करण में तो उत्तरार्द्ध के प्रत्येक समुल्लास के प्रारम्भ में एक-एक अनुभूमिका लिखकर स्वामीजी ने सम्प्रदायों के खण्डन-मण्डन का विषय लिखने के कारणों को स्पष्ट किया है। प्रथम संस्करण में अनुभूमिकायें नहीं लिखी गई। तथापि लेखक अपने अभिप्राय को स्पष्ट कर देता है कि जब तक मनुष्य सत्यासत्य का विवेक नहीं कर लेता तब तक वह सत्य को ग्रहण करने और असत्य के त्याग में सक्षम नहीं होता।

दशम समुल्लास के इन उपसंहारात्मक वाक्यों से उन आक्षेपकर्त्ताओं की आपत्तियों का भी समाधान हो जाता है, जो यह कहते रहे कि स्वामीजी ने मूल सत्यार्थप्रकाश में मात्र १२ समुल्लास ही लिखे थे और इस्लाम तथा ईसाइमत की आलोचना से सम्बन्धित अध्याय इस ग्रन्थ में मिला दिये गये। तथ्य यह है कि छपने की शीघ्रता अथवा ग्रन्थ के प्रकाशक राजा जयकृष्णदास की अनिच्छा के कारण इस्लाम और ईसाईमत की आलोचना से सम्बन्धित अवशिष्ट दो समुल्लास प्रथम संस्करण में नहीं छप सके। द्वितीय संस्करण में इनका क्रम बदलकर, अर्थात् ईसाई मत की आलोचना तेरहवें अध्याय में तथा इस्लाम की समीक्षा चौदहवें में रखकर प्रकाशित किये गये हैं।

द्वितीय संस्करण की ही भाँति प्रथम संस्करण में भी एकादश समुल्लास ने ग्रन्थ के सर्वाधिक कलेवर को घेर रक्खा है। यहाँ यह ८८ पृष्ठों में मुद्रित हुआ है। ग्यारहवें समुल्लास का आरम्भ लेखक ने मनु के 'एतद्देशप्रसूतस्य'[1] श्लोक को उद्धृत कर किया है। आर्यावर्त के विगत गौरव का आख्यान करते हुए ग्रन्थकार ने संस्कृत भाषा की प्राचीनता तथा अन्य देशी एवं विदेशी भाषाओं के इसी भाषा से विकृत अथवा अपभ्रष्ट होकर जन्म लेने की बात कही है। ऐसा ज्ञात होता है कि उन्नीसवीं शताब्दी में संस्कृत अध्ययन से प्रेरणा पाकर यूरोप के जो संस्कृतविद् नवीनभाषाविज्ञान, के सिद्धान्तों को जन्म दे रहे थे, उनसे स्वामी दयानन्द भी भलीभाँति परिचित थे। तभी तो उन्होंने यह स्पष्ट कर दिया कि संसार की भाषाओं की आदि जननी संस्कृत ही है। संस्कृत भाषा में विद्यमान ज्ञान, विज्ञान और विद्यायें ही क्रमशः मिश्र, यूनान, रोम, तथा यूरोप के अन्य देशों में गईं, तथा ग्रीक, लैटिन तथा अंग्रेजी आदि भाषायें भी संस्कृत से अपभ्रंश होकर ही बनी हैं।

---

१. मनु० २।२०।

लेखक के विचारानुसार महाभारत-युद्ध के काल से इस देश का पतन प्रारम्भ हुआ। भारत राष्ट्र के सर्वतोमुखी अधःपतन की करुणकथा को सत्यार्थप्रकाशकार ने अत्यन्त रोचक ढंग से निबद्ध किया है। महाभारत काल के पश्चात् ब्राह्मणों के प्रभुत्व में अनायास वृद्धि, प्रतिक्रिया रूप में जैन, बौद्ध, आदि अवैदिक मतों का जन्म, शंकराचार्य द्वारा वेदबाह्य नास्तिक मतों का खण्डन, महमूद गजनवी का सोमनाथ पर आक्रमण, इस्लामी शासन की स्थापना, औरंगजेब के अत्याचार, तत्पश्चात् भारत में अंग्रेजी राज्य की स्थापना तक का विवरण लेखक ने अत्यन्त रोचक शैली में प्रस्तुत किया है। इस ऐतिहासिक समीक्षा के आधार पर कुछ मनोरंजक निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं—

(१) स्वामी दयानन्द इस समय तक जैन, और बौद्धों के पारस्परिक भेद को भलीभांति हृदयंगम नहीं कर पाये थे। अतः उन्होंने यत्र-तत्र बौद्धों के स्थान पर 'जैनों' का नाम प्रयुक्त किया है।

(२) उनकी सम्मति में जैनधर्म के प्रमुख दोष इस प्रकार थे—

(अ) ईश्वर को न मानना।

(ब) वेदादि सत्य शास्त्रों का खण्डन करना।

(स) जगत् की रचना स्वभाव से ही मानना।

(द) किसी सृष्टिकर्त्ता ईश्वर को न मानना।

(३) वैदिक धर्म की पुनः स्थापना के प्रसंग में ग्रन्थकार ने शंकराचार्य की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। उनके विचारानुसार यदि शंकर को कुछ अधिक आयु मिली होती तो वे देश में वेदविद्या का यथावत् प्रचार कर जाते।

(४) पुरातन ऋषियों के नामों से नवीन पुराणों की रचना करना, मूर्त्तिपूजा का व्यापक प्रचार, फलित ज्योतिष के विश्वास द्वारा पुरुषार्थहीन होना आदि बातों को लेखक ने अत्यन्त जागरूकता से प्रस्तुत किया है।

(५) अंग्रेजी राज्य के बारे में अपनी धारणा प्रकट करते हुए लेखक यह स्वीकार करता है कि प्रथम तो इस शासन में प्रत्येक व्यक्ति को अपना मत स्वीकार करने तथा उसके पालने की पूर्ण स्वतन्त्रता है। इस राज्य का एक अन्य गुण वह यह भी बताता है कि पुस्तकों का मुद्रण आरम्भ हो जाने से प्रत्येक ग्रन्थ सुलभ हो गया है।

इस प्रकार मध्यकालीन धर्म, समाज और जन-जीवन में सर्वत्र हुई अधोगति का वस्तुनिष्ठ चित्र अंकित करने के पश्चात् लेखक क्रमशः अन्य साम्प्रदायिक विषयों की समीक्षा में प्रवृत्त होता है। मूर्त्तियों में प्राणप्रतिष्ठा, नवग्रह-पूजन, वल्लभ सम्प्रदाय की व्यभिचारमूलक शिक्षाएँ, चक्रांकित सम्प्रदाय, वाममार्ग, साम्प्रदायिक मन्त्र, नानकप्रवर्तित सिख सम्प्रदाय, कबीर-पन्थ, दादू-पन्थ, दशनामी संन्यासी सम्प्रदाय, पुराणादि ग्रन्थ। इन सभी सम्प्रदायगत विषयों का प्रबल किन्तु सतर्क खण्डन इस समुल्लास के अधिकांश को घेरे हुए है। धर्मस्थानों, तीर्थों तथा मठ-मन्दिरों के साथ जो नाना अंधविश्वास मिथ्या धारणायें तथा चमत्कार आदि जुड़े हुए हैं, उनका समीक्षात्मक मूल्यांकन भी इसी अध्याय में हुआ। तारकेश्वर, रामेश्वर, दक्षिण में कालियाकन्त, जयपुर राज्य की (सीकर के निकट) जीन देवी, कांगड़े की ज्वालामुखी, पंचकेदार, बद्रीनाथ, कामाक्षा, बौद्ध गया, काशी, प्रयाग, अयोध्या, मथुरा, वृन्दावन, विन्ध्याचल, बैजनाथ आदि धर्मस्थानों के साथ जुड़े चमत्कारों का खण्डन किया है। यहाँ यह बात स्मरणीय है कि अपने देशाटन-काल में लेखक ने स्वयं इनमें से अधिकांश स्थलों की यात्रा की थी तथा तीर्थों और मन्दिरों से सम्बन्धित मान्यताओं, धारणाओं तथा विश्वासों की निस्सारता को प्रत्यक्ष किया था।

महाभारत में सहस्रों श्लोकों का प्रक्षेप, व्यास के नाम पर अठारह पुराणों की रचना, पुराणों में विद्यमान साम्प्रदायिकता की भावना, शैव, शाक्त और वैष्णवों का पारस्परिक द्वेष भाव, जैसे विषयों पर लेखनी चलाने के पश्चात् लेखक ने श्रीमद्भागवत की विस्तृत समीक्षा की है। मध्यकालीन सन्तों और निर्गुण भक्तों के साथ जो नाना चमत्कारपूर्ण कथायें जुड़ गई हैं, उनका परीक्षण एवं समीक्षण भी यहाँ किया गया है। नाभादास कृत भक्तमाल इस प्रकार की कथाओं का भण्डार है।

प्रथम संस्करण के एकादश समुल्लास का महत्त्व एक अन्य दृष्टि से भी है। एतद्देशीय विभिन्न मत-सम्प्रदायों की आलोचना एवं समीक्षा करने के पश्चात् लेखक ने तत्कालीन ब्रिटिश शासकों की शासनप्रणाली, न्यायविधान तथा शासित देशवासियों के प्रति उनके व्यवहार की सूक्ष्म आलोचना भी की है। वे यह तो स्वीकार करते हैं कि इस शासन के अन्तर्गत प्रत्येक नागरिक को स्वधर्म पालन की स्वतन्त्रता तो है ही, धार्मिक विषयों की चर्चा एवं आलोचना प्रत्यालोचना आदि की पूर्ण आजादी भी है। शिक्षा के प्रचार से भारतवासियों के मानसिक और बौद्धिक क्षितिज का विस्तार हुआ है तथा आवागमन के साधनों में वृद्धि तथा रेल, तार, डाक आदि से समाचारों के आदान-प्रदान आदि में जो द्रुतता एवं सुगमता आई है, वह भी श्लाघनीय है। मुसलमानी शासन काल की तुलना में उन्नीसवीं शताब्दी के भारतीय नागरिक अपने जीवन, घर-बार, परिवार तथा सम्पत्ति को अधिक सुरक्षित समझते थे, इस तथ्य को भी स्वामी दयानन्द स्वीकार करते हैं।

"तथापि अंग्रेजी शासन ने भारतवासियों को आर्थिक दृष्टि से कितना विपन्न और दरिद्र बना दिया है, इस ओर भी लेखक का ध्यान गया था। उन्हें इस बात से बड़ी पीड़ा होती है कि सरकार ने नमक जैसी जीवन के लिए आधारभूत वस्तु के उत्पादन पर भी कर लगा दिया है। क्या ही अच्छा होता यदि सरकार मद्य, अफीम, गाँजा और भंग जैसे मादक द्रव्यों के उत्पादन पर कठोर करों की स्थापना करती। इसी प्रकार जो गरीब ग्रामीण तथा जंगलों के निवासी घास छीलकर नगरों में बेचने के लिये लाते हैं अथवा लकड़ी के भार ईंधन के रूप में बेचने के लिए लाते हैं, उन पर भी राजकीय शुल्क लगाना स्वामीजी की दृष्टि में उचित नहीं है। न्यायालयों में चलनेवाले वादों और अभियोगों के समय जो स्टेम्प ड्यूटी देनी पड़ती है, उसकी आर्थिक गुरुता को भी लेखक ने अनुभव किया था। तभी तो वह कहता है कि सरकार कागद (स्टाम्प) बेचती और बहुत सा कागजों पर धन बढ़ा दिया है, इससे गरीब को बहुत क्लेश पहुँचता है। सो यह बात राजा को करनी उचित नहीं।"

निश्चय ही सत्यार्थप्रकाश के लेखक की दृष्टि अत्यन्त दूरगामी तथा मर्मभेदिनी है। अंग्रेजी राज्य की दण्ड-प्रक्रिया में जो त्रुटियाँ थीं तथा दरिद्र वर्ग किस प्रकार न्याय प्राप्त करने में कठिनाई अनुभव करता है, यह भी उन्हें ज्ञात था। गरीब आदमी सुगमता से न्याय प्राप्त नहीं कर सकता। न्यायालयों की व्यवस्था के अन्तर्गत एक के बाद एक जिस प्रकार अपीलें होती रहती हैं और अन्तिम न्याय प्राप्त करने तक लोगों के घर बरबाद हो जाते हैं, इसका वस्तुनिष्ठ चित्र भी लेखक ने अंकित किया है। स्वामी दयानन्द के समय में इंग्लैण्ड स्थित प्रिविकौन्सिल ही भारतवासियों के लिए सर्वोच्च न्यायालय था और वहाँ तक जाते-जाते लोग दिवालिया हो जाते थे।

लेखक के विचार में देश की आर्थिक दशा में सुधार तभी हो सकता है, जब कि कृषि में सहायता पहुँचानेवाले गाय, बैल, भैंस आदि पशुओं की रक्षा हो। कृषिप्रधान देश में दुधारू पशुओं का विनाश कितना हानिकर हो सकता है, लेखक ने यह आँकड़े देकर सिद्ध किया है। इसी प्रकार पशुओं के लिए चरागाहों की समुचित व्यवस्था करना भी आवश्यक है। राजा सगर के न्याय की पुराणवर्णित कथा को प्रस्तुत कर लेखक ने व्यंजना से ही यह स्पष्ट कर दिया है कि प्रजा-पालन में यदि राजा का

पुत्र भी बाधक बने तो वह समुचित दण्ड का पात्र है। न्यायकर्ता राजा के समक्ष दण्ड देते समय स्व-पर का भेद नहीं होता।

सत्यार्थप्रकाश के इस संस्करण की रचना से पूर्व ही स्वामी दयानन्द अपने बंग-प्रवास के समय ब्राह्मसमाज के सिद्धान्तों, क्रिया-कलापों तथा मान्यताओं से परिचित हो चुके थे। अतः भारतीय मत-सम्प्रदायों की आलोचना का उपसंहार उन्होंने ब्राह्मसमाज की चर्चा से किया है। लेखक ने ब्राह्म मतावलम्बियों द्वारा पुनर्जन्म को न मानने, पश्चात्ताप से पापकर्मों की फल-निवृत्ति, वर्णाश्रम-व्यवस्था को स्वीकार न करने, यज्ञोपवीत आदि विद्याचिह्नों का तिरस्कार करने जैसे मन्तव्यों की आलोचना की है। उन दिनों ब्राह्मसमाज के वार्षिकोत्सवों पर अनेक प्रकार की धूमधाम की जाती थी। ब्राह्म मन्दिरों और उपासना-स्थलों को विभिन्न अलंकरणों से सजाया जाता था। रोशनी की जाती थी, संगीत, व्याख्यान, प्रवचन आदि के आडम्बरपूर्ण कार्यक्रम रक्खे जाते थे। इन आयोजनों में पर्याप्त व्यय होता था। अपने कलकत्ता-प्रवास के समय स्वामी दयानन्द भी ब्राह्म-उत्सव में आमन्त्रित होकर गये थे और उत्सवों के इस आडम्बर को उन्होंने प्रत्यक्ष देखा था। सम्भवतः इसी अनुभव को ध्यान में रखकर उन्होंने ऐसे मेलों और उत्सवों की भी आलोचना की है, जिससे लोगों की बुद्धि बहिर्मुखी हो जाती है और धन का भी अपव्यय होता है।

स्वामीजी के देखते-देखते ब्राह्मसमाज में विग्रह उत्पन्न हुआ। देवेन्द्रनाथ ठाकुर तथा केशवचन्द्र सेन के मतभेदों के कारण इस संस्था में विघटन की स्थिति उत्पन्न हुई। परम्पराप्रेमी ब्राह्मों ने ठाकुर महाशय के नेतृत्व में आदि ब्राह्मसमाज का गठन किया तो तथाकथित प्रगतिशील एवं सामाजिक सुधारों में क्रान्तिकारी होने का दम भरनेवाले ब्राह्म लोग केशवचन्द्र सेन को नेता मानकर भारतवर्षीय ब्राह्म-समाज की वेदी पर एकत्रित हुए। स्वामी दयानन्द ने एक समानधर्मी सुधारक संस्था के इस फूट एवं कलह से उत्पन्न विषाक्त वातावरण को अन्तर्वेदनायुक्त दृष्टि से देखा और अनुभव किया था। ब्राह्मों की निर्गुण, निराकार परमात्मा की उपासनाप्रणाली की प्रशंसा करते हुए भी उन्होंने इस बात पर खेद व्यक्त किया है कि ये लोग ईसा, मूसा, मुहम्मद, नानक, चैतन्य को तो साधु मानते हैं जब कि जैगीषव्य, पंचशिख तथा आसुरि आदि ऋषि-मुनियों की अवगणना करते हैं।

प्रथम संस्करण का द्वादश समुल्लास संक्षिप्ततम है। यह मुद्रित पुस्तक के १० पृष्ठों में आया है। ऐसा लगता है कि उस समय तक स्वामीजी को बौद्धों और जैनों के ग्रन्थ पर्याप्त संख्या में उपलब्ध नहीं हो सके थे, यही कारण है कि जैन धर्म की समीक्षा में लिखी गई बातें बहुत सामान्य कोटि की हैं। सर्वदर्शन-संग्रह में चार्वाक मत के निरूपक श्लोकों को उद्धृत कर उनकी समीक्षा इस संस्करण में भी उसी प्रकार की गई है, जैसी द्वितीय संस्करण में हमें उपलब्ध होती है। न्यायदर्शन में ईश्वर के अस्तित्व की सिद्धि तथा अनीश्वरवाद के खण्डन में जो युक्तियाँ-प्रत्युक्तियाँ दी गई हैं, उन्हें भी लेखक ने जैनमत प्रोक्त अनीश्वरवाद के खण्डन में यहाँ उपस्थित किया है।

सत्यार्थप्रकाश के अवशिष्ट दो समुल्लास जो इसलाम और ईसाइयत की समीक्षा से सम्बन्धित थे, किसी कारणवश इस संस्करण में प्रकाशित नहीं हो सके।

प्रथमसंस्करण-विषयक सन्दर्भ-साहित्य—

१. प्रथम संस्करण—राजा जयकृष्णदास द्वारा प्रकाशित।
२. प्रथम संस्करण—पं० कालूराम शास्त्री द्वारा १९१६ ई० में प्रकाशित।
३. प्रथम संस्करण का उर्दू अनुवाद पं० धर्मपाल (मुंशी अब्दुल गफूर) कृत।
४. आदि सत्यार्थप्रकाश—ले० वेणीप्रसाद शर्मा।
५. आदिम सत्यार्थप्रकाश और आर्यसमाज के सिद्धान्त—म० मुंशीराम जिज्ञासुकृत।
६. आदिम सत्यार्थप्रकाश के महत्त्वपूर्ण संस्मरण—स्वामी आत्मानन्द तीर्थ लिखित।

विषयानुक्रमणिका

[प्रथम भाग]

□

विषयानुक्रमणिका

[द्वितीय भाग]

□□

सत्यार्थप्रकाश वाङ्मय

संग्रहकर्ता—डॉ० भवानीलाल भारतीय

१. सत्यार्थप्रकाश (विभिन्न संस्करण)

	सम्पादक	प्रकाशक	विशेष	प्रकाशनकाल
१.		राजा जयकृष्णदास	स्टार प्रेस, बनारस (मुद्रक)	१८७५ ई.
२.		वैदिक यन्त्रालय, प्रयाग/अजमेर	अब तक ३७ संस्करण प्रकाशित	१८८४ ई.
३.		गोविन्दराम हासानन्द कलकत्ता	दयानन्द जन्मशताब्दी पर प्रकाशित	१९८१ वि.
४.		आर्य साहित्य मण्डल, अजमेर	दयानन्द निर्वाण अर्द्धशताब्दी पर प्रकाशित	१९९० वि.
५.	पं० जयदेव शर्मा, विद्यालंकार	,, ,,	तृतीय संस्करण	१९९६ वि.
६.		शारदा मन्दिर लिमिटेड, दिल्ली	धार्मिक जगत् का विश्वकोष	१९९८ वि.
७.		सार्वदेशिक प्रकाशन, दिल्ली		१९५३ ई.
८.	स्वा० वेदानन्द तीर्थ	विरजानन्द वैदिक संस्थान, गाजियाबाद	सटिप्पण:	२०१३ वि.
९.	पं० जगदेवसिंह शास्त्री, सिद्धान्ती	हरियाणा साहित्य संस्थाम, गुरुकुल, झज्जर	स्थूलाक्षर संस्करण	१९६१ ई.
१०.	पं० भगवद्दत्त	गोविन्दराम हासानन्द, दिल्ली		१९६३ ई.
११.		देहाती पुस्तक भण्डार, दिल्ली		१९६३ ई.
१२.	पं० युधिष्ठिर मीमांसक	रामलाल कपूर ट्रस्ट, सोनीपत		२०२९ वि.
१३.	,,	,, ,,	आर्यसमाज शताब्दी संस्करण	२०३२ वि.
१४.	आचार्य सुदर्शनदेव	आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, दिल्ली	द्वितीय संस्करणानुसारी	१९६७ ई.
१५.		,, ,,	गुटका संस्करण	१९७६ ई.
१६.		वैदिक साहित्य सदन, दिल्ली		

क्रम	सम्पादक	प्रकाशक	संस्करण	प्रकाशन काल
१७.		सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा, दिल्ली	आर्यसमाज स्थापना शताब्दी सं० (प्रथम संस्करण)	१९७५ ई. १९९३ वि.
१८.		आर्य साहित्य भवन, दिल्ली		
१९.	वैद्यनाथ शास्त्री तथा अन्य	दयानन्द संस्थान, नई दिल्ली	प्रचार संस्करण	
२०.		,, ,,	राज संस्करण	
२१.			उपहार संस्करण	
२२.		,,	जनता संस्करण	
२३.		,,	आर्यसमाज शताब्दी संस्करण	१९७५ ई.
२४.		देहाती पुस्तक भण्डार, दिल्ली		१९६३ ई. (साधारण सं.)
२५.		,,		२०२० वि. (स्थूलाक्षरी सं.)
२६.		रामचन्द्र शर्मा इंजीनियर		१९३६ ई. (गुटका सं.)
२७.	विरजानन्द दैवकरणि	हरियाणा साहित्य संस्थान	ताम्रपट संस्करण	२०४० वि.

विरोधियों द्वारा प्रकाशित संस्करण—

क्रम	ग्रन्थ नाम	संस्करण	प्रकाशक	प्रकाशन काल
१.	असली सत्यार्थप्रकाश	(प्रथमावृत्ति)	कालूराम शास्त्री, मेरठ	१९१९ ई.
२.	सत्यार्थप्रकाश	प्रथम संस्करण उर्दू अनुवाद	धर्मपाल बी. ए., लाहौर (अब्दुल गफूर)	
३.	आदि सत्यार्थप्रकाश		वेणीप्रसाद शर्मा, होशंगाबाद	

२. सत्यार्थप्रकाश (पृथक समुल्लासों का प्रकाशन)

ग्रन्थ नाम	सम्पादक	प्रकाशक	प्रकाशन काल
१. सत्यार्थप्रकाश संग्रह	सं. दुर्गाप्रसाद	डी.ए.वी. कॉलेज लाहौर पुस्तक ६	१८९१ ई.
२. आर्य सिद्धान्त दर्पण (दशम समुल्लास)	रामलाल लुधियाना	लाहौर	१९१४ ई.
३. सत्यार्थप्रकाश (द्वितीय समुल्लास)	सार्वदेशिक दयानन्द संन्यासी	वानप्रस्थ मण्डल, ज्वालापुर	१९७४ ई.
४. सत्यार्थप्रकाश (प्रथम अंक)		आर्यसमाज सिलीगुड़ी	
५. राजधर्म (षष्ठ समुल्लास)	लक्ष्मीदत्त दीक्षित	सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली	१९५० ई.
६. राजधर्म प्रकाश		सार्वदेशिक प्रकाशन, दिल्ली	२०१३ वि.

७. आचार, अनाचार और भक्ष्याभक्ष्य (दशम समुल्लास)		गोविन्द ब्रदर्स, अलीगढ़	१९४८ ई.
८. सत्यार्थप्रकाश परीक्षोपयोगी (दशम समुल्लास:)		आर्य साहित्य मण्डल, अजमेर	२००६ वि.
९. सत्यार्थप्रकाश का सारांश (प्रथम समुल्लास)	श्यामस्वरूप	सत्यव्रत आर्यसंघ, बरेली	१९४० ई.
१०. सत्यार्थप्रकाश (१३वाँ समुल्लास)		आर्योदय विशेषांक	१९६५ ई.
११. सत्यार्थप्रकाश (प्रथम व द्वितीय समुल्लास)	रघुनन्दनसिंह 'निर्मल'	आर्य सत्संग सभा, दिल्ली	२०१० वि.
१२. सत्यार्थप्रकाश (तृतीय समुल्लास)		,,	२०२० वि.
१३. माता, पिता और आचार्य (द्वि० समु०)	रामगोपाल	आर्य युवक संघ, दिल्ली	२०१० वि.
१४. स० प्र० (द्वि० समु०)	स्वामी विवेकानन्द	सा. द. सेवा मण्डल, ज्वालापुर	२०३० वि.
१५. स० प्र० (प्र० समु०)		आर्यसमाज सिलिगुड़ी	
१६. भारत की प्राचीन राजनीति (षष्ठ समु०)		वेद प्रचारक मण्डल, दिल्ली	
१७. सत्यार्थप्रकाश (१-३ समु०)	शिवदयालु		२०१९ वि.
१८. लघु स० प्र० (द्वि० ख०) (५, ६ समु०)	शिवदयालु	आ. प्र. सभा, उ. प्र.	२०२२ वि.
१९. ,, (तृ० ख०) (७, ८ समु०)	,,	,,	२०२४ वि.
२०. बौद्ध जैन आदि प्रकाश		वेद प्रचारक मण्डल, दिल्ली	
२१. ईसाई मत प्रकाश (१३वाँ समु०)		वेद प्रचारक मण्डल, दिल्ली	
२२. मुस्लिम मत प्रकाश (१४वाँ समु०)		,,	
२३. बालशिक्षक (द्वि० समु०)		गो. हा.	२०११ वि.
२४. मुक्ति नो मार्ग (नवम समु०)	स्वामी सर्वज्ञनन्द	(गुजराती अनुवाद)	
२५. स० प्र० के नवें समु० का उर्दू तर्जुमा	निहालसिंह	विद्याधर, मेरठ	१८९७ ई.
२६. पुराणादि प्रकाश		वेद प्रचारक मण्डल, दिल्ली	
२७. साम्प्रदायिकता से आक्रान्त आर्यावर्त	सत्यप्रकाश		१९८७ ई.

५. सत्यार्थप्रकाश के बाल अथवा लघु संस्करण

ग्रन्थ नाम	सम्पादक	प्रकाशक	प्रकाशन काल
१. बाल सत्यार्थप्रकाश ष.सं.	शिव शर्मा	शंकरदत्त शर्मा, मुरादाबाद	१९३१ ई.
२. "	"	आर्य प्रेमी कार्यालय, अजमेर	१९६७ ई.
३. बाल सत्यार्थप्रकाश (ह. सं.)	विश्वनाथ विद्यालंकार	आर्य पुस्तकालय, लाहौर	१९३६ ई.
४. "	"	राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली	
५. लघु सत्यार्थप्रकाश (पूर्वार्द्ध)		हजारीलाल आर्य बुकसेलर, लखनऊ	१९१९ ई.
६. महिला सत्यार्थप्रकाश (द्वि. सं.)	विश्वप्रकाश	कला प्रेस, प्रयाग	१९४० ई.
७. सत्यार्थप्रकाश संग्रह	गंगाप्रसाद, तुलसीराम स्वामी, शिव शर्मा	आर्य प्रतिनिधि सभा सं. प्रा.	
८. लघु सत्यार्थप्रकाश	घासीराम	प्रकाशन विभाग	१९६४ वि.
९. सत्यार्थ सार रीडर नं० ४		स्वामी प्रेस, मेरठ	
१०. बाल सत्यार्थप्रकाश		आर्य साहित्य मण्डल, अजमेर	
११. बाल संक्षिप्त सत्यार्थप्रकाश	जगदीश्वरानन्द सरस्वती	दयानन्द संस्थान, नई दिल्ली	२०३३ वि.
१२. सत्यार्थसुधा (पूर्वार्द्ध)	आचार्य जगदीश विद्यार्थी	आर्यकुमार सभा किंग्जवे कैम्प, दिल्ली	१९७० ई.
१३. " (उत्तरार्द्ध)	"	"	१९७० ई.
१४. संक्षिप्त सत्यार्थप्रकाश	दयानन्द संन्यासी सार्वदेशिक	वानप्रस्थ मण्डल, ज्वालापुर	१९६७ (द्वि.सं.)
१५. जगमगाते हीरे	हरिदेव आर्य	मधुर प्रकाशन, दिल्ली	१९७१ ई.
१६. गुरु-शिष्य संवाद	मित्रसेन आर्य	भारतवर्षीय वैदिक सिद्धान्त परिषद्, अलीगढ़	१९६७-६८ ई.
१७. सत्यार्थप्रकाश उपदेशामृत	चतुरसेन गुप्त	सत्यार्थप्रकाश धर्मार्थ ट्रस्ट, शामली	१९६५ ई.
१८. ज्ञान प्रकाश	हरिशरण सिद्धांतालंकार दीनानाथ सिद्धांतालंकार	जनज्ञान प्रकाशन, दिल्ली (विशेषांक)	१९९९ वि.
१९. कुमार सत्यार्थ प्र० (गुजराती)	वल्लभदास रत्नसिंह मेहता	आर्यसमाज, बम्बई	१९३५ ई. १९५५ ई.
२०. संक्षिप्त सत्यार्थप्रकाश	दयानन्द संन्यासी सार्वदेशिक	वानप्रस्थ मण्डल, ज्वालापुर	१९७१ ई.
२१. सत्यार्थ सरस्वती	मदनमोहन विद्यासागर	गो० हा०	१९७८ ई.

२२. सत्यार्थप्रकाश संदेश	सत्यकाम वर्मा	आ० प्र० सभा, दिल्ली	२०३६ वि.
२३. बाल सत्यार्थप्रकाश	दया आश्रित	नैतिक शिक्षा धर्मार्थ ट्रस्ट	२०३५ वि.
२४. संक्षिप्त सत्यार्थप्रकाश	ऋषिराम	डी. ए. वी. प्र. समिति	१९९३ वि.
२५. सरल सत्यार्थप्रकाश	वेदप्रकाश सुमन	तपोभूमि मथुरा	१९८० ई.
२६. सत्यार्थप्रकाश सम्भाषण	नन्दिता शास्त्री	आनन्दप्रकाश आर्य, पानीपत	१९८३ ई.
२७. सत्यार्थप्रकाश की भूमिका		आ० स० श्रीगंगानगर	१९७७ ई.
२८. सत्यार्थप्रकाश का सारांश	श्यामस्वरूप सत्यव्रत	बरेली	१९४० ई.
२९. सत्यार्थप्रकाश उपदेशामृत	चतुरसेन गुप्त	सार्वदेशिक प्र० सभा	

४. अंग्रेजी अनुवाद

ग्रन्थ नाम	अनुवादक	प्रकाशक	प्रकाशन काल
1. Light of Truth	Dr. Chiranjiva Bharadwaj	Lahore (Union Press)	1906 IIIEd.
2. ,,	,,	Arya Pratinidhi Sabha, U. P.	1915 II Ed.
3. ,,	,,	Dr. Satyakama Bharadwaj	1924-27 III Ed.
4. ,,	,,	Arya Samaj, Madras	1932 IV Ed.
5. ,,	,,	Sarvadeshik Arya Pratinidhi Sabha, New, Delhi	1975 V Ed. 1991 VI Ed.
6. An English Translation of the Satyartha Prakash	Durga Prasad	Virjanand Press, Lahore	1908
7. ,,	Durga Prasad	Jangyan Prakashan. Delhi	1970-1972
८. Light of Truth	Ganga Prasad Upadhyaya	Kala Press, Allahabad.	1946 I Ed.
9. ,,	,,	,,	1960 II Ed.
10. ,,	,,	Dr. Ratna Kumari Swadhyaya Sansthan	1981 III Ed.
11. Spot Light on Truth	V. Ramchandra Rao	Udgith Pub., Hyderabad.	1988

५. अंग्रेजी में विभिन्न समुल्लासों का पृथकशः प्रकाशन

1.	Satyartha Prakash (First, Second, Third, (Fifth Chapters)	Charan Das	The Aryan Printing, Publishing and General Trading Co. Lahore	1903,04
2.	Satyartha Prakash (English Translation of the Seventh, Eighth, Ninth and Tenth —Ch.)	Durga Prasad	Virjanand Press, Lahore	1903
3.	Satyartha Prakash (English translation of the Eleventh Chapter)	Durga Prasad	Virjanand Press, Lahore	1900 I Ed. 1903 II Ed.
4.	Satyartha Prakash Selections (The Niyoga doctrine of Arya Samaj)	Ruchi Ram Sahni	Punjab Economical Press, Lahore	1897
5.	Satyartha Prakash (Chapter I)		Aryan Press, Lahore	1903
6.	Light of Truth (abridged)	Diwan Chand	Author	
7.	,,	Diwan Chand	Jangyan, Delhi	1969
8.	Satyartha Prakash (The torch of Truth)	Jagar S. Bright	Arsh Bharti	1975
9.	Flash of Truth	Satyakam Varma	A. P. Sabha, Delhi	
10.	Glimpses from Satyartha Prakash	D. N. Vasudev	,, ,, Punjab	1979
11.	Truth Prevails	C. Bharadwaj	Arya Samaj, Vasant Vihar, Delhi	
12.	Poems of Ways and Means of Successful life from the Light of Truth	S. L. Bhatia	Jaipur	
13.	Political Science (Chapter VI)		Sarvadeshik A. P. Sabha, Delhi	

६. उर्दू अनुवाद

ग्रन्थ नाम	अनुवादक	प्रकाशक	प्रकाशन काल
१. मुस्तनिद उर्दू सत्यार्थप्रकाश	आत्माराम अमृतसरी तथा भक्त रैमल	आ० प्र० सभा, पंजाब	१८९८ ई.
२. ,,	,, ,,	राजपाल, लाहौर	(१९०८ से १९१० तक १० सं)
३. सत्यार्थप्रकाश (११वें समु० तक)	जीवनदास पेंशनर	आ० प्र० सभा, पंजाब	१८९९ ई.
४. अनवारे हकीकत (१० समु० तक)	चमूपति	,, ,,	१९३९ ई.
५. ,,	मास्टर लक्ष्मण	सार्वदेशिक आ०प्र० सभा, रामनगरी	
६. ,,	,,	,,	
७. सत्यार्थप्रकाश उर्दू	मेहता राधाकृष्ण	सर्वहितकारी प्रेस, लाहौर	१९०५ ई.
८. ,,	,,	आर्य प्रादेशिक सभा, लाहौर	१९४३ ई.
९. – ,,	,,	आर्य पुस्तकालय, लाहौर	१९३० ई.
१०. ,,	,,	लाजपतराय एण्ड सन्स, लाहौर	

अरबी अनुवाद

ग्रन्थ नाम	अनुवादक	प्रकाशक	प्रकाशन काल
१. सत्यार्थप्रकाश (मात्र १ समुल्लास)	कालीचरण शर्मा	मुसाफिर बुक डिपो, आगरा	

७. भारतीय भाषाओं में अनुवाद

सिंधी अनुवाद

ग्रन्थ नाम	अनुवादक	प्रकाशक	प्रकाशन काल
१. सत्यार्थप्रकाश	जीवनलाल आर्य	गो० हा०	१९१२ प्र. सं.
२. ,,	,,	आ० प्र० सभा, सिंध	१९३७ द्वि. सं.
३. ,,	,,	हकीम वीरूमल आर्य, अजमेर	
४. ,,	,,	सार्वदेशिक आर्य प्र० सभा	१९४६ त. सं.

पंजाबी अनुवाद

ग्रन्थ नाम	अनुवादक	प्रकाशक	प्रकाशन काल
१. सत्यार्थप्रकाश	आत्माराम अमृतसरी	वजीरसिंह प्रेस, अमृतसर	१८९९ ई.
२. ,,	,,	,,	१९०२ ई.
३. ,,	,,	आर्य प्रतिनिधि सभा, पंजाब	१९१२ ई.
४. ,, (प्रथम भाग)	तरसेमकुमार आर्य	पं० गं० प्र० उपाध्याय प्रकाशन मन्दिर, अबोहर	१९७८ ई.

ग्रन्थ नाम	अनुवादक	प्रकाशक	प्रकाशन काल
गुजराती अनुवाद			
१. सत्यार्थप्रकाश	मंछशंकर जयशंकर द्विवेदी	जगदीश्वर प्रेस, बम्बई	१९०५ ई. (१९६१ वि.)
२. ,,	मयाशंकर शर्मा	आर्य प्रतिनिधि सभा, बम्बई	१९२६ ई.
३. ,,	,,	शूरजी वल्लभदास, बम्बई	१९२८ ई.
४. ,,	,,	गुरुकुल सूपा (नवसारी)	२००६ वि.
५. ,,	डॉ० दिलीप वेदालंकार (सं०)	चरोतर प्रदेश आर्यसमाज, आनन्द	२०३२ वि.
६. ,,	मयाशंकर शर्मा	आ० स० अहमदाबाद	२०३२ वि.
७. ,,	,,	,,	२०४० वि.
मराठी अनुवाद			
१. सत्यार्थप्रकाश	श्रीदास विद्यार्थी (श्रीपाद दामोदर सातवलेकर)	श्यामराव कृष्ण आणिमंडली, बम्बई	१९०७ ई.
२. ,,	श्रीपाद दामोदर सातवलेकर	आर्यसमाज, कोल्हापुर	(१९२६, १९३२ तथा १९३८)
३. ,,	सत्यव्रत स्नातक	सेठ भागोजी बालूजी कीर	१९३२ ई.
४. ,,	,,	लक्ष्मणराव जानोजी ओघले	१९५६ ई.
५. ,,	,,	सार्वदेशिक आ० प्र० सभा	१९६८ ई.
६. ,,	श्रीपाद दामोदर सातवलेकर	आ० प्र० सभा, विदर्भ	२०३७ वि.
७. ,,	श्रीपाद जोशी	आर्यसमाज, पुणे	१९९० ई.
बंगला अनुवाद			
१. सत्यार्थप्रकाश	मोतीलाल भट्टाचार्य	वैदिक यंत्रालय, अजमेर (मुद्रक : भारतमिहिर मुद्रणालय, कलकत्ता)	१३०८ बंगाब्द १९०१ ई.
२. ,,	शंकरनाथ पण्डित	भरतसिंह प्रेस, कलकत्ता	प्र. सं. १९११ ई.
३. ,,	,,	आर्यसमाज, कलकत्ता	द्वि. सं. १९२६ ई.
४. ,,	,,	आ० प्र० सभा बंग, असम	तृ. सं. १९४७ ई.
५. ,,	दीनबन्धु वेदशास्त्री	गो० हा०, तुलसीदास दत्त तथा आ० प्र० सभा बंग, असम	च. सं. १९३४ ई.
६. ,,	शारदाप्रसन्न वेदशास्त्री		(पं० सं०)
७. सरल सत्यार्थप्रकाश	गौरमोहनदेव वर्मन		
८. सत्यार्थप्रकाश	प्रियदर्शन सि० भूषण	आर्यसमाज, कलकत्ता	२०३६ वि.
असमिया अनुवाद			
१. सत्यार्थप्रकाश	परमेश्वर कोती अमरेन्द्रनाथ गोस्वामी सं०	आर्यसमाज, गुवाहाटी	१९७५ ई.

ग्रन्थ नाम	अनुवादक	प्रकाशक	प्रकाशन काल
उड़िया अनुवाद			
१. सत्यार्थप्रकाश	श्रीवत्स पण्डा	गोरक्षाश्रम तनरडा, (गंजम)	प्र.सं. १९२७ ई.
२. ,,	,,		द्वि.सं. १९३७ ई.
३. ,,	लक्ष्मीनारायण शास्त्री	उत्कल सा० संस्थान गुरुकुल, आमसेना	१९७४ ई.
४. ,,	,,	,, ,,	२०३२ वि.
तमिल अनुवाद			
१. सत्यार्थप्रकाश	एम.आर. जम्बुनाथन	आर्यसमाज, मद्रास	प्र. सं. १९२६ ई.
२. ,,	कन्नैया.	,,	१९३५ ई.
३. ,,	शुद्धानन्द भारती	,,	१९७४ ई.
तेलुगु अनुवाद			
१. सत्यार्थप्रकाश	आ० सोमनाथ राव, आ० गोपालराव तथा राजरत्नाचार्य	आ० प्र० सभा, हैदराबाद	१९३३ ई.
२. ,,	,,		द्वि. सं.
३. ,,	गोपदेव	अम्बा रामार्थ ट्रस्ट	
कन्नड़ अनुवाद			
१. सत्यार्थप्रकाश	भास्कर पन्त	आर्यसमाज, बंगलौर	१९३२/१९५५
२. ,,	सत्यपाल स्नातक		१९५६ ई.
३. ,,	सुधाकर चतुर्वेदी		१९७४ ई.
४. ,, (पूर्वार्द्ध)	,,	आर्यसमाज वि० पुरम, बंगलौर	१९८९ ई.
५. ,, (उत्तरार्द्ध)	,,	,,	१९९० ई.
मलयालम अनुवाद			
१. सत्यार्थप्रकाश	ब्र० लक्ष्मण	केरल आर्यसमाज मिशन, कालीकट (आर्य प्रादेशिक सभा के लिए)	१९३३ ई.
२. ,,	नरेन्द्रभूषण	वैदिक साहित्य परिषद् चगनूर	१९७८ ई.
३. ,,		,,	१९८७ ई.
संस्कृत अनुवाद			
१. सत्यार्थप्रकाश	शंकरदेव पाठक	द० जन्मशताब्दी ग्रन्थमाला	१९८१ वि.
२. ,,	,,	सार्वदेशिक आ० प्र० सभा	१९८६ ई.

८. विदेशी भाषानुवाद

ग्रन्थ नाम	अनुवादक	प्रकाशक	प्रकाशन काल
नेपाली अनुवाद			
१. सत्यार्थप्रकाश	दिलुसिंग राई	आर्यसमाज, दार्जिलिंग	प्र. सं. १९३१
२. ,,	,,	,,	द्वि. सं. १९९३ वि.
बर्मी अनुवाद			
१. सत्यार्थप्रकाश	ऊ० कित्तिमा	आर्यसमाज, रंगून	
चीनी अनुवाद			
१. सत्यार्थप्रकाश	डॉ० चाऊ	हांगकांग	१९५८ ई.
थाई अनुवाद			
१. सत्यार्थप्रकाश		आर्यसमाज बैंकाक से प्रकाशित	
स्वाहिली अनुवाद			
१. सत्यार्थप्रकाश		आर्यसमाज, नैरोबी	१९८१ ई.
फ्रेंच अनुवाद			
१. सत्यार्थप्रकाश	लुई माटिरन	ब्रूसेल्स	१९४० ई.
२. ,,	,,	आर्य सभा, मॉरिशस	१९७५ ई.
३. Le Livre del Arya Samaj	,,	सार्वदेशिक आ० प्र० सभा	१९९० ई.
जर्मन अनुवाद			
१. सत्यार्थप्रकाश	दौलतराम देवं	आर्य प्र० सभा, पंजाब	१९३० ई.

९. सत्यार्थप्रकाश के हिन्दी काव्यानुवाद

ग्रन्थ नाम	अनुवादक	प्रकाशक	प्रकाशन काल
१. पद्यात्मक सत्यार्थप्रकाश (प्रथम समुल्लास)	रामलाल अग्निहोत्री	हजारीलाल शर्मा, शाहाबाद (आर्य ग्रन्थ माला—१)	१९७२ वि. १९१५ ई.
२. सत्यसागर (कथात्मक पद्यानुवाद)	गदाधरप्रसाद वैद्य 'इष्ट'	आर्य आदर्श ग्रन्थमाला, लखनऊ सं० ७	१९९० वि. (च. सं.)
३. सत्यार्थप्रकाश कवितामृत	जयगोपाल	सं० रामगोपाल शास्त्री	२००३ वि.
४. ,, दिग्दर्शन	रघुनन्दनसिंह निर्मल	केशवचन्द्र मुंजाल	२०२४ वि.
५. ,,	,,	कुमार पुस्तक भण्डार, शाहदरा दिल्ली	२०३५ वि.
६. सत्यार्थप्रकाश का संक्षिप्त कवितानुवाद	प्रकाशवीर व्याकुल	आर्ष सा० प्र० ट्रस्ट	२०४४ वि.

सत्यार्थप्रकाश विषयक हिन्दी काव्य (पद्य) ग्रन्थ

१. सत्यार्थप्रकाश महिमा	रामप्रसाद वानप्रस्थी		२००० वि.
२. ,, गौरवगान	शीतलचन्द्र शर्मा		
३. ,, पुष्पांजलि	मोहरसिंह आर्य 'भजनोपदेशक'		
४. सत्यार्थप्रकाश गान	जोरावरसिंह सिंहकवि		
५. सत्यार्थप्रकाश गान	सत्यभूषण वेदालंकार, उदयवीर वेदालंकार		

१०. सत्यार्थप्रकाश व्याख्या, टीका, भाष्य आदि

ग्रन्थ का नाम	लेखक	प्रकाशक	प्रकाशन काल
१. सत्यार्थप्रकाश कोष:	शेरसिंह (सुरजननगर, जिला मुरादाबाद)	आर्यमित्र यन्त्रालय, मुरादाबाद	१९०० ई.
२. सत्यार्थप्रकाशस्य शब्दार्थभानु कोष	ब्रह्मानन्द शर्मा		१९७१ ई.
३. सत्यार्थप्रकाश भाष्य (प्रथम समुल्लास)	वाचस्पति	आर्य साहित्य विभाग ग्रन्थ-माला-६ आर्य प्रादेशिक सभा, लाहौर	१९९१ वि.
४. सत्यार्थप्रकाश भाष्य (द्वितीय समुल्लास)	वाचस्पति	आर्य साहित्य विभाग ग्रन्थमाला-१४	१९९२ वि.
५. सत्यार्थप्रकाश भाष्य (तृतीय समुल्लास)	शिवपूजनसिंह कुशवाहा	रुद्र ग्रन्थमाला-१७	१९५५ ई.
६. अष्टोत्तरशतनाममालिका	विद्यासागर शास्त्री	मामराजसिंह ग्रन्थमाला-३ प्राच्यविद्याप्रतिष्ठान, अजमेर	१९६३ ई.
७. सत्यार्थप्रकाश का आधुनिक हिन्दी अनुवाद (प्रथम समुल्लास)	भूदेव शास्त्री	आर्य साहित्य मण्डल, अजमेर	१९७४ ई.
८. ज्ञान दर्शन (११वें समुल्लास का व्याख्यात्मक भाष्य)	भवानीलाल भारतीय	दयानन्द संस्थान, दिल्ली	१९७७ ई.
९. सत्यार्थप्रकाश (चतुर्दश समुल्लास में उद्धृत कुर्आन की आयतों का देवनागरी उल्था और अनुवाद)	रामचन्द्र देहलवी	सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली	१९४३ ई.
१०. ईश्वर एक—नाम अनेक	बुद्धिप्रकाश आर्य	आर्यसमाज अजमेर १९८१ ई. सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थमाला—१	

ग्रन्थ नाम	लेखक	प्रकाशक	प्रकाशन काल
११. आदर्श माता-पिता	राजेन्द्र जिज्ञासु	,,	,, २
१२. शिक्षा और चरित्र निर्माण	भूदेव शास्त्री	,,	,, ३
१३. गृहस्थाश्रम का महत्व	ओंकार मिश्र "प्रणव" शास्त्री	,,	,, ४
१४. संन्यासी कौन और कैसे हो ?	रासासिंह	,,	,, ५
१५. राज व्यवस्था	प्रशान्तकुमार वेदालंकार	आर्यसमाज अजमेर	सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थमाला—६
१६. ईश्वर और वेद	सूर्यदेव शर्मा	,,	,, ७
१७. जगत् की उत्पत्ति	स्वामी सत्यप्रकाश	,,	,, ८
१८. स्वर्ग और नरक कहाँ हैं ?	यशपाल आर्यबन्धु	,,	,, ६
१९. चौके और चूल्हे में धर्म नहीं है	देवशर्मा वेदालंकार	,,	,, १०
२०. हिन्दू धर्म की निर्बलता	भवानीलाल भारतीय	,,	,, ११
२१. बौद्ध और जैन मत	मंजुनाथ शास्त्री	,,	,, १२
२२. वेद और ईसाई मत	रामस्वरूप 'रक्षक'	,,	,, १३
२३. इस्लाम और वैदिक धर्म	श्रीराम आर्य	,,	,, १४
२४. सत्य का अर्थ तथा प्रकाश	दत्तात्रेय वाब्ले	,,	,, १५
२५. सत्यार्थप्रकाश में उद्धृत वैदिक मन्त्र	भूपेशचन्द्र सक्सेना सं०	आर्यसमाज मेरठ	१९८४ ई.
२६. सत्यार्थभास्कर भाग १ व २	विद्यानन्द सरस्वती	आर्यन फाउण्डेशन	१९९३ ई.

११. सत्यार्थप्रकाश पर लिखे गये आलोचनात्मक, विवेचनात्मक ग्रन्थ

नाम ग्रन्थ	लेखक	प्रकाशक	प्रकाशन काल
१. भास्करप्रकाश (सत्यार्थप्रकाश के ३ समुल्लासों का मण्डन रूप प्रथम खण्ड)	तुलसीराम स्वामी	ब्रह्मानन्द सरस्वती, मेरठ	१८९७ ई०
२. भास्करप्रकाश	तुलसीराम स्वामी	स्वामी प्रेस, मेरठ	१८९९ ई०प्र.सं. (१९५६ वि०)
३. भास्कर प्रकाश (ज्वालाभासोपशमन)	तुलसीराम स्वामी	,,	१९०५ ई०द्वि.सं. १९६२ वि०

४. भास्करप्रकाश	तुलसीराम स्वामी	स्वामी प्रेस, मेरठ	१६१३ ई०, १९७० वि०
५. दिवाकरप्रकाश (धर्मदिवाकर का उत्तर)	तुलसीराम स्वामी	,,	१९७२ वि०
६. सत्यार्थ विवेक निरीक्षणाम् (सत्यार्थ विवेक का उत्तर)	सत्यव्रत शर्मा	सरस्वती यन्त्रालय, इटावा	१९०१ ई०
७. आदिम सत्यार्थप्रकाश और आर्यसमाज के सिद्धान्त	मुन्शीराम जिज्ञासु	श्रद्धांजलि ग्रन्थ १ सद्धर्मप्रचारक प्रेस, कांगड़ी	१९७४ वि०
८. ,, ,,	,,	वेदवाणी विशेषांक	२०२५ वि०
९. सत्यार्थप्रकाश का चमत्कार	रामदुलारेलाल चतुर्वेदी	आर्यसमाज चावड़ी बाजार, दिल्ली	१९३० ई०
१०. सत्यार्थप्रकाश की व्यापकता	महेशप्रसाद मौलवी	आलिम फाजिल बुक डिपो, बनारस	१९३८ ई०
११. सत्यार्थप्रकाश पर विचार	,,	,,	
१२. सत्यार्थप्रकाश विषयक भ्रम	,,	,,	
१३. अमर सत्यार्थप्रकाश	,,	,,	
१४. सत्यार्थप्रकाश की सार्वभौमता सूचक तालिक	धर्मदेव विद्यावाचस्पति	सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली	१९४५ ई०
१५. सत्यार्थप्रकाश और उसकी रक्षा	सुधाकर	,,	१९४५ ई०
१६. सत्यार्थप्रकाश आन्दोलन का इतिहास	हितैषी अलावलपुरी	प्रकाश पुस्तकालय, दिल्ली	१९४६ ई०
१७. सत्यार्थप्रकाश और चौदहवाँ समुल्लास	नरेन्द्र	नरेन्द्र निकेतन जानापुर, कल्याणी	२००२ वि०
१८. सिन्ध में सत्यार्थप्रकाश	जीवानन्द 'आनन्द'	आर्यसमाज, सुजानगढ़	२००३ वि०
१९. सत्यार्थप्रकाश का विरोध क्यों ?	कृष्णदत्त	आर्य प्रतिनिधि सभा, हैदराबाद	१२० दयानन्दाब्द
२०. सत्यार्थप्रकाश : शंका और समाधान (भास्कर प्रकाश के आधार पर)		गोविन्दराम हासानन्द, दिल्ली	२००७ वि०

ग्रन्थ नाम	सम्पादक	प्रकाशक	प्रकाशन काल
२१. सत्यार्थप्रकाश का प्रभाव	वेदानन्द तीर्थ	विरजानन्द वैदिक संस्थान, गाजियाबाद	२०१६ वि०, १९५९ ई०
२२. सत्यार्थप्रकाश की रचना का प्रयोजन	"	"	
२३. आर्योदय के सत्यार्थप्रकाश विशेषांक पर समालोचना	सत्यपाल शास्त्री	आर्यसमाज करौलबाग, नई दिल्ली	१९६३ ई०
२४. सत्यार्थप्रकाश प्रश्नोत्तरी	मेहरसिंह यमतोल	दिल्ली	१९६५ ई०
२५. आर्यसमाज की छीछालेदर का उत्तर	श्रीराम आर्य	वैदिक साहित्य प्रकाशन, कासगंज	१९६७ ई०
२६. सत्यार्थप्रकाश : एक अध्ययन	गंगाप्रसाद उपाध्याय	वैदिक प्रकाशन मन्दिर, प्रयाग	१९६७ ई०
२७. सत्यार्थप्रकाश : एक मूल्यांकन	विनयकुमार पाठक	भारतवर्षीय वैदिक सिद्धान्त परिषद्, अलीगढ़	१९६९ ई०
२८. सत्यार्थप्रकाश के संशोधनों की समीक्षा	राजेन्द्रनाथ शास्त्री	आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, दिल्ली	१९६६ ई०
२९. सत्यार्थप्रकाश के दार्शनिक विचार	भानुचरण आर्षेय	आर्ष ग्रन्थ प्रकाशन मण्डल, काशी	
३०. सत्यार्थप्रकाश क्यों पढ़ें	चन्द्रप्रकाश	आर्यसमाज, चौक, प्रयाग	१९७४ ई०
३१. आदिम सत्यार्थ-प्रकाश के महत्त्वपूर्ण संस्मरण	आत्मानन्द तीर्थ	आर्ष योग विद्यापीठ, खरखौदा (मेरठ)	१९७४ ई०, २०३१ वि०
३२. सत्यार्थप्रकाश की भूमिका	जनार्दनप्रसाद सिन्हा	आर्य संस्थान, पटना	१९७५ ई०
३३. विश्वधर्मकोश: सत्यार्थप्रकाश	भवानीलाल भारतीय	वैदिक पुस्तकालय, अजमेर	२०३५ वि०
३४. सत्यार्थप्रकाश का महत्त्व	बिहारीलाल शास्त्री	दयानन्द संस्थान, दिल्ली	२०३६ वि०
३५. सत्यार्थप्रकाश दर्पण	रघुनाथप्रसाद पाठक	दयानन्द साहित्य केन्द्र, दिल्ली	१९७९ ई०
३६. सत्यार्थप्रकाशनी महत्ता	ज्ञानेन्द्र सिद्धान्त भूषण	ज्ञान पुष्पमाला-२०	२००० वि० (गुजराती)
३७. सत्य निर्णय (म० गाँधी की आपत्तियों का उत्तर)	ज्ञानचन्द्र	दिल्ली	

३८. सत्यार्थप्रकाश क्या है ?	फूलचन्द्र शर्मा 'निडर'	पुष्करलाल आर्य	२०३६ वि०
३९. सत्यार्थप्रकाश के संशोधन का नमूना-१	जीवनदास पेंशनर	लाहौर	१९११ वि०
४०. सत्यार्थप्रकाश (शताब्दी वर्ष १९८१ का स्मृति ग्रन्थ)	देवव्रत धर्मेन्दु	आर्य युवक परिषद्, दिल्ली	१९८२ ई०
४१. (अ) इस्लाम के स्वर्ग-नर्क पर महर्षि दयानन्द की आलोचना का प्रभाव	शिवपूजनसिंह कुशवाहा	गो० हा०	१९६३ ई०
(ब) कुरान: महर्षि दयानन्द की दृष्टि में	अमरेश आर्य	उद्गीथ प्रकाशन, हैदराबाद	२००२ वि०
४२. चौदहवीं का चांद	चमूपति	सार्वदेशिक सभा	१९८८ ई०
४३. सत्यार्थप्रकाश की शिक्षाएं	पृथ्वीसिंह आजाद	"	२०४१ वि०
४४. धाया का दूध	बुद्धदेव मीरपुरी	दयानन्द स्वाध्याय मण्डल, लाहौर	
४५. पुत्र परिवर्तन वैदिक है	"	"	१९३६ ई०
४६. विवाह संस्कार	"	"	१९३६ ई०
४७. सत्यार्थप्रकाश और गुरुग्रन्थ साहब	गंगाराम		
४८. सत्यार्थप्रकाश दिग्दर्शन	यशपाल आर्य बन्धु	आ० स०, मुरादाबाद	१९७९ ई०
४९. सत्यार्थप्रकाश का असत्यार्थप्रकाश पुस्तक का उत्तर	श्रीराम आर्य	वैदिक साहित्य प्रकाशन, कासगंज	२०३६ वि०
५०. सत्यार्थप्रकाश : मेरी दृष्टि में	चन्द्रभानु सोनवणे	सत्य प्रकाशन, मथुरा	
५१. "	हरिशंकर	आ० स०, मुरादाबाद	२०३८ वि०
५२. सत्यार्थप्रकाश मण्डन (भाग-१)	अमर स्वामी		१९८३ ई०
५३. सत्यार्थप्रकाश में क्या है ?	जगदीश्वरानन्द सरस्वती	भगवती प्रकाशन, दिल्ली	१९८९
५४. महर्षि दयानन्द सरस्वती का सिद्धान्त	विरजानन्द दैवकरणि	हरियाणा साहित्य संस्थान	२०४२ वि.

५५. स्वाध्याय निर्णय का सत्यार्थप्रकाश अंक	ओमप्रकाश ब्रह्मचारी	उत्तर बिहार आर्यसभा	१९८७ ई.
५६. सत्यार्थप्रकाश पत्राचार-पाठ्यक्रम	सोमदेव शास्त्री	बम्बई	१९८९ ई.
५७. युगनिर्माता सत्यार्थप्रकाश	उमाशंकर उपाध्याय	आर्यसमाज, कलकत्ता	१९९० ई.
५८. सत्यार्थप्रकाश प्रश्नोत्तरी	रामबाबू आर्य	आ० स० हिण्डौन	१९९० ई.
५९. सत्यार्थप्रकाश से हृदय में दिव्यप्रकाश	कश्यप मुनि	अजमेर	
६०. आर्योदय स० प्र० विशेषांक (भाग-१)	भारतेन्दुनाथ सं०		२०२० वि.
६१. आर्योदय स० प्र० विशेषांक (भाग-२)	,,	,,	२०२० वि.
६२. सत्यार्थप्रकाश शंका और समाधान	तुलसीराम स्वामी	गो० हा०	२००७ वि.
६३. सत्यार्थ-सुमन	मेलाराम वेदी	वेदी प्र० ट्रस्ट	२०२४ वि.
६४. सत्यार्थप्रकाश दर्पण	राम पथिक	मदनानन्द आश्रम	
६५. दयानन्द और सत्यार्थप्रकाश की विलक्षणता	कृष्णदत्त	आ० स० गुलबर्गा	
६६. सत्यार्थप्रकाश : एक मूल्यांकन	सत्यव्रत राजेश	गुरदासमल, अहमदाबाद	१९९३ ई.

१२. सत्यार्थप्रकाश—अन्य भाषाओं में विवेचनात्मक साहित्य

नाम ग्रन्थ	लेखक	प्रकाशक	प्रकाशन काल
गुजराती			
१. बाल सत्यार्थप्रकाश	नटवरलाल दवे	आर्य प्रतिनिधि सभा, गुजरात	
२. सत्यार्थप्रकाश संक्षिप्त	,,	वैदिक साहित्य प्रचारक मण्डल	
३. सत्यार्थप्रकाश की तेज धाराएँ	दयाल आर्य	,,	२०४६ वि.
४. बाल सत्यार्थप्रकाश	भानुमति अ० जोशी	,,	
मराठी			
१. सत्यार्थप्रकाश (द्वितीय समुल्लास)	अनु० रमेश ठाकुर प्रियदत्त शास्त्री		२०४६ वि.

उड़िया

१. सत्यार्थप्रकाश मणिमाला	(मू० लेखक अनु० देवव्रत प्रेम भिक्षु)	गुरुकुल वैदिक आश्रम, वेदव्यास	
२. सत्यार्थप्रकाश पद्यानुवाद (पू०)	सच्चिदानन्द सरस्वती		

सत्यार्थप्रकाश—आलोचनात्मक उर्दू ग्रन्थ

१. चौदहवीं का चाँद (मौ० सनाउल्ला के 'हकप्रकाश' का उत्तर)	चमूपति		
२. यथार्थप्रकाश की हकीकत		आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, लाहौर	
३. गुमराही के समन्दर में रास्ती की किश्ती	मनसाराम 'वैदिक तोप'		
४. सत्यार्थप्रकाश की तालीमें (२-३ समुल्लासों की टीका)	राय ठाकुरदत्त धवन	आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, लाहौर	१६०३ ई.
५. भास्करप्रकाश उर्दू अनुवाद	अनु० देवीदास डस्का		१६१३ ई.
६. इजहारे हकीवत (म० गाँधी की आपत्तियों का उत्तर)	ज्ञानचन्द्र	दिल्ली	

CRITICAL BOOKS ON THE SATYARTHA PRAKASH

1. The Immortal Satyartha Prakash	Mahesh Prasad	Alim Fazil Book Depot, Benaras.	1943
2. In Defence of Satyartha Prakash	M. Sudhakar	The International Aryan League, Delhi.	1945
3. The Sind Ban on Satyartha-Prakash. (A rational demand for its removal).	C. Parmeshwaran	1. The International Aryan League, Delhi. 2. A.P.P. Sabha, Lahore	1945 1945
4. Universality of Satyartha Prakash	Dharm Dev Vidyavachaspati	The International Aryan League, Delhi.	1945
5. The League assults on Satyartha Prakash	C. Parmeshwaran	The New World Order Publication, Lahore.	1946
6. The Case of Satyartha Prakash in Sind	Shiv Chandra	The International Aryan League, Delhi.	1947
7. Swami Dayanand and Satyartha Prakash	A member of Paropkarini Sabha	Vedic Yantralaya, Ajmer	1944

१३. सत्यार्थप्रकाश विषयक खण्डनात्मक साहित्य : पौराणिकों द्वारा खण्डन

ग्रन्थ नाम	लेखक	प्रकाशक	प्रकाशन काल
१. वेदार्थप्रकाश (संस्कृत मूल तथा हिन्दी-उर्दू अनुवाद)	गोपाल पुत्र रामसहाय अनु० स० मुन्शी रामनाथ	मेरठ	१८७८ ई.
२. सत्यार्थविवेक	साधूसिंह		
३. दयानन्दतिमिरभास्कर	ज्वालाप्रसाद मिश्र	क्षेमराज श्रीकृष्णदास, वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई	१९५५ वि.
४. धर्मदिवाकर (भास्करप्रकाश का खण्डन)	बलदेवप्रसाद मिश्र		
५. भास्करामास निवारण	भवानीप्रसाद	ब्रह्म प्रेस, इटावा	
६. सत्यार्थप्रकाश समीक्षा	जगन्नाथदास	सुदर्शन यंत्रालय, मुरादाबाद	१९४० ई.
७. सनातनधर्म सिद्धान्त-मार्तण्डप्रकाश	रघुनन्दन भट्टाचार्य	मुन्शी गंगाप्रसाद एण्ड ब्रदर्स प्रेस, अमीनाबाद, लखनऊ	
८. महताब दिवाकर	यमुनादास शाण्डिल्य	क्षेमराज श्रीकृष्णदास, बम्बई	
९. सत्यार्थप्रकाशलोचन	अखिलानन्द शर्मा	अनूपशहर	
१०. वैदिक सत्यार्थप्रकाश	,,	अनूपशहर	१९४० ई.
११. सत्यार्थप्रकाश की छीछालेदर	कालूराम शास्त्री	कामताप्रसाद दीक्षित, अमरौधा (कानपुर)	१९४३ वि.
१२. वैदिक सत्यार्थप्रकाश (आर्यसमाज की अन्त्येष्टि)	,,	,,	१९९३ वि., १९३६ ई.
१३. धर्मप्रकाश (समुल्लास-२) (भास्करप्रकाश का खण्डन)	,,	,,	१९१५ ई.
१४. दयानन्दमतविद्रावण अर्थात् सत्यार्थप्रकाश पर शंकाप्रवाह	भवानीप्रसाद (लाला) नम्बरदार	१. तन्त्रभास्कर प्रेस, मुरादाबाद	१९०० ई. (प्र० सं०)
		२. ब्रह्म प्रेस, इटावा	१९०८ ई. (द्वि० सं०)
,, ,,	,,	३. ब्रह्म प्रेस, इटावा	१९२४ ई. (तृ० सं०)
१५. सत्यार्थप्रकाश की छीछालेदर	प्रेमाचार्य शास्त्री	माधव पुस्तकालय, दिल्ली	२०२२ वि.
१६. सत्यार्थभास्कर	देवीशंकर भट्ट	खुर्शीद आलम यंत्रालय, आगरा	१९४५ वि.

१७. यथार्थप्रकाश (भाग-३)	आनन्दस्वरूप (साहबजी महाराज)	राधास्वामी सत्संग सभा दयालबाग, आगरा	१९३९ ई.
१८. सत्यार्थप्रकाश या सत्यार्थ-प्रकाश पर निष्पक्ष आलोचना		मुनिसमाज केन्द्रीय कार्यालय, गोरखपुर	

सिखों द्वारा खण्डन

१. दम्भ विदारण (अर्थात् साधु दयानन्दजी दे सन् १८७५ ई. दे सत्यार्थप्रकाश पर विचार)	ज्ञानी दित्तासिंह (भाई)	पंजाब इकॉनामिकल प्रेस, लाहौर	१९०२ ई.
२. तालीम सत्यार्थप्रकाश का असली फोटो	,,	हरिचन्द, लायलपुर	१९१० ई.

जैनियों द्वारा खण्डन

१. सत्यार्थदर्पण	अजितकुमार शास्त्री	लाला देवीसहाय, फीरोजपुर	प्रथम संस्करण
२. ,,	,,	चम्पावती जैन पुस्तकमाला संख्या-९	द्वितीय संस्करण
३. ,,	,,	भारतवर्षीय दिगम्बर जैन संघ मथुरा	१९४९ ई. तृतीय संस्करण
४. दयानन्दकुतर्कतिमिरतरणि (१२वें समुल्लास का खंडन)	मुनिलब्धविजय	लाहौर	
५. जैनसुधाविन्दु (१२वें समुल्लास का उत्तर)	जीयालाल जैनी		

ईसाइयों द्वारा खण्डन

१. सत्यार्थप्रकाश दर्पण	पादरी जे. एल. ठाकुरदास	नौलखा बाजार, लाहौर	(उर्दू)

मुसलमानों द्वारा खण्डन

१. हकप्रकाश या 'इजहारे हक़	मौलवी सनाउल्ला अमृतसरी		
२. सत्यार्थप्रकाश एजीटेशन पर तवसरा	,,	कादियाँ	
३. पं. दयानन्द सरस्वती के सत्यार्थप्रकाश का खण्डन	हाजी हफीज सादिक (गुलाम मोहम्मद सादिक B.H.H.)		(गुजराती)

ग्रन्थ नाम	लेखक	प्रकाशक	प्रकाशन काल
४. A Refutation of the Satyartha Prakash of Pt. Dayanand Saraswati (Pt. I)	हाजी हफीज सादिक		सूरत १९१० ई.
५. सत्यार्थप्रकाश का असत्यार्थप्रकाश	अबुमुहम्मद इमामुद्दीन रामनगरी	मक्तबा अलहसनात, रामपुर (उ० प्र०)	

कुपात्रो को दान न देवे सुपात्रो को देवे.

ACCEPTED HERE

Scan & Pay Using PhonePe App

आपके दान की हमे अत्यंत आवश्यकता हे.